कुमाऊँनी भाषा और उसका साहित्य

डा० त्रिलोचन पाण्डेय

कुमाउँनी भाषा और उसका साहित्य

डॉ० त्रिलोचन पाण्डेय

उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान

उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान (हिन्दी समिति प्रभाग)

उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान

हिन्दी समिति प्रभाग के कुछ अन्य प्रकाशन

हिन्दी रेखाचित्र	८.००
पश्चिमी आलोचना शास्त्र	८.५०
संस्कृत आलोचना	५.५०
संस्कृत नाटककार	४.५०
हिन्दी उपन्यास कला	६.५०
अंग्रेजी भाषा और साहित्य	३.५०
अंग्रेजी उपन्यास का विकास और उसकी रचना पद्धति	८.००
पालि साहित्य का इतिहास	५.००
गुजराती साहित्य का इतिहास	६.५०
तेलुगु साहित्य का इतिहास	६.००
मलयालम साहित्य का इतिहास	४.००
बँगला साहित्य का इतिहास	५.५०
फ्रेंच साहित्य का इतिहास	७.००
हिन्दी कहानी कला	१२.००
काव्य मनीषा	१०.००
पाश्चात्य निबन्ध कला	११.००
रूसी लोक साहित्य	६.००
पाश्चात्य जीवनी कला	५.००
रूसी साहित्य का इतिहास	७.००
उर्दू-हिन्दी शब्द कोष	१८.००

कुमाउंनी भाषा और उसका साहित्य

हिन्दी ६६६

विद्यापीठ-पुस्तकालयः

हिन्दी समिति प्रभाग ग्रन्थमाला—२४७

कुमाउँनी भाषा और उसका साहित्य

लेखक

डॉ० त्रिलोचन पाण्डेय

एम० ए०, पी-एच० डी०, डी० लिट्

[रीडर एवं अध्यक्ष, हिन्दी अध्ययन मण्डल
जबलपुर विश्वविद्यालय, जबलपुर]

उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान (हिन्दी समिति प्रभाग)

राजर्षि पुरुषोत्तम दास टण्डन हिन्दी भवन

महात्मा गांधी मार्ग, लखनऊ

कुमाउँनी भाषा और उसका साहित्य

प्रथम संस्करण : १९७७

वाल्मीकि विद्यापीठ-पुस्तकालय

मल्य : उन्नीस रुपये

मुद्रक । प्रेम प्रेस, कटरा, प्रयाग ।

आशीर्वचन

मुझे अत्यन्त प्रसन्नता है कि डॉ० त्रिलोचन पाण्डेय जी ने कुमाँउनी भाषा और उसके साहित्य पर पुस्तक रूप में एक विशिष्ट शोध–प्रबंध ही प्रस्तुत कर दिया है। कूर्मांचल के पर्वतों की अभेद्य गुहाओं में अज्ञातवास करती हुई सरस्वती को वह अपने अनथक अध्ययन, अध्यवसाय तथा निष्ठा से लोक भाषा प्रेमी वर्ग के लिए प्रकट कर मूर्त्त कर लाये हैं। इतना कठिन कार्य उनके अतिरिक्त इस सफलता से शायद ही और कोई भाषा विशारद कर पाता।

भाषा किस प्रकार मानव हृदय एवं लोक मन की जटिल गहन भावनाओं को झंकृत करती है, यह लोकमानस एवं जीवन की पृष्ठभूमि में अधिक स्पष्टतया देखा जा सकता है। इस पुस्तक में भाषा के बोलचाल के रूपों की ओर ध्यान अधिक आकृष्ट किया गया है। शब्द और अर्थ सामाजिक-सांस्कृतिक संदर्भों में नवीन रूप ग्रहण करते हैं तथा अर्थों की सूक्ष्म छायाओं के अनुरूप शब्द किस प्रकार अज्ञात रूप से ढलते रहते हैं, इसका सांगोपांग विवेचन इस पुस्तक की सर्वश्रेष्ठ तथा विशिष्ट उपलब्धि है।

डॉ० पाण्डेय लोक साहित्य के मर्मज्ञ एवं मान्य विद्वान् हैं। लोक बोलियों के भाषागत, साहित्यिक एवं सांस्कृतिक संस्कारों के अध्ययन पर उनकी विशेष रुचि रही है। कुमाऊँ निवासी होने कारण वे वहाँ की स्थानीय रचनाओं की महत्ता, सूक्ष्मता तथा भेदोपभेदों को समझने की विशेष क्षमता रखते हैं। उनका यह अद्भुत ग्रंथ कुमाउँनी भाषा के संबंध में एक महत्त्वपूर्ण मील का

पत्थर माना जायेगा, इसमें मुझे संदेह नहीं। उन्हें उनकी इस सफलता पर हार्दिक बधाई देने को जी करता है। स्वयं कुमाऊँ वासी होने कारण मुझे उनका यह सम्पूर्ण प्रयत्न अत्यन्त श्लाघ्य लगता है। आशा है, भविष्य में भी उनकी लोक भाषा संबधी अंतर्दृष्टि उनसे इसी प्रकार की अमूल्य खोज करवाती रहेगी।

श्री अमृतलाल नागर जी को भी उनकी इस सूझ के लिए बधाई देना कर्त्तव्य समझता हूँ जिन्होंने डॉ० पाण्डेय जैसा उत्कृष्ट विद्वान् चुन कर इस विषय पर प्रकाश डलवाया।

२६ जनवरी, १९७६ — सुमित्रानन्दन पन्त

प्रकाशकीय

हिन्दी भाषा और उसके वाङ्मय के सर्वांगीण विकास और समृद्धि में भारतीय भाषाओं के अतिरिक्त प्रदेश की उपभाषाओं अर्थात् आंचलिक भाषाओं का भी महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। वस्तुतः हिन्दी की सतत् प्रवहमान धारा में आँचलिक भाषाओं की अनेकानेक धाराएँ मिलकर उसे सार्वजनीन और मंगलकारी बनाने का उपक्रम आरम्भ से करती चली आयी हैं और यह क्रम अनवरत चलता रहेगा।

उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान के हिन्दी समिति प्रभाग ने राष्ट्रभाषा हिन्दी के उन्नयन के लिए अब तक ज्ञान-विज्ञान के अनेकानेक प्रकाशन हिन्दी जगत् को समर्पित किये हैं और साथ ही विभिन्न प्रादेशिक भाषाओं यथा बंगला, गुजराती, तेलुगु, मलयालम आदि भाषाओं के साहित्य पर भी पुस्तक प्रकाशित की हैं।

अब इस तथ्य को भी दृष्टिगत रखते हुए कि हिन्दी भाषा के उन्नयन की दिशा में किये जाने वाले प्रयास तब तक पूर्ण न होंगे जब तक हिन्दी को सम्पुष्ट और परिपुष्ट बनाने वाली आंचलिक भाषाओं और उनकी साहित्यिक गतिविधियों पर भी परिचयात्मक पुस्तकों का प्रणयन और प्रकाशन न किया जाय। प्रदेश की इन भाषाओं की भी अपनी निजी विशेषताएँ हैं और उनका साहित्य भी समृद्ध है और उनके विषय में जानकारी प्राप्त करने की लालसा अथवा जिज्ञासा सामान्यतया साहित्य-रसिकों एवं हिन्दी के छात्रों में समान रूप से पायी जाती है।

'कुमाउँनी भाषा और उसका साहित्य' नामक यह पुस्तक इसी प्रयास का द्वितीय पुष्प है। इसके पूर्व 'गढ़वाली भाषा और उसका साहित्य' पुस्तक प्रकाशित की जा चुकी है। हम इसे जिज्ञासु पाठकों .के समक्ष आदर और विश्वास के साथ प्रस्तुत कर रहे हैं। इसके माध्यम के उत्तराखण्ड की इस सशक्त आँचलिक भाषा

और उसके साहित्य से परिचित कराने का सफल प्रयास किया गया है। इसके लेखक डॉ० त्रिलोचन पाण्डेय सुप्रसिद्ध साहित्यकार और कुमाऊँनी भाषा के भी अधिकारी विद्वान् और लेखक हैं।

विश्वास है, प्रस्तुत पुस्तक कुमाऊँनी भाषा और उसका साहित्य से समग्ररूपेण परिचित कराने में न केवल साहित्य और भाषा-विज्ञान के छात्रों के लिए अपितु अन्य सभी साहित्य-प्रेमियों के लिए सहायक सिद्ध होगी।

ठाकुर प्रसाद सिंह
निदेशक
उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान

अपनी बात

लोक साहित्य के प्रति मेरी अभिरुचि विद्यार्थी जीवन में कुमाउंनी 'जागरों' के माध्यम से जाग्रत हुई थी। स्थानीय लोक गायकों के संपर्क में आते रहने के कारण मुझे उस समय आश्चर्य होता था कि गायन-वादन में इतने निपुण होने पर भी समाज में वे अभी तक उपेक्षित क्यों रहे हैं ? मातृभाषा के प्रति प्रेम ने मुझे उनकी ओर आकर्षित किया।

सन् १९५४ से मैंने स्थानीय भाषा और साहित्य का विधिवत् अध्ययन आरंभ किया। विभिन्न संस्थाओं, सामाजिक कार्यकर्त्ताओं तथा व्यक्तिगत क्षेत्रीय यात्राओं के माध्यम से लगभग ५०० लोक गीतों, ८० लोक गाथाओं, २०० कहावतों–मुहावरों और २०० पहेलियों आदि को एकत्र करके मैंने पहले उनका विश्लेषण किया। उस समय मेरा निष्कर्ष था कि उत्तर प्रदेश का यह पार्वत्य भू-भाग आंचलिक वैविध्य की दृष्टि से पर्याप्त महत्वपूर्ण है। यहाँ का संपूर्ण लोक जीवन इन रचनाओं द्वारा मूर्तिमान होता है। ये रचनाएँ विशाल हिन्दी भाषी क्षेत्र के साथ आंतरिक संबंध तो रखती ही हैं, अन्य प्रदेशों की आंचलिक रचनाओं के समकक्ष भी सरलता से रक्खी जा सकती हैं।

इस बीच कुमाऊँ के सामाजिक, आर्थिक जीवन, भाषा और साहित्य के विभिन्न पक्षों को आधार बना कर कुछ पुस्तकें लिखी गई। आगरा, लखनऊ, इलाहाबाद और जबलपुर विश्वविद्यालयों में तीन चार शोध प्रबंध भी प्रस्तुत हुए। प्रशासकीय कारणों से स्थानीय भौगोलिक इकाइयों का पुनः निर्धारण हुआ। सन् १९७३ में स्थापित कुमाऊँ विश्वविद्यालय ने स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम में कुमाउंनी साहित्य एवं संस्कृति को सम्मिलित करके इस विषय के अध्ययन का मार्ग भी प्रशस्त किया। इस प्रकार कुमाऊँ सम्बंधी शोध कार्य कुछ आगे बढ़ा जिसका संकेत परिशिष्ट में किया गया है।

प्रस्तुत पुस्तक में कुमाउंनी भाषा एवं साहित्य के स्वरूप पर वर्णनात्मक दृष्टि से प्रकाश डाला गया है। स्थानीय भाषा की अर्थगत विशेषताओं का सम्यक् निरूपण करते हुए उसके स्वरों और व्यंजनों का सोदाहरण परिचय देना, उसके व्याकरण पर विचार करना, वाक्य रचना और अर्थ परिवर्तन की मुख्य प्रवृत्तियों का संकेत करना इस पुस्तक का प्रमुख उद्देश्य है।

कुमाउंनी बोलियों का विवेचन करते समय पं. गंगादत्त उप्रेती एवं ग्रियर्सन की मान्यताओं को ध्यान में रखकर वर्तमान संदर्भ में उनकी स्थिति स्पष्ट की गई है। भाषा विवेचन की वर्णनात्मक एवं विश्लेषणात्मक पद्धति अपनाई गई है जो भाषा शास्त्र की आधुनिक प्रवृत्ति है। इसी आधार पर आगे चल कर तुलनात्मक एवं ऐतिहासिक शोध कार्य का मार्ग प्रशस्त होगा जिसके लिए सर्वप्रथम कुमाउंनी बोलियों के शब्द-कोष बनाने की आवश्यकता है।

लिखित साहित्य (नागर साहित्य) का १६ वीं, २० वीं शताब्दियों में संक्षिप्त विकास स्पष्ट करते हुए मैंने सम सामयिक प्रवृत्तियों का भी उल्लेख किया है ताकि इसके शब्द सामर्थ्य का अनुमान हो सकें। लोक साहित्य के अंतर्गत कथागीतों (बैलेड) का निर्धारण करना एक नूतन प्रयास हैं। लोक गीतों, गाथाओं और कहावतों आदि का मैंने वर्त्तमान सामाजिक संदर्भो में विवेचन किया है जिससे इनकी रचना-प्रक्रिया स्पष्ट होगी।

मेरा दृढ़ विश्वास है कि लोक भाषाओं और उनकी लोक रचनाओं का विशिष्ट स्वरूप स्थानीय जन जीवन की गतिविधियों द्वारा ही निर्मित होता है और आगे चल कर उसी के द्वारा परिर्वातित भी होता है। अतः हमें एक तटस्थ अध्येता की भाँति नहीं, बल्कि स्थानीय जन जीवन के भीतर प्रविष्ट होकर किसी साहित्य की सूक्ष्म परीक्षा करनी चाहिए।

पुस्तक लिखने हेतु मैं 'हिन्दी समिति' उत्तर प्रदेश शासन का आभारी रहूँगा, मुख्यतः इसके अधिकारी श्री नागर जी और 'भ्रमर' जी का जिन्होंने मुझे यह अवसर प्रदान किया। कुमाउंनी भाषा के समकालिक उदाहरण देकर नैनीताल, अल्मोड़ा और पिथौरागढ़ के एकाधिक लोगों ने मेरी सहायता की है। श्री लीलाधर शर्मा "पर्वतीय" जी इस पुस्तक के प्रेरणा श्रोत रहे हैं। पूज्य सुमित्रानन्दन पन्त जी ने इसे आशीर्वाद दिया है। इन सभी लोंगों के प्रति कृतज्ञता प्रकट करते हुए कुमाऊं के होनहार शोधकर्ताओं को यह पुस्तक समर्पित करता हूँ।

११/सी स्टाफ क्वार्टर्स
जबलपुर विश्वविद्यालय,
जबलपुर (म. प्र.)

—त्रिलोचन पाण्डेय

विषय सूची

पृष्ठभूमि

पृष्ठ

१. अध्ययन के स्रोत-- १-६

(१) शिलालेख, ताम्रपत्र, वंशावलियाँ, सनदें, (२) महाभारत और पुराण, (३) गजेटियर, (४) वार्षिक रिपोर्ट, (५) यात्रा विवरण, (६) विभिन्न पुस्तकें, (७) पत्र-पत्रिकाएं, (८) शोधकार्य।

२. स्थानीय परिस्थितियाँ-- ७-२३

(१) सीमा विस्तार एवं नामकरण, (२) प्राचीन उल्लेख, (३) प्राकृतिक स्थिति, (४) सामाजिक पृष्ठभूमि।

कुमाउंनी भाषा

३. कुमाउंनी की वर्त्तमान स्थिति-- २४-४१

(१) मानक रूप (२) तत्सम्बन्धी दृष्टिकोण, (३) कुमाउंनी का विकास, (४) भाषा के अंग।

४. कुमाउंनी का भाषिक विश्लेषण— ४२-१२४

४/१ ध्वनि समूह-

(१) स्वर परिचय, (२) व्यंजन परिचय, (३) ध्वनियों की विशेषताएँ।

४/२ शब्द समूह--

(१) वर्गीकरण, (२) अर्थगत विशेषताएं,

पृष्ठ

(३) मुहावरे, (४) पर्यायवाची शब्द,
(५) पुनरुक्त एवं अनुकरण मूलक, (६) शब्द रचना।

४/३. पद रचना–

(१) संज्ञापद, (२) सर्वनाम, (३) विशेषण,
(४) क्रियापद, (५) अव्यय।

४/४. वाक्य रचना–

(१) पदबंध, (२) वाक्य विश्लेषण,
(३) वाक्य भेद, (४) अध्याहार,
(५) वाक्य परिवर्तन (६) वाक्य विन्यास,
(७) कथन भेद, (८) वाक्यों के विशिष्ट रूप।

४/५. अर्थ विचार–

(१) अर्थतत्व, (२) अर्थ परिवर्तन,
(३) पर्यायवाची शब्द, (४) व्युत्पत्ति।

५. कुमाउंनी की बोलियाँ— १२५–१३९

(१) रूपान्तरों की तुलना (२) वर्गीकरण,
(३) परिचय एवं उदाहरण।

कुमाउंनी साहित्य

६. कुमाउंनी का लिखित साहित्य— १४०–१७८

(१) १९वीं शताब्दी का साहित्य,
(२) २०वीं शताब्दी–पूर्वार्द्ध,
(३) २०वीं शताब्दी–उत्तरार्द्ध।

७. कुमाउंनी लोक गीत— १७९–२१७

(१) संस्कार गीत, (२) नृत्य प्रधान गीत,
(३) अनभूति प्रधान गीत, (४) तर्क प्रधान गीत,
(५) संवाद प्रधान गीत, (६) ऋतु गीत,
(७) देवी देवता सम्बन्धी गीत,

पृष्ठ

(८) व्रत, त्यौहार संबंधी गीत।
(९) कृषि गीत, (१०) स्फट गीत।

८. कुमाउंनी कथा गीत-- २१८-२२८

(१) संस्कार सम्बन्धी, (२) ऋतु सम्बन्धी,
(३) कृषि सम्बन्धी, (४) वीरता सम्बन्धी।

९. कुमाउंनी लोक गाथाएँ-- २२९-२६४

(१) परंपरागत गाथाएँ, (२) पौराणिक गाथाएँ,
(३) धार्मिक गाथाएँ, (४) वीर गाथाएँ।

१०. कुमाउंनी लोक कथाएँ-- २६५-२९२

(१) सामाजिक कथाएँ (२) भूत प्रेत, दैत्य राक्षसों की कथाएँ,
(३) जीव जन्तुओं की कथाएँ, (४) पक्षी कथाएँ,
(५) वृक्ष पुष्प सम्बन्धी कथाएँ, (६) धार्मिक कथाएँ,
(७) साधु संतों की कथाएँ, (८) वीरता मूलक कथाएँ,
(९) कारण मूलक कथाएँ, (१०) दंतकथा, चुटकुले, किस्से।

११. कुमाउंनी कहावतें- २९३-३२८

(१) विशेषताएँ-
(२) वर्गीकरण (सामाजिक कहावतें, जीवन दर्शन सम्बन्धी कहावतें, ऐतिहासिक कहावतें, स्थान-विशेष सम्बन्धी कहावतें, नीति उपदेश प्रधान कहावतें, हास्य-व्यंग प्रधान कहावतें, कृषि-वर्षा सम्बन्धी कहावतें, जीव-जन्तु सम्बन्धी कहावतें)।

पृष्ठ

१२. कुमाउंनी पहेलियाँ-- ३२६-३४३

(१) विशेषताएँ--

(२) वर्गीकरण (भोज्य पदार्थ सम्बन्धी, घरेलू वस्तु सम्बन्धी, जीव-जन्तु सम्बन्धी, प्रकृति सम्बन्धी, अंग-प्रत्यंग सम्बन्धी, सामान्य पहेलियाँ, खेती सम्बन्धी पहेलियाँ)।

१३. अन्य रचनाएँ-- ३४४-३४९

(१) बाल रचनाएँ, (२) तन्त्र मन्त्र,
(३) तुकबन्दियाँ, (३) लोक नाट्य।

१४. परिशिष्ट- ३५१-४०२

(क) मानचित्र और वर्गीकरण।
(ख) ग्रियर्सन-चैटर्जी भाषा वर्गीकरण।
(ग) कुमाउंनी की विशिष्ट शब्दावली।
(घ) सहायक ग्रंथ सूची-
(१) अँग्रेजी पुस्तकें, (२) हिन्दी पुस्तकें,
(३) अंग्रेजी पत्र पत्रिकाएँ, (४) हिन्दी पत्रपत्रिकाएँ।

अनुक्रमणिका— ४०३-४१८

१ अध्ययन के स्रोत

कुमाऊँ उत्तर प्रदेश का एक महत्त्वपूर्ण पर्वतीय भूभाग है जिसमें इस समय नैनीताल, अल्मोड़ा और पिथौरागढ़ के तीन उत्तरी जिले सम्मिलित हैं। ब्रज मंडल, अवधी, भोजपुरी आदि उत्तर भारतीय जनपदों की भाँति यहाँ का लोक साहित्य एवं उसकी भाषा भी लोक संस्कृति की दृष्टि से उल्लेखनीय हैं क्योंकि ये सभी भूभाग किसी न किसी रूप में उस विशाल प्रदेश की वर्तमान इकाइयाँ हैं जिसे प्राचीन इतिहास में मध्य देश कहते थे। भारतीय संस्कृति के केन्द्र प्राचीन मध्य देश की कुछ आँचलिक इकाइयाँ ही आज उत्तर प्रदेश का अंग हैं।

विगत दस पन्द्रह वर्षों में कुमाउँनी भाषा एवं साहित्य के विषय में शोध कर्त्ताओं की रुचि पर्याप्त विकसित हुई है। किन्तु स्थानीय भाषा के सभी रूप तथा लोक साहित्य की विविध रचनाएँ सम्यक् रूप से प्रकाश में नहीं आई हैं। अल्पज्ञात अथवा अज्ञात रचनाओं के अनुसंधान की बात तो दूर रही, प्रमुख रूप से ज्ञात लोक-रचनाओं का भी अभी तक ठीक-ठीक मूल्यांकन नहीं हुआ है। इसलिए आवश्यक है कि हम स्थानीय भाषा-साहित्य के संग्रह और विवेचन में शास्त्रीय पद्धति का अनुसरण करें।

कुमाउंनी भाषा साहित्य का शास्त्रीय विवेचन करने के लिए इसके प्रमुख स्रोतों का ज्ञान होना आवश्यक है। ये स्रोत दो प्रकार के हैं। प्रमुख स्रोत तो लोक-जीवन में व्याप्त विविध लोक रचनाएँ ही हैं जो इन तीनों जिलों में बिखरी हुई हैं। संलग्न क्षेत्र गढ़वाल और नैपाल की रचनाएँ इन स्रोतों को समझने में सहायक होती हैं। दूसरी कोटि के वे सहायक स्रोत हैं जिन्हें मुख्यतः आठ प्रकार का माना जा सकता है। ये स्रोत इस प्रकार हैं :—

(१) शिलालेख, ताम्रपत्र, ,वंशावलियाँ और सनदें, (२) महाभारत और पुराण, (३) गजेटियर, (४) वार्षिक रिपोर्ट, (५) यात्रा विवरण, (६) विभिन्न पुस्तकें, (७) पत्र-पत्रिकाएँ, (८) शोधकार्य।

शिलालेख और ताम्रपत्रों द्वारा प्राचीन राजवंशों के अतिरिक्त स्थानीय जन-समाज की जातीय, धार्मिक, आर्थिक एवं राजनैतिक स्थितियों पर प्रकाश पड़ता है।

इन्हीं अभिलेखों में कुमाउंनी भाषा के प्रयोग मिलते हैं जो १४ वीं शताब्दी तक पुराने हैं। वंशावलियों में विभिन्न कुमाउंनी जातियों का, राजवंशों का अथवा जातीय वीरों का वर्णन मिलता है जो स्थानीय इतिहास एवं लोकसाहित्य की प्रवृत्तियों को समझने के लिए महत्वपूर्ण है। लोक गाथाओं में वर्णित वंशावलियों से इनकी तुलना करने पर इतिहास की टूटी कड़ियों को जोड़ने में सहायता मिलती है। कत्यूरियों के शिलालेख एवं ताम्रपत्र जो बागेश्वर, पांडुकेश्वर और बालेश्वर नामक स्थानों से प्राप्त हुए हैं, १०वीं शताब्दी तक प्राचीन हैं। चन्द राजाओं के ताम्र-पत्र १४वीं शताब्दी से मिलने लगते हैं।

"महाभारत" एवं पुराणों में कुमाऊँ की आदिम जन जातियों दस्यु, किन्नर, किरात, यक्ष, नाग, शक, खस आदि का विस्तृत उल्लेख है एवं इस क्षेत्र की भौगोलिक सीमाओं पर प्रकार पड़ता है। "महाभारत" के वनपर्व, सभापर्व, द्रोणपर्व, उद्योग पर्व और कर्ण पर्व इस दृष्टि से उल्लेखनीय हैं। पुराणों में स्कन्द पुराण, 'वायु पुराण' ब्रम्ह पुराण', 'भागवत पुराण' विशेष महत्त्व के हैं जो जातीय एवं भौगोलिक तथ्यों पर प्रकाश डालते हैं। 'स्कन्द पुराण' के मानस खंड में, जो राजा जनमेजय तथा सूत पौराणिक के बीच संवाद रूप में प्रारम्भ होता है, यहाँ के धार्मिक स्थानों, पर्वत शिखरों एवं नदियों का माहात्म्य वर्णन है। इनमें यागीश्वर (जागेश्वर), वैद्यनाथ, (वैजनाथ), अशोक वनिका (सीतावनी), गर्गाचल (गागर), नागपुर (नाकुरी) आदि स्थानों तथा लोहावती, पश्चिमी रामगंगा, कौशिकी (कोसी), गार्गी (गौला) आदि नदियों का उल्लेख है। मानस खंड अभी अप्रकाशित है।[1]

"स्कन्द पुराण" के केदार खंड के अनुसार हिमालय को पाँच खंडों में बाटा गया था—(१) नैपाल, (२) कूर्माचल, (३) केदार, (४) जलंधर, (५) कश्मीर।[2]

गजेटियरों में हैमिल्टन, अठकिंसन, नेविल और वाल्टन के विवरण महत्त्वपूर्ण हैं जिनमें स्थानीय जनजीवन संबंधी सभी प्रकार की सामान्य जानकारी दी गई है। हैमिल्टन के ईस्ट इंडिया गजेटियर (१८१२–१८२८) अब पुराने हो गए हैं किन्तु अठकिंसन का गजेटियर जो "हिमालयन डिस्ट्रिक्ट्स खंड १, २, ३, (१८८२) के नाम से प्रसिद्ध है दुर्लभ सामग्री प्रस्तुत करता है। नेविल ने नैनीताल का गजेटियर (१९०४) और वाल्टन ने अल्मोड़ा का गजेटियर (१९११) तैयार किए। अब इनकी सामग्री

१. 'कुमाऊँ का इतिहास' —बदरी दत्त पांडे-पृ० १६२.

२. "खंडाः पञ्च हिमालयस्य कथिता नेपाल कूर्माचलौ
केदारोऽथ जलंधरोऽथ रुचिरः कश्मीर संज्ञोऽतिमः।" स्कन्द०। केदारखंड।
४०-२७-२९

पुरानी पड़ जाने के कारण शासन ने इन जिलों के नये विवरण तैयार कराये हैं जिनमें यथास्थान स्थानीय बोलियों-एवं प्रकाशित साहित्यिक रचनाओं के उल्लेख हैं।

वार्षिक रिपोर्टों में अंग्रेज कमिश्नरों के द्वारा तैयार किये गये विवरण हैं जिनमें कमिश्नर ट्रैल की रिपोर्ट (१८२३) सबसे पुरानी है। इसमें जनता के खान-पान पर टिप्पणी है। कनिंघम की 'आर्क्यालॉजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया की रिपोर्ट में (१८६२-६५) तराई-भावर के प्राचीन स्थानों जैसे गोविषाण (काशीपुर) आदि की स्थिति स्पष्ट की गई है। सन् १८३७ में लिखित बर्ड साहब की रिपोर्ट में ट्रैल शासन की कटु आलोचना की गई है। कमिश्नर बैटन ने सन् १८४४ की रिपोर्ट में तराई के काश्तकार थाडू-बोक्सों की कृषि व्यवस्था पर प्रकाश डाला है। कमिश्नर रामजे की रिपोर्ट में (१८७४) तत्कालीन जमीन एवं जंगलात संबंधी बन्दोबस्त पर प्रकाश पड़ता है। स्टाइफ की रिपोर्ट से ज्ञात होता है कि असहयोग आन्दोलन से प्रभावित होकर जनता अंग्रेजों का विरोध करने लगी थी। यह रिपोर्ट सन् १६१७ में प्रस्तुत की गई थी।

यात्रा विवरणों में बैरन, शेरिंग, जोधसिंह नेगी, स्वामी प्रणवानन्द आदि की सूचनाओं से स्थानीय लोक जीवन एवं लोक रचनाओं को समझने में सहायता मिलती है। बैरन ने अपनी 'वांडरिंग्स इन द हिमाला' (१८४१) पुस्तक में स्थान-स्थान पर यहाँ की प्राकृतिक विशेषताओं का उल्लेख किया है। उसी ने नैनीताल नगर बसाया था। शेरिंग ने 'वेस्टर्न तिब्बत एण्ड ब्रिटिश बॉर्डरलैंड (१६०६) में जोहार एवं दारमाँ के भोटिया जीवन, भाषा एवं लोक साहित्य की सुन्दर व्याख्या की है। जोधसिंह नेगी ने 'हिमालयन ट्रैवल्स' में (१६२०) भोटियों के ही दैनिक जीवन, उनके खान-पान, रीति रिवाजों आदि पर प्रकाश डाला है। स्वामी प्रणवानन्द ने 'कैलाश मान सरोवर' पुस्तक (१६४६) में यही कार्य किया है। इन यात्रा विवरणों से स्थान-स्थान पर लोकगीतों, कथाओं, कहावतों आदि का ज्ञान होता है।

पुस्तकों में लोक साहित्य संबंधी प्राचीनतम कार्य रूसी विद्वान इवान पावलोविच मिनायेव (१८४०-६०) का है। जिन्होंने सन् १८७५ में कुमाऊँ में आकर लोक कथाओं, होली-गीतों और स्वाँगों का संग्रह किया। ये लोक कथाएँ एवं दंत कथाएँ रूसी अनुवाद सहित अगले वर्ष प्रकाशित हुई। पादरी केलॉग ने अपनी पुस्तक 'ए ग्रामर ऑफ द हिन्दी लैंग्वेज' के द्वितीय संस्करण (१८६३) में हिन्दी बोलियों के अंतर्गत कुमाउँनी पर तुलनात्मक दृष्टि से विचार किया। कुमाउँनी, गढ़वाली एवं नेपाली को उसने संयुक्त रूप से "हिमालयन डायलेक्ट्स" कहा है।[१] इसके एक वर्ष

१. 'ग्रामर ऑफ द हिंदी लैंग्वेज'-रेव. एस. एच. केलॉग, पृ० ७७

पूर्व गंगादत्त उप्रेती की 'प्रावर्ब्स एण्ड फोकलोर ऑफ कुमाऊँ एण्ड गढ़वाल' शीर्षक पुस्तक प्रकाशित हो चुकी थी। सन् १९०० में उन्हीं की एक अन्य पुस्तक 'हिल डायलेक्ट्स ऑफ द कुमाऊँ डिवीजन', 'पर्वतीय भाषा प्रकाशक' के नाम से प्रकाशित हुई। इस प्रकार उप्रेती जी सर्वप्रथम व्यक्ति थे जिन्होंने कुमाउंनी भाषा एवं साहित्य दोनों पर सम्यक् प्रकाश डाला।

तदुपरान्त जार्ज अब्राहम ग्रियर्सन का सुविख्यात "भारतीय भाषा सर्वेक्षण' प्रकाशित हुआ (१८९४–१९२७) जिसके प्रथम एवं नवम् भागों में कुमाउंनी संबंधी विस्तृत सामग्री को विभिन्न बोलियों के उदाहरण देकर संपुष्ट किया गया है। अभी तक यह भाषा विवेचन प्रस्थान बिन्दु माना जाता है। १९२० में पन्नालाल ने कुमाऊँ के रीति-रिवाजों पर पुस्तक लिखी। खस जाति के पारिवारिक कानूनों पर लक्ष्मीदत्त जोशी की पुस्तक १९२९ में प्रकाशित हुई। पादरी ओकले ने तारादत्त गैरोला के साथ मिल-कर 'हिमालयन फोकलोर' शीर्षक पुस्तक लिखी (१९३४) जिसमें विद्वतापूर्ण भूमिका सहित वीर गाथाओं, पशु-पक्षी संबंधी कथाओं का संग्रह है। राहुल सांकृत्यायन ने 'किन्नर देश' (१९५१), 'हिमालय परिचय' (१) 'गढ़वाल' (१९५३) और 'कुमाऊँ' (१९५८) पर तीन पुस्तकें लिखीं जिनमें स्थानीय बोलियों एवं जन साहित्य के उदाहरण हैं। इन पुस्तकों द्वारा शास्त्रीय विवेचन का मार्ग प्रशस्त हुआ है।

पत्र-पत्रिकाओं में अंग्रेजी के विशिष्ट शोध-पत्रों के अतिरिक्त स्थानीय पत्रिकाओं की सामग्री सम्मिलित है। सन् १९१० की 'इंडियन एंटीक्वेरी' में गंगादत्त उप्रेती ने 'ए स्पेसीमेन ऑफ द कुमाउंनी लैंग्वेज' शीर्षक निबंध लिखा था। १९११ में बंगाल की रायल एशियाटिक सोसायिटी के जर्नल में टीकाराम जोशी ने 'ए डिक्शनरी ऑफ पहाड़ी डायले-क्ट्स' प्रकाशित कराई थी जो कुमाउंनी के अर्थ विवेचन की दृष्टि से उपयोगी है। १९०९ की 'इंडियन एंटीक्वेरी' में ग्रियर्सन ने कवि गुमानी पर एक सोदाहरण लेख प्रस्तुत किया।

स्थानीय पत्रिकाओं में 'साप्ताहिक शक्ति' (१९१८–), "कुमाऊँ कुमुद' (१९२२–१९४८), 'अचल' (१९३८–१९४०) के अंकों में उल्लेखनीय सामग्री है। 'अचल' कुमाउँनी भाषा में ही प्रकाशित होती थी। इनके अतिरिक्त 'हिमालय' (रानी खेत) 'शिल्पी (अल्मोड़ा), 'पर्वतीय' (नैनीताल), 'नव ज्योति' (पिथौरागढ़) के अंकों में भी तत्संबंधी सामग्री है जो अध्ययन में सहायक होती है।

कुमाउंनी लोकजीवन, ग्रामीण व्यवस्था, समाज व्यवस्था के अतिरिक्त इतिहास, साहित्य और भाषा को केन्द्र बनाकर विगत वर्षों में एकाधिक शोध-प्रबंध स्वीकृत हुए

हैं जिनसे शोध की पर्याप्त सामग्री प्राप्त होती है। १९३५ में डा० शिवदर्शन पन्त ने सोशल इकानामी ऑफ द हिमालयाज', पर शोध-प्रबन्ध लिखा था। १९५० में डा०गुणानन्द जुयाल ने 'मध्य पहाड़ी भाषा' (गढ़वाली–कुमाउंनी) का अनुशीलन करते हुए उसका हिन्दी से संबंध स्पष्ट किया। १९५७ में डा० गोविन्द चातक ने गढ़वाली के लोक गीतों में अभिव्यक्त लोक संस्कृति का विवेचन किया जो कुमाउंनी लोक रचनाओं के संदर्भ में उपयोगी है। डा० हेमचन्द्र जोशी (१८९४–१९६७) ने यद्यपि कुमाउंनी पर कोई स्वतंत्र ग्रन्थ नहीं लिखा किन्तु शब्दों की व्युत्पति के वे अधिकारी विद्वान थे। १९६० में डा० त्रिलोचन पाण्डेय का 'कुमाउंनी जन साहित्य' पर शोध प्रबंध प्रस्तुत हुआ जिसमें लोक रचनाओं का पहली बार व्यवस्थित विवेचन किया गया है।

सन् १९६२ में डा० रामसिंह ने कूर्मांचलीय कृषि तथा औद्योगिक शब्दावली पर कार्य किया। १९७१ में डा० कृष्णानन्द जोशी ने कुमाउंनी लोक साहित्य का परिचयात्यक संग्रह प्रकाशित किया जिसमें लोकगीत, कथाएं, पहेलियाँ और लोकोक्तियाँ विशद रूप से हिन्दी अनुवाद सहित दी गई हैं। यह सभी प्रकार की लोक रचनाओं का पहला विस्तृत संग्रह है। १९७० में डा० भवानीदत्त उप्रेती का पिथौरागढ़ संभाग की बोली, और उसके लोक साहित्य पर प्रबन्ध लिखा गया जिसमें भाषा शास्त्र की नूतन प्रणाली वर्णनात्मक विश्लेषण (डिस्क्रिप्टिव एनालिसिस) का आश्रय लिया गया है। यह पूर्वी कुमाउंनी पर आधारित है। १९७१ में डा० भगत सिंह ने कुमाउंनी बोली का वर्णनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया जो उसी पद्धति पर पश्चिमी कुमाउंनी को मुख्य आधार बना कर चला है।

१९६६ में डा० नारायण दत्त पालीवाल का प्रबन्ध कुमाउंनी के कवियों का विवेचनात्मक अध्ययन शीर्षक से प्रकाशित हुआ। इसमें पहली बार कुमाऊँ के नागर साहित्य का विवेचन हुआ है। १९७२ में डा० प्रयाग दत्त जोशी ने कुमाऊँ तथा गढ़वाल की लोक गाथाओं का विवेचनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया जिसमें जागर गाथाओं, वीरगाथाओं, तथा मालूशाही एवं रमौल नामक गाथाओं का ऐतिहासिक विश्लेषण किया गया ह।

१९७२ में डा० केशवदत्त रुवाली ने कुमाउंनी शब्दावली की व्युत्पत्ति पर शोध-प्रबंध लिखा। इस विवेचन में उन्होंने टर्नर के नेपाली कोष को मुख्य आधार बनाया है। १९७३ में डा० शंभुशरण शुक्ल ने थारू लोकगीतों का आलोचनात्मक विवेचन किया। इस प्रकार कुमाउंनी भाषा और साहित्य पर पर्याप्त शोध-ग्रंथ लिखे जा चुके हैं।

इनके अतिरिक्त कुमाउंनी से संबद्ध सामग्री पर कार्य करने वालों में हरिशंकर जोशी 'नित्यानंद मिश्र, शिव प्रसाद डबराल, गंगादत्त तिवारी, चन्द्र लाल वर्मा, ताराचन्द्र त्रिपाठी, चारुचन्द्र पाण्डे आदि के नाम प्रमुख हैं। हरिशंकर जोशी ने "प्रतिभा-दर्शन" पुस्तक में (१९६४) कुमाउंनी भाषा के माध्यम से भारतीय आर्य भाषाओं की मौलिक स्थिति स्पष्ट करने का प्रयत्न किया है। कुमाउंनी शब्द भंडार के ऐतिहासिक पक्ष की दृष्टि से यह पुस्तक महत्त्वपूर्ण है। नित्यानंद मिश्र कुमाउंनी इतिहास कें विशेषज्ञ हैं। उन्होंने प्राचीन शिलालेखों एवं ताम्र पत्रों का विशेष अध्ययन किया है।

इसी बीच डा० शिव प्रसाद डबराल ने उत्तराखंड का इतिहास प्रस्तुत किया है। डा० गंगादत्त तिवारी ने कुमाऊं के पर्वतीय प्रदेशों में ग्रामीण स्वायत्त शासन पर शोध-प्रबन्ध लिखा। चन्द्र लाल वर्मा ने कुमाउंनी न्योली गीतों, लोक कथाओं, कहावतों और मुहावरों का विशद संग्रह किया था। 'प्यास' (१९४०) शीर्षक पुस्तक में उन्होंने १२०० से अधिक कुमाउंनी कहावतें प्रकाशित कीं थीं। इसके अतिरिक्त वे कुमाउंनी भाषा के प्रसिद्ध कवि थे। चारुचन्द्र पाण्डे ने, जो स्वयं साहित्यकार हैं, कुमाउंनी कवि गौर्दा के काव्य दर्शन पर (१९६५) सोदाहरण प्रकाश डाला है। उन्हें कुमाउंनी शब्दों की शक्तियों का सूक्ष्म ज्ञान है।

ताराचंद्र त्रिपाठी ने कुमाउंनी लोकगीतों की सामाजिक व्याख्या करने के अतिरिक्त स्थानीय ऐतिहासिक स्थलों की वर्तमान स्थिति निर्धारित करने का प्रयत्न किया है। इधर डा० शोभाराम शर्मा ने कुमाऊँ तथा पश्चिमी नेपाल के राजियों की बोली का अनुशीलन किया है जो जनजातीय दृष्टि से उल्लेखनीय है। इस प्रकार की अन्य साहित्यिक रचनाओं का उल्लेख परिशिष्ट में किया गया है।

उक्त उल्लेखों एवं सहायक सामग्री के आधार पर कुमाउंनी भाषा और उसके साहित्य के अध्ययन की वर्तमान स्थिति स्पष्ट होती है। इस पृष्ठ-भूमि के आधार पर हम अगले अध्याय में स्थानीय भाषा एवं साहित्य की प्रमुख सामग्री का आलोचनात्मक परिचय प्रस्तुत करेंगे।

२. स्थानीय परिस्थितियां

सीमा–विस्तार एवं नामकरण

प्रशासनिक दृष्टि से सन् १९६० के पूर्व कुमाउंनी कमिश्नरी में गढ़वाल एवं टेहरी गढ़वाल के जिले भी सम्मिलित थे। सन् १९६० में गढ़वाल एवं कुमाऊँ के तीन उत्तरी क्षेत्र चमोली, उत्तरकाशी और पिथौरागढ़ को मिलाकर उत्तराखंड कमिश्नरी नामक स्वतंत्र इकाई निर्मित की गई। गढ़वाल की पृथक् कमिश्नरी बनाई गई अतः प्रशासन के अन्तर्गत कुमाऊँ कमिश्नरी में केवल अल्मोड़ा और नैनीताल के दो जिले रह गए। किन्तु व्यवहार में कुमाउंनी भाषी क्षेत्र के अन्तर्गत पिथौरागढ़ जिले को सम्मिलित करते हैं। भाषा एवं लोक साहित्य की दृष्टि से यही उचित है कि पिथौरागढ़ का उल्लेख कुमाऊँ और नैनीताल के साथ ही किया जावे।

१९वीं शताब्दी में सन् १८३८ तक जिला कुमाऊँ नामक एक ही जिला था जिसमें नैनीताल–अल्मोड़ा के अतिरिक्त गढ़वाल सम्मिलित था। सन् १८३९ में गढ़वाल का अलग जिला बनाने पर जिला कुमाऊँ के अन्तर्गत नैनीताल और अल्मोड़ा दो भाग रह गए। सन् १८९२ में इन्हें भी अलग करके स्वतंत्र बना दिया गया। तात्पर्य यह कि इस समय कुमाऊंनी भाषा साहित्य की सामग्री अल्मोड़ा, नैनीताल और पिथौरागढ़ के तीन जिलों में प्राप्त है।

कुमाऊँ का क्षेत्रफल ८००० वर्गमील से कुछ अधिक है। इसकी भौगोलिक स्थिति २८° ५१ तथा ३०° ४९ उत्तरी अक्षांश एवं ७७° ४३ तथा ८१° ३१ पूर्वी देशान्तर के बीच पड़ती है। यहाँ की जन संख्या प्रतिवर्ष बढ़ती गई है। सन् १९५१ की जनगणना के अनुसार स्थानीय जन संख्या ११,० ८४,१९ थी जिसमें जिला अल्मोड़ा में पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों की संख्या अधिक थी। सन् १९६१ की जनगणना के अनुसार यह संख्या १४,७१,३०६ हो गई थी। तीनों जिलों में मिलाकर ७,६६,९४८ पुरुष थे और ७,०४, ३५८ स्त्रियाँ थीं। जिला अल्मोड़ा और पिथौरागढ़ में मिलाकर आज भी पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों की संख्या अधिक है। १९७१ की गणना के अनुसार कुल जनसंख्या १८,५३, ८६५ हो चुकी है।[1]

---

१. सेंसस ऑफ इण्डिया १९७१ सिरीज १. इण्डिया, पेपर I

किन्तु यह ध्यान देने की बात है कि सम्पूर्ण कुमाऊँ में एकमात्र कुमाउंनी भाषा का प्रयोग नहीं होता। बोल-चाल की दृष्टि से यहाँ कुमाउंनी के अतिरिक्त हिन्दी का प्रचार है तथा गौणतः नेपाली, गढ़वाली, भोटिया और उर्दू प्रयुक्त होती है। जन-गणना के अनुसार गढ़वाली बोलने वाले नैनीताल में और भोटिया बोलने वाले पिथौरा-गढ़ में अधिक हैं। प्रधानता कुमाउंनी तथा हिन्दी बोलने वालों की है। केवल कुमाउंनी बोलने वाले लगभग ६,००,००० हैं और हिन्दी बोलने वाले ४,००,००० के लगभग हैं। आज से लगभग ७५ वर्ष पूर्व जब ग्रियर्सन ने यहाँ का भाषा सर्वेक्षण किया था तो उनके अनुसार केवल ४,३६,७८८ लोग कुमाउंनी बोलते थे। आज यह संख्या १०,००, ००० तक पहुँच चुकी है। यही स्थानीय निवासियों के दैनिक बोलचाल की तथा कुछ सीमा तक लिखने-पढ़ने की भाषा है।

इस समय जिला नैनीताल के निवासी हिन्दी भाषा के अधिकाधिक संपर्क में आ रहे हैं। नैनीताल के दक्षिणी भाग भाबर-तराई में शुद्ध कुमाउंनी यदा-कदा प्रयुक्त होती है। इसके विपरीत अल्मोड़ा और पिथौरागढ़ के जिले मुख्यतः कुमाउंनी भाषी बने हुए हैं। पिथौरागढ़ के सुदूर उत्तर व्यास, चौदाँस नामक पट्टियों में कुमाउंनी का स्थान तिब्बती प्रभावित भोटिया बोली ले लेती है। कुमाऊँ का लोक साहित्य इसी कुमाउंनी में मिलता है जो विषयवस्तु और शैली दोनों दृष्टियों से हिन्दी के अन्य क्षेत्रीय भाषा साहित्य से निरंतर प्रभावित हो रहा है।

'कुमाऊँ' शब्द की व्युत्पत्ति कूर्मांचल शब्द से की जाती है। जनश्रुति के अनुसार विष्णु भगवान का कूर्मावतार, चंपावती नदी के पूर्व कूर्म पर्वत (कानदेव) में तीन वर्षों तक खड़ा रहा। तब से इसका नाम कूर्म + अचल = कूर्मांचल पड़ा जो अब कुमाऊँ तथा शीघ्रता में 'कुमूं' कहलाता है। जोधसिंह नेगी ने लिखा है कि कुछ लोग कुमाऊँ को कालू तड़ागी के नाम पर प्रसिद्ध मानते हैं। वह किसी समय चंपावत में राज्य करता था। उन्होंने कुछ लोगों का दूसरा मत उल्लिखित किया है कि कुमाऊँ शब्द मूलतः कुमाऊ है जिसका तात्पर्य धन-खेती कमाने वाले से होता है। स्थानीय लोग बड़े कमाऊ हैं इसलिए कुमाउंनी कहे गए।[1] कृपालदत्त जोशी इसे कूर्मदेव नरेश के नाम पर मानते हैं।[2]

अधिक प्रचलित मत कूर्मांचल से कुमाऊँ होना है। डा० गुणानन्द जुयाल ने कुर्माचलो, कुम्माअओ, कुमाऊँ इस प्रकार की इसकी व्युत्पत्ति दी है।[3] किन्तु डा० सुनीति कुमार

१. 'हिमालयन ट्रैवल्स'—पृ० ११२
२. 'अचल' पत्रिका—मई १९३८
३. मध्य पहाड़ी भाषा (गढ़वाली–कुमाउंनी) का अनुशीलन और उसका हिन्दी से संबंध—पृ० १२

चैटर्जी कूर्माचल से कुमाऊँ की व्युत्पत्ति प्रामाणिक नहीं मानते। उनके अनुसार 'ल' वर्ण के लोप होने का कोई कारण नहीं दिखाई देता। उनके अनुसार क्या मूलशब्द कूर्मायत नहीं हो सकता।[1] हरिशंकर जोशी ने कूर्माचल से कुमाऊँ शब्द का विकसित होना असंभव माना है क्योंकि कूर्माचल से 'कूमाचो' बनेगा। अतः कुमाऊँ शब्द का विकास कूर्मांक अथवा कूर्मांग+क, कूमाँङओः,-कुम्माओ, कुमाउ, कुमाऊँ इस प्रकार हुआ होगा। इससे किवदंती भी रह जाती है और शब्द की व्युत्पत्ति भी ठीक बैठ जाती है।[2]

नित्यानंद मिश्र के अनुसार अभी तक के संदर्भों में कूर्माचल नाम सर्वप्रथम काली कुमाऊँ के एक शिलालेख में आया है जो नागनाथ के प्रसिद्ध मंदिरमें है। यह शिलालेख वीरचन्द्र के समय का है जिसमें चन्द राजा रुद्रचन्द्र (१५६८–९७) का नाम है। रुद्र चन्द्र ने बालेश्वर मंदिर में कुमाऊँ के मठ की स्थापना की थी। चन्द राजाओं के ताम्र-पत्रों में इस मठ का वर्णन कई बार हुआ है।[3]

यमुनादत्त वैष्णव 'अशोक' का कहना है कि कुमाऊँ नाम सर्व प्रथम 'आइने अकबरी' में ही प्रयुक्त हुआ है। सरकार कुमायूंनी नाम का सूबा सरकार बदायूंनी नामक सूबे से मिला हुआ था। इसमें २७ महाल थे। चन्द राजाओं के दो मुख्य विभाग थे पहाड़ और माल। पहाड़ी क्षेत्र पूर्व में 'शारदा'(काली नदी) नदी से लेकर पश्चिम में यमुना नदी तक ऊँची-नीची पर्वत श्रेणियों से युक्त था। माल क्षेत्र में तराई-भाबर का भू-भाग था। अकबर के समय कुमाउंनी सेना ने लाहौर के निकट मुगलों की ओर से युद्ध में भाग लिया जिसके लिए चन्द शासक को बाज बहादुर चन्द की उपाधि मिली।[4]

इस प्रकार कुमाऊँ शब्द की व्युत्पत्ति अनिश्चित है। लेखक का अनुमान है कि आरम्भ में कूर्म से 'कुमूं' बनकर पर्याप्त समय तक यह शब्द एक विशेष भू-भाग का द्योतक बना रहा जिसे आज काली कुमाऊँ कहते हैं। काली शारदा नदी का स्थानीय नाम है। इसी से संलग्न कुमाऊँनी क्षेत्र है। कालान्तर में चंद राज्य के अल्मोड़ा, पाली पछाऊँ आदि स्थानों तक विस्तृत होने पर 'कुमूं' शब्द पहले से बहुत अधिक पर्वतीय भू-भाग का द्योतक हो गया। इसी समय सोलहवीं शताब्दी में 'कुमूं' क्षेत्र का मुगल दरबार से संबंध जुड़ा होगा और बदायूँनी सरकार जैसे शब्द सादृश्य के आधार पर इसे कुमायूँ अथवा कुमाऊँ कहा जाने लगा होगा। डा० भवानी दत्त उप्रेती ने हिन्दी की प्रकृति के अनुसार

१. मध्य पहाड़ी भाषा (गढ़वाली–कुमाउंनी) टिप्पणी
२. 'प्रतिभा दर्शन' पृ० ६३
३. 'उत्तरा खंड भारती' १९७३, वर्ष १, अंक १, पृ० २२
४. 'राजुली–मालूसाही''—निवेदन, पृ० ४–५

बोलने और लिखने पर 'कुमूं' शब्द का कुमाऊँ में प्रचलित होना तर्कगम्य माना है। अर्थात् वे भी कुमूं शब्द से कुमायूँ होना स्वीकार करते हैं।

कुमाऊँ की भौगोलिक सीमाओं के संबंध में बदरी दत्त पाँडे की ये पंक्तियाँ विचारणीय हैं—"वास्तव में कुमाऊँ प्रांत से जिस-जिस मुल्क या प्रदेश का बोध होता है वह अल्मोड़ा तथा नैनीताल के पहाड़ी जिले हैं। इस समय परगना काली कुमाऊँ में गंगोली और चौगर्खा भी शामिल हैं पर गंगोली और चौगर्खा के लोग वास्तव में कुमैय्यें नहीं कहे जाते। वे गंगोला और चौगर्खिये कहलाते हैं। पहले परगना काली कुमाऊँ के लोग ही ठेठ कुमैय्यें कहे जाते रहे हैं। किन्तु अब यह शब्द अल्मोड़ा और नैनीताल के तमाम लोगों के लिए काम में लाया जाता है। चन्द राजाओं ने ही इस नाम को सब में प्रख्यात किया।"[१]

इस समय कुमाऊँ के उत्तर में तिब्बत, पूर्व में नेपाल, पश्चिम में गढ़वाल और दक्षिण में मुरादाबाद, रामपुर, बरेली तथा पीलीभीत के जिले हैं। उत्तर में हिमालय के पनढाल इसे 'तिब्बत' से अलग करते हैं। पूर्व में काली नदी कुमाऊँ और नेपाल को पृथक करती है। पश्चिम में रामगंगा नदी से गढ़वाल आरम्भ होता है। दक्षिणी सीमा प्राकृतिक न होने के कारण भाबर तराई के क्षेत्र सुविधा मात्र के लिए जिला नैनीताल में हैं। अन्यथा कुमाऊँ का पर्वतीय भू-भाग भाबर तक आकर समाप्त हो जाता है।

प्राचीन उल्लेख

कुमाउंनी लोक साहित्य में रामायण, महाभारत और पुराणों के अनेक वृत्ताँत प्रचलित हैं जिसका मुख्य कारण इस प्रदेश की ऐतिहासिक प्राचीनता है। भारतीय इतिहास के लेखकों को भले ही इस क्षेत्र की अधिक जानकारी न रही हो किन्तु कुमाऊँ के पार्वत्य प्रदेश की प्राचीनता असंदिग्ध है। महाभारत, पुराण, इतिहास तथा साहित्यिक ग्रंथों में इस भू-भाग की जातियों के उपलब्ध उल्लेख इसकी प्राचीनता सिद्ध करने के लिए पर्याप्त हैं।

'महाभारत' के वन पर्व में किरात, तंगण, कुलिंद आदि जातियों का नाम है जो यहाँ की घाटियों में निवास करती थी।[२] दुर्योधन ने सभा पर्व में युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में उपस्थित राजाओं के नाम गिनाते समय कहा कि मेरु मंदिर पर्वतों के बीच शैलोदा नदी के तट पर कीचक वेणु वृक्षों की छाया में, खस एकासन, दीर्घ वेणु, पारंद कुलिंद, तंगण और पर तगण नामक पहाड़ी राजा रहते हैं जो पिपीलिका जाति का

१. 'कुमाऊँ का इतिहास' पृ० १

२. 'महाभारत'-वन पर्व अ० १४०।२४-२६

स्वर्ण और काले रंग के चँवर आदि लेकर आए थे।[1] द्रोण पर्व में स्थानीय जातियां दरद, तंगण, खस, लंपाक और कुलिंद आदि को मलेच्छ कहा गया है जिन्होंने सात्यकि पर चारों ओर से पत्थर बरसाने शुरू किए थे किन्तु प्रतिकार करने में निपुण सात्यकि ने अपने नाराचों द्वारा उन्हें छिन्न-भिन्न कर दिया।[2] उद्योगपर्व एवं कर्ण पर्व में भी ये जातियाँ उल्लिखित हैं।

पुराणों में कुमाऊँ का प्राचीन भू भाग विस्तार से उल्लिखित है। ब्रह्मपुराण, 'वायु पुराण' में यहाँ की नाग, विद्याधर, यक्ष, किन्नर आदि जातियों का उल्लेख मिलता है। 'स्कन्द पुराण' के मानस खंड में इसका विस्तृत वर्णन है जहाँ कोसी (कौशिकी) और सुंवाल (शाल्मली) नदियों के बीच में स्थित काषाय पर्वत के नाम से अल्मोड़े का पर्वतीय भूभाग वर्णित है।[3] 'भागवत पुराण' में जहाँ मार्कण्डेय ऋषि की कथा है वहाँ चित्रशिला का भाग उल्लिखित है। वहाँ उनका आश्रम था और पुण्य भद्रा नदी वहती थी। चित्रशिला अब रानीबाग के नाम से प्रसिद्ध है जो काठगोदाम से दो मील है। पुण्य भद्रा संभवतः आज की गौला नदी है।[4]

'वायु पुराण', 'विष्णु पुराण', 'भागवत पुराण' 'मार्कण्डेय पुराण', एवं 'हरिवंश पुराण' में किन्नर, सिद्ध, यक्ष, दानव, दैत्य, गंधर्व आदि जातियों के संकेत हैं। यक्ष कुबेर के सेवक थे। अप्सराएँ किन्नरों की पत्नियाँ थीं। गंधव जाति जड़ी-बूटियों के प्रयोग में कुशल थी। राक्षस, नाग और खस आदित्य के सेवक कहे गए हैं। पुराणों के अतिरिक्त संस्कृत एवं हिन्दी के प्राचीन साहित्यकारों ने इन जातियों की विशेषताएँ स्पष्ट की हैं। कालिदास ने कुमार का जन्मस्थान इसी देवदारु स्थली में माना है जहाँ किरात कमर में मोर पंखों को बाँध कर मृगों की खोज में इधर-उधर घूमते रहते थे।[5]

---

१. 'महाभारत'—सभा पर्व अ० ५२।१–५

२. 'महाभारत'—द्रोण पर्व अ० १४१।४२–४३

३. "कौशिकी शाल्मली मध्ये पुण्यः काषाय पर्वतः।
तस्य पश्चिम भागे वै क्षेत्र विष्णोः प्रतिष्ठितम्"॥
उद्‌धृत—'कुमाऊं का इतिहास' पृ० ५।

४. "ते वै तदाश्रमं जग्मुर्हिमाद्रेः पार्श्व उत्तरे
पुण्य भद्रा नदी यत्र चित्राख्या च शिलाविभौ॥"
श्रीमद्‌भागवत् १२।८

५. 'कुमार संभव'—सर्ग १।१५।

हिन्दी के प्राचीन महाकाव्य 'पृथ्वीराज रासो' में कुमाऊँ शब्द स्पष्ट रूप से प्रयुक्त हुआ है जहाँ दुर्जेयगढ़ में कुमोदमणि राज्य करता था।[1] तुलसी ने मानस में आभीर, यवन, कोल, किरात, खस, शबर, जातियों की चर्चा की है जो श्वपच होने के कारण अघरूपी थे।[2] सूफी कवि उस्मान ने 'चित्रावली' प्रेमाख्यान में 'कुमाऊँ' का नाम लेकर कहा है कि वहाँ खसिया लोग रहते थे।[3] हिन्दी के रीतिकालीन कवि मतिराम का तत्कालीन कुमाउंनी राजा उद्योतचन्द से (१६७८–१६९८) अच्छा परिचय था।

मुगल काल में अकबर के समय 'भुकासी' (वोकसाड़), गजरपुर (गदरपुर) और माल वराह(माल=तराई-भावर) नामक जिन स्थानों की चर्चा है वे वर्त्तमान समय में विद्यमान हैं। अकवर ने नगरकोट की चढ़ाई में कुमाउंनी राजा रुद्र चन्द (१५६५–१५९७) को चौरासी माल अर्थात् वर्त्तमान तराई-भाबर का क्षेत्र दिया था। राजा लक्ष्मीचन्द (१५९७–१६२१) तथा बाजबहादुर चंद (१६३८–१६७८) का मुगल दरबार से सीधा संबंध था।

इन उल्लेखों से न केवल कुमाऊँ की प्राचीनता का ज्ञान होगा बल्कि कुमाउंनी में 'अकल', 'अदालत', 'खबीस' 'फुरसत', जैसे शब्दों के प्रचलन का सम्यक् कारण भी ज्ञात होगा। इन उल्लेखों से एक तथ्य यह स्पष्ट होता है कि कुमाऊँ को ऐतिहासिक जनपद के रूप में स्वीकार किया जा सकता है। प्रागैतिहासिक काल में यह मेरु प्रदेश का अंग था। किन्नर जाति की प्रधानता होने पर इसे किन्नर देश कहा गया। किरातों की प्रधानता होने पर इसे 'किरात मंडल' कहा गया। ऐतिहासिक काल में खस जाति के प्रभुत्व सम्पन्न होने पर यही क्षेत्र 'खस मंडल' नाम से प्रसिद्ध हुआ।

अतः जनपदीय रूप में कुमाऊँ की एक विशिष्ट स्थिति है तथा कुमाउंनी भाषा एवं साहित्य का एक सुनिश्चित अर्थ है। इस अर्थ के साथ लगभग दो हजार वर्षों की अविच्छिन्न ऐतिहासिक परम्परा जुड़ी हुई है।

---

१. "सवालक्ख उत्तर सयल, कुमऊँ गढ़ दूरंग।
राजत राज कुमोदमनि, हय गय द्रब्ब अभंग।" पद्मावती समय, २०।३१

२. "आभीर जमन किरात खस स्वपचादि अति अघरूप जे।
काहि नाम बारक तेपि पावन होंहि राम नमामिते।" 'रामचरित मानस' उत्तरकांड। १३० दोहा

३. सिरी नगर गढ़ देखि कुमाऊँ।
खसिया लोग बसहिं तेहिं गाऊँ।।" 'चित्रावली'। परेवा खंड, दोहा १४४, पृ० ५७

प्राकृतिक स्थिति

विशिष्ट प्राकृतिक स्थिति के कारण कुमाऊँ के जनजीवन पर पड़ने वाले भौगोलिक प्रभाव को स्पष्ट पहचाना जा सकता है। यहाँ एक ओर छब्बीस हजार फीट तक ऊँचे पर्वत शिखर हैं जो सदैव हिमाच्छादित रहते हैं। दूसरी ओर लंबी चौड़ी घाटियाँ हैं जो कृषि के लिए उर्वर हैं। सीढ़ीनुमा खेत यहाँ की विशेषता हैं। उत्तर में विशाल तिब्बती पनढाल (वाटर शेड) ऊँची-ऊँची शिखर मालाओं के रूप में फैले हैं जिनकी औसत ऊँचाई १८००० फीट है। यहाँ तिब्बत जाने के लिए अनेक दर्रे हैं जैसे दारमा दर्रा, लिपूलेख दर्रा, किंगरी-बिंगरी दर्रा आदि, जिनसे होकर लोग तिब्बत आते-जाते रहे हैं।

भोटिया लोग इसी कारण द्वि-भाषी हैं। तिब्बत की मंडियों में व्यापार के लिए जाने पर वे तिब्बती बोलते हैं और कुमाऊँ के मैदानी भागों में उतरने पर हिन्दी का प्रयोग करते हैं। कुमाऊँ की पर्वत-चोटियों में नंदादेवी २६६४० फीट, त्रिशूल २३३६० फीट, नंदा कोट २२,५१० फीट और पंचचूली २२६५० फीट ऊंची हैं। पंचचूली के शिखर पवित्र माने जाने के कारण लोक रचनाओं में प्रायः उल्लिखित हैं।

घाटियों में हिम के तैरते हुए पहाड़ यहाँ की विशेषता है जिन्हें बोलचाल में 'गल' कहते हैं। ये सैकड़ों फीट मोटे तथा मीलों लंबे हैं। मिलम ग्लेशियर लगभग पच्चीस मील लंबा है और कुमाऊँ का सबसे बड़ा गल है। यहाँ बड़े-बड़े पनढालों का अलग महत्त्व है, असकोट, कत्यूर, जोहार, गंगोली, पाली पछाऊँ और बारा मंडल के परगने घाटियों में बसे होने के कारण लोक संस्कृति के केन्द्र बने रहे हैं। नदियों के दोनों ओर फैले समतल खेत, जिन्हें 'सेरा' कहते हैं, विशिष्ट लोक गीतों की जन्मभूमि हैं। राम गंगा, सरयू, गोमती, और कोसी यहाँ की प्रसिद्ध नदियाँ हैं जिनके किनारे मंदिरों में धार्मिक व्यापारिक मेले लगते आए हैं।

इस प्रकृति ने स्थानीय जलवायु एवं ऋतु परिवर्तन को प्रभावित करने के साथ-साथ पौराणिक-धार्मिक किंवदंतियों को जन्म दिया। यहाँ के जलाशयों से अनेक ऋषि मुनियों की कथाएँ संबद्ध हैं। नैनीताल, भीमताल, सात ताल, नल दमयंती ताल, नौकुचिया ताल प्रत्येक की अपनी दंत कथाएँ हैं।

प्राकृतिक स्थिति के कारण यहाँ तीन ही ऋतुएँ मानी जाती हैं जिन्हें 'रूड़ी' (ग्रीष्म), चौमास (वर्षा) और 'ह्यूंन' (शीत) कहते हैं। ग्रीष्म ऋतु मार्च के मध्य से जुलाई मध्य तक रहती है। वर्षा ऋतु जुलाई मध्य से नवम्बर मध्य तक रहती है। शीत ऋतु का समय नवम्बर मध्य से मार्च मध्य तक है। जोहार, दारमा और

दानपुर की ओर शीतकाल बहुत लम्बा होता है। भूमि लगभग ऊसर है। यहाँ के 'बुग्यालों' में पशुपालक अस्थाई निवास बनाकर पशु चराते हैं। प्रकृति ने ही नदियों की घाटियों में निवासियों को कृषक बनाया है तथा शुष्क स्थानों में पशु पालक।

कृषि द्वारा उगाए जाने वाले अनाजों में प्रमुख हैं—मडुवा, झुंगरा, मादिरा, गेहूँ, धान, भट्ट, गहत आदि। पक्षियों में घुघुता, मलया, हिलाँस, कफुवा, घिनौड़ा प्रमुख हैं। फूलों में जाई, गेंदा, बुरूँश, गुलबाँक, शिलिंग मुख्य हैं और फलों में दाड़िम, अखरोट, आड़ू, केला, नारंगी, नाशपाती, कुसम्यारू, सेव आदि हैं। साग सब्जियों में तरूड़, गडेरी, पिनालु, गेठी, बाकुला, लाई, कैरुवा, आलू, बेथुवा आदि हैं। वृक्षों में देवदारु के अतिरिक्त पयार, तुन, पाँगर, चीड़, काफल, बाँज, खैर आदि होते हैं। इनकी चर्चा लोक साहित्य में यथास्थान हुई है।

प्रकृति ने स्थानीय लोक विश्वासों एवं पर्व त्योहारों को इस प्रकार प्रभावित किया है कि इनका स्वरूप वातावरण के अनुरूप ढल गया है। ग्रीष्म ऋतु के आरंभ होने पर 'फूल संग्यान'(पुष्प संक्रान्ति) मनाई जाती है, गाँव में 'ऋतुरैण' और 'चैतू' लोक गीत सुनाई पड़ते हैं। शीत काल का प्रारम्भ 'खतड़ुवा' त्योहार से माना जाता है जब शिखरों पर आग जलाई जाती है। स्थानीय प्रकृति यदि कहीं पर उदार है तो कहीं अत्यधिक कठोर है। शीत प्रधान जलवायु में निवासी घुमन्तू जीवन बिताने के लिए बाध्य हैं। इसके विपरीत भिकिया सैन, चौखुटिया, बागेश्वर, जैसी घाटियाँ दिन में बड़ी गरम, तो रात में बड़ी ठंडी होती हैं।

इस प्राकृतिक स्थिति के कारण पहाड़ों में थोड़ी-थोड़ी दूर पर भिन्नताएँ उत्पन्न हो गई हैं। ऋतु परिवर्तन, घुमन्तू जीवन एवं कृषि-व्यवसाय ने जन जीवन पर गहरा प्रभाव डाला है। आवागमन की कठिनाई से विभिन्न घाटियों का परस्पर संपर्क बहुत कम हुआ है। फलस्वरूप कहीं पर एक ही घाटी के दोनों ओर रहन-सहन और बोलचाल में अंतर आ गया है। प्रत्येक बड़ी नदी अथवा घाटी संबंधी जनश्रुतियों के उत्पन्न हो जाने का भी यही कारण है। शायद ही कोई ऐसी पर्वत चोटी हो जहाँ देव दानवों का निवास न माना जाता हो।

कुमाउंनी भाषा का दस, बारह से अधिक रूपान्तरों में प्रचलित होना इसी प्राकृतिक स्थिति का परिणाम है। पश्चिम-उत्तर में दानपुर का निवासी जिस बोली का प्रयोग करता है, वह पूर्वी भाग में स्थित सोर-सीरा के निवासियों से इतना भिन्न है कि कुमाउंनी के दो विशिष्ट रूपों तक की कल्पना की जाने लगी है। एक ही लोकगीत की धुनें अलग-अलग रूपों में मिलती हैं। प्रसिद्ध लोकगाथा (फोक

इपिक) 'मालूसाही' बारामंडल की ओर से जिस धुन में गाई जाती है वह राग दुर्गा के निकट है। कौसानी बागेश्वर की ओर प्रचलित इसके रूपान्तरों में राग सोहनी की विशेषताएँ लक्षित होती हैं।

यह प्रकृति पर्यटकों के लिए सदैव लुभावनी और आकर्षक रही है किन्तु इसने निवासियों को कल्पना प्रधान और भाव प्रवण बना दिया है। यहाँ के निवासियों ने यदि हिम मंडित शिखरों में किसी रहस्यात्मक सत्ता के दर्शन किए हैं, तो उन्होंने दैनिक जीवन में कर्मठ होना भी सीखा है। कृषि द्वारा आजीविका नहीं चल पाती इस कारण कुमाउंनी नौकरी की खोज में दूर-दूर भटकते हैं। वे सेना में, सरकारी नौकरी में अथवा साधारण काम काज करने घर से चले जाते हैं। यहाँ लौट कर आने का उन्हें बहुत कम अवसर मिलता है। अतः प्रकृति निवासियों की दृष्टि से सुखद नहीं रही है। इसने विरोधात्मक शक्ति के रूप में कार्य किया है।

"एक ओर है इसका प्रेरणात्मक सौंदर्य, दूसरी ओर है मानव के प्रति निर्मम बर्बर व्यवहार। कुमाऊँ की लगभग सभी लोक धुनों में यह विरोधाभास अभिव्यक्त है। इस प्रदेश की इन सुन्दर लयों में उदास आलाप, लंबे खिंचे हुए दुखद चढ़ाव और आकस्मिक उतार का स्पष्टीकरण केवल इस नैसर्गिक वातावरण की कठोरता और निर्दयता में ही है। ऐसे कठोर सौंदर्य के बावजूद इनसे प्रेरणा पाकर कुमाऊँ का निवासी सौंदर्य का चिरंतन प्रेमी बन गया है। चाहे इस सौंदर्य में अंततः उसे निराशा और खेद ही मिला है। उसकी सृजना में यही करुण स्वर व्याप्त है।"[१]

स्थानीय प्रकृति के अतिरिक्त कुमाऊँ का लोक जीवन सीमावर्ती क्षेत्रों से भी प्रभावित हुआ है। दक्षिण में तराई-भाबर का भूभाग पर्वतीय जीवन की एकरूपता बनाए रखने में सहायक हुआ है। यहाँ के घने जंगलों में लड़ाकू जातियाँ अथवा विद्रोही शरण लेते रहे। यह क्षेत्र कभी कुमाऊँ के अन्तर्गत रहा तो कभी मैदानी राज्यों के साथ रहा। थाड़ू, बोक्सा जातियाँ यहाँ राजस्थान से आकर बसीं पहाड़ी भूभागों से आकर नहीं। उनके लोक विश्वासों और रीति रिवाजों की परंपरा उन्हें अन्य कुमाऊँ वासियों से अलग रखती है।

पूर्वी सीमा पर स्थित असकोट, सोर व सीरा के निवासियों पर डोटी-नेपाल का प्रभाव है जो उनकी बोलियों से स्पष्ट प्रकट होता है। इनमें नेपाली उद्गम के अनेक शब्द प्रयुक्त होते हैं। कारण यह है कि प्राचीन काल से दोनों ओर के निवासी

---

१. 'लोक कला'--२. पृ० १०.

काली नदी के आरपार आते-जाते रहे हैं। पश्चिम में दानपुर के सीमावर्ती गाँव से गढ़वाल का प्रभाव लक्षित होने लगता है। इस ओर भौगोलिक सीमा स्पष्ट न होने के कारण सल्ट और दानपुर की बोलियाँ गढ़वाली की सलाणी उपबोली से प्रभावित हैं। उधर गढ़वाल की सीमावर्ती भाषा भी 'माँझ कुमैय्याँ' कहलाती है, जिसका तात्पर्य मध्य कुमाउंनी से है।[१] इनमें दोनों भाषाओं के शब्द रूप एक जैसे होने लगते हैं।

कुमाऊँ का तिब्बत के साथ निरंतर व्यापारिक संबंध बना रहा। अतः उत्तर में जोहार दारमा की बोली, साहित्य, धर्म, एवं रीति-रिवाजों पर तिब्बती प्रभाव है। यहाँ के भोटिया निवासी तिब्बत से ऊन का व्यापार करते रहे हैं। इनके यहाँ प्रचलित मृत्यु संस्कार संबंधी प्रथा 'ढुरुंग' तिब्बती लामा की देख-रेख में संपन्न कराई जाती है। वाल्टन ने उन्हें तिब्बती-बर्मी परिवार का घोषित किया है। उसके अनुसार कुछ भोटिये एक दूसरे की बोली नहीं समझते।[२]

इस प्रकार कुमाऊं की प्राकृतिक स्थिति ने उन विशेषताओं को जन्म दिया, जिन्होंने स्थानीय लोक भाषा एवं साहित्य को एक विशिष्ट स्वर प्रदान किया है।

सामाजिक पृष्ठभूमि

कुमाउंनी भाषा में एकाधिक आर्येतर तत्वों का संकेत किया जाता है। कुमाउंनी साहित्य भी जिस लोक धर्म की पीठिका पर आधारित है उसमें अनेक जातियों के रीति-रिवाज, धार्मिक विश्वास, मंत्र-तंत्र एवं जादू-टोना मिले हुए हैं। वस्तुतः यह संपूर्ण भाषा साहित्य जिस लोक संस्कृति पर आधारित है उसका निर्माण विभिन्न जातीय परंपराओं से हुआ है। इसके वास्तविक स्वरूप को समझने के लिए स्थानीय जातियों एवं परंपराओं का ज्ञान आवश्यक है।

यहाँ की प्रागैतिहासिक गंधर्व, यक्ष और किन्नर जातियों के विषय में निश्चित रूप से तो कुछ नहीं कहा जा सकता किन्तु अठकिंसन ने लिखा है कि गंधर्व गाँधार देश के रहने वाले थे। किन्नर कुमाऊँ के पश्चिम जौनसार बावर में रहने वाले 'कुणैत' थे। सिंध व हिन्दुकुश के लोग 'विद्याधर' माने गए हैं। 'नाग' जाति के वंशज नाकुरी (दानपुर) में रहते हैं। 'दैत्य' पुराने दस्यु हैं।[३]

---

१. ग्रियर्सन—लिंग्विस्टिक सर्वे ऑफ इण्डिया''—खण्ड ६, भाग ४, पृ० ३३२
२. 'अल्मोड़ा ए गजेटियर'—पृ० ९८
३. कुमाऊँ का इतिहास' में, उद्धृत—पृ० ५१०

राहुल साँकृत्यान ने कनौरी भाषा के उदाहरण देकर बताया है कि उसमें 'सू'-शू शब्द देवता वाचक है जिसे किन्नर-किरात शब्द मानना चाहिये। गढ़वाल के गाँवों में 'सू' अथवा 'स्यूं' शब्द जोडकर वरासू. अखलस्यूं जैसे शब्द बनते हैं।[१] (१) कुमाऊँ में भी 'द्वारसों' जैसे स्थानीय नाम मिलते हैं। राहुल जी के अनुसार खस जाति के आगमन के पूर्व हिमाचल में किन्नर-किरात जाति रहती थी जिनके संबंध में ठीक से बताना आसान नहीं है। वे लिखते हैं—

"किन्नरों का देश एक समय गंगा के पनढर से पश्चिम में सतलज और चंद्रभागा के पनढर तक फैला हुआ था और किरात, गंगा के पनढर के पूर्वी छोर को लिये सारे नेपाल तक थे। १८ वीं सदी में कोसी से पूर्व में बसने वाली जातियाँ राई, लिंबू, याखा, किरात, कही जाती थीं। गोरखा जुमला के बीच के प्रधान निवासी मगर और गुरुंग जातियों को यद्यपि किरात में नहीं गिना जाता था किन्तु मानव मतत्व की दृष्टि से ये भी उसी विशाल किरात जाति का अंग थीं। काली के पश्चिमी तट पर (असकोट में) अब भी राजी (राजकिरात) उसी किरात जाति के अवशेष हैं।[२]

हिमालय की उपत्यकाओं में किरातों का प्रसार ऐतिहासिक उल्लेखों से प्रमाणित है। केदारखंड उस समय 'किरात मंडल' कहलाता था। महाभारत में इनका उल्लेख हुआ है। कहते हैं जब अशोक नेपाल गए तो वहाँ किरात राज्य था। ग्यारहवीं शताब्दी में कुछ कुमाउंनी शासकों के विचित्र नाम मिलते हैं जैसे बीजड़, जीजड़, कालू, कलसू. नागू-भागू आदि जो कहे तो खस जाते हैं किन्तु अठकिसन ने उन्हें 'विष्णु पुराण' के आधार पर किरात संबद्ध माना है।[३] असकोट के बनरौतों (राजी) जो किरातों के वंशज हैं की भाषा का अध्ययन करने पर डा० शोभाराम शर्मा ने स्पष्ट किया है कि वह कुमाउंनी से भिन्न आग्नेय परिवार की मुंडा शाखा से संबंध रखती है।

खस जाति के आगमन के पूर्व संभवतः कुमाऊँ में मुंडा एवं द्रविड़ जाति के जो लोग फैले हुए थे उनके वंशधर वर्तमान नायक और डोम जैसी संज्ञा वाले लोग हैं जो परवर्ती जातियों की क्रमिक दासता को झेलकर वर्तमान अधोगति को पहुँचे हैं। कुमाउंनी में अनेक देशज शब्द उन्हीं की बोलियों के अवशेष हैं जो अन्य भारतीय आर्य भाषाओं में नहीं मिलते।

---

१. 'कुमाऊँ'—पृ० २५

२. 'हिमालय परिचय'–१. पृ० ४२

३. 'हिमालयन डिस्ट्रिक्ट्स'–खंड २–पृ० ३६४

डा० गुणानन्द जुयाल ने मध्यपहाड़ी और दरद भाषाओं में जो रूपात्मक साम्य खोजा है वह हिन्दी में नहीं मिलता। उनके मतानुसार स्थानीय बोली में प्रयुक्त 'खुट' (पैर), 'कैमि' (दास), 'जून' (चाँद), 'झंकाश' (बाल), 'छुं' (हूँ) कुछ इसी प्रकार के शब्द हैं।[१] इसी प्रकार के कुछ अन्य शब्द हैं 'डाड़' (रोना), 'ढपु' (रुपए-पैसे), 'ख्वर' (सिर), 'पोको' (गुदा) आदि।

कुमाऊँ की आदिम जातियों में 'नाग' जाति की गणना होती है। नाग देवताओं के अनेक मंदिर हैं जैसे महरपट्टी में शेषनाग, पाँडे गाँव छखाता में कर्कोटिक नाग, दानपुर में बासुकि नाग, सालम में नाग देव आदि। अकेले बेणीनाग पुंगराऊँ में ही नागों के नाम पर आठ स्थान प्रसिद्ध हैं—बेनीनाग, कालीनाग, फर्नानाग, धौलनाग, कर्कोटक नाग, पिंगलनाग, खरहरीनाग, और अठगुली नाग। नागों को सीथियन जाति का माना जाता है जिसके वंशज किसी समय पाताल भुवनेश्वर तथा नाकुरी के बीच रहते थे। ये लोग अन्य आदिम जातियों में घुल-मिल गए। इनके प्रभाव की व्यापकता मंदिरों की संख्या और नागपूजा से सिद्ध होती है।

सर्वाधिक प्रसिद्ध जाति खसों की है जो स्थानीय समाज में अपनी संख्या के कारण शक्तिशाली है। रहन-सहन रीति-रिवाज एवं लोकव्यवहार पर इनकी स्पष्ट छाप देखी जा सकती है। अठकिसन के अनुसार कुमाऊँ के नब्बे प्रतिशत ब्राह्मण इसी जाति से संबंध रखते हैं।[२] खस राजपूत भी हैं और खस ब्राह्मण भी। यह नाम महत्वपूर्ण है क्योंकि पश्चिम में काकेशस पर्वत से लेकर पूर्व में आसाम की खसिया पहाड़ियों तक इनका विस्तार है। खस जाति संभवतः ईसा पूर्व द्वितीय सहस्राब्दि के आरम्भ में पूर्वी मध्य एशिया की ओर से चलकर काश्मीर तथा परवर्ती हिमालय क्षेत्र में फैल गई। राहुल साँकृत्यायन ने खस और कश को एक ही शब्द का रूपान्तर माना है। तिब्बती बोली में कश्मीर और वहाँ के निवासियों को जो 'खछे' कहते हैं वह खस शब्द का दूसरा रूप है। खस और शक दोनों जातियाँ मूलतः एक थीं जिनमें मुर्दों को समाधि देने की प्रथा थी।

कुछ विद्वान खस जाति को आर्य जाति की शाखा मानते हैं जो संभवतः मैदानी भागों से आने वाले परवर्ती आर्यों से बहुत पहले यहाँ आकर बस गई थी।

---

१. मध्य पहाड़ी भाषा (कुमाउंनी-गढ़वाली) का अनुशीलन और उनका हिंदी से संबंध'—पृ० २६

२. हिमालयन डिस्ट्रिक्ट्स—खंड २—पृ० ४३०

स्थानीय जातियों के साथ घुलने-मिलने पर उनमें पर्याप्त भिन्नताएं उत्पन्न हो गईं। यहाँ तक कि उन्हें आर्यों से भिन्न माना जाने लगा। इस समय खसों के एकाधिक रीति-रिवाज आर्यों के रीति-रिवाजों से भिन्न हैं।

पन्नालाल ने इस संदर्भ में उनकी 'झटेला', 'सौतिया बांट' और 'टेकुवा' जैसी प्रथाओं का उल्लेख किया है। बिना विवाह किये किसी व्यक्ति को दामाद बनाकर रख लेना, धन संपत्ति में पुत्र की अपेक्षा पुत्री का अधिकार मानना, किसी स्त्री का पर पुरुष को अपने घर में रख लेना जैसी प्रथाएं उन्हें आर्यों से भिन्न करती हैं।[1]

डा० लक्ष्मीदत्त जोशी ने खसों और हिन्दुओं में सात वैवाहिक अंतर बताए हैं—

खस	हिन्दू
१—उपपति रक्खा जा सकता है। भाई की विधवा से विवाह हो जाता है।	१—उपपति नहीं रक्खा जाता और विधवा विवाह की प्रथा नहीं है।
२—विवाह एक लेन-देन, स्त्री खरीदी जाती है, उसका मूल्य दिया जाता है।	२—विवाह एक पवित्र संस्कार माना जाता है और स्त्री के बदले धन नहीं लिया जाता।
३—विवाह के लिए किसी धार्मिक रीति का पालन आवश्यक नहीं है।	३—विवाह में कन्यादान, अंचल ग्रंथि जैसी रीतियों का पालन आवश्यक है।
४—विवाह आपसी बातचीत में भंग किया जा सकता है।	४—वैवाहिक संबंध अटूट होता है।
५—पर स्त्री अथवा ढांटी रख लेना समाज द्वारा स्वीकृत है।	५—ढांटी विवाह मान्य नहीं है।
६—यज्ञोपवीत आवश्यक नहीं है यद्यपि अब कुछ लोग धारण करते हैं।	६—यज्ञोपवीत धारण करना आवश्यक है।
७—स्वयं खेती करते हैं और अपने हाथ से हल चलाते हैं।	७—दूसरों से खेती कराते हैं और अपने हाथों से हल नहीं चलाते।[2]

---

१. कुमाऊँ लोकल कस्टम्स—पृ० २-५

२. खस फेमिली ला—पृ० ४९-५०

खस और हिन्दू पद्धतियों में इस प्रकार के अंतर होते हुए भी डा० जोशी ने यही सिद्ध किया है कि खस आर्य जाति के थे किन्तु वैदिक रीति-नीति बनने के बहुत पूर्व भारत में आ गए थे। शेरिंग ने पश्चिमी तिब्बत के अपने संस्मरणों में खसों को आर्यों की उस शाखा का अंग माना है जो वैदिक काल में प्रविष्ट होकर गंगा के किनारे-किनारे दूसरे स्थानों तक फैलते गए।[1] इसी जाति ने किरात मंडल को खस मंडल बनाने में महत्वपूर्ण योग दिया।

खस प्रभाव से कुमाउंनी में अनेक प्रकार के शब्द आए हैं। भारतीय आर्य भाषाओं में इनका प्रयोग प्रायः नहीं मिलता। मूल निवासियों दस्यु, किरात, किन्नर जातियों की शब्दावली से ये भिन्न हैं, अतः देशज शब्दों की विशिष्ट कोटि में इन्हें रक्खा जा सकता है। इस कोटि के कुछ शब्द हैं—'बबा' (पिता), 'ज्वे' (पत्नी), 'बल्द' (बैल), 'कणिक' (कण), 'धार' (चोटी), 'गाड़' (छोटी नदी), 'बाट' (रास्ता), 'ढुंग' (पत्थर), 'गुल्था' (मीठा), 'श्यतो' (सफेद), 'नसिणा' (जाना)।

'जौन' अथवा 'यौन' नामों से युक्त कुछ स्थानों के नामकरण होने पर एवं गढ़वाल—कुमाऊँ की कुछ मूर्तियों में बूटों का प्रयोग मिलने के कारण (बैज-नाथ) यहाँ यूनानी एवं शक जाति का प्रभाव माना जा सकता है। शकों का आगमन संभावित है। जो ईसा पूर्व पहली शताब्दी के आस-पास अफगानिस्तान, पंजाब और सिंध के साथ पश्चिमी भारत के शासक बन चुके थे। इनका एक भाग गूजर, अहीर और जाटों के रूप में मैदानी भू-भागों की ओर गया और दूसरा भाग इन पहाड़ों की ओर चला आया जिसकी परिचायक यहाँ की सूर्य प्रतिमाएँ हैं। कुमाऊँ के कत्यूरी राजा इसी जाति के कहे जाते हैं। संभव है कि कुमाऊँ के उत्तर में रहने वाली शौक जाति उन्हीं शकों की वंशज हो। ये लोग आज तक ऊनी व्यापारी हैं। इन पर तिब्बती और हिन्दुओं दोनों के प्रभाव लक्षित होते हैं।

कुमाऊं के इतिहास में हूण जाति का उल्लेख मिलता है। तिब्बत के दक्षिणी-पश्चिमी भाग को बोल चाल में 'हूण देश' कहते हैं। शायद इसलिए हूण जाति का आगमन कहा जाता है। किन्तु 'हूण देश' की व्युत्पत्ति 'ह्यूं देश' अर्थात् हिमदेश अथवा ऊन देश से भी मानी जा सकती है, जहाँ बारहों महीने हिम जमा रहता है और ऊन भी होता है।

---

१. 'वेस्टर्न तिब्बत एण्ड द ब्रिटिश बॉर्डरलैंड'—पृ० ६०'

जोहार दारमां के क्षेत्रों पर तिब्बती प्रभाव अवश्य है। दारमाँ निवासियों के आचार-विचार, रहन-सहन, संस्कार-भाषा आदि तिब्बतियों से पर्याप्त साम्य रखते हैं। इसी कारण कुमाऊँ के अन्य लोगों से वे कुछ भिन्न हैं। उन्हें 'भोटिया' कहते हैं, जिसका अर्थ है भोट स्थान का रहने वाला। उत्तरी सीमा का संपूर्ण हिमाच्छादित भाग 'भोट' कहलाता है। इसे 'बोध' शब्द का परवर्ती रूप मानते है जो तिब्बत का स्थानीय नाम है।

दारमा-भोटियों की बोलचाल म प्रयुक्त शब्दावली को देखने से ज्ञात होता है कि उसमें कृषि, पशु-पक्षी, वस्त्राभूषण, धातु औजार संबंधी शब्द कुमाउंनी से पर्याप्त भिन्न है। जैसे गेहूँ(रजै), गगरी(फंगुली), घोड़ा(रंग), कुत्ता(नरवी), आँख (म्पं), नाखून(लकसिन), दास(दौड़ा), एक(तिग), दो(वस्य), तीन(सुम)। इसी कारण कुछ अध्यता दारमाँ खंड की भाषा को कुमाऊं से पृथक् रखने के पक्ष में है।

इसके विपरीत जोहार खंड में प्रयुक्त भाषा अब कुमाउंनी है यद्यपि उसमे भी तदेतर प्रयोग अवशिष्ट रह गए हैं। पहले उनकी बोल-चाल दारमाँ वासियों के निकट थी। अर्थात् उसमें तिब्बती शब्दों की संख्या अधिक थी। उनके कुछ पुराने शब्द थे—आदमी(मी), बेटी(चिवँ), दूध(हुमा), भात(छकु), जोगी (अचरा) घोड़ा (ता), तरकारी(पाक), बामन(डमने), गधा(बुङ) आदि। किन्तु आज की बोलचाल में इसका स्थान कुमाउंनी हिन्दी शब्दों ने ग्रहण कर लिया है।

खसों-शकों के उपरान्त वैदिक आर्य कुमाऊँ में प्रविष्ट हुए। अनुमान है कि वे कुरु पाँचाल युग में उत्तर भारत के मैदानी भागों से यहाँ पहुँचे होंगे। कुरु जनपद आर्यों का प्रमुख जनपद था। जिसके आधार पर वैदिक आर्यों का आगमन बहुत कुछ निर्दिष्ट किया जा सकता है। फिर भी यह स्पष्ट है कि पर्वतीय समाज में खसों की ही प्रमुखता बनी है। मध्यकाल में यहाँ भारत के अन्य स्थानों से ब्राह्मण, क्षत्रिय आदि जातियों का आगमन बढ़ा जिसके तीन प्रमुख कारण थे।

एकतो चंद राजाओं के समय लगभग १४ वीं शताब्दी से ब्राह्मणों की संख्या बढ़ी जिन्हें राजगुरु, पुरोहित, मंत्री, वैद्य, ज्योतिषी, धर्माध्यक्ष, सेनापति आदि के पदों पर नियुक्त किया गया। दूसरा कारण यह है कि मध्यकाल में यह भू-भाग सपाद लक्ष के नाम से प्रसिद्ध था जिसमें गूजर आकर बस गए थे। मुसलमानी काल में बहुत से राजपूत यहाँ आकर बसे। राजस्थान के साथ कुमाऊँ का घनिष्ठ संबंध भाषा के आधार पर सिद्ध होता है। इस प्रकार क्षत्रिय जातियों का आवागमन होता रहा। तीसरा प्रमुख कारण धार्मिक था। कुमाऊँ गढ़वाल में बद्रीनाथ, केदारनाथ,

हरिद्वार, जागेश्वर जैसे पवित्र तीर्थ स्थानों की यात्रा पर आने वाले लोग कालान्तर में यहीं बस गए।

श्री गंगादत्त उप्रेती ने लगभग ७० वर्ष पूर्व कुमाउंनी जातियों की एक लंबी सूची प्रकाशित की थी जो जातीय विविधता पर पर्याप्त प्रकाश डालती है। इसके अनुसार ब्राह्मण लोग कम से कम भारत के सैंतीस स्थानों से आए हैं।[1] इन लोगों ने यहाँ के सामाजिक-सांस्कृतिक विकास में बड़ा योग दिया है। प्रभुता संपन्न होने के कारण उन्होंने अनेक महत्वपूर्ण निर्णय किए किन्तु जहाँ तक लोक संस्कृति का प्रश्न है, कुछ संस्कारों, व्रत-उत्सवों के अतिरिक्त उनका कोई गहरा प्रभाव लक्षित नहीं होता। न केवल संख्या में, बल्कि लोक विश्वासों एवं सामान्य धारणाओं में भी राजपूत वर्ग अधिक प्रभावी है। उपलब्ध सूचना के अनुसार कुमाऊँ में यदि ब्राह्मणों की संख्या डेढ़ लाख के आस-पास है तो राजपूतों की संख्या तीन लाख से कुछ कम है।[2] इनका प्रभाव भाषा एवं लोक साहित्य द्वारा भी प्रमाणित होता है।

१७ वीं शताब्दी से मुसलमान, ईसाई लोग भी यहाँ आकर बसने लगे जिसके फलस्वरूप उर्दू-फारसी के कुछ शब्द कुमाउंनी में चले आए। ईसाई पादरियों ने सन् १९५० के उपरान्त अपना धर्म प्रचार आरम्भ किया। नैनीताल, द्वारा हाट, अल्मोड़ा और पिथौरागढ़ में उनके कार्यालय खुले। उन्होंने कुमाऊँ के निम्न वर्ग को शिक्षित बनाने में पर्याप्त योग दिया। किन्तु स्थानीय भाषा साहित्य अथवा लोक जीवन पर उनका विशेष प्रभाव नहीं पड़ा। सामान्य बोलचाल में प्रयुक्त होते रहने के कारण 'टैम', 'अस्पताल', 'इस्कूल' जैसे कुछ शब्द अंग्रेजी प्रभाव के फलस्वरूप कुमाउंनी में भी स्थान पा गए। इन शब्दों को स्थानीय उच्चारण के अनुरूप ढाल लिया जाता है।

उक्त जातीय सम्मिश्रण से स्थानीय समाज में विभिन्न मान्यताओं, आचार-विचारों, रीति-रिवाजों का एक अद्भुत समन्वय हुआ। जहाँ एक ओर हिन्दुओं के पर्व संस्कार दिखाई देते हैं, तो दूसरी ओर सीमावर्ती भोटियों के पृथक् आचार-विचार हैं। तीसरी ओर तराई भावर में थाड़ू बोक्सों की अपनी अलग परम्पराएँ हैं। भोटियों की जन्म, विवाह, मृत्यु आदि संबंधी कुछ प्रथाएं हिन्दुओं और थाड़ू बोक्सों के यहाँ प्रचलित नहीं हैं उनकी 'रांग-बांग' प्रथा को हिन्दू लोग पिछड़ी जाति का लक्षण समझते हैं, और थारू लोग उससे परिचित तक नहीं हैं। यही विविधता उनके लोक साहित्य में विद्यमान है।

---

१. देखिये-मार्शल कास्टस ऑफ दी अलमोड़ा डिस्ट्रिक्ट-१९०७

२. 'अल्मोड़ा गजेटियर' पृ० ९३-९४, 'नैनीताल गजेटियर', पृ० १०३-१०४

कुमाउंनी लोक साहित्य का बहुलांश स्त्रियों द्वारा निर्मित है जो पुरुषों की अपेक्षा अधिक सक्रिय रहा है। यहाँ की ग्रामीण स्त्री अकेले जंगलों में जाकर घास, लकड़ी काटती हैं, नदी-नालों से पानी भरती हैं, कृषि कार्यों में हाथ बँटाती हैं और सामूहिक उत्सवों में सक्रिय योग देती हैं। स्थानीय नृत्य गीतों में वह पुरुषों साथ मिलकर अपने भावों की स्वच्छन्द अभिव्यक्ति करती हैं। नारी की विशिष्ट सामाजिक स्थिति के कारण ही कुमाउंनी लोक साहित्य में यह विशेषता लक्षित होती है।

स्थानीय जन समाज में धोबी, अहीर, कुम्हार, मनिहार जैसी जातियों का स्वतंत्र विभाजन नहीं है। इसलिए अन्य जनपदों की भांति यहाँ धोबी, चमारों के गीत अथवा लोक कथाएँ प्राप्त नहीं होतीं। किन्तु इनके समकक्ष स्थानीय हरिजन वर्ग का लोक साहित्य के निर्माण में अत्यधिक योग है। अंत्यज कही जाने वाली शिल्पकार जाति में इन लोक गायकों का निम्नतम स्थान है। इन्हें 'हुड़किया', 'बादी', 'औजी', ढोली', 'डुम जोगी' जैसे नामों से संबोधित किया जाता है।

'हुड़किया' हुड़का बजाकर पुरानी गाथाओं का गायन करते हैं। कृषि गीतों की एक विशिष्ट परम्परा ही इनके द्वारा विकसित हुई है जिसे 'हुड़की बौल' कहते हैं। 'बादी' अधिकतर सपरिवार घूम-घाम कर गायन वादन करते हैं, इनकी स्त्रियाँ नाचती हैं। ये एक प्रकार के पहाड़ी भाट हैं जो सारंगी तबला लेकर प्रत्येक संक्रान्ति अथवा ऋतु परिवर्तन पर शुभ कामना अर्पित करने के लिए घर-घर पहुँचते हैं। यही इनकी आजीविका है। 'ढोली' ढोल अथवा ढोलक बजाकर गाते हुए भूत-प्रेतों की आत्माओं का अवतरण कराते हैं।

यही लोक गायक लोक साहित्य के शोधकर्त्ता के लिए महत्व रखते हैं। क्योंकि लोक संगीत, लोक-नृत्य, लोक धर्म, गीत एवं गाथाओं से इनका जीवन जुड़ा हुआ है। यही लोग मुख्यतः कथा कहानी सुनाते हैं और ग्राम देवताओं की पूजा करते हैं। सामाजिक स्थिति बदलने के कारण यद्यपि इनकी मनोवृत्ति बदल रही है फिर भी लोक साहित्य के प्राचीन रूप इन्हीं की परम्परा में जीवित हैं।

कुमाउंनी भाषा तथा साहित्य का विवेचन करते समय उसकी पृष्ठ-भूमि में इसी जातीय विविधता को ध्यान में रखना होगा। यह नहीं समझना चाहिए कि यहाँ की लोक रचनाओं पर किसी एक जाति विशेष का अधिकार रहा है।

३. कुमाउंनी की वर्तमान स्थिति

मानक रूप–

भौगोलिक एवं जातीय स्थितियों के कारण कुमाउंनी भाषा के अनेक रूपान्तर प्राप्त हैं जो सुदूर उत्तर में दारमाँ खंड से लेकर नैनीताल के दक्षिण तक मिलते हैं। कुमाउंनी के क्षेत्रीय भेदों की संख्या निश्चित नहीं, किन्तु इसकी वर्तमान क्षेत्रीय सीमाओं के विषय में दो प्रकार की धारणाएँ प्रचलित हैं। एक धारणा के अनुसार कुमाऊँ कमिश्नरी एवं पिथौरागढ़ की प्रशासनिक इकाई कुमाउंनी भाषा-भाषी क्षेत्र की द्योतक है। डा० राम सिंह ने पश्चिमी नेपाल तथा डोटी की बोली को भी कुमाउंनी के निकट रखते हुए लिखा है––

"नैनीताल के पहाड़ी भाग, संपूर्ण अल्मोड़ा, नवनिर्मित पिथौरागढ़ जिला, डोटी का काली नदी से शेती नदी के मध्य का भाग (मुख्यतः कूर्माचल के सीमावर्ती भाग) तथा इन क्षेत्रों के बाहर नैनीताल की तराई जिसमें भाबर क्षेत्र अधिक सम्मिलित है––से लेकर हरिद्वार तक पतली पेटी (जो पहाड़ों की ओर स्थित है) के क्षेत्र कूर्माचल के अन्तर्गत माने जा सकते हैं।[1]

इसके विपरीत दूसरी धारणा के अनुसार अल्मोड़ा जिला तो कुमाउंनी भाषी है किन्तु नैनीताल जिले के मैदानी भाग तराई भाबर में सामान्यतया हिन्दी का व्यवहार होता है। पिथौरागढ़ के धारचूला से आरम्भ होने वाले पूर्वी खंड में कुमाउंनी का प्रयोग बहुत कम है। वहाँ नेपाली, भोटिया तथा अन्य बोलियों का मिश्रित रूप प्रयुक्त होता है। इस स्थिति को स्पष्ट करते हुए डा० केशवदत्त रुँवाली ने लिखा है कि डोटी की डोट्याली बोली पर कुमाउंनी की छाप अवश्य है परन्तु उसकी प्रवृत्ति सर्वथा भिन्न है। धार-चूला, जौलजीवी में आग्नेय परिवार की राजी बोली प्रयुक्त होती है। जिला पिथौरागढ़ और जिला नैनीताल के संपूर्ण भू-भाग की भाषा सामान्यतया कुमाउंनी नहीं है। वे लिखते हैं–

"अस्तु, कुमाउंनी भाषा-भाषी क्षेत्र के अन्तर्गत धारचूला के पूर्ववर्ती भू-भाग को छोड़कर शेष पिथौरागढ़, संपूर्ण अल्मोड़ा जिला, दक्षिण की तराई

१. 'उत्तराखंड भारती'–१९७३, १/१, पृ० ५०

को छोड़कर शेष नैनीताल जिला है। इस भू-भाग का क्षेत्रफल लगभग ८००० वर्ग मील है।"[१]

कुमाउंनी के क्षेत्रीय भेदों से उत्पन्न विभिन्न बोलियों की भाषागत विशेषताएँ तो यथा स्थान स्पष्ट की जाएंगी किन्तु रूप तात्विक दृष्टि से एक नवीन मत विचारणीय है जिसे डा० भवानीदत्त उप्रेती ने प्रस्तुत किया है। उन्होंने वर्णनात्मक विश्लेषण (डिस्क्रिप्टिव एनालिसिस) के आधार पर कुमाउंनी के दो मुख्य भेद किए हैं—पूर्वी कुमाउंनी तथा पश्चिमी कुमाउंनी। पूर्वी कुमाउंनी ह्रस्व ओकारान्त है जिसका प्रतिनिधित्व पिथौरागढ़ी रूप करता है। यह रूप स्वरान्त्य लक्षणों वाला है। पश्चिमी कुमाउंनी व्यंजनान्त उच्चारण प्रधान है जिसका प्रतिनिधित्व कुमाउंनी की प्रमुख बोली खसपरजिया करती है। दोनों में परस्पर ध्वन्यात्मक तथा रूपात्मक दृष्टि से पार्थक्य दृष्टिगत होता है।[२]

परंपरा के अनुसार कुमाउंनी की खस परजिया बोली इसका मानक रूप मानी जाती है। इसी बोली में कुमाउंनी का यत्किंचित लिखित साहित्य प्राप्त है। विगत डेढ़ सौ वर्षों में कुमाउंनी साहित्य की जितनी सामग्री प्राप्त हुई है वह 'खस परजिया' में है। इसकी प्रधानता का एक ऐतिहासिक कारण है।

बारामंडल परगने का यह क्षेत्र प्राचीन काल से सामाजिक, धार्मिक एवं राजनैतिक कारणों से कुमाऊँ का केन्द्र बना रहा है। चन्द राजाओं की राजधानी अल्मोड़ा इसी क्षेत्र में है। 'खस परजिया' शब्द चाहे खास+प्रजा से व्युत्पन्न हो अथवा खस+प्रजा से, दोनों ही स्थितियों में यह शब्द कुमाउंनी के मानक रूप का द्योतक है। पहले अर्थ में यह राजाओं की उस विशिष्ट प्रजा का घोतक है जो अल्मोड़ा नगर के चारों ओर बस गए थे। वे चन्द शासन के निकट थे। दूसरे अर्थ में यह उस विशाल खस जाति का बोध कराता है जो अपनी परम्पराओं के कारण विशिष्ट रही।

भौगोलिक दृष्टि से कुमाउंनी भाषा के तीन स्पष्ट क्षेत्रीय भेद हैं जिन्हें स्थानीय मानचित्र में क्रमशः उत्तरी कुमाउंनी क्षेत्र, मध्यवर्ती कुमाउंनी क्षेत्र तथा दक्षिणी कुमाउंनी क्षेत्र कहा जा सकता है। यह क्षेत्रीय विभाजन लोक साहित्य की दृष्टि से भी समीचीन है। कुमाऊँ में पिंडारी ग्लेशियर से अस-

---

१. उत्तराखंड भारती १९७३ १।१ पृ० ५०

२. 'कुमाउंनी भाषा का अध्ययन'—भूमिका पृष्ठ—१

कोट तक एक रेखा खीचने पर उसके उत्तर का भू-भाग पहले क्षेत्र के अन्तर्गत है जिसमें जोहार और दारमाँ के खंड हैं। पिंडारी असकोट से नीचे जिला नैनीताल के संपूर्ण पर्वतीय भू-भाग तक का क्षेत्र दूसरे विभाजन के अन्तर्गत है। जिला नैनीताल के भाबर तराई वाले भू-भाग को तीसरे क्षेत्र के अन्तर्गत रख सकते हैं।[१]

गहराई में जाने पर मध्यवर्ती कुमाउंनी क्षेत्र को भी क्रमशः उत्तर मध्यवर्ती, मध्यवर्ती, दक्षिण मध्यवर्ती, खंडों में बाँट सकते हैं। इस स्थिति में दानपुर, गंगोली, सोर और सीरा के इलाके उत्तर मध्यवर्ती खंड में आएंगे। पाली पछाऊँ, बारामंडल और काली कुमाउँ के इलाके मध्यवर्ती खंड में सम्मिलित होंगे। चौभैंसी, छखाता, भीमताल, नैनीताल, पहाड़ कोटा, धनियाँ कोट और रामगढ़ के इलाके दक्षिण मध्यवर्ती खंड में सम्मिलित होंगे।

इस प्रकार भौगोलिक आधार पर भी खस परजिया बोली (बारामंडल) कुमाउंनी की केन्द्रवर्ती बोली है। स्थानीय इतिहास और भूगोल ने उसे कुमाउंनी की प्रतिनिधि बोली बनाया है। संलग्न मानचित्र में मानक कुमाउंनी खस परजिया की यह महत्वपूर्ण स्थिति स्पष्ट रूप से देखी जा सकती है।

क्षेत्रीय भेदों के अतिरिक्त कुमाउंनी में जातिगत तथा स्तरीयभेद विद्यमान है। इसके रूपान्तर न केवल भौगोलिक आधार पर हैं बल्कि सामाजिक आधार पर भी प्रचलित हैं जिसकी ओर अभी विद्वानों का ध्यान आकर्षित नहीं हुआ। कुमाउंनी के पढ़े लिखे लोग अथवा संस्कृतज्ञ ब्राह्मण जिस बोल चाल का प्रयोग करते हैं, वह सामान्य, कम शिक्षित जनता की बोल-चाल से भिन्न है। नैनीताल-अल्मोड़ा के व्यापारी साह लोगों की बोली में उच्चारण एवं रूपगत कुछ ऐसी विशेषताएं हैं कि उसे 'साहबुलि' कहने लगे हैं। बोली का जो रूप अल्मोड़ा जिले के दूरवर्ती गाँवों में प्रचलित है वह नगर के निकटवर्ती ग्रामों में नहीं है। उदाहरणार्थ, निम्नलिखित वाक्य द्रष्टव्य हैं—

१. "ठ्या में जै बेर घंटी बजे आवौ।" (ब्राह्मण)
२. "द्यांन में ज बेर घंटान कैं बजौ।" (साह)
३. "दुई जणी गौं माँजी नसी गया।" (शिल्पकार)
४. "द्वी जाणी गौं में न्है गई।" (ब्राह्मण)

---

१. देखिए परिशिष्ट (क)

प्रथम दो वाक्यों का सीधा अर्थ है—पूजा की वेदी में जाकर घंटी बजा आओ। किन्तु ब्राह्मण और शाह लोगों के उच्चारण भेद ने शब्द रूपों के भेद को जन्म दिया है। वाद के वाक्यों का अर्थ है दो आदमी गाँव में चले गए। किन्तु जातिभेद के कारण वाक्य में रूप भेद हो गया है। शिल्पकारों की बोलचाल ब्राह्मणों की अपेक्षा क्षत्रियों की बोलचाल के निकट है। ब्राह्मण यदि एक वचन उत्तम पुरुष में "मैं" शब्द का प्रयोग करेंगे तो खस राजपूत इसके स्थान पर प्रायः 'मि', 'मी' रूपों का प्रयोग करेंगे।

जातीय भेद के कारण ही बोलचाल में क्रिया रूप जितने विकृत हो गए हैं, संज्ञा-सर्वनाम रूप उतने विकृत नहीं होने पाए हैं। निम्नलिखित वाक्यों का अर्थ भिन्न नहीं है किन्तु रूप भेद हो गया है—

१. मोहन ड्यार में गो।

२. मोहन ड्यार में गोथ।

३. मोहन ड्यार में गयो।

४. मोहन ड्यार में ग्यान।।

चारों वाक्यों का अर्थ है—मोहन डेरे में गया। किन्तु 'गो', 'गोथ', 'ग्यो', "ग्यान' चारों रूप जाना क्रिया के भूतकालिक अर्थ 'गया' के रूप में प्रयुक्त हैं। इस प्रकार के रूप भेद को देखने पर कुछ लोगों ने अनुमान किया है कि कुमाउंनी के मूल रूप के अधिक निकट सोर तथा गंगोली आदि की बोलियां ही हैं क्योंकि दीर्घ-काल से वाह्य संसर्ग में ये क्षेत्र उतने नहीं आए हैं, जितने अन्य क्षेत्र।[१]

कुमाउंनी भाषा की वर्तमान स्थिति पर विचार करते हुए उसकी व्याकरणिक विशेषताएं जानने के पूव यह स्मरण रखना चाहिए कि मात्र उच्चारण भेद किसी भाषा का भेदक लक्षण नहीं होता। शब्द भंडार के अतिरिक्त ध्वनि-तत्व, पद विचार एवं व्याकरण रचना के आधार पर ही उसके निकटवर्ती संबंधों का ज्ञान होता है। भाषा भेद, बोधगम्यता के तारतम्य के आधार पर निर्धारित किये जाते हैं जिसके लिए उनकी रूपतात्विक समानता-असमानता उत्तरदायी होती है।

अतः कुमाउंनी का भाषागत विश्लेषण करने के पूर्व विभिन्न विद्वानों की तत्संबंधी मान्यताओं से परिचित होना उपयोगी रहेगा।

---

१. शक्ति साप्ताहिक २३ नवंबर, १९५७

तत्संबंधी दृष्टिकोण—

कुमाउंनी के भाषागत रूप पर सर्व प्रथम १९वीं शताब्दी के अंत में पादरी केलॉग ने विचार किया था। अपने हिन्दी व्याकरण के दूसरे संस्करण में उन्होंने हिन्दी के तेरह-चौदह रूपों का तुलनात्मक परिचय दिया जिसमें कुमाउंनी को नेपाली गढ़वाली के साथ हिमालयन डायलेक्टस" केअन्तर्गत परिगणित किया गया था। केलॉग ने यह स्वीकार करते हुए कि इन बोलियों का साहित्य अत्यल्प है, भाषागत साम्य के आधार पर इन्हें गंगा की घाटियों में प्रयुक्त बोलियों की अपेक्षा राजस्थानी के अधिक निकट माना।[1] उनके व्याकरण का यह संस्करण सन् १८९३ में प्रकाशित हुआ था।

सन् १९०० में पं० गंगादत्त उप्रेती ने १७ कुमाउंनी बोलियों के उदाहरण प्रस्तुत करते हुए यह प्रतिपादित किया कि इन भेदों का कारण स्थान विशेष के अतिरिक्त जाति विशेष भी है।[2] ये भेद उच्चारण और व्युत्पत्ति दोनों दृष्टियों से विचारणीय हैं। बारा मंडल परगना में सभी वर्गों द्वारा प्रयुक्त अल्मोड़ा की बोली को मानक रूप मानकर उन्होंने विशिष्ट उच्चारण के आधार पर डोम आदि निम्न जातियों, गोरखा लोगों, डोट्यालों, बोक्सा और थाड़ुओं में प्रचलित रूपान्तर एकत्र किए। इस प्रकार उप्रेती जी ने कुमाउंनी के सभी स्तरों को समझने के लिए तुलनात्मक पद्धति का सूत्रपात किया। इसके इतिहास अथवा व्युत्पत्ति की चर्चा नहीं की।

जार्ज ग्रियर्सन ने भारतीय भाषाओं का सर्वेक्षण करते समय कुमाउंनी के इतिहास एवं भाषा रूप पर विस्तृत प्रकाश डाला। उन्होंने अपने भाषा सर्वेक्षण के खंड ९, भाग ४ में विस्तार पूर्वक तथा भाग १, खंड १ में गौणतः इसकी पृष्ठ भूमि स्पष्ट करते हुए रचना पर प्रकाश डाला। उन्होनें माना कि प्राचीन खस चूंकि पिशाचों से संबद्ध थे अतः वे दरद भाषा बोलते होंगे जिसके अवशेष सारे सपादलक्ष में प्राप्त हैं। खस परजिया बोली का तात्पर्य है खस कृषक वर्ग की बोल-चाल।[3]

मध्यकाल में राजपूत शासकों ने खस एवं गूजरों की भाषा एवं रीति-नीतियों को इतना प्रभावित किया कि प्राचीन खस भाषा पूर्णतः लुप्त हो गई और अब वह

---

१. 'ए ग्रामर ऑफ द हिन्दी लैंग्वेज'—पृ० ७७

२. हिल डायलेक्टस ऑफ द कुमाऊँ डिवीजन पृ० १

३. 'लिंग्विस्टिक सर्वे ऑफ इण्डिया—खंड ९, भाग ४. पृष्ठ ८

राजस्थानी का एक रूपान्तर मात्र है ।[1] ग्रियर्सन ने कुमाउंनी बोलियों की बहुरूपता का मुख्य कारण प्राकृतिक माना और इन्हें रूप रचना के आधार पर तीन वर्गों में वर्गीकृत किया। वे कुमाउंनी की तेरह प्रमुख बोलियों में खस परजिया को आधार भूत मानते हैं।

ग्रियर्सन ने भारतीय आर्य भाषाओं का वर्गीकरण करते हुए उनकी भीतरी उपशाखा में पहाड़ी समुदाय के अन्तर्गत कुमाउंनी को स्थान दिया। पहाड़ी में उन्होंने (१) पूर्वी पहाड़ी,(नेपाली), (२) केन्द्रीय पहाड़ी(गढ़वाली–कुमाउंनी) (३) पश्चिमी पहाड़ी(जौनसार, सिरमोरी, क्यूंथली, कुल्लुई और चम्याली) की गणना की।[2]

इस प्रकार केन्द्रीय अथवा मध्य पहाड़ों को भीतरी उपशाखा में मानने का आधार रुडोल्फ हॉर्नली की वह स्थापना थी जिसके अनुसार आर्य लोग भारत में कम से कम दो बार आए। नवागत आर्यों के कारण पूर्वागत आर्यों को दक्षिण, पश्चिम और पूर्व की ओर फैलना पड़ा। मध्य देश अथवा केन्द्र में बसने के कारण नवागत आर्य केन्द्रीय समुदाय के माने गए। उनके चारों ओर फैले हुए पूर्वागित आर्य बाहरी उपशाखा के कहलाए। हार्नली इस निष्कर्ष पर पहुंचे थे कि प्राचीन उत्तरभारत में शौरसेनी और मागधी दो भाषा समुदाय थे।[3] इसी की संपुष्टि करते हुए ग्रियर्सन ने शौरसेनी वर्ग के पश्चिमी गौड़ीय एवं उत्तरी गौड़ीय दो भेद करते हुए उत्तरी गौड़ीय भाषाओं के अन्तर्गत गढ़वाली, कुमाउंनी और नेपाली को स्थान दिया।

प्रसिद्ध भाषाविद् डा० सुनीति कुमार चटर्जी ने ग्रियर्सन के बाहरी और भीतरी उप शाखाओं संबंधी विचारों का खंडन करते हुए पहाड़ी भाषाओं का आधार पैशाची, दरद अथवा खस प्राकृत को माना और मध्यकाल में उन पर राजस्थान की प्राकृत व अपभ्रंश का प्रभाव घोषित किया। वे गूजरों की भाषा को भी, जिसने

---

१. लिंग्विस्टिक सर्वे आफ इंडिया खंड–१, भाग १, पृ० १८४–"सेंट्रल पहाड़ी एप्रीज विथ इट्स विस ए विस ईस्टर्न राजस्थानी इन हैविंग जेनिटिव पोस्ट पोजीशन को एण्ड द वर्ब सब्सटेंटिव डिराइव्ड फ्राम द रूट अच्छ"

२. लिंग्विस्टिक सर्वे आफ इण्डिया–खंड १, भाग १, पृ० १२०

५. ग्रामर आफ द ईस्टर्न हिन्दी—भूमिका, पृ० ३२

एक ओर राजस्थानी गुजराती को प्रभावित किया और दूसरी ओर पहाड़ी भाषाओं को, प्रकारान्तर से दरद ही मानते हैं।[१]

कुछ लोग पैशाची प्राकृत से मध्य पहाड़ी का मूल सिद्ध करते हैं और प्रकारान्तर से उसे दरदोत्पन्न मानते हैं। दरद भाषाओं की कुछ विशेषताएँ कुमाउंनी में अवश्य मिलती हैं किन्तु उन्हीं के आधार पर इसे दरद वर्गीय मानना उतना ही अपूर्ण होगा जितना कि इसे राजस्थानी वर्गीय सिद्ध करना।

विद्वानों का एक वर्ग कुमाउंनी को शौरसेनी प्रसूत मानता है। डा० धीरेन्द्र वर्मा और डा० उदय नारायण तिवारी इसे किसी न किसी रूप में शौरसेनी प्राकृ अथवा शौरसेनी अपभ्रंश से संबद्ध मानते हैं। डा० धीरेन्द्र वर्मा के अनुसार शौरसेनी अपभ्रंश से हिन्दी, राजस्थानी. पंजाबी, गुजराती और पहाड़ी भाषाओं का संबंध है।[२] डा० उदय नारायण तिवारी नेपाली. कुमाउंनी और गढ़वाली तीनों को शौरसेनी प्रसूत मानते हैं। यद्यपि इन पर मागधी का प्रभाव दृष्टिगोचर होत है।[३]

इस मत की पुष्टि करते हुए यह कहा गया है कि शौरसेनी का वह विकसित रूप जो उससे किंचित भिन्न हो गया वही मध्य पहाड़ी का उदगम् भी प्रतीतट होता है। डा० गोविन्द चातक की स्थापना है—"प्राचीन आख्यानों से प्रकत होता है कि मध्य देश में बसे आर्य भी हिमालय में आए। स्पष्ट है कि मध्या देशीय भाषा का प्रसार उत्तराखंड तक भी हो गया। ऐसा प्रतीत होता है कि भारतीय आर्य भाषा के मध्यकालीन विकास में शौरसेनी प्राकृत और अपभ्रंश अनेक सीमाँओं में बंध गई थीं पर हिमालय में उसने विकास का जो रूप लिया वही मध्य पहाडी के उद्‌गम् का कारण बना।[४]

कुमाउंनी और हिन्दी के पारस्परिक संबंधों का विवेचन करने वाले विद्वानों ने वर्त्तमान समय में इसकी हिन्दी से ही निकटता सिद्ध की है जो शौरसेनी स्रोत को स्वीकार करने पर ही संभव है। न.केवल शौरसेनी एवं खड़ी बोली की प्रवृत्तियाँ

---

१. ओरिजन एण्ड डेवलपमेंट आफ बंगाली लैंग्वेज—पृ० ६, ८.

२. हिन्दी भाषा का इतिहास—पृ० ४८

३. भोजपुरी भाषा और साहित्य—उपोद्‌घात पृ० १७१

४. गढ़वाली की खाल्टी उपवोली, उसके लोकगीत और उनमें अभिव्यक्ति लोक संस्कृति—(अप्रकाशित शोध प्रबन्ध)—सामान्य परिचय।

कुमाऊँ में स्पष्ट हैं बल्कि ब्रजभाषा के समान हिन्दी के 'अकारान्त' शब्द यहाँ 'ओकारान्त' हो जाते हैं। जैसे :—

हिन्दी	ब्रज	कुमाउनी
वह, मेरा	वो, म्हारो	उ, म्यरो
उसका, घोड़ा	बेका, घोड़ों	वीको, ग्वाड़, घोड़ो

डा० धीरेन्द्र वर्मा ने ब्रजभाषा के मध्य पहाड़ी के साथ साम्य के अनेक उदाहरण दिए हैं। खड़ी बोली तथा मध्य पहाड़ी के तुलनात्मक अध्ययन करने के पश्चात् डा० गुणानन्द जुयाल ने यह अभिमत प्रकट किया है।—

"इसमें संदेह नहीं कि यदि मध्य काल में मध्य पहाडी को राजस्थानी ने प्रभावित किया तो वर्तमान युग में उससे भी तीव्रता से पश्चिमी हिन्दी उसे प्रभावित कर रही है। कुछ ध्वनियां को छोड़कर उसमें सब ध्वनियाँ हिन्दी के ही समान हैं। शब्द भी अधिकाँश पश्चिमी हिन्दी से मिलते हैं। क्रिया के रूप, कृदन्त और सर्वनाम भी कुछ सीमा तक हिन्दी से मिलते हैं। पद क्रम भी हिन्दी के समान हैं। अतः मध्य पहाड़ी बोलियों का वर्तमान रूप राजस्थानी की अपेक्षा पश्चिमी हिन्दी से अधिक साम्य रखता है"।[1]

डा० हरदेव बाहरी ने हिन्दी की समस्त ग्रामीण बोलियों को पश्चिमी हिन्दी, राजस्थानी हिन्दी, पहाड़ी हिन्दी, पूर्वी हिन्दी और बिहारी हिन्दी नाम के पाँच वर्गों में विभाजित किया है। वे ध्वनि तत्व, व्याकरण एवं शब्दावली के आधार पर यदि कुमाउंनी स्वरों को उतना ही जटिल मानते हैं जितने कश्मीरी आदि दरद भाषाओं के, तो कुमाउंनी की व्यंजन ध्वनियों को राजस्थानी से लगभग पूर्णतया मिलता-जुलता स्वीकार करते हैं।[2]

इसके विपरीत हरिशंकर जोशी ने प्रतिपादित किया है कि वैदिक एवं लौकिक संस्कृत की मूल ध्वनियों को जितना कुमाउंनी ने सुरक्षित रक्खा उतना अन्य किसी भारतीय आर्य भाषा ने नहीं। उनके अनुसार कुमाउंनी ने संस्कृत के सभी महाप्राण व्यंजनों स, श, ष, को पूर्ण रूप से सुरक्षित रक्खा है। अनुनासिकों में ङ और न तक

---

१. "मध्य पहाड़ी भाषा (गढ़वाली–कुमाउंनी) का अनुशीलन और उसका हिंदी से संबंध (अप्रकाशित शोध-प्रबंध), पृ० ३२

२. "ग्रामीण हिन्दी बोलियाँ पृ० १४८–१६१

को संस्कृत काल से बचा कर रक्खा है जिसका अन्य भाषाओं में निशान तक नहीं मिलता[1]। वे राजस्थानी से कुमाउंनी की सबसे कम समता मानते हैं। ब्रज से इसकी समता नहीं के बराबर मानते हैं। उनके अनुसार कुमाउंनी की अधिक समानताएँ मराठी, गुजराती और बंगाली से है :—

"इसका यह तात्पर्य नहीं हो सकता कि ये समताएँ किसी भाषा को एक दूसरे से निकली सिद्ध करती हैं। ये समताएँ यह सिद्ध करती हैं कि इन भाषाओं की जननी या मातामही एक थी बस। ये समताएँ इनकी मौलिक भाषा के वे मौलिक तत्व हैं जिनको इन सबने अपनी अपनी वर्तमान विकासावस्था तक पूर्ण रूप से सुरक्षित रक्खा है। इनमें जो जो विषमताएँ हैं वे, वे तत्व हैं जो इनके दीर्घकालीन पार्थक्य से अपने आप विकसित होकर नवीन धारावाही विकास का रूप लेने में समर्थ हुए हैं।"[2]

कुमाउंनी में पूर्वी हिन्दी की, विशेष कर अवधी की अनेक प्रवृत्तियाँ लक्षित हैं। ये प्रवृत्तियाँ न केवल शब्द समूह में हैं बल्कि रूप तत्व में भी हैं :—

हिन्दी	अवधी	कुमाउंनी
कपाल	कपार	कपाव
महतारी	महतारी	म्हतारि
कुत्ता	कुकुर	कुकुर
पुत्र	चेला	चेला
गोरा	गोर	ग्वार
ऐसा	अस	यस
सोना	सोन	सुन
वह	उ	उ
उनका	ओकर	उनरो

तालव्य 'श' के अधिक प्रयोग को मागधी प्राकृत का प्रभाव कहा जाता है। डा० जुयाल ने पूर्वी प्रभाव के ऐसे अनेक उदाहरण दिये हैं।

---

१ "प्रतिभा-दर्शन" (भाषा तत्व शास्त्र) – पृ० ६१

२. " " " " पृ० ११३

इस पूर्वी प्रभाव के ऐतिहासिक कारण हैं। कुमाऊं में जिस कत्यूरी वंश का राज्य हुआ वह अयोध्या के सूर्यवंशी राजाओं से संबन्ध रखता था। गुप्त काल में समुद्रगुप्त के समय कत्यूरी उनके अधीन माँडलिक शासक बने। समुद्रगुप्त की मृत्यु होने पर जब शकों ने कत्यूरियों की राजधानी कार्तिकेयपुर पर अधिकार कर लिया तो उनके लिए रामगुप्त और शकों में युद्ध हुआ। रामगुप्त शकों द्वारा घेर लिया गया किन्तु उसके भाई चन्द्रगुप्त ने अपन साहस से शकों को नष्ट किया। कत्यूरी पुनः अयोध्या के अधीनस्थ हो गए।[1]

यह कथन भले ही अनुमान पर आधारित हो किन्तु कत्यूरी वंश के पूर्वी भाषा भाषी क्षेत्र के साथ संबंध का द्योतक है। कत्यूरियों के बाद जिस चंद वंश का राज्य विस्तार हुआ वे भी मूलतः मागधी, अर्द्ध-मागधी क्षेत्र के थे। इसी कारण कुमाउंनी का अवधी तथा पूर्वी बोलियों से साम्य है।

ऐतिहासिक दृष्टि से विचार करने पर कुमाउंनी के विषय में अत्यन्त मतभेद है। इसमें दरद, राजस्थानी, मागधी, अवधी और शौरसेनी सभी भाषाओं के एकाधिक तत्व हैं। यह भी स्वतः सिद्ध है कि आज साहित्यिक, सांस्कृतिक एवं राजनैतिक स्थितियों के कारण यह पश्चिमी हिन्दी के अधिक निकट है और इसकी शब्दावली एवं व्याकरण पर हिन्दी का प्रभाव बढ़ रहा है। इस कारण कुमाउंनी भाषा के स्वरूप पर विचार करने वाले विद्वान प्रायः दो विरोधी मतों के पोषक हो गए हैं। कुछ लोग सामान्य रूप से विचार करते हुए इसे हिन्दी के समकक्ष पृथक् आर्य भाषा मानने के पक्ष में हैं।

इस संदर्भ में निम्नलिखित पंक्तियाँ विचारणीय हैं--

"उत्तर भारत की अन्य भाषाओं की तरह कुमाउंनी भी एक आर्य भाषा है। यद्यपि कुमाउंनी भाषा-भाषी लोगों में हिन्दी का बहुत प्रचार है और उनकी साहित्यिक भाषा भी हिन्दी ही है लेकिन इस बात से ऐसा नहीं समझना चाहिए कि कुमाउंनी हिन्दी की एक बोली मात्र है। यह बात बिलकुल सत्य है कि कुमाऊँ वालों द्वारा हिन्दी को अपना लेने के कारण कुमाउंनी पर हिन्दी का बहुत अधिक प्रभाव पड़ता जा रहा है। किन्तु फिर भी भाषा विज्ञान की दृष्टि से कुमाउंनी हिन्दी से उतनी ही भिन्न है जितनी गुजराती, बंगाली या मराठी।"[2]

वस्तुतः कुमाउंनी भाषा के वास्तविक रूप को समझने के लिये उसके लिखित एवं मौखिक दोनों रूपों का तुलनात्मक अध्ययन करना आवश्यक है।

---

१. 'ध्रुव स्वामिनी'—जयशंकर प्रसाद-(सूचना) पृ० १०

२. अचल' पत्रिका--श्रेणी १/ शृंग १, फरवरी १९३८

कुमाउंनी का लिखित रूप अधिक प्राचीन न होने के कारण तत्संबंधी ऐतिहासिक अनुसंधान अनुमानों के सहारे ही चल सकता है। भाषाशास्त्रीय अध्ययन को अधिक तथ्यपरक बनाने के लिये कुमाऊँ में जिस सामग्री की आवश्यकता है वह इस समय ऐतिहासिक स्रोतों से प्राप्त नहीं होती।

ऐसी स्थिति में शास्त्रीय विवेचन के लिये सर्वप्रथम कुमाउंनी भाषा का वर्णनात्मक विश्लेषण करना आवश्यक है जिसे आधुनिक भाषाविद् संकालिक अध्ययन (सिंक्रॉनिक स्टडी) कहते हैं। इसके लिये कुमाऊँ के गाँव गाँव में जाकर स्थानीय शब्द समूह को एकत्र करना होगा और शब्द भूगोल के (लिंग्विस्टिक जॉग्रफी) आधार पर मानचित्रों द्वारा उनके भेदों का अंकन करना होगा। इन शब्द रूपों का तुलनात्मक साम्य-वैषम्य देखने के बाद कुछ भाषामूलक निश्चित निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं। इन्हीं निष्कर्षों के आधार पर ऐतिहासिक विश्लेषण संभव है। अर्थात् इस समय कुमाउंनी भाषा की समस्या जितनी वर्णनात्मक विश्लेषण की है, उतनी ऐतिहासिक विश्लेषण की नहीं।

दूसरी बात यह कि कुमाऊँ में प्रचलित विभिन्न व्यावसायिक (जैसे कृषि संबंधी, उद्योग संबंधी) शब्दकोष बनाने की आवश्यकता है जिनमें पारिभाषिक शब्दों के अर्थ प्रचलित प्रयोगों के आधार पर निश्चित किये जाने चाहिये। पहाड़ों में विशिष्ट शब्दावली प्रायः समाप्त होती जा रही है। हिन्दी उसे अत्यधिक प्रभावित कर रही है। इस कारण उसकी विशेषताएँ नष्ट हो रही हैं। शब्द कोषों के आधार पर कुमाउंनी शब्दों की वह अर्थ व्यंजना स्पष्ट की जा सकेगी जिसके लिये वह प्रसिद्ध है।

इसके अतिरिक्त कुमाउंनी भाषा के सम्यक् विश्लेषण के लिये स्थानीय समाज के भिन्न भिन्न स्तरों से उदाहरण एकत्र करने होंगे। केवल ब्राह्मण वर्ग में प्रचलित भाषा के नमूने एकत्र करने पर संस्कृत का ही प्रभाव लक्षित होगा क्योंकि शासक वर्ग की भाषा संस्कृत रही है। प्राचीन शिलालेख एवं ताम्रपत्र संस्कृत में लिखे गए हैं। ब्राह्मण वर्ग जिस कुमाउंनी का प्रयोग करता है वह संभव है कुमाउंनी भाषा के वास्तविक रूप का पूरा प्रतिनिधित्व न करे। इसके लिये राजपूत वर्ग, व्यापारी वर्ग एवं शिल्पकार वर्ग में प्रचलित भाषा रूपों को ध्यान में रखना होगा।

स्मरण रखना चाहिये कि वर्तमान गतिविधियों में कुमाउंनी पर हिन्दी के अतिरिक्त अंग्रेजी एवं पंजाबी जैसी भाषाओं के प्रभाव भी पड़ रहे हैं जिस कारण अनेक ध्वन्यात्मक परिवर्तन आ रहे हैं। लोक साहित्य एवं लिखित साहित्य

की भाषा तक सर्वत्र एक रूप नहीं है। कुमाउंनी के विश्लेषण में इन सभी पक्षों का ध्यान रखना होगा। उसके विशिष्ट लक्षणों को सामाजिक संदर्भों में ही समुचित रूप से समझा जा सकेगा।

उक्त परिस्थितियों में स्पष्ट होगा कि कुमाउंनी पर पड़ने वाले अधिकांश प्रभाव प्रायः ध्वन्यात्मक अथवा शब्द रूपात्मक विशेषताओं के द्योतक है। ये प्रभाव कुमाउंनी की आंतरिक संरचना को बहुत कम प्रभावित कर पाए हैं। कुमाउंनी के आंतरिक गठन पर ध्यान रखने से इसकी तात्विक विशेषताएँ स्पष्ट होंगी। इस गठन में ध्वनि रचना, पद रचना विभक्ति एवं परसर्ग, संयोजक एवं वियोजक तत्वों की अर्थात् इसके व्याकरण की गहराई से छानबीन होनी चाहिये।

कुमाउंनी का विकास—

कुमाउंनी के वास्तविक स्वरूप को समझने के लिये उसके वर्तमान कालिक रूपों का विश्लेषण करना अधिक समीचीन है जैसा कि उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट होगा। न तो ग्रियर्सन की मान्यता पूर्णतः सही मालूम पड़ती है और न डा० चटर्जी की। इसमें आर्येतर तत्व अवश्य विद्यमान हैं किन्तु इतने से इसे दरदोत्पन्न नहीं मानना चाहिये। जहाँ तक शौरसेनी भाषा समुदाय में कुमाउंनी का मूल स्रोत मानने का अनुमान है वह इसकी आधुनिक प्रवृत्तियों के आधार पर संगत प्रतीत होता है।

यहाँ संस्कृत भाषा का प्रचार दीर्घकाल तक अवश्य रहा किन्तु वह मुख्यतः पढ़े लिखे जन समुदाय की ही भाषा रही। तदेतर जन समुदाय किस भाषा का प्रयोग करता होगा, इसके विषय में अभी कुछ नहीं कह सकते। साधारण जन समाज अपनी बोलचाल में जिस भाषा का प्रयोग करता होगा संभव है उसमें कुछ लिखित रचनाएँ भी प्रस्तुत की गई हों। किन्तु उस विषय में कोई निश्चित प्रमाण न मिलने के कारण अधिक नहीं कह सकते।

कुमाउंनी भाषा का प्राचीनतम उदाहरण १४ वीं शताब्दी के एक ताम्रपत्र में मिलता है जिसकी लिपि देवनागरी है। इसकी भाषा वर्तमान बोलचाल से पर्याप्त भिन्न है। इसी तरह के कुमाउंनी में ताम्रपत्र भारती चन्द (१४३७-१४५०), भीष्म चंद (१५५५-१५६०) और कल्याण चन्द (१५६०-१५६५) के प्राप्त होते हैं जिनकी तुलना करने से ज्ञात होता है कि कल्याण चन्द के ताम्रपत्र की कुमाउंनी, भाषा एवं लिपि दोनों दृष्टियों से अधिक परिष्कृत है। यह स्थिति कान्यकुब्ज से आने वाले विद्वान ब्राह्मणों के प्रभाव से उत्पन्न हुई होगी।

धर्मचन्द के ताम्रपत्र की कुछ विशेषताएँ वर्तमान कुमाउंनी में नहीं मिलतीं। उसका संपूर्ण उदाहरण इस प्रकार है—

१. (ॐ) श्री रि शक १३५१ मासानि का (र्ति) क वदि शुकवासरे श्रि राजा
२. धमचंद ले तामपण कि सिउराज कठस विए पाठग शरम प
३. क (ले) पाई माप ए सिउभद्र उ कि पा उ अचल कि वीरजित क्रातिक
४. दत्त नरेन्द्र चंद कि असंतति षा उन ह तो पाध (थ) र पाणि ला बगाल
५, मव गि (घि) अन्झलि एक जाणि बगाळो किसुनी उडि (दि) कसेडि श्री मदन
६. सामन्त घघाउलि अतरा अत्र सा छि ब्रह्मदास विष्णुशर्म पंडित्त
७. हरिराज पांडे देव ज्यु नानिक चंद कलाकोटि खत्र कुथाउत सकत
८. खाति कउलु साहु जैतुवो बाउलो, लषु जगसितो जसु कृष्ण,
९. केदारु कोठयारि श्राठ विणि (वि) विरभद्र मही रस चन्द्र खानी (ती)
१०. ष सर्वकर अकरी लेषक रुद्र साउ[1]

उक्त लेख में उत्कीर्ण 'गछ्यो' जैसे क्रियापद अब पदान्त में 'ओ' 'इ' स्वर जोड़ कर 'गो छियो' (गया था) के रूप में बोले जाते हैं। शब्दान्त में आने वाले 'इ' 'उ' जैसे ह्रस्व स्वर अब 'ई' 'ऊ' जैसे दीर्घ स्वरों में परिणत हो गये हैं। भीष्मचन्द के ताम्रपत्र में 'भिष्मचंद्र' 'भुमि तथा 'पुखक' जैसे शब्द उत्कीर्ण हुए हैं। किन्तु अब वे शब्द 'भीष्मचन्द' 'भूमि' तथा 'पूर्वक' जैसे रूपों में लिखे जाने लगे हैं।

इसके विपरीत शब्दान्त का दीर्घ स्वर 'ई' अब ह्रस्व 'इ' में परिणत हो गया है। इसलिये वहाँ जो शब्द 'गीरी,' ,सीवराम,' 'लीषीतु' जैसे रूपों में लिखे गये थे वे अब क्रमशः 'गिरि,' 'शिवराम,' 'लिखित' जैसे रूपों में प्रयुक्त होते हैं। इस लेख में कुछ फारसी शब्द भी मिलते हैं जैसे 'बखशी,' 'माफी,' 'गुनह,' 'वजीर' "सजा,' 'मापक' (मुआफिक) जिन्हें अब स्थानीय उच्चारण के अनुरूप बत लिया गया है। इसी प्रकार तालव्य 'श' का दन्त्य 'स' हो गया है। अनुस्वारा के प्रयोग में सावधानी न रखने के कारण अब 'पांडे,' 'कांडे,' 'पंडि' जैसे शब्द क्रमशः 'पाडे,' 'काडे' तथा 'पडि' आदि रूपों में लिखे जाते हैं।

उक्त चार ताम्रपत्रों के अतिरिक्त संभव है १६वीं, १७ वीं शताब्दी में अन्य ताम्रपत्र अथवा गूंठों की सनदें, दानपत्र दिये गए हों जिन में कुमाउंनी के प्राचीन उदाहरण होंगे। किन्तु उनकी अभी पर्याप्त जानकारी नहीं है। तदुपरांत कुमाउंनी, संस्कृत और नेपाली का मिश्रित रूप १९वीं शताब्दी में आकर कवि गुमानी की रचनाओं में प्राप्त होता है।

---

1. 'जर्नल यू० पी० हिस्टॉरिकल सोसायटी'—खंड २, भाग १५, पृ० ५८'

इस प्रकार कुमाउंनी के विकास को निम्नलिखित तीन चरणों में विभाजित कर सकते हैं––

१. १९वीं शताब्दी के पूर्व कुमाउंनी।

२. १९वीं शताब्दी की कुमाउंनी।

३. २०वीं शताब्दी की कुमाउंनी।

१९वीं शताब्दी के पूर्व कुमाउंनी की स्थिति पर दूसरे अध्याय की स्थानीय परिस्थितियों द्वारा पर्याप्त प्रकाश पड़ता है। उक्त चार चन्द राजाओं के ताम्रपत्र उसके तत्कालिक स्वरूप का अनुमान करने में सहायक हैं। मध्य युग में १०वीं, ११वीं शताब्दी के उपरान्त भारत के अन्य स्थानों से, राजस्थान, कन्नौज, महाराष्ट्र, अयोध्या, पश्चिमी उत्तर प्रदेश आदि से पढ़े लिखे ब्राह्मण और क्षत्रिय यहाँ आकर बसते गए। क्षत्रिय लोग स्थानीय खस जाति में सरलता से घुलमिल गए किन्तु ब्राह्मण जाति अपनी शिक्षा, संपन्नता एवं ऊँचे पदों पर रहने के कारण समाज में विशिष्ट बनी रही। इसी बीच गूजर राजपूतों के आवागमन कें कारण राजस्थानी का प्रभाव पड़ना आवश्यक था।

कुमाउंनी की तत्सम शब्दावली यदि ब्राह्मण वर्ग की देन है तो तद्भव एवं देशी शब्दावली के निर्माण में राजपूत गूजरों का हाथ है।

(१) राजस्थानी प्रयोग––

१. अकारान्त आकारान्त शब्दों का ओकारान्त होना–– 'उ' (वह), 'म्यरो' (मेरा), 'विको' (उसका)।

२. न के स्थान पर ण होना––'किसाण,' (किसान), 'पाणि' (पानी), 'हिरण (हिरन),

३. स्वतः अनुनासिकता की प्रवृत्ति––'असमाँन (आसमान), 'माँण (मान),' 'पैंस' (पैसा)।

४. क्रिया एवं कारक विभक्तियों के रूपों में साम्य होना—पिटूँलो (पीटूँगा), छुँ, (हूँ)', छै (है), 'सु' (संप्रदान) 'है' (अपादान), 'को' (संबंध)।

५. समान शब्दावली–'थोक' (इलाका) 'मुनड़ि' (अँगूठी), 'डाकिणी' (डाकिनी),

२ संस्कृत तत्सम–तद्भव शब्द––

'उत्पात,' 'पुस्तक,' 'प्रारब्ध,' 'इष्ट,' 'ईश्वर,' 'कुशल,' 'गोत्र,' एकान्त'

'निखिद्द' (निषिद्ध), 'कौतीक' (कौतुक) 'स्वरो' (सहोदर) 'स्वैण' (स्वप्न), 'पाख' (पक्ष), 'बक्कल' (वलकल), 'खितरपाल' (क्षेत्रपाल) आदि। शब्द समूह के अंतर्गत आगे चल कर ऐसे शब्दों की विस्तृत सूची दी जावेगी। अरबी फारसी के कुछ शब्द इसी मध्यकाल में आए होंगे क्योंकि मुगल शासन के साथ कुमाउंनी राजाओं के पत्र व्यवहार के उल्लेख मिलते हैं। ये पत्र-व्यवहार फारसी में होते थे। अकबर, जहाँगीर के समय दिल्ली दरबार से संबंधों का घनिष्ठ होना इतिहास द्वारा सिद्ध है। अनेक मुसलमान कुमाऊँ में आने लगे थे, अतः अरबी-फारसी के शब्दों का प्रचलन संभाव्य है।

गोरखा शासन काल में अनेक शब्द नेपाली से, जिसे 'खस कुरा' कहते हैं, कुमाउंनी में चले आए। ऐसा प्रतीत होता है कि १९ वीं शताब्दी तक आते आते कुमाउंनी ने अपना एक निश्चित स्वरूप ग्रहण कर लिया था क्योंकि बाद में पड़ने वाले 'खसकुरा' प्रभाव अत्यन्त स्पष्ट हैं जिन्हें अलग से पहचाना जा सकता है।

१९ वीं शताब्दी के आरम्भ से अंग्रेजी शासन के साथ कुमाऊँ में हिन्दी का प्रभाव बढ़ा। यहाँ के लोग मैदानी भागों में जाकर खड़ी बोली, व्रज एवं अवधी आदि बोलियों के अधिक सम्पर्क में आने लगे। इस समय कुछ लोगों ने खड़ी बोली एवं व्रज में रचना भी की। १९ वीं शताब्दी से कुमाउंनी भाषा का लिखित रूप प्राप्त होने लगता है जिसे स्पष्ट करने में गुमानी कवि (१७९०-१८४६ ई०) का सर्वाधिक योग है। गुमानी कुमाउंनी में लिखने वाले प्राचीनतम कवि थे जिन्होंने न केवल कुमाउंनी में बल्कि संस्कृत, हिन्दी, उर्दू, नेपाली में कविताएँ की। अंग्रेजी फारसी का उन्हें पर्याप्त ज्ञान था।

उनके अतिरिक्त कृष्णा पांडे, चिन्तामणि जोशी, गंगादत्त उप्रेती, ज्वालादत्त जोशी, लीलाधर जोशी तथा शिवदत्त सती ने कुमाउंनी के विकास में योग दिया। लीलाधर जोशी ने संस्कृत, से 'भगवद् गीता' का, ज्वालादत्त जोशी ने संस्कृत से 'दश कुमार चरित' का अनुवाद किया। कृष्णा पांडे एवं शिवदत्त सती ने अपनी रचनाओं से कुमाउंनी को समृद्ध करने में जो योग दिया उसकी चर्चा यथास्थान की जाएगी। १९ वीं शताब्दी के अन्त तक इस प्रकार सामाजिक परिस्थितियों के फल स्वरूप एक ओर कुमाउंनी पर हिन्दी का प्रभाव बढ़ा, दूसरी ओर इसका स्वरूप निखारने की प्रवृत्ति लक्षित हुई।

२० वीं शताब्दी के आरम्भ से अँग्रेजी शासन का कुमाउंनी पर दोहरा प्रभाव पड़ा जिसने निवासियों को द्वि भाषा-भाषी होने की ओर प्रेरित किया। एक ओर हिन्दी भाषी क्षेत्र के निकट सम्पर्क से हिन्दी खड़ी बोली का प्रभाव बढ़ा जिसके

द्वारा अनेक द्विभाषी शब्द कुमाउंनी में प्रविष्ट हुए। इन शब्दों ने अपना स्थान बनाकर स्थानीय प्रयोगों को विस्मृत करा दिया। दूसरी ओर जब गाँव-गाँव में ईसाइयों का प्रवेश होने लगा और अंग्रेजी कुशासन से जनता दुखी होने लगी तो उनकी वेदना और असंतोष उन्हीं की वाणी में उभरे जिसने कुमाउंनी की अभिव्यंजना शक्ति को बढ़ाया। 'गौर्दा' (१८७२–१९३९) की कविता में जनता की वाणी एवं नव जागरण की लहर ने कुमाउंनी को ओजस्विता प्रदान की।

सन् १९१३ से प्रकाशित 'अल्मोड़ा-अखबार' ने, जो सन् १९१८ के उपरान्त 'शक्ति' साप्ताहिक कहा जाने लगा, इन स्वरों को अधिक तीव्र बनाया। इस पत्र ने हिन्दी के माध्यम से कुमाउंनी भाषा एवं साहित्य को प्रकाशित करने में विशेष योग दिया। भाषा विकास की दृष्टि से मासिक पत्र 'अचल' का महत्वपूर्ण योगदान था जो कुमाउंनी में प्रकाशित होता था। सन १९३८–४० के बीच दो वर्षों तक प्रकाशित होकर यह बन्द हो गया। इसके अंकों में कुमाउंनी लोकगीतों, दंत कथाओं, कहावतों, पहेलियों एवं भाषागत प्रवृतियों के उल्लेखनीय संदर्भ हैं।

विगत तीस वर्षों में रामदत्त पंत 'कविराज' (१९०२–१९६८), श्यामा चरण दत्त पन्त, चन्द्रलाल चौधरी प्रभृति सज्जनों ने कुमाउंनी को विशेष रूप से निखारा जिसकी चर्चा लिखित साहित्य के अंतर्गत की जाएगी। समकालीन साहित्यकारों में चारुचन्द्र पान्डेय, वृजेन्द्रलाल साह, गिरीश तिवाड़ी आदि ने इसे और सक्षम बनाया है।

२० वीं शताब्दी में मुख्यतः हिन्दी के तथा उसके माध्यम से अंग्रेजी जैसी विदेशी भाषाओं के शब्द कुमाउंनी में प्रविष्ट हुए तथा इसकी व्याकरण रचना सरल हो गई। मध्य काल में राजस्थानी, ब्रज, अवधी ने जिस तीव्रगति से कुमाउंनी को प्रभावित किया, आधुनिक काल में उससे अधिक तीव्रगति से खड़ी बोली हिन्दी उसे प्रभावित कर रही है। यह प्रभाव कहीं-कहीं इतना प्रबल है कि स्थानीय उच्चारण वैशिष्ट्य के अतिरिक्त हिन्दी तथा कुमाउंनी में कोई अंतर प्रतीत नहीं होता। कुमाउंनी हिन्दी का स्थानीय रूपान्तर सी प्रतीत होने लगती है। ऐसी स्थिति में यदि कुछ विद्वान् इसे हिन्दी के अंतर्गत स्थान देते हैं तो यह स्वाभाविक ही है।

कुमाउंनी का स्वरूप विश्लेषण करते समय विभिन्न मताग्रहों को छोड़कर वर्तमान सामाजिक स्थितियों के बीच उसके प्रचलित आधार को ही ध्यान में रखकर चलना उचित होगा। इस दृष्टि से विचार करने पर कुमाउंनी की प्रवृत्ति

केन्द्राभिमुखी सिद्ध होगी, केन्द्रापगामी नहीं। अर्थात् हिन्दी भाषी केन्द्र के प्रति वह उन्मुख है, उससे हटकर अन्य प्रभावों की ओर जाने की उसकी प्रवृत्ति नहीं है। कुमाऊँ की विविध बोलियाँ यदि खस परजिया, (केन्द्रीय कुमाउंनी) के प्रति अभिमुख हैं तो स्वयं कुमाउंनी हिन्दी के प्रति अभिमुख है।

भाषा के अंग--

भाषा वाक्यों से बनती है। वाक्य कई प्रकार के होते हैं जिनकी अपनी निश्चित बनावट होती है। व्याकरण के जिस अंग में वाक्य गठन का विचार करते हैं उसे 'वाक्य विचार' (सिंटेक्स) कहते हैं। यह ऐतिहासिक और तुलनात्मक दो प्रकार का है। पहले में भाषा के आरंभ से लेकर आज तक वाक्य बनाने के नियमों पर विचार होता है। दूसरे में दो भाषाओं अथवा अधिक भाषाओं के रूप गठन की प्रत्यक्ष तुलना करके साम्य वैषम्य का विश्लेषण करते हैं।

वाक्य पदों से बनते हैं और पद शब्दों से। शब्दों में उपसर्ग, प्रत्यय आदि लगा कर पद बनाए जाते हैं जिनकी योजना भिन्न भाषाओं मे भिन्न है। शब्दों के रूप किस प्रकार बनते हैं, रूप परिवर्तन के क्या नियम हैं--इसका अध्ययन 'पद-विचार' (मॉर्फोलॉजी) का विषय है। पद का अर्थ है रूपयुक्त शब्द। शब्द अक्षरों से, अक्षर ध्वनियों से बनते हैं।

शब्द भंडार में कई तत्व हैं। जीवित भाषा अन्य प्रणालियों से भाषाई तत्व ग्रहण करते हुए उन्हें अपनी प्रकृति में ढालती है, अतः शब्दों की उत्पत्ति, विकास, निर्माण आदि पर व्याकरण के जिस अंग में विचार करते हैं उसे 'शब्द विचार' (वाकेब्युलरी) कहते हैं। शब्द जिन ध्वनियों, से बनते हैं, वे वर्ण हैं। वर्णों के उच्चारण का अलग-अलग ढंग है। इनके उच्चारण एवं शब्द निर्माण की प्रक्रिया 'ध्वनि विचार' अथवा 'वर्ण विचार' (फोनेटिक्स) कहलाती है। यह भी ऐतिहासिक और तुलनात्मक दो प्रकार की होती है।

भाषा की आत्मा अर्थ है, जिसका संबंध मनुष्य की वैचारिक प्रक्रिया से है। पदों की ध्वनि, उनके अर्थ संबंध पर, अर्थ परिवर्तन की दिशाओं एवं कारणों पर विचार करने वाले अंग को 'अर्थ विचार' (सीमेंटिक्स) कहते हैं। कुछ विद्वान इसे व्याकरण में सम्मिलित नहीं करते क्योंकि इससे भाषा के आंगिक विश्लेषण में सहायता नहीं मिलती। वे ध्वनि-विचार एवं पद-विचार तक व्याकरण को सीमित रखना चाहते हैं। किन्तु भाषा के व्यावहारिक रूप को समझने के लिये उक्त पाँचों अंगों पर विचार करना चाहिये।

अतः कुमाउंनी पर विचार करते समय हम क्रमशः उसके 'ध्वनि तत्व', 'शब्द-समूह', 'पद रचना', 'वाक्य रचना', एव 'अर्थ तत्व' पर विचार करेंगे। ऐतिहासिक दृष्टि से कुमाउंनी के संबंध में अनुमान लगाना विशेष उपयोगी नहीं होगा क्योंकि विद्वान इसकी प्रारंभिक इकाई ध्वनि संख्या के विषय में ही एक मत नहीं हैं। कुछ इसमें २१ स्वर मानते हैं, कुछ १५ मौलिक अक्षर मानते हैं। कुछ इसमें १२ स्वर अथवा १४ स्वर मानते हैं। यही स्थिति व्यंजनों की है।

इस मतभेद को दूर करने का एक ही उपाय है कि सर्वप्रथम इसकी भाषा संरचना पर वर्णनात्मक, विश्लेषणात्मक पद्धति से विचार करें। तभी तुलनात्मक आधार का अनुसरण करते हुए इसके ऐतिहासिक स्वरूप का सम्यक् विवेचन संभव हो सकेगा। इसीलिये अगले अध्याय में कुमाउंनी के वर्णनात्मक (डिस्क्रिप्टिव) विश्लेषण को मुख्य आधार बनाया जाएगा।

---

४. कुमाउंनी का भाषिक विश्लेषण

४/१ ध्वनि समूह--

कुमाउंनी में १४ स्वर हैं और ३७ व्यंजन हैं। स्वरों में ८ दीर्घ और ६ ह्रस्व हैं जिन्हें ध्वनिमिक (फोनेटिक) आधार पर स्पष्ट किया जा सकता है। कुछ स्वरों का प्लुत उच्चारण किया जाता है जिनका प्रयोग केवल गुणाधिक्य अथवा अधिक विशेषता बतलाने के लिये होता है। ,इनकी गणना खण्डेतर स्वनिमों (सुप्रा-सेगमेंटल फोनीम) में की जाती है। इनके कारण शब्दों में कोई अर्थगत परिवर्तन नहीं होता। मूल स्वर इस प्रकार है--[1]

अ आ आ इ ई उ ऊ ए ए ऐ अै ओ ओ औ। इनमें अ, आ, इ, उ, ए ओ ह्रस्व हैं और आ, ई, ऊ, ए, ऐ, अै, ओ, औ दीर्घ स्वर हैं। इन स्वरों का अनुनासिक रूप भी मिलता है। स्वर चतुष्कोण में मूल स्वरों की स्थिति इस प्रकार है--

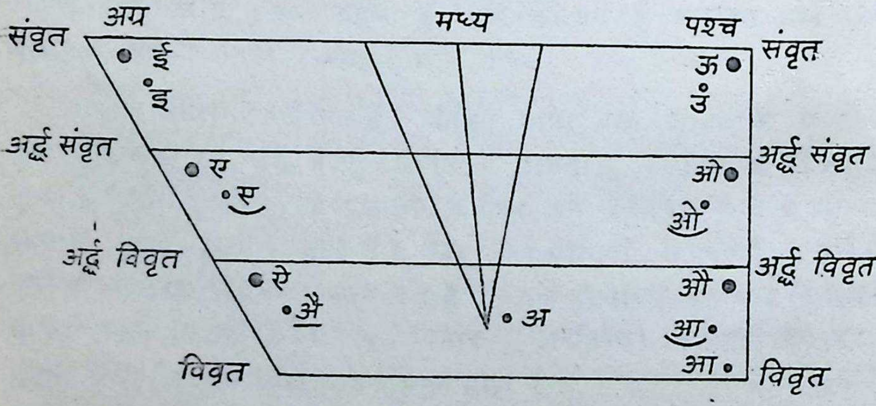

कुमाउंनी के व्यंजन--

कवर्ग--	क्	ख्	ग्	घ्	ङ्
चवर्ग--	च्	छ्	ज्	झ्	

१, स्वर के नीचे ‿, चिन्ह उसके ह्रस्व उच्चारण का द्योतक है। 'अै' विशिष्ट स्वर चिन्ह है जो आइ, उच्चारण का द्योतक है।

टवर्ग--	ट्	ठ्	ड्	ढ्	ण्	ड़्	ढ़्
तवर्ग--	त्	थ्	द्	ध्	न्	न्ह्	
पवर्ग--	प्	फ्	ब्	भ्	म्	म्ह्	
अंतस्थ--	य्	र्	र्ह	ल्	ल्ह्	व्	
ऊष्म--	श्	स्	ह्				

स्वर परिचय--

१. अ-- हिन्दी की भाँति अर्द्ध विवृत मध्य स्वर है। इसका उच्चारण करते समय जिह्वा की स्थिति मध्य अवस्था में रहती है। मुख विवर के विस्तार की दृष्टि से अर्ध विवृत है। यह स्वर शब्द के आदि, मध्य अन्त तीनों स्थानों पर आता है शब्दों में आने पर यह हिन्दी के 'अ' की भांति उच्चारित होता है, अन्यथा इसके उच्चारण में ओष्ठ कुछ गोलाकार होते हैं--

अनार (अनार), अघिल (आगे), लिपण (लीपना), वखत (समय), वरस (वर्ष), पैक (वीर)।

संयुक्त व्यंजनों के शब्दान्त में आने पर इसका उच्चारण इतना ह्रस्व हो जाता है कि अकारान्त शब्द प्राय: व्यंजनान्त सुनाई पड़ते हैं--

भट्ट (दाल), श्याप् (सर्प), वण् (जंगल), माल् (मैदान)।

२. आ-- अ और आ के बीच की ध्वनि है। अर्द्ध विवृत पश्च-मध्य स्वर है जिसका कुमाउंनी में महत्वपूर्ण स्थान है। दीर्घ 'आ' से इसका मुख्य भेद निम्नलिखित उदाहरणों से स्पष्ट होगा--

शार (कड़ा)	शार (आदत)
काव (काला)	काव (काल, मृत्यु)
रात (लाल)	रात (रात्रि)
बाड़ (छोटा खेत)	बाड़ (घेरा)
लाख (बकरा)	लाख (संख्या)
माव (माला)	माव (भाबर)
चाख (हथ चक्की)	चाख (बैठक)

इसे भी शब्दों के आदि, मध्य, अंत तीनों स्थानों पर देखा जा सकता है--

आपण (अपना), **आग** (आग), **आलु** (आलू), **खाटा** (रोटी)।

चाकल (चौड़ा), बिरालु (बिल्ली), हिसालु (फल), म्वाटा (मोटा)

३. आ—विवृत दीर्घ पश्च स्वर है। इसके— उच्चारण में जिह्वा के मध्य पश्च के बीच का भाग सक्रिय रहता है। उच्चारण की दृष्टि से ह्रस्व आ से इसका अन्तर यह है कि आ का उच्चारण स्थान किंचित मध्य की ओर है, जब कि आ नितान्त पश्च स्वर है। यह भी शब्दों के आदि, मध्य, अंत स्थानों पर मिलता है—

आखर (अक्षर), आया (आया), नामि (प्रसिद्ध), शार (आदत), मज्याल (बीच में), कुणा (कोना), गदुवा (कद्दू)।

आ का उच्चारण सर्वत्र एक जैसा नहीं होता। शब्दान्त में प्रायः आ की ओर इसकी प्रवृत्ति है। दीर्घ आ का प्लुप्त प्रयोग विशेषण शब्दों में गुण की अधिक मात्रा प्रकट करता है—लाऽल (अत्यन्त लाल)।

४. इ—संवृत अग्र स्वर है। इसका स्थान दीर्घ ई की अपेक्षा कुछ नीचे मध्य की ओर है। इ ध्वनि शब्द के आदि, मध्य, अन्त तीनों स्थानों पर मिलतीहै—

इजा (मां), इच्छा (इच्छा), खिचड़ि (खिचड़ी), मैंकणि (मुझको), तलि मलि (नीचे ऊपर)।

५. ई—संवृत उच्च अग्र स्वर है। इसके उच्चारण में ओष्ठ अधिक से अधिक फैल जाते हैं। कुमाउंनी में इसका प्रयोग कम है। शब्दान्त में इसका प्रयोग, और भी कम है—

ईश्वर (ईश्वर), नीन (नींद), तीन (तीन), कौंणी (कण)।

विशेषण शब्दों में दीर्घ ई का प्लुत रूप है—भलीऽ (बहुत अच्छी)।

६. उ— संवृत पश्च स्वर है। कुमाउंनी में इसकी स्थिति पश्च मध्य की है। इसके उच्चारण में जीभ का पश्च भाग नीचे की ओर झुकता है। ओष्ठ गोल रहते हैं। इसे आदि, मध्य, एवं अंत में देख सकते हैं—

उपाड़ना (उखाड़ना), उड्यार (गुफा), टुटि (टूटा हुआ), पुंतुरि (गठरी), ढेपु (रुपया पैसा), गोरू (गाय)।

७. ऊ— ह्रस्व उ का दीर्घ रूप है जिसके उच्चारण में ओष्ठ अधिक से अधिक गोल होते हैं। उच्चारण में जिह्वा का पश्च भाग ऊपर रहता है। शब्दांत में बहुत कम अथवा नहीं प्रयुक्त होता—

ऊन (ऊन), सून (सूंड़), लूण (नमक), आपू (आप)।

८. ए — यह स्वर ए की ह्रस्व ध्वनि है। अर्द्ध संवृत अग्रस्वर है जिसका स्थान ए से कुछ नीचे होने के साथ साथ भीतर की ओर है। आदि, मध्य तथा अन्त तीनों स्थानों में इसका प्रयोग होता है—
एकल (अकेला), देलि (देहली), मेलो (मेला), वीले (उसने), तुमुले (तुमने)
कुमाउंनी भाषा की बोलियों में ह्रस्व ए का स्थान य ध्वनि ले लेती है—
म्याला (मेला), च्याला (चेला,) म्यारा (मेरा)।

९. ए — अर्द्ध संवृत अग्रस्वर है। कुमाउंनी में इसकी दीर्घ ध्वनि तभी होती है जब ए का पश्वर्ती प्रथम स्वर 'अ' हो, अन्यथा ए का ए रहता है। इसके उच्चारण में दीर्घ ई की अपेक्षा मुख अधिक खुलता है। शब्द के आदि और मध्य में इसके अधिक उदाहरण मिलते हैं। शब्दान्त में ए का प्रयोग अधिक नहीं है—
एक (एक), परमेश्वर (परमेश्वर), खेल (खेलना), कें (क्या), ज्वे (स्त्री) ल्वे (रक्त)।
इसकी प्लुत ध्वनि विशेषणों में मिलती है। शब्दान्त में ह्रस्व अ का पूर्व स्वर यदि ए हो तो यह प्लुत हो जाता है— सेऽत (बहुत सफेद)।

१०. ऐ— अर्द्ध विवृत अग्र स्वर है जिसका उच्चारण शब्द के आदि, मध्य और अंत तीनों स्थानों पर होता है। यह मूल स्वर है, संयुक्त स्वर नहीं— ऐबेर (आकर), पैक (वीर), खैबेर (खाकर), लड़ै (लड़ाई), उबकै (ऊपर को)। यही ध्वनि विशेषण शब्दों में प्लुत हो जाती है—चैऽन (अत्यन्त चैन करना), ऐऽन बखत (बिलकुल ठीक समय पर)।

११. अै— यह स्वर ए की अपेक्षा कम विवृत और अधिक पश्च है। कुमाउंनी की यह विशिष्ट ध्वनि मानी जा सकती है जो बहुशः प्रयुक्त होती है। उच्चारण में यह स्वर आइ के रूप में सुनाई पड़ता है, किन्तु संयुक्त स्वर नहीं है। आदि, मध्य, अंत में इसके उदाहरण हैं—
ऐल (अभी), शैत (शायद), छैल (भूत प्रेत), नरै (याद), हिटै (चाल), मलै (मलाई)। यह ध्वनि परसर्गों एवं पूर्वकालिक कृदन्त में भी पाई जाती है—
आँख हैबेर (आँख से), भेंट है गई (भेंट हो गई), कुंअर थैं कयो (कुंअर से कहा)।

१२. ओ– ओ की ह्रस्व ध्वनि है। यह अर्द्ध संवृत निम्न पश्च ध्वनि कही जा सकती है। इसका प्रयोग कुमाउंनी में बहुत होता है। शब्दों के आदि, मध्य तथा अंत तीनों स्थानों पर आती है। किन्तु मध्य तथा अन्त में इसकी आवृत्ति अधिक है। अंत में इसकी बहुलता के कारण कुमाउंनी भाषा को ओकार बहुला भाषा कहते हैं। यह ओ की अपेक्षा ह्रस्व है––

ओड़ (सीमा), रोज (रोज), शोर (बिरादर), गोद (छेदकर), शतो (सफेद) मैलो (मैला)।

आकारान्त अथवा ओकारान्त शब्दों के ओ का व हो जाता है। आरंभ में आने पर यही ध्वनि उ में बदल जाती है––ब्वाज, (बोझा), ग्वार (गोरा), खाट (रोटी), उखल (ओखली)।

१३. ओ––हिन्दी की भाँति अर्द्ध संवृत पश्च स्वर है। इसका भी कुमाउंनी में बहुत प्रयोग होता है। हिन्दी के आकारान्त शब्द प्रायः कुमाउंनी में ओकारान्त हो जाते हैं। यह दीर्घ स्वर है जो ह्रस्व ओ से भिन्न है। आदि, मध्य तथा अन्त में इसकी स्थिति है–

ओस (ओस), गोद (गोद), गोल (गोल), दोहरी (दूसरा), उनरो (उनका) ग्यो (गया)।

विशेषण के रूप में प्रयुक्त होने पर शब्दान्त की ओ ध्वनि प्लुत हो जाती है––

कालोऽ (बहुत काला), पिङलोऽ (बहुत पीला)।

१४. औ––निम्नतर अर्द्ध विवृत पश्च स्वर है। इसकी प्रवृत्ति आदि तथा मध्य में दीर्घ होने की तथा अंत में ह्रस्व होने की है––

औन (आना), हौस (इच्छा), तौलि (पतीली), मौन (मधुमक्खी), भौ (शिशु) कौ (कहा)।

सभी ह्रस्व तथा दीर्घ स्वर अनुनासिक भी होते हैं। प्लुत स्वर अनुनासिक नहीं होतें।

अनुनासिकता के कारण स्वरों में निम्नलिखित प्रकार से परिवर्तन हो जाता है––

अँग्वाल (गले मिलना), साँस (साहस), पिंजरो (पिंजरा), सींङ (सींग), मुंगरो (मुगरी), स्यूँ (मांग), ऐंच, (टेढ़ा), मैंस (मनुष्य), गौंत (गोमूत्र)।

कुमाउंनी में स्वर संयोग के एक स्वरीय तथा एकाधिक स्वरीय संयोग

मिलते हैं। निकटवर्ती स्वर संयुक्त हो जाते हैं। कभी इस संयोग में प्रथम स्वर ह्रस्व रहता है। दूसरा स्वर ह्रस्व अथवा दीर्घ दोनों प्रकार का हो सकता है। कभी स्वर संयोग के उच्चारण में असावधानी करने पर अर्थ भेद हो जाता है। इसके उदाहरण निम्नलिखित हैं—

अ इ = कलइ, अ ए = मैल ।

अ उ = भाऊ, आ इ = भराइ, थकाई ।

कुमाउंनी में मूल स्वर इतने अधिक हैं कि इन्हीं के प्रयोग से काम चल जाता है। दीर्घ स्वरों की कम आवश्यकता पड़ती है क्योंकि भाषा की प्रवृत्ति ह्रस्व की ओर है। स्वर सानिध्य कम है। कहीं दो से अधिक स्वरों का संयोग मिलता है जैसे--ओ+आ+इ। बोआइ, (बोआई)। संयुक्त ध्वनियों के उच्चारण में स्वरागम, स्वरलोप तथा स्वर विपर्यय जैसी विशेषताएँ मिलती हैं जिनके उदाहरण हैं--

(१) स्वरागमः—

कुमाउंनी में स्वरागम मुख्यतः अ, इ, उ ध्वनियों का होता है--

(क) आदि स्वरागम--इस्कूल (स्कूल), अस्तुति (स्तुति)।

(ख) मध्य स्वरागम– सुमरण (स्मरण), सुकिल (शुक्ल), करम (कर्म)।

(२) स्वर लोप--

उच्चारण सुविधा के लिये प्रत्येक भाषा की भाँति स्वर लोप मिलता है। यह आदि मध्य और अंत तीनों प्रकार का है--

(क) आदि स्वर लोप--नाज (अनाज) हंकार (अहंकार)।

(ख) मध्य स्वरलोप--कल्सी (कलश)।

(ग) अंत्य स्वरलोप--घीण (घृणा)।

(३) स्वर विपर्यय--

उच्चारण की सुविधा हेतु एक स्वर दूसरे का स्थान ग्रहण कर लेता है— बूंद (बिन्दु), आंगुल (उंगली)।

(४) स्वराघात--

कुमाउंनी में संगीतात्मक स्वराघात की अपेक्षा बलात्मक स्वराघात अधिक पाया जाता है। बलाघात के कारण शब्द का रूप परिवर्तन होता है अथवा विशेष स्वर पर जोर देने के कारण शब्द का अर्थ भिन्न हो

जाता है। सामान्यतः बलाघात किसी शब्द के प्रथम स्वरपर पड़ता है—

भोल (कल) बक्कल (वल्कल) दगाड़ (साथ साथ) खाल (तलाब), खड़ी (खड़िया)

इसके विपरीत सुर (पिच) के उतार चढ़ाव के कारण वाक्य में अर्थ परिवर्तन होता है–"त्वीकें मैं ल्यूंलो" का अर्थ है तेरे ही लिये मैं लाउंगा। 'मैं' पर जोर देने के कारण इसका अर्थ होगा–तेरे लिये ही मैं लाउँगा। कुमाउंनी शब्दों के ध्वन्यात्मक परिवर्तन में स्वराघात का बड़ा हाथ है। विशेष सुर के ही कारण कुमाउंनी भाषी की पहचान होती है।

कुमाउंनी के ह्रस्व ओ तथा दीर्घ अै विशिष्ट स्वर हैं जो कुमाउंनी भाषा की प्रकृति निर्धारित करते हैं। दीर्घ स्वरों के ह्रस्वीकरण की प्रवृत्ति इनकी दूसरी विशेषता है। स्वतः अनुनासिकता को इनकी तीसरी विशेषता मान सकते हैं। चौथी विशेषता यह है कि आदि और मध्यवर्ती स्वर ह्रस्व दीर्घ दोनों प्रकार के होते हैं–किन्तु अन्त में आने वाला दीर्घ स्वर ह्रस्व हो जाता हैं। अंतिम स्वर ह्रस्व हो तो कभी उसका उच्चारण नहीं किया जाता। अतः स्वरांत शब्द व्यंजनांत हो जाते हैं। पाँचवी विशेषता यह है कि ह्रस्व अ मध्य में लिखा तो जाता है किन्तु वस्तुतः उसका उच्चारण नहीं किया जाता। इसलिये ग्यो (गया), भ्यो (हुआ), क्यों (कहो) शब्द सुनाई पड़ते हैं।

व्यंजन परिचय–

कुमाउंनी में हिन्दी के सभी व्यंजन प्राप्त हैं किन्तु उनके उच्चारणों में कुछ स्थानीय विशेषताएँ लक्षित होती हैं। क वर्ग के क् ख् ग् घ् कंठ्य कोमल तालव्य व्यंजन हैं। इनका उच्चारण स्थान हिन्दी के इन्हीं व्यंजनों की अपेक्षा कुछ पीछे की ओर है। च वर्गीय व्यंजन च् छ् ज् झ् हिन्दी में स्पर्श संघर्षी हैं। ट वर्गीय ध्वनियाँ ट ठ ड ढ् हिन्दी में शुद्ध मूर्धन्य ध्वनियाँ हैं और कुमाउंनी में भी कठोर तालव्य स्पर्श (मूर्धन्य) हैं। त वर्गीय त् थ् द् ध् व्यंजन हिंन्दी की भांति दन्त्य स्पर्श ध्वनियाँ हैं। प वर्गीय प फ् ब् भ् व्यंजन ओष्ठ्य स्पर्श ध्वनियाँ हैं। इनका उच्चारण करने के लिये कुमाउंनी में ओठ कुछ अधिक आगे बढ़ाने पड़ते हैं।

ङ् ण् न् म् नासिक्य स्पर्श व्यंजन हैं। कुमाउंनी में न की महाप्राण ध्वनि न्ह् और म की महाप्राण ध्वनि म्ह् पाई जाती है।

य् र् ल् व् को संस्कृत में अंतस्थ ध्वनियाँ माना जाता है क्योंकि इनका

स्थान स्वर व्यंजनों के बीच में है। डा० चटर्जी य और व को ही अर्द्ध स्वर मानते हैं जो क्रमशः तालव्य और द्वयोष्ठय ध्वनियाँ कही गई हैं। कुमाउंनी में य के य और ज दो प्रयोग मिलते हैं—- जंत्र (यंत्र), जजमान (यजमान)। य का कभी व हो जाता हे ––न्याय>न्याव। दंतोष्ठय व ध्वनि केवल शब्दों में विद्यमान है। उसका स्थान व ने ले लिया है। ल् अल्पप्राण पार्श्विक व्यंजन हैं। इसका उच्चारण स्थान न् के कुछ आगे है। इसकी महाप्राण ध्वनि ल्ह् है। र् व्यंजन हिन्दी के समान लुंठित अल्प प्राण व्यंजन है जिसका स्थान वर्त्स से लेकर कठोर तालु के आरंभ तक है। इसकी महाप्राण ध्वनि र्ह् है जो शब्द के आदि में मिलती है।

ड़् और ढ़ उत्क्षिप्त व्यंजन हैं। ड़ मूर्धन्य, घोष, उत्क्षिप्त अल्पप्राण है। ढ महाप्राण है। श, स, ह, ऊष्म ध्वनियाँ अथवा संघर्षी व्यंजन हैं। कुमाउंनी में स और श दोनों व्यंजनों का प्रयोग होता है किन्तु श के स्थान पर स, अथवा स कें स्थान पर श का प्रयोग वैकल्पिक है। इसी कारण सिह-शिग, सुवा-शुवा-सुआ, सुप शुप दो दो प्रयोग मिलते हैं। कुमाउंनी मे स की अपेक्षा श का प्रयोग अधिक है।

हिन्दी की अपेक्षा ह का प्रयोग भी अधिक होता है। इसी कारण न् म् ल् र् की महाप्राण ध्वनियाँ पाई जाती हैं। कहीं शब्द का अ स्वर ह में बदलता है जैसे—हौर (और), हघिल ((अघिल––आगे)। उक्त व्यंजनों का विवरण इस प्रकार है–.

१· क्—अघोष, अल्पप्राण, कंठय, कोमल; तालव्य स्पर्श व्यंजन है जो शब्द के आदि और मध्य दोनों स्थानों पर मिलता है—

कच्यार (कीचड़), कुकुर (कुत्ता, लाकड़ (लकड़ी), बाकर (बकरी)।

२· ख्—अघोष, महाप्राण, स्पर्श, कोमल, तालव्य व्यंजन है जो शब्द के आदि, मध्य दोनों स्थानों पर मिलता है—

खम्यार (खंडहर), खुटकूण (काठकी की सीढ़ी), अखौड़ (अखरोट), चाख (छज्जा)।

३· ग्—-घोष, अल्पप्राण, कंठय स्पर्श व्यंजन है जो शब्द के आदि और मध्य में आता ह—

गालड़ (गाल), गोरू (गाय), कांगिल (कंघी), बाग (बाघ)।

४. घ्–घोष, महाप्राण, स्पर्श, कंठ्य व्यंजन है जो शब्द के बीच में प्रायः ग हो जाता है घाम (धूप), घुन (घुटना), अघिल (आगे), घिंघारू–घिंगारू (एक लकड़ी)।

२१. न्--घोष, अल्पप्राण, स्पर्श वर्त्स्य नासिक्य व्यंजन है जिसका प्रयोग आदि मध्य और अंत तीनों स्थानों पर होता है। कुमाउंनी में न के स्थान पर ण के प्रयोग की विशेष प्रवृत्ति है--

नौल (जलाशय), नाति (नाती), अन्यारो (अंधेरा), नीन (नींद), मान् (सम्मान)।

२२. न्ह्--न की महाप्राण ध्वनि है जो केवल कुमाउंनी में मिलती है। यह हिन्दी में नहीं है--

न्हाति (नहीं है), न्है जा (चला जा)।

२३. प्--अघोष, अल्पप्राण, स्पर्श, ओष्ठ्य व्यंजन है जो शब्द के आदि, मध्य और अंत तीनों स्थानों पर आता है--

पाख् (छत), पोखरि (गाँव), उपाड़ (उखाड़ना), लिपण (लीपना), खाप् (मुख)।

२४. फ्--अघोष, महाप्राण, स्पर्श ओष्ठ्य व्यंजन है जो शब्द के तीनों स्थानों पर आता है। मध्य में आने पर इसका प्राय: प होता है--

फागुण (फागुन), फाम (याद), काफल, (फल), दोफरि (दोपहर), कप्फू (चिड़िया)।

२५. ब्--घोष, अल्पप्राण, स्पर्श, ओष्ठ्य व्यंजन है जिसने दंत्योष्ठ्य व का भी स्थान ले लिया है। यह शब्द के आदि, मध्य और अंत तीनों स्थानों पर मिलता है--

वामण (ब्राह्मण), बहौत (बहुत), गोबर (गोबर), सबै (सभी), कब् (कब)।

२६. भ्--घोष, महाप्राण, स्पर्श, ओष्ठ्य व्यंजन है जो प्राय: शब्द के आरंभ में आता है। मध्य में आने पर यह ब में बदलता है--

भितेर (भीतर), भालु (भालू), गाब (गाभा), कब (कभी)।

२७. म्--घोष, अल्पप्राण, ओष्ठ्य, स्पर्श, नासिक्य, व्यंजन है जो शब्द के आदि, मध्य और अंत तीनों स्थानों पर मिलता है--

मुस (चूहा), मडुवा (अनाज), तुमड़ि (तुंबी), छिमा (क्षमा), घाम् (धूप), फाम् (याद)।

२८. म्ह्--घोष, महाप्राण, स्पर्श, ओष्ठ्य, नासिक्य व्यंजन है जो केवल कुमाउंनी में प्राप्त है--

म्हतारी (माता), म्हैण (महीना)।

स्थान स्वर व्यंजनों के बीच में है। डा० चटर्जी य और व को ही अर्द्ध स्वर मानते हैं जो क्रमश: तालव्य और द्वयोष्ठय ध्वनियाँ कही गई हैं। कुमाउंनी में य के य और ज दो प्रयोग मिलते हैं-- जंत्र (यंत्र), जजमान (यजमान)। य का कभी व हो जाता है --न्याय>न्याव। दंतोष्ठय व ध्वनि केवल शब्दों में विद्यमान है। उसका स्थान व ने ले लिया है। ल् अल्पप्राण पार्श्विक व्यंजन है। इसका उच्चारण स्थान न् के कुछ आगे है। इसकी महाप्राण ध्वनि ल्ह् है। र् व्यंजन हिन्दी के समान लुंठित अल्प प्राण व्यंजन है जिसका स्थान वर्त्स से लेकर कठोर तालु के आरंभ तक है। इसकी महाप्राण ध्वनि र्ह् है जो शब्द के आदि में मिलती है।

ड़् और ढ़ उत्क्षिप्त व्यंजन हैं। ड़ मूर्धन्य, घोष, उत्क्षिप्त अल्पप्राण है। ढ महाप्राण है। श, स, ह, ऊष्म ध्वनियाँ अथवा संघर्षी व्यंजन हैं। कुमाउंनी में स और श दोनों व्यंजनों का प्रयोग होता है किन्तु श के स्थान पर स, अथवा स के स्थान पर श का प्रयोग वैकल्पिक है। इसी कारण सिह-शिग, सुवा-शुवा-सुआ, सुप शुप दो दो प्रयोग मिलते हैं। कुमाउंनी मे स की अपेक्षा श का प्रयोग अधिक है।

हिन्दी की अपेक्षा ह का प्रयोग भी अधिक होता है। इसी कारण न् म् ल् र् की महाप्राण ध्वनियाँ पाई जाती हैं। कहीं शब्द का अ स्वर ह में बदलता है जैसे—हौर (और), हघिल (अघिल--आगे)। उक्त व्यंजनों का विवरण इस प्रकार है-.

१· क्—अघोष, अल्पप्राण, कंठय, कोमल; तालव्य स्पर्श व्यंजन है जो शब्द के आदि और मध्य दोनों स्थानों पर मिलता है—

कच्यार (कीचड़), कुकुर (कुत्ता, लाकड़ (लकड़ी), बाकर (बकरी)।

२· ख्—अघोष, महाप्राण, स्पर्श, कोमल, तालव्य व्यंजन है जो शब्द के आदि, मध्य दोनों स्थानों पर मिलता है—

खम्यार (खंडहर), खुटकूण (काठकी की सीढ़ी), अखोड़ (अखरोट), चाख (छज्जा)।

३· ग्--घोष, अल्पप्राण, कंठय स्पर्श व्यंजन है जो शब्द के आदि और मध्य में आता है—

गालड़ (गाल), गोरू (गाय), कांगिल (कंघी), बाग (बाघ)।

४. घ्—घोष, महाप्राण, स्पर्श, कंठ्य व्यंजन है जो शब्द के बीच में प्रायः ग हो जाता है घाम (धूप), घुन (घुटना), अघिल (आगे), घिंघारू–घिंगारू (एक लकड़ी)।

२१. न्--घोष, अल्पप्राण, स्पर्श वर्त्स्य नासिक्य व्यंजन है जिसका प्रयोग आदि मध्य और अंत तीनों स्थानों पर होता है। कुमाउंनी में न के स्थान पर ण के प्रयोग की विशेष प्रवृत्ति है--

नौल (जलाशय), नाति (नाती), अन्यारो (अंधेरा), नीन (नींद), मान् (सम्मान)।

२२. न्ह्--न की महाप्राण ध्वनि है जो केवल कुमाउंनी में मिलती है। यह हिन्दी में नहीं है--

न्हाति (नहीं है), न्है जा (चला जा)।

२३. प्--अघोष, अल्पप्राण, स्पर्श, ओष्ठ्य व्यंजन है जो शब्द के आदि, मध्य और अंत तीनों स्थानों पर आता है--

पाख् (छत), पोखरि (गाँव), उपाड़ (उखाड़ना), लिपण (लीपना), खाप् (मुख)।

२४. फ्--अघोष, महाप्राण, स्पर्श ओष्ठ्य व्यंजन है जो शब्द के तीनों स्थानों पर आता है। मध्य में आने पर इसका प्रायः प होता है--

फागुण (फागुन), फाम (याद), काफल, (फल), दोफरि (दोपहर), कप्फू (चिड़िया)।

२५. ब्--घोष, अल्पप्राण, स्पर्श, ओष्ठ्य व्यंजन है जिसने दंत्योष्ठ्य व का भी स्थान ले लिया है। यह शब्द के आदि, मध्य और अंत तीनों स्थानों पर मिलता है--

बामण (ब्राह्मण), बहौत (बहुत), गोब्र (गोबर), सबै (सभी), कब् (कब)।

२६. भ्--घोष, महाप्राण, स्पर्श, ओष्ठ्य व्यंजन है जो प्रायः शब्द के आरंभ में आता है। मध्य में आने पर यह ब में बदलता है--

भितेर (भीतर), भालु (भालू), गाब (गाभा), कब (कभी)।

२७. म्--घोष, अल्पप्राण, ओष्ठ्य, स्पर्श, नासिक्य, व्यंजन है जो शब्द के आदि, मध्य और अंत तीनों स्थानों पर मिलता है--

मुस (चूहा), मडुवा (अनाज), तुमड़ि (तुंबी), छिमा (क्षमा), घाम् (धूप), फाम् (याद)।

२८. म्ह्--घोष, महाप्राण, स्पर्श, ओष्ठ्य, नासिक्य व्यंजन है जो केवल कुमाउंनी में प्राप्त है--

म्हतारी (माता), म्हैण (महीना)।

२९. य्—घोष, अल्पप्राण, तालव्य, अर्द्ध स्वर है। शब्द के आदि और मध्य में इसका प्रयोग होता है। अंत में प्रायः नहीं मिलता। तद्भव शब्दों में इसका ज होता है—

यो (यह), याँ (यहाँ), ग्यार (ग्यारह), ब्याल (शाम), भाया (भाई)।

३०. र्—घोष, अल्पप्राण, लुंठित, वर्त्स्य व्यंजन है जो शब्द के आदि, मध्य और अंत तीनों स्थानों पर मिलता है—

रातो (लाल), रत्तै (प्रातःकाल), बिराल् (बिल्ली), अबेर (देर), घर् (घर) मर् (मर)।

३१. र्ह—र् का महाप्राण व्यंजन है जो शब्द के आदि में आता है। र्ह का र के साथ कहीं वैकल्पिक प्रयोग होता है यह प्रायः बोलियों में मिलता है—
र्हौलि (रहेगी)।

३२. ल्—हिन्दी की भाँति घोष, अल्पप्राण, पार्श्विक, वर्त्स्य व्यंजन है जो शब्द के आदि, मध्य और अंत तीनों स्थानों पर मिलता है—

लूण (नमक), लुव (लोहा), मालकोट (ननिहाल); पिनाल् (अरवी) लगिल् (लता)।

३३. ल्ह्—ल् की महाप्राण, ध्वनि है जो अधिकतर बोलियों में पाई जाती है। इसका वैकल्पिक प्रयोग न्ह के साथ भी होता है—

ल्हाश (लाश), ल्है जा—न्है जा (चला जा), ल्हौंले (लाएगा)।

३४. व्—घोष, अल्पप्राण द्वयोष्ठय, अर्ध स्वर है। इसका शब्द के अंत में कम प्रयोग होता है—

वाँ (वहाँ), वार (इस पार), ग्वाल (गोल), स्वैण (स्वप्न), ब्याल-ब्याव (शाम)।

३५. श्—अघोष, अल्पप्राण, तालव्य, संघर्षी व्यंजन है। शब्द के आदि, मध्य और अंत तीनों स्थानों में आता है—

शौल (साही), शार (आदत), मशान (श्मशान), मश्याल (मसाला), भ्यास् (बुद्धू)। कुमाउंनी में तालव्य श के स्थान पर दन्त्य स का वैकल्पिक प्रयोग होता है—

रीश—रीस (क्रोध), शैप—सैप (साहब), खुशि-खुसि (खुशी)।

३६. स्—अघोष, अल्पप्राण, वर्त्स्य संघर्षी व्यंजन है। हिन्दी के समान मुख्यतः शब्द के आदि और मध्य में मिलता है। अंत में प्रयोग के कम उदाहरण हैं—

बन्नाम (वदनाम), इल्लै (इत+लै), सुरुज (सूरज)।

(४) विपर्यय——(मेटाथीसिस)—
मतलब (मतलव), अम्लवाड़ा (अल्मोड़ा)।

(५) अनुरूपता—
डाग्घर (डाक घर), आस्सेर (आध सेर)

(६) द्वित्तीकरण——(जेमिनेशन)——
आब्बे (अभी), शल्ल (चीड़), कल्लाट (शोर), दस्सै (दस ही)।

(७) द्विरावृत्ति——(डुप्लीकेशन)——
चिड़-चिड़ (चिड़चिड़ा), दि-दिय (दे दो), द्वी द्वी (दो-दो)।

६. विदेशी ध्वनियों में अनेक प्रकार के परिवर्तन होने हैं जो स्वर और व्यंजन दोनों में दर्शनीय हैं——
हाजर (हाजिर), बादुर (बहादुर), शैर (शहर), सिरकार (सरकार), ल्हास (लाश), मल्लम (मरहम), दरखास (दरखास्त), पलस्तर (प्लास्टर) राजि खुशि (राजी खुशी), पतरौल (पेट्रोल), तमाखु (तम्बाकू), लालटेन (लैन्टर्न), किफैत (किफायत)।

१०. हिन्दी के एकारान्त वहुवचन रूप कुमाउंनी में आकारान्त या व्यंजनान्त हो जाते हैं——

(१) क्यल (केले), म्यल (मेले), पिंहव (पीले)।

(२) हिन्दी के आकारांत स्त्रीलिंग शब्द ह्रस्व हो जाते हैं—
माल (माला), काथ (कथा)।

(३) हिन्दी के ईकारान्त शब्द इकारान्त हो जाते हैं--
मालि (माली), ताइ (ताली)।

---

२९. य्—घोष, अल्पप्राण, तालव्य, अर्द्ध स्वर है। शब्द के आदि और मध्य में इसका प्रयोग होता है। अंत में प्रायः नहीं मिलता। तद्भव शब्दों में इसका ज होता है—

यो (यह), याँ (यहाँ), ग्यार (ग्यारह), ब्याल (शाम), भाया (भाई)।

३०. र्—घोष, अल्पप्राण, लुंठित, वर्त्स्य व्यंजन है जो शब्द के आदि, मध्य और अंत तीनों स्थानों पर मिलता है—

रातो (लाल), रत्तै (प्रातःकाल), बिराल् (बिल्ली), अबेर (देर), घर् (घर) मर् (मर)।

३१. र्ह—र् का महाप्राण व्यंजन है जो शब्द के आदि में आता है। र्ह का र के साथ कहीं वैकल्पिक प्रयोग होता है यह प्रायः बोलियों में मिलता है—

र्हौलि (रहेगी)।

३२. ल्—हिन्दी की भाँति घोष, अल्पप्राण, पार्श्विक, वर्त्स्य व्यंजन है जो शब्द के आदि, मध्य और अंत तीनों स्थानों पर मिलता है—

लूण (नमक), लुव (लोहा), मालकोट (ननिहाल), पिनालु (अरवी) लगिल् (लता)।

३३. ल्ह्—ल् की महाप्राण, ध्वनि है जो अधिकतर बोलियों में पाई जाती है। इसका वैकल्पिक प्रयोग न्ह के साथ भी होता है—

ल्हाश (लाश), ल्है जा—न्है जा (चला जा), ल्हौंले (लाएगा)।

३४. व्—घोष, अल्पप्राण द्वयोष्ठ्य, अर्ध स्वर है। इसका शब्द के अंत में कम प्रयोग होता है—

वाँ (वहाँ), वार (इस पार), ग्वाल (गोल), स्वैण (स्वप्न), ब्याल-ब्याव (शाम)।

३५. श्—अघोष, अल्पप्राण, तालव्य, संघर्षी व्यंजन है। शब्द के आदि, मध्य और अंत तीनों स्थानों में आता है—

शौल (साही), शार (आदत), मशान (श्मशान), मश्याल (मसाला), म्यास् (बुद्धू)। कुमाउंनी में तालव्य श के स्थान पर दन्त्य स का वैकल्पिक प्रयोग होता है—

रीश—रीस (क्रोध), शैप—सैप (साहब), खुशि-खुसि (खुशी)।

३६. स्—अघोष, अल्पप्राण, वर्त्स्य संघर्षी व्यंजन है। हिन्दी के समान मुख्यतः शब्द के आदि और मध्य में मिलता है। अंत में प्रयोग के कम उदाहरण हैं—

बन्नाम (बदनाम), इल्लै (इत+लै), सुरुज (सूरज)।

(४) विपर्यय—(मेटाथीसिस)—
मतलब(मतलव), अम्लवाड़ा(अल्मोड़ा)।

(५) अनुरूपता—
डाग्घर (डाक घर), आस्सेर (आध सेर)

(६) द्वित्तीकरण—(जेमिनेशन)—
आब्बे (अभी), शल्ल(चीड़), कल्लाट(शोर), दस्सै (दस ही)।

(७) द्विरावृत्ति—(डुप्लीकेशन)—
चिड़-चिड़ (चिड़चिड़ा), दि-दिय (दे दो), द्वी द्वी (दो-दो)।

९. विदेशी ध्वनियों में अनेक प्रकार के परिवर्तन होते हैं जो स्वर और व्यंजन दोनों में दर्शनीय हैं—
हाजर (हाजिर), बादुर (बहादुर), शैर(शहर), सिरकार (सरकार), ल्हास(लाश), मलम(मरहम), दरखास(दरखास्त), पलस्तर (प्लास्टर) राजि खुशि(राजी खुशी), पतरौल(पेट्रोल), तमाखु (तम्बाकू), लालटेन (लैन्टर्न), किफैत (किफायत)।

१०. हिन्दी के एकारान्त वहुवचन रूप कुमाउंनी में आकारान्त या व्यंजनान्त हो जाते हैं—

(१) क्यल (केले), म्यल (मेले), पिंहव (पीले)।

(२) हिन्दी के आकारांत स्त्रीलिंग शब्द ह्रस्व हो जाते हैं—
माल (माला), काथ (कथा)।

(३) हिन्दी के ईकारान्त शब्द इकारान्त हो जाते हैं—
मालि (माली), ताइ (ताली)।

४/२ शब्द समूह

एक या एक से अधिक अक्षरों को मिलाकर शब्द बनते हैं। हम देख चुके हैं कि कुमाउंनी में दो या तीन अक्षर वाले शब्द ही शाब्दिक गठन के मुख्य आधार हैं। और चार से अधिक अक्षरात्मक शब्द प्रायः नहीं मिलते। अब कुमाउंनी के शब्द भंडार (वाकेबुलरी) पर विचार करना चाहिये जिससे उसकी समृद्धि का ज्ञान होता है।

(१) इस भंडार में कुछ शब्द संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश आदि भारतीय आर्य भाषाओं के हैं जो प्राचीन काल से तत्सम, तद्भव.दोनों रूपों में प्रयुक्त होते चले आए हैं।

(२) कुछ शब्द राजस्थानी, हिन्दी, पंजाबी, मराठी, गुजराती, व्रज, अवधी आदि से मुख्यतः मध्यकाल और आधुनिक काल में चले आए हैं। ये आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं के शब्द हैं। ये शब्द पहाड़ी और दरद भाषाओं में पाए जाते हैं।

(३) तीसरा वर्ग आर्येतर भाषाओं का है जिसमें कोल, किरात, मुंडा और द्रविड़ परिवार के शब्दों की प्रमुखता है। ये शब्द पहाड़ी और दरद भाषाओं में पाए जाते हैं।

(४) चौथी श्रेणी में देशज शब्द हैं जिनकी संख्या कुमाउंनी में अधिक है। ये शब्द जीव-जन्तुओं, नदी-नालों, पशु-पक्षियों अथवा प्राकृतिक व्यापारों के अनुकरण पर गढ़ लिये गए हैं। इन्हीं में कुछ शब्द आदिम जातियों से अपनाए गए हैं जिनके बारे में कुछ निश्चय करना कठिन है। ये भारतीय आर्य भाषाओं के शब्द नहीं हैं।

(५) पाँचवीं श्रणी में उन विदेशी शब्दों की गणना की जा सकती है जो मध्यकाल में उर्दू के माध्यम से तथा आधुनिक काल में हिन्दी के माध्यम से ग्रहण किये गए हैं। इनमें अरबी, फारसी, पुर्तगाली, अंग्रेजी आदि के शब्द हैं। अंगरेजी शब्द हिन्दी द्वारा एवं सीधे दोनों प्रकार से आए हैं। इसी वर्ग में तिब्बती बर्मी परिवार के उन शब्दों की गणना करनी चाहिए जो उत्तरी सीमान्त पर बोले जाते हैं।

कुमाउंनी भाषा का शब्द भंडार इन्हीं स्रोतों से संबंध रखता है।

(ग) द्रविड़ शब्द—

खुट (पैर), उखल (ऊखल), बाजी (जाति विशेष), खसी (खस जाति)।

४. देशज शब्द–

इसके अन्तर्गत कुछ ध्वन्यात्मक शब्द हैं और कुछ आदिम जातियों के वे शब्द हैं जो नेपाल से चंबा तक की बोलियों में उच्चारण भेद सहित पाए जाते हैं। दूरस्थ दरद भाषाओं में भी इनका प्रयोग है।

(क) ध्वन्यात्मक शब्द—

कर्कर, कलकळ, खणमण, गमगम, चर चराण, चुचाट, छण मण, दण मण नौराट, तडतड़, शिरु शिरु, झन झन, भड़ भड़ाट, छणमणाट, कड़कडाट, खटाखट, गटागट, फटाफट, ठक ठक, घडाघड, छमाछम, झन झन, ठक्ठक्, फड़फड़, सुसाट, फुफाट, हड़बड़ाट आदि।

(ख) आदिम जातीय शब्द—

बबा (पिता), इजा (माँ), ज्वे (पत्नी), बल्द (बैल), खुट (पैर), कणिक (चावल के दाने), धार (पहाड़ी चोटी), कणिक (चावल के दाने), धार (पहाड़ी चोटी), बाट (रास्ता), ढुंग (पत्थर), बोट (पेड़), यति–उति (इधर–ऊधर), गुल्यो (मीठा), ढुंग (पत्थर), बोट (पेड़), चूक (खट्टा), स्यरो (ठंडा), श्येत (सफेद), नसिण (चले जाना). पुजण (पहुंचना)।

५. विदेशी शब्द–

विदेशी शब्दों में तिब्बत–बर्मी परिवार के शब्द तो ज्यों के त्यों प्रयुक्त होते हैं। किंतु अन्य यूरोपीय शब्द कुमाउंनी की प्रकृति के अनुकूल परिवर्तित कर लिये जाते हैं। इसके उदाहरण हैं—

(क) **अरबी—**

अकल (अक्ल), अदालत (अदालत), इनाम (इनाम), ऐब (खोट), कतल (कत्ल), किताब (किताब), खबीश (खबीस)।

(ख) **फारसी—**

स्तर (अस्तर), खिदमत (खिदमत), कैदि (कैदी), गरीब (गरीब), दाग (दाग), गजब (गजब), नजर (नजर), आइंदा (आयंदा), आस्ते (आहिस्ता), उमीद (उम्मीद), उमर (उम्र), करार (इकरार), कारबार (कारोबार), झलसा (जलसा), परवा (परवाह), जिकर (जिक्र), फजित

४/२ शब्द समूह

एक या एक से अधिक अक्षरों को मिलाकर शब्द बनते हैं। हम देख चुके हैं कि कुमाउंनी में दो या तीन अक्षर वाले शब्द ही शाब्दिक गठन के मुख्य आधार हैं। और चार से अधिक अक्षरात्मक शब्द प्राय: नहीं मिलते। अब कुमाउंनी के शब्द भंडार (वाकेबुलरी) पर विचार करना चाहिये जिससे उसकी समृद्धि का ज्ञान होता है।

(१) इस भंडार में कुछ शब्द संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश आदि भारतीय आर्य भाषाओं के हैं जो प्राचीन काल से तत्सम, तद्भव.दोनों रूपों में प्रयुक्त होते चले आए हैं।

(२) कुछ शब्द राजस्थानी, हिन्दी, पंजाबी, मराठी, गुजराती, ब्रज, अवधी आदि से मुख्यतः मध्यकाल और आधुनिक काल में चले आए हैं। ये आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं के शब्द हैं। ये शब्द- पहाड़ी और दरद भाषाओं में पाए जाते हैं।

(३) तीसरा वर्ग आर्येतर भाषाओं का है जिसमें कोल, किरात, मुंडा और द्रविड़ परिवार के शब्दों की प्रमुखता है। ये शब्द पहाड़ी और दरद भाषाओं में पाए जाते हैं।

(४) चौथी श्रेणी में देशज शब्द हैं जिनकी संख्या कुमाउंनी में अधिक है। ये शब्द जीव-जन्तुओं, नदी-नालों, पशु-पक्षियों अथवा प्राकृतिक व्यापारों के अनुकरण पर गढ़ लिये गए हैं। इन्हीं में कुछ शब्द आदिम जातियों से अपनाए गए हैं जिनके बारे में कुछ निश्चय करना कठिन है। ये भारतीय आर्य भाषाओं के शब्द नहीं हैं।

(५) पाँचवीं श्रणी में उन विदेशी शब्दों की गणना की जा सकती है जो मध्यकाल में उर्दू के माध्यम से तथा आधुनिक काल में हिन्दी के माध्यम से ग्रहण किये गए हैं। इनमें अरबी, फारसी, पुर्तगाली, अंग्रेजी आदि के शब्द हैं। अंगरेजी शब्द हिन्दी द्वारा एवं सीधे दोनों प्रकार से आए हैं। इसी वर्ग में तिब्बती बर्मी परिवार के उन शब्दों की गणना करनी चाहिए जो उत्तरी सीमान्त पर बोले जाते हैं।

कुमाउंनी भाषा का शब्द भंडार इन्हीं स्रोतों से संबंध रखता है।

(ग) द्रविड़ शब्द—

खुट(पैर), उखल(ऊखल), बाजी(जाति विशेष), खसी(खस जाति)।

४. देशज शब्द–

इसके अन्तर्गत कुछ ध्वन्यात्मक शब्द हैं और कुछ आदिम जातियों के वे शब्द हैं जो नेपाल से चंबा तक की बोलियों में उच्चारण भेद सहित पाए जाते हैं। दूरस्थ दरद भाषाओं में भी इनका प्रयोग है।

(क) ध्वन्यात्मक शब्द—

कर्कर, कलकल, खणमण, गमगम, चर चराण, चुचाट, छण मण, दण मण नौराट, तडतड़, शिरु शिरु, झन झन, भड़ भड़ाट, छणमणाट, कड़कडाट, खटाखट, गटागट, फटाफट, ठक ठक, घडाघड़, छमाछम, झन झन, ठक्ठक्, फड़फड़, सुसाट, फुफाट, हड़बड़ाट आदि।

(ख) आदिम जातीय शब्द—

बबा(पिता), इजा(माँ), ज्वे(पत्नी), बल्द(बैल), खुट(पैर), कणिक (चावल के दाने), धार(पहाड़ी चोटी), कणिक (चावल के दाने), धार (पहाड़ी चोटी), बाट (रास्ता), ढुंग(पत्थर), बोट (पेड़), यति–उति (इधर–ऊधर), गुल्यो(मीठा), ढुंग(पत्थर), बोट(पेड़), चूक (खट्टा), स्यरो (ठंडा), श्येत (सफेद), नसिण (चले जाना). पुजण (पहुंचना)।

५. विदेशी शब्द–

विदेशी शब्दों में तिब्बत–बर्मी परिवार के शब्द तो ज्यों के त्यों प्रयुक्त होते हैं। किंतु अन्य यूरोपीय शब्द कुमाउंनी की प्रकृति के अनुकूल परिवर्तित कर लिये जाते हैं। इसके उदाहरण हैं—

(क) अरबी—

अकल (अक्ल), अदालत (अदालत), इनाम (इनाम), ऐब (खोट), कतल (कत्ल), किताब (किताब), खबीश (खबीस)।

(ख) फारसी—

स्तर (अस्तर), खिदमत (खिदमत), कैदि (कैदी), गरीब (गरीब), दाग (दाग), गजब (गजब), नजर (नजर), आइंदा (आयंदा), आस्ते (आहिस्ता), उमीद (उम्मीद), उमर (उम्र), करार (इकरार), कारबार (कारोबार), झलसा (जलसा), परवा (परवाह), जिकर (जिक्र), फजित

(फजीहत), फरमैश (फरमाइश), हौंस (हवस), हाइ तोबा (हाय तोबा)।

(ग) **तुर्की**—

कैंचि (कैंची), कुली, चक्कू (चाकू), तोप (तोप), लहाश (लाश)।

(घ) **अँग्रेजी**—

अपील, अस्पताल, इस्कूल, कलट्टर, कंपोडर, कुमेटी, कारड, कांग्रेस, क्वाटर, कुनैन, केतलि, कोट, गजट, गिलास, चैरमैन, जेल, ट्रंक, टिकट, टैम (टाइम), डाक्टर, डिप्टी, डिरैवर, दराज, पल्टन, पलस्तर (प्लास्टर), मास्टर, मीटर, राशन, हारमुनि (हारमोनियम) हैकोर्ट, होल्डर आदि।

(ङ) **पुर्तगाली**—

अल्मारी, अचार, आलपीन, इस्त्री, कप्तान, कंटर, गारद, गोभि, गुदाम, पिस्तौल, तौला, परेख, परात, पिस्तौल, बाल्टी, बिस्कुट।

(च) **फ्रांसीसी**—

अँग्रेज, कारतूस, कुपन, फिरंगी।

(छ) **तिब्बती-बर्मी**—

फुंगइ (गगरी), छयो (चम्मच), लुकुड़ (कपड़ा), चुक्ती (टोपी), तिग (एक), न्हीस (दो), पस (चुटका), मी (आदमी), कलपा (रोटी), खीं (कुत्ता), छकु (भात), अचरा (जोगी), ती (पानी), सींग (लकड़ी), वुंग (गधा), पाक (तरकारी), डमजे (ब्राह्मण)।

विभिन्न स्रोतों से आए इन शब्दों में कुछ मूल अर्थ में प्रयुक्त हैं किंतु कहीं अर्थ भिन्न होगया है। जैसे राजस्थानी में 'थोक' शब्द दिशा सूचक है। कुमाउंनी में वह स्थानवाचक हो गया है। अंग्रेजी का 'रिंग' शब्द चारों ओर घूमना अथवा अँगूठी का द्योतक है। कुमाउंनी में इससे 'रिंगै', 'रिंगाइ', बना जो सिर चकराने की स्थिति का द्योतक है। यूरोपीय भाषाओं के अधिकांश शब्द हिन्दी के माध्यम से आए हैं जिनका संभवत: दो बार ध्वनि परिवर्तन हुआ होगा। एक बार विदेशी भाषाओं से हिन्दी में आने पर, दूसरी बार हिन्दी से कुमाउंनी में आने पर।

अर्थगत विशेषताएँ—

कुमाउंनी की स्थानीय शब्दावली सूक्ष्म अर्थभेद की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण

रख्खा हुआ बर्तन,) पुंगरण (कल्ले फूटना) बाखड (जब गाय भैंस दूध नहीं देती), बाटुइ (याद दिलाने वाली हिचकी), बिशून (विश्राम करना), मुल्या (अनाथ लड़का), लबरीण (किसी वस्तु के सहारे लद कर बैठना), हगल्याट (आग में जलती हुई लकड़ी) जुंग (मूंछ), असजीली (गर्भवती)।

मुहावरे—

अर्थ व्यंजकता की दृष्टि से प्रयुक्त होने वाले कुछ मुहावरे द्रष्टव्य है—औली न्यूली (विनम्र), अकाशचाणि (आकाश ताकना), असहाय अवस्था); आपुण मुख फच्यू हालण (अपने मुह पर थप्पड़ मारना, वश न चलते देखकर चुप रहना) किरमोली पाँख जामण (चीटी के पंख उगना विनाश की सूचना) खोरि मे खाड़ खनण (सिर मे गढा खोदना, अपने हाथों अपनी हानि करना) खोरि फूटण (सिर फूटना, अवनति का सूचक शब्द), गाड़ बगून (नदी में बहाना, त्याग देना), घ्यू की अध्याणि (घी का अदहन, अच्छा भोजन करना), झट्योल जामण (उजड़ जाना), ढुंग में धरण (पत्थर पर छोड़ देना), तडि में तराण (शरीर में ताकत होना), धार में को दिन (चोटी का सूर्य, ढलता हुआ दिन), नटौरि मारण (उंगलियों के पोरों से मारना, तिरस्कार करना) फसक मारण (डींग हांकना), बकौल फुलण (बंजर पड़ना), मुख म्बाल हालण (मुख पर जाल डालना बोलने में रुकावट डालना), ललयै बेर पसूण (ललचा कर हलाल करना, यातना देना) सौल कठौल करना, पर निंदा करना हाड़ खकोलण (हड्डी धोना, तीर्थ स्नान करना)।

पशु पक्षियों की विशिष्ट ध्वनियों के लिये अलग अलग शब्द हैं। अनाज के कच्चा होने, पकने, सड़ने, गलने के द्योतक अलग शब्द हैं। प्राकृतिक व्यापारों के अलग शब्द हैं। कुमाउंनी में यदि स्थानीय प्रकृति एवं व्यक्ति सबंधी शब्दों का ही संग्रह किया जावे तो उनकी गणना सैकड़ों में होंगी। उदाहरणार्थ, यदि नदी नालो को लें तो जन समुदाय गाड़, गंगा, रौड़, सिमार, बगड़, ताल, खाल, गधेरा जैसे शब्दों में सूक्ष्म अंतर स्थापित कर लेता हैं।

'गधेरा' छोटा सा झरना है जिसे पैदल पार कर सकते हैं। 'गंगा' ऐसी बड़ी नदी है जिसे पैदल पार नहीं कर सकते हैं। बरसात में बहने वाले जल प्रपात को 'रौड़' कहते हैं। नदियो के किनारे कीचड़ वाली जगह को 'सिमार' कहते हैं जो संभवतः 'सेंवार' से बना है। नदी के किनारे बालू वाला भाग 'बगड़' कहलाता है। चारों ओर से बन्द दुर्गंधयुक्त तालाब को 'खाल' कहते हैं। इसकें अतिरिक्त स्वच्छ जल वाला विशाल तालाब 'ताल' कहलाता है।

(फजीहत), फरमैश (फरमाइश), हौंस (हवस), हाइ तोबा (हाय तोबा)।

(ग) तुर्की—

कैंचि (कैंची), कुली, चक्कू (चाकू), तोप (तोप), ल्हाश (लाश)।

(घ) अँग्रेजी—

अपील, अस्पताल, इस्कूल, कलट्टर, कंपोडर, कुमेटी, कारड, कांग्रेस, क्वाटर, कुनैन, केतलि, कोट, गजट, गिलास, चैरमैन, जेल, ट्रंक, टिकट, टैम (टाइम), डाक्टर, डिप्टी, डिरैवर, दराज, पल्टन, पलस्तर (प्लास्टर), मास्टर, मीटर, राशन, हारमुनि (हारमोनियम) हैकोर्ट, होल्डर आदि।

(ङ) पुर्तगाली—

अल्मारी, अचार, आलपीन, इस्त्री, कप्तान, कंटर, गारद, गोभि, गुदाम, पिस्तौल, तौला, परेख, परात, पिस्तौल, बाल्टी, विस्कुट।

(च) फ्रांसीसी—

अँग्रेज, कारतूस, कुपन, फिरंगी।

(छ) तिब्बती-बर्मी—

फुंगइ (गगरी), छयो (चम्मच), लुकुड़ (कपड़ा), चुक्ती (टोपी), तिग (एक), न्हीस (दो), पस (चुटका), मी (आदमी), कलपा (रोटी), खीं (कुत्ता), छकु (भात), अचरा (जोगी), ती (पानी), सींग (लकड़ी), बुंग (गधा), पाक (तरकारी), डमजे (ब्राह्मण)।

विभिन्न स्रोतों से आए इन शब्दों में कुछ मूल अर्थ में प्रयुक्त हैं किंतु कहीं अर्थ भिन्न होगया है। जैसे राजस्थानी में 'थोक' शब्द दिशा सूचक है। कुमाउंनी में वह स्थानवाचक हो गया है। अंग्रेजी का 'रिंग' शब्द चारों ओर घूमना अथवा अँगूठी का द्योतक है। कुमाउंनी में इससे 'रिंगै', 'रिंगाइ', बना जो सिर चकराने की स्थिति का द्योतक है। यूरोपीय भाषाओं के अधिकांश शब्द हिन्दी के माध्यम से आए हैं जिनका संभवतः दो बार ध्वनि परिवर्तन हुआ होगा। एक बार विदेशी भाषाओं से हिन्दी में आने पर, दूसरी बार हिन्दी से कुमाउंनी में आने पर।

अर्थगत विशेषताएँ—

कुमाउंनी की स्थानीय शब्दावली सूक्ष्म अर्थभेद की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण

रक्खा हुआ बर्तन,) पुंगरण (कल्ले फूटना)बाखड (जब गाय भैंस दूध नहीं देती) ,बाटुइ (याद दिलाने वाली हिचकी), बिशून (विश्राम करना), मुल्या(अनाथ लड़का), लधरीण (किसी वस्तु के सहारे लद कर बैठना), हगल्याट (आग में जलती हुई लकड़ी) जुंग(मूंछ),असजीली(गर्भवती) ।

मुहावरे—

अर्थ व्यंजकता की दृष्टि से प्रयुक्त होने वाले कूछ मुहावरे द्रष्टव्य है--औली न्यूली(विनम्र),अकाशचाणि(आकाश ताकना), असहाय अवस्था); आपुण मुख फच्यू हालण(अपने मुह पर थप्पड़ मारना, वश न चलते देखकर चुप रहना) किरमोली पाँख जामण (चीटी के पंख उगना विनाश की सूचना) खोरि मे खाड़ खनण (सिर मे गढा खोदना, अपने हाथों अपनी हानि करना) खोरि फूटण (सिर फूटना, अवनति का सूचक शब्द), गाड़बगून (नदी में बहाना, त्याग देना), ध्यू की अध्याणि (घी का अदहन, अच्छा भोजन करना), झट्योल जामण (उजड़ जाना), दुंग में धरण (पत्थर पर छोड़ देना) , तडि में तराण (शरीर में ताकत होना) , धार में को दिन (चोटी का सूर्य, ढलता हुआ दिन), नटौरि मारण (उंगलियों के पोरों से मारना, तिरस्कार करना) फसक मारण (डींग हांकना), बकौल फुलण(बंजर पड़ना), मुख म्बाल हालण(मुख पर जाल डालना बोलने में रुकावट डालना), ललयै बेर पसूण (ललचा कर हलाल करना, यातना देना) सौल कठौल करना, पर निंदा करना हाड़ खकोलण (हड्डी धोना, तीर्थ स्नान करना) ।

पशु पक्षियों की विशिष्ट ध्वनियों के लिये अलग अलग शब्द हैं। अनाज के कच्चा होने, पकने , सड़ने, गलने के द्योतक अलग शब्द हैं । प्राकृतिक व्यापारों के अलग शब्द हैं। कुमाउंनी में यदि स्थानीय प्रकृति एवं व्यक्ति सबंधी शब्दों का ही संग्रह किया जावे तो उनकी गणना सैकड़ों में होंगी। उदाहरणार्थ, यदि नदी नालो को लें तो जन समुदाय गाड़, गंगा, रौड़ , सिमार, बगड़, ताल, खाल, गधेरा जैसे शब्दों में सूक्ष्म अंतर स्थापित कर लेता हैं ।

'गधेरा' छोटा सा झरना है जिसे पैदल पार कर सकते हैं। 'गंगा' ऐसी बड़ी नदी है जिसे पैदल पार नहीं कर सकते हैं। बरसात में बहने वाले जल प्रपात को 'रौड़' कहते हैं । नदियो के किनारे कीचड़ वाली जगह को 'सिमार' कहते हैं जो संभवतः' सेंवार' से बना है। नदी के किनारे बालू वाला भाग 'बगड़' कहलाता है । चारों ओर से बन्द दुर्गंधयुक्त तालाब को 'खाल' कहते हैं। इसकें अतिरिक्त स्वच्छ जल वाला विशाल तालाब 'ताल' कहलाता है ।

इसी प्रकार खुजली सामान्य अनुभूति का द्योतक है। खुजली कई प्रकार की हो सकती है जिसकें सूक्ष्म भेदों के द्योतक कई शब्द हैं । जैसे 'खाजि उस खुजली को कहते हैं जो शरीर में किसी रोग से उत्पन्न होती है। 'कन्यै' उस खुजली को कहते हैं जो खटमल, जूं, पिस्सू आदि जीवों द्वारा काटने पर लगती है। 'चिलै' उस खुजली को कहते हैं जो गेहूँ, जौ, अनाजों की धूल त्वचा में लगने से होती है। यदि अरवी-घुइयाँ जैसी किसी वस्तु का रस लग जाए तो उस संसर्गयुक्त खुजली को 'कीकै' कहते हैं। अज्ञात कारण से लगने वाली खुजली को 'खुजै' कहते हैं।

पर्यायवाची शब्द—

कुमाउंनी की वोलियों में अनेक शब्द हैं जहाँ एक ही अर्थ के लिये अलग अलग शब्दों का प्रयोग होता है। इन्हें पर्यायवाची शब्द कहते हैं—

गेहूं—ग्यों, ग्यूं,

भुट्टा—जुनाल, ध्वाघ, काकुनि,

चटाई=फिण, मौहट, मोष्ट,

अग्नि=आग, भिनेर,

चक्की=चाख, जानर।

पुनरुक्त एवं अनुकरणमूलक शब्द—

जैसा कि उपर्युक्त शब्द समूह से ज्ञात होगा इसमें पुनरुक्त एवं अनुकरण मूलक शब्दों की अधिकता है। पुनरुक्त शब्दों के कई वर्ग बनाए जा सकते हैं—

(१) एक शब्द दो बार बोला जाता है—घर-घर, चार-चार।

(२) अर्थ विस्तार के लिये समानार्थक शब्दों का प्रयोग—नानातिन (बाल-बच्चे); जाण पछाँण, झाड़ फूँक, लिखि पढ़ी, घर कुड़ि, हाइ तौबा।

(३) प्रतिध्वनित शब्दों का प्रयोग—आस-पास, अता-पता, अगल-बगल।

(४) प्रतिध्वनित शब्द बाद में आता है—चुपचाप, गलत सलत, बची-खुची।

(५) कुछ पुनरुक्त शब्दों में दूसरा शब्द निरर्थक होता है जो प्रायः ह से आरंभ होता है—पुजा—हुजा, चोर—होर, मकान—हकान।

अनुकरणमूलक शब्दावली भी संज्ञा, विशेषण, क्रिया, क्रिया विशेषण के आधार पर मुख्यतः चार प्रकार की है—

(१) संज्ञामूलक—खटखट, गटगट, ठक् ठक्, भड़ भड़, झन झन,

(२) विशेषणमूलक—खटपट,

(३) क्रिया मूलक--हिनहिनाण, थरथराण,

(४) क्रिया--विशेषण मूलक--खटाखट, दनादन, धड़ाधड़, छमाछम ।

शब्द रचना--

रचना या बनावट के आधार पर कुमाउंनी शब्द दो प्रकार के हैं—रूढ़, शब्द तथा यौगिक शब्द । रूढ़ शब्द वे हैं जिनके सार्थक खंड नहीं हो सकते—जैसे 'बचुवा' (बेटा) । यौगिक शब्द जुड़े हुए होते हैं ।

जब रूढ़ शब्द के साथ किसी अर्थवान तत्व, उपसर्ग अथवा प्रत्यय को जोड़ते हैं तो यौगिक शब्द बनता है जैसे—रजबार, दनपुरिया, बारामंडल इत्यादि । यौगिक शब्दों की रचना संधि, समास, उपसर्ग और प्रत्ययों के द्वारा होती है ।

१. संधि—

कुमाउंनी में संधि के दो भेद स्वर संधि तथा व्यंजन संधि हैं—

स्वर संधि—आ+आ=आ—च्याला (लड़के) ।

इ+ई=ई—चेली (लड़की) ।

उ+ऊ=ऊ—गोरू (गाय) ।

ओ+औ=औ—तलौट (नीचे का) ।

व्यंजन संधि—यदि पहले पद का अंतिम व्यंजन् ग हो तथा दूसरे शब्द की आदि ध्वनि ह् हो तो ग्+ह जुड़कर घ हो जाते हैं—आग+हालण=अघालण ।

२. समास रचना—

कुमाउंनी में सामासिक शब्द बहुत कम हैं । किन्तु हिन्दी के प्रभाव से इनकी संख्या बढ़ रही हैं—अण--बिवाइ (अविवाहिता) । औंल्वे (रक्तातिसार), करम—फुटो (अभागा), चौमास (बरसात), तमखोर (गंजा), रीस राग (ईर्ष्या) ।

समासों के सभी परंपरागत उदाहरण मिल जाते हैं ।

१. द्वंद्व समास (दो संज्ञा शब्द) हात—पैर, बाल—बच्चा, काम—काज,
   द्वंद्व समास (दो विशेषण) नानठुल, ऊंच--नीच—इकतीस,
   द्वंद्व समास (दो क्रिया विशेषण) रात दिन, सिनै--जागनै,
२. तत्पुरुष समास--चिड़ीमार, गोपाल,
३. कर्मधारय समास—भलमानुस, महावीर,
४. द्विगु समास—चार गुण (चौगुना), चौमास (वर्षा),

५. अव्ययी भाव समास—यथायोग्य, मन माफिक,

६. बहुव्रीहि समास—बारह सिंगा,

आवृत्ति की दृष्टि से तत्पुरुष समास का अधिक प्रयोग होता है। हिन्दी की भाँति यहाँ विभक्तियों का जोड़ना निरंतर कम हो रहा है। अतः शब्द ही पद का कार्य करते हैं।

३. **उपसर्ग**—

कुमाउंनी में प्रयुक्त उपसर्ग तत्सम, तद्भव, विदेशी तीन प्रकार के हैं। इनका प्रयोग करने से अर्थ में विशेषता, अभाव, प्रशंसा, न्यूनता आदि की स्थितियाँ उत्पन्न होती हैं।

१. अ—अन्यौ (अन्याय), अबेर (देर), अश्याण (अबोध), अतार (दुस्तर),।
२. अण—अणकस (विचित्र), औगुण (अवगुण), अण बेवाई (बिना ब्याही)।
३. औ—औतार (अवतार), औगुण (अवगुण)।
४. अप—अपजस (अपयश), अपघात (आत्महत्या)।
५. अन—अनबन (मनमुटाव),
६. उन—उनचास (४६), उनसठ (५९), उन्हत्तर (७६)।
७. कु—कुठौर (बुरा स्थान), कुचाल (बुरी चाल)।
८. दुर्—दुरदशा (दुर्दशा), दुरगति (दुर्गति)।
९. नि—निखाणि (नहीं खाने की स्थिति)।
१०. निर्—निरबुद्धि (मूर्ख), निरादर।
११. पर्—परस्पर, परघर (दूसरा घर), परलोकी (कल्पनाशील)।
१२. परि—परिकरमा (परिक्रमा),
१३. स—सपूत (सुपुत्र), सजिल (सजा हुआ)।
१४. सु—सुजात (अच्छी जाति का), सुडौल (सुन्दर आकार का)।

विदेशी उपसर्ग इस प्रकार हैं—

१. कम—कमजोर
२. खुश—खुशबू
३. गैर—गैराजिर (गैरहाजिर),
४. ना—नालैक (नालायक), नापसंद, नाकाबिल
५. बे—बेकार, बेकाम
६. बद—बच्चलन (बदचलन), बत्तमीज (बदतमीज),
७. ला—लाइलाज

८. हर—हरेक (हरएक), हर बखत

९. हेड्—हेड मास्टर

४. प्रत्यय

प्रत्यय वे शब्दांश हैं जिन्हें किसी शब्द/धातु के अंत में जोड़ कर यौगिक शब्द बनाते हैं। ये दो प्रकार के हैं—कृत् प्रत्यय और तद्धित प्रत्यय। क्रिया की धातु में कृत् प्रत्यय जोड़ कर कृदन्त शब्द बनते हैं। क्रिया से भिन्न संज्ञा-विशेषण आदि शब्दों के अंत में तद्धित प्रत्यय जोड़े जाते हैं। उनसे बनने वाले शब्द तद्धितांत कहे जाते हैं। कुमाउंनी में अधिकांश प्रत्यय संस्कृत हिन्दी के हैं, अथवा देशज हैं। विदेशी प्रत्यय बहुत कम हैं।

१. अक्—ढोलक, बैठक,

२. अत्—बचत, रंगत,

३. आ—श्यार (नमी वाला स्थान),

४. आइ—पढ़ाइ, सिलाइ, खवाइ, बोवाइ, गोड़ाइ, पेवाइ,

५. आण—जोग्याण, भुत्याण,

६. आन—लंबान, निचान, मिलान, लगान, उड़ान, झुकान,

७. अन्—जलन, खानपान, चलन, लगन, बगन्

८. आक—लड़ाक, छराक, उड़ाक, तैराक

९. इया—शड़िया (सड़ा हुआ), झड़िया (झड़ा हुआ), भितरिया (भीतर वाला),

१०. ईण—बजीण, लुटीण, हगीण,

११. आप—मिलाप (मिलने की स्थिति), सिलाप (सीलन),

१२. आपा—बुढ़ापा,

१३. आऊ—दिखाऊ, बेचाऊ, टिकाऊ,

१४. आर्—गितार, जितार, चमार, सुनार, होल्यार, एकार,

१५. आल्—दुद्याल (दूध देने वाली), धुयाँल (धूम्रयुक्त), ग्वाल (चरवाहा)

१६. आव—पैराव, बणाव,

१७. आट्—कुक्याट, अड़ाट, कल्लाट

१८. इ—नौमि, सफेदि (सफेदी), हंशि (हँसी),

१९. इष्ट—अनिष्ट, स्वादिष्ट, गरिष्ट,

२०. ई—नौनी (बहुत छोटी) भैंसी (भैंस), कुकुड़ी (मुर्गी),

२१. इल—रंगीलो, अघिलो (आगे का), पछिलो (पीछे का), गठिलो (गठीला),

२२. उल-उली—करछुल, दातुल (हँसिया), नथुली (नथ), बिंदुली (बिंदी),
२३. ऐ—बुरै, (बुराई), ठंडै (ठंडाई), खवै (खवाई), हिटै (चलाई),
२४. ऐंत—पंचैत (पंचायत), बड़ैत (स्थान),
२५. ऐन—तेलैन (तेल की बास) चुरैन (मूत्र की गंध), किड़ैन (बाल जलने की गंध),
२६. ऐल—दबैल, गुस्सैल, रखैल, दंतैल, दुधैल, घमैल,
२७. ओ—उखालो (वमन), उकालो (चढ़ाई), गड़ो (खेत),
२८. औ—पड़ौ (पड़ाव), तलौ (तालाब),
२९. औण—शिरौण (सिरहाना), बिछौण (बिस्तरा),
३०. औड़—डुमौड़ (डोमों का मुहल्ला), हथौड़ (हथौड़ा), इकौड़,
३१. औल—भिटौलि (भेंट), पपटौल (एक प्रकार की बड़ियाँ), इकौल (इकहरा), ।
३२. ड़ी—मुखड़ि (मुख),
३३. वाल—अंग्वाल (गले लगाना),
३४. वाड़—खेलाड़ (खेलने वाला),
३५. ला—शल्ला (समझौता), तल्ला, (नीचे का),
३६. सर्—दुसर, तिसर,

मुख्य विदेशी प्रत्यय हैं—

१. इच—बगिच (बगीचा), नगिच (नजदीक)
२. कार—जानकार,
३. खोर—हरामखोर, टुकड़खोर,
४. गिरि—कुल्लिगिरी, (कुलीगिरी),
५. दार—कलदार (रुपया), लेनदार, फलदार,
६. नवीस—अर्जी नवीस,
७. पोश—मेजपोश, सफेद पोश,
८. बन्द—गुलूबन्द, मोहरबंद,

इनके अतिरिक्त कुछ स्वतंत्र शब्द भी प्रत्ययों की भाँति शब्द के अंत में आते हैं, जिनसे विशेष अर्थ व्युत्पन्न होता है—

१. काल—बुड्या काल (बुढ़ापा)
२. कोट—मालकोट (ननिहाल),
३. तिन—नानातीना (बाल बच्चे)

४. फाट्—तैलफाट (घूपवाली भूमि), सैलफाट (छाया वाली भूमि),
५. शार—मिलनशार, तलशार—(नीचे की बारी)
६. शाल—पेटशाल (स्थान),
७. हार—हुनहार (होनहार),
८. वार—माहवार,
९. दान—कन्यादान, रोशनदान, मच्छरदानि, पानदान,
१०. खालि—मजखालि, पोखरखालि (स्थानों के नाम),
११. सौं—द्वारसौं (स्थान),
१२. पुड़िया—कठपुड़िया (स्थानवाचक),

—

४/३ पद रचना

कुमाउंनी वाक्यों में प्रयुक्त होने वाले शब्दों के रूप भिन्न भिन्न हैं। इन रूपयुक्त शब्दों का विवेचन पदविचार अथवा रूपविचार का विषय है। पद विचार का तात्पर्य है शब्दों का प्रयोगात्मक रूप। कुमाउंनी में यद्यपि संस्कृत, प्राकृत की कई रचनागत प्रवृत्तियाँ लक्षित होती हैं किन्तु उनमें सरलीकरण की प्रवृत्ति है। संज्ञा, लिंग वचन, कारक एवं क्रिया रूपों को व्यक्त करने के लिये कुछ नये तत्व विकसित हुए हैं।

रूप परिवर्तन की दृष्टि से कुमाउंनी शब्द दो प्रकार के हैं--विकारी और अविकारी। विकारी शब्दों के रूप में लिंग, वचन, कारक, पुरुष, काल आदि के कारण परिवर्तन होता है। इनके चार भेद हैं--(१) संज्ञा, (२) सर्वनाम, (३) विशेषण, (४) क्रिया।

अविकारी शब्दों के रूप ज्यों के त्यों बने रहते हैं। वाक्य प्रयोग में इनका रूप परिवर्तन नहीं होता। इन्हें अव्यय कहते हैं। इनके चार भेद हैं--(१) क्रिया विशेषण, (२) समुच्चय बोधक (३) संबंध-बोधक, (४) विस्मयादि बोधक।

संज्ञापद--

कुमाउंनी में रूप रचना के आधार पर संज्ञापद, ह्रस्व, दीर्घ और प्लुत तीन रूपों में मिलते हैं--दिदि, दीदी, दीदी ऽ, इज, इजा, इजा ऽ (माता)।

अर्थ की दृष्टि से कुमाउंनी में संज्ञाएं तीन प्रकार की हैं--

(१) **व्यक्ति वाचक संज्ञा--**

जो एक ही वस्तु या जीव का बोध कराती हैं। ये विशिष्ट नाम हैं--शिवराम (व्यक्ति विशेष), रानीखेत (स्थान विशेष), रमैण (ग्रंथ विशेष), पनार (एक नदी)।

(२) **जातिवाचक संज्ञा--**

बोट (वृक्ष), लगिल (लता), सुआ (तोता), लाकड़ (लकड़ी), सैणि (स्त्री) बाकर (बकरी), बहड़ (बछड़ा), झोक (चाबी का गुच्छा), लू (लोहा), घ्यू (घी), चहा (चाय) पिस्यू (आटा), बल्द (बैल)।

(३) **भाववाचक संज्ञा**––

खटास (खट्टापन); बालपन (बचपन), बुड़्काल (बुढ़ापा)।

कुमाउंनी में भाववाचक संज्ञाएँ चार प्रकार से बनती हैं––

(क) क्रियाओं से––चलण > चाल, हिटण > हिटै, काटण > काट, छटपटाण > छटपटाट।

(ख) संज्ञा से––बाल > बालपन, मैंस > मैंस्योल।

(ग) विशेषण से––ज्वान > ज्वानी, गरीब > गरीबी, ठंड > ठंडक, सफेद > सफेदी।

(घ) सर्वनाम से––अहं > हंकार।

लिंग––

कुमाउंनी में हिन्दी की भाँति दो लिंग हैं––पुल्लिंग और स्त्री लिंग। प्राणि वाचक संज्ञाओं के लिंग निर्धारण में परेशानी नहीं होती क्योंकि नर जाति का बोध कराने वाले शब्द पुल्लिंग हैं। स्त्री जाति के बोधक शब्द स्त्री लिंग हैं। अप्राणि वाचक संज्ञाओं का लिंग निर्धारण कठिन है। सामान्यतः कुमाउंनी में ओकारान्त संज्ञाएं पुल्लिंग हैं। उकारान्त, एकारांत औकारान्त संज्ञाएं भी प्रायः पुल्लिंग हैं। इकारांत पुल्लिंग संज्ञाओं की संख्या बहुत कम है। व्यंजनान्त, आकारान्त, और एकारान्त संज्ञाएं दोनों लिंगों में प्राप्त होती हैं––

पुल्लिग–भै (भाई), आदिमि (आदमी), बाकरो (बकरा), चेलो (लड़का), घाम (धूप), पात (पत्ता), घट (पनचक्की), डाला (टोकरी), बण (जंगल), बाटो (रास्ता), आड़ु (फल)।

स्त्रीलिग––बातचीत, खाट, इजा, माला, छाति, ज्वे (स्त्री), भैंसि (भैंस), सौत, बैणि, सासू, लड़ै (लड़ाई), डुमणि (डोमनी), माछि (मछली), पछ्याण (पहचान)।

कुछ शब्द दोनों लिगों में हैं –कलम, खेल, पिस्तौल, सिगरेट, किसाण, भैंस।

कुमाउंनी में लिग निर्धारण का मुख्य आधार प्राकृतिक लिग भेद है। किन्तु कभी वस्तु या व्यक्ति के छोटे बड़े होने पर भी लिग निर्धारित होता है। सम्मान प्रगट करने के लिये स्त्री लिंग पर पुल्लिग का आरोप करते हैं––

पुल्लिग––भैंसो (बड़ी भैंस)	,	स्त्रीलिग––	भैंसी (छोटी भैंस)।
,, कुड़ (बड़ा मकान)		,,	कुड़ि (छोटा मकान)।
,, घर वाला (पुरुष)		,,	घरवाली (स्त्री)।

लिग निर्धारण की कठिनाई होने पर हिन्दी की भाँति लोक प्रचलन का आधार लिया जाता हैं।

लिग बोध संवंधी कुछ आधार हैं--

(१) प्रायः भोज्य पदार्थों, धातुओं, अनाजों, दिन, महीनों, पहाड़, समुद्रों, ग्रहों और वृक्षों, फलों आदि के नामवाची शब्द पुलिंग हैं—
पुआ (पूआ), रैत (रायता), हलुवा, ताम (तांवा), लू (लोहा), पितव (पीतल) ग्यूं (गेहूं), मडुवा (स्थानीय अनाज), उड़द, (उरद) भीपै (वृहस्पति वार) छन्चर (शनिश्चर), सुरुज (सूर्य), मिहल, पइयां, घिगारु (वृक्ष)।

(२) अर्थ के आवार पर नक्षत्र वाचो, नदी वाची, तिथिवाची आदि शब्द प्रायः स्त्री लिग हैं--गंग (गंगा), अष्टमी, नौमी,

(३) जीवधारियों के नाम प्रायः उनके प्राकृतिक लिग भेद के अनुसार पुल्लिग अथवा स्त्री लिग हैं--बहड़ (वछड़ा) पुल्लिग है, भैंस स्त्री लिग है। यद्यपि दोनों अकारांत संज्ञा हैं।

(४) कुछ जीवधारी के लिये एक ही शब्द दोनों लिगों का द्योतक है--
ज्वाक (जोंक), माख (मक्खी), श्याव (सियार), जूं (जूं)।

(५) प्राणियों के समूह बोधक शब्द कभी पुल्लिग, कभी स्त्री लिग होते हैं--भुंड, कुटुम शब्द पुल्लिग हैं पर पलटण, पंगत शब्द स्त्री लिंग हैं।

(६) निर्जीव वस्तुओं में कोमलता, कठोरता, गुरुता एवं लघुता के आधार पर लिग निर्णय किया जाता है—
घाम (पु०), किरण (स्त्री०), सुरुज (पु०), जून (स्त्री०)

(७) संस्कृत के आकारान्त शब्द स्त्रीलिग हैं-
माया, दया, माला, माता।

संस्कृत के कुछ इकारान्त तत्सम शब्द पुल्लिग हैं--
ऋषि, कवि, हरि, यति।

संस्कृत के नपुसंक लिंगी शब्द तद्भव रूप में आने पर पुल्लिग हैं--
नौं (नाम), दई (दही), ह्यूं (हिम), घाम (घूप)।

(८) विदेशी शब्दों में पुल्लिग के स्त्री लिग रूप कुमाउँनी की प्रवृत्ति के अनुसार बनते हैं—
डाक्टर—डाक्टरिणि, दरोगा--दरोग्याणि।

(९) अनुनासिकता के कारण शब्दों में लिग भेद होता है—
तैल (पु०), तैंल (स्त्री०)=(उसने)

(१०) प्राणिवाचक शब्दों में कुछ शब्द सदा पुल्लिग हैं--

उल्लू, कौवा, भालू।

इसके विपरीत कुछ प्राणिवाचक शब्द केवल स्त्रीलिंग हैं--

पुरपुतई (तितली), हिलास (पक्षी)।

(११) कुछ संज्ञाएँ हिन्दी से भिन्न लिंग रखती हैं। हिन्दी में आँख स्त्रीलिंग और चाँद पुल्लिग है। कुमाउंनी में 'आँखो' पुल्लिग हैं, 'जून' स्त्रीलिंग।

(१२) संस्कृत के तत्सम पुल्लिग शब्द कुमाउंनी में तद्भव रूप में प्रयुक्त होने पर स्त्री लिंग हो गए हैं। संस्कृत 'वैश्वानर' पुल्लिग है। कुमाउंनी में उससे व्युत्पन्न 'भिनेर' (आग) स्त्रीलिंग हैं।

(१३) पुल्लिंग से स्त्रीलिंग बनाने के लिये निम्नलिखित प्रत्ययों का प्रयोग होता है जिन्हें सामान्यत: स्त्री प्रत्यय कहते हैं—

१. आण—जिठाण (जेठानी), भौज्याण (भाभी)।
२. ई—नौनी (लड़की), कुकुरी (कुतिया), बाछी (बछिया)।
३. इण—नातिण (नतिनी), बागिण (बाघिन)।
४. उली—दातुली (हँसिया), बचुली (नाम), खिमुली (नाम)।
५. इ—चाखुली, काखि, (काकी), मुलि (छोटी बहन)।
६. इणि—बादिणि (गानेवाली), बामणि (ब्राह्मणी)।

वचन—

कुमाउंनी में हिन्दी की भाँति केवल दो वचनों का प्रयोग होता है- एक वचन और बहुवचन। अधिकतर ओकारान्त और उकारान्त शब्द कर्त्ताकारक के एक वचन को व्यक्त करते हैं। यह प्रवृत्ति ब्रजभाषा, बुन्देली तथा राजस्थानी के मेल में है। व्यक्ति वाचक और भाववाचक संज्ञाएँ प्राय: एक वचन में प्रयुक्त होती हैं। जाति वाचक संज्ञाएँ दोनों वचनों में प्रयुक्त हो सकती हैं--
कुछ शब्द प्राय: बहुवचन में प्रयुक्त होते हैं--

थोल (ओष्ठ), प्राण (प्राण), करम (कर्म)।

ओकारान्त शब्दों के अतिरिक्त अन्य शब्दों के कर्त्ता कारक में एक वचन और बहुवचन के रूप समान होते हैं--

आदिमि—आदिमि (आदमी), स्यूं—स्यूं (सिंह)।

कुछ अनाजों के नाम सदैव बहुवचन में होते हैं—

चाण (चने), रैंस (दाल), गहत (दाल), ग्यूं (गेहूँ)।

आदरार्थ शब्द एक वचन होने पर भी ज्यू लगा कर बहुवचन की तरह प्रयुक्त होते हैं :–

बब ज्यू (पिताजी), पटवारि ज्यू (पटवारी जी), नान ज्यू (बड़ी ननद जी)।

कुमाउंनी में एक वचन से बहुवचन बनाने के निम्नलिखित नियम हैं–

(१) कर्त्ता कारक के बहुवचन में प्रयुक्त होने पर ओकारान्त शब्दों के ओ का लोप होकर आ का आगम होता है–

चयलो–च्याला (लड़का), बाड़ो–बाड़ा (बाड़ा)।

(२) कर्त्ता कारक को छोड़कर अन्य कारकों में न जोड़कर बहुवचन बनाते हैं–

मैंस–मैंसन (मनुष्य), ध्वाड़ा–ध्वाडन (घोड़े)

(३) कभी लोग, सब, काँ, शब्द जोड़ कर बहुवचन बनता है–

अन्यारी लोग (अन्यारी के मनुष्य), मामा कां (मामा और उनका परिवार), ऊँ सब (वे सब)।

(४) अकारान्त शब्द बहुवचन में आकारान्त हो जाते हैं–

कुड़–कुड़ा (मकान), बुड़–बुड़ा (बुढ्ढा)।

(५) इकारान्त स्त्रीलिंग शब्दों के बहुबचन बनाने पर इ अथवा इन जुडता है–

स्यैणि–स्यैणी–स्यैणीन (स्त्रियाँ)।

(६) आकारान्त शब्दों के अतिरिक्त अन्य शब्दों के पूर्व संख्यावाची शब्द जोड़कर एक वचन से बहुवचन का बोध कराया जाता है–

एक घर–द्वी घर, एक गौं–बीस गौं।

(७) जिन एक वचन स्त्री लिंग शब्दों के अन्त में इ, ई उनमें यूं जोड़कर बहुवचन बनाते हैं–

राणि–राणियूं (रानियाँ) ब्वारि ब्वारियूं (बहुएं)।

(८) विकारी अकारान्त शब्दों के बहुवचन में पुंल्लिग के साथ ऊ जुड़ता है–

पहाड़––पहाड़ूं, पहाड़ूं कैं जाणईं (पहाड़ों को जाते हैं)

बहड़––बहड़ूं, बहड़ूं कणि ल्या (बछड़ों को लाओ)

(९) विकारी आकारान्त शब्दों के बहुवचन में आन लगता है—

मामा ले (मामा ने)—मामान ले (मामाओं ने)।

(१०) आकारान्त शब्दों के बहुवचन के विकारी रूपों का अन्तिम आ लुप्त होकर अ रह जाता है। उसके बाद न प्रत्यय लगता है—

दगाड़िया—दगड़ियन (साथियों)।

(११) विदेशी शब्दों के एकवचन से बहुवचन बनाने पर कुमाउंनी के सामान्य नियम लागू होते हैं—

मालिक—मालिकों, मालिकन (स्वामी), चक्कू—चक्कुन।

कारक—

कुमाउंनी में आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं की भांति संज्ञा तथा सर्वनाम शब्दों के कारकों को प्रकट करने के लिये कुछ शब्द लगाए जाते हैं जिन्हें कारक चिन्ह या परसर्ग कहते हैं। कारक का अर्थ है पीछे से जुड़ने वाला। ये चिन्ह संज्ञा या सर्वनाम के बाद जुड़ते हैं। कारक चिन्ह से पहले कुछ शब्दों में विकार हो जाता है जिसे विकारी रूप कहते हैं।

कुमाउंनी में आठ कारक हैं जिनके चिन्ह इस प्रकार (परसर्ग) हैं—

कारक	चिन्ह	उदाहरण
१. कर्त्ता	ल, न	मैंल (मैंने) हमन (हमने) वील (उसने
२. कर्म	न, कैं, कणि, कन, कीं, ए, थैं, हाती, हुणि,	हमन (हमको), त्वीकैं (तुझको), तुमुं हाती (तुमको), उथैं (उसको)
३. करण	ल, कै, कैल, बुति,	म्यार कैं (मुझसे), त्यार बुति (तुझसे), ढुंगल (पत्थर से)
४. संप्रदान	लिजि, हुं, हुणि, सु, कै,	त्यार लिजी (तेरे लिये) मी हुणि (मेरे लिए)
५. अपादान	बै बटि, है, हैबेर,	मै हैबेर (मुझसे), घरबै (घर से),
६. संबंध	रौ, रि, ठा, णि, क, की, के, को,	हमर (हमारा), आपुणि (आपकी) कैक (किसका)
७. अधिकरण	मैं, मांजी, मां, पार, मीं, जालै,	कै में (किसमें)। वीपर (उस पर), गौं मांजी (गांव में)
८. संबोधन	ओ, रे, हे, हाइ,	ओ बवा, रे रमुआ, हाइ राम, हे परमेश्वर

नीचे इन कारक चिन्हों के प्रयोग दिये जाते हैं जिनसे कुमाउंनी वाक्य-गठन की विशेषताएँ स्पष्ट होंगी—

१. कर्त्ता--बचीसिंगैल बाग मारौ (बचीसिंह ने बाघ मारा)।
हमन फाम न्हाति (हमें याद नहीं है)।

२. कर्म--मैं घोड़ान कें बेचनेर छ्यूं (मैं घोड़ों को बेचने वाला था),
त्वीकें बजार बटि मश्याल पिशूण छ्न (तुमको बजार से मसाले पिसाने हैं)।

उथैं खाण हुं कौ (उसको खाने के लिये कहो)।
तू कै कणि पाणि दिणौ छै (तू किसको पानी दे रहा है)।

३. करण--चिल्लाणैल भाउ कीनीन टुटिगे (चिल्लाने से बच्चे की नींद टूट गई)। म्यारः कैल वाँ नि जाइनो (मुझसे वहाँ नहीं जाया जाता)।
त्यार बुति के नि हुनो (तुझसे कुछ नहीं होता)।

४. संप्रदान—वीक बिरालु हुणि र्‍वाट दे (उसकी बिल्ली के लिये रोटी दे)।
उ बुड़िया लिजि भात पकूंणौं (वह बुढ़िया के लिये भात पकाता है)। द्वीन ले राजा हुं मदद मांगी (दोनों ने राजा के लिये मदद मांगी।)

५. अपादान--कांखा है निकालि बेर कयो (कांख से निकाल कर कहा)।
म्यारा घर बटि त्यारा घर गयो (मेरे घर से तेरे घर को गया)।
जब है वीकि जवानी खतम भै (जब से उसकी जवानी खतम हुई)।
पाख बै गदु लिआ (छत से कद्दू ले आ)।

६. संबंध—यो हमरि बौराणि छ (यह हमारी बहूरानी है)।
ऊ पछौं का पैका की चेलि छ (वह पश्चिम के वीर की लड़की है)।

७. अधिकरण—कौसाणि में गांधी ज्यू कब आई (कौसानी में गाँधी जी कब आए)।
त्वी पर के खोरि मारूँ ? (तुम पर क्या सिर पटकूं)।
गौं मांजी बाघ फैगो (गाँव में बाघ घुस गया)।

८. संबोधन—ओ रमुवा! झुठि किलै बलाँछै ? (ओ रमवाँ झूठ क्यो बोलता है)।
हे परमेश्वर। यो के है गो (हे भगवान! यह क्या हो गया)।

कारकीय चिन्हों (परसर्गों) को संबंध बोधक भी कहते हैं जिनकी चर्चा अव्यय के अंतर्गत की जावेगी।

रूप रचना की दृष्टि से ये परसर्ग दो प्रकार के हैं--ल, न, कै, बै, है, बटि जैसे परसर्ग रूढ़ हैं। अन्य परसर्ग यौगिक हैं।

सर्वनाम--

अर्थ की दृष्टि से कुमाउंनी में हिन्दी की भाँति ६ सर्वनाम हैं—(१) पुरुष वाचक, (२) निश्चय वाचक (३) अनिश्चय वाचक, (४) निजवाचक, (५) संबंध वाचक (६) प्रश्न वाचक। इनके अतिरिक्त कभी संयुक्त सर्वनामों का भी प्रयोग होता है। कुछ सर्वनाम प्रत्यय जोड़ कर विशेषण का नाम करते हैं।

रूप रचना के आधार पर जिस प्रकार संज्ञा शब्दों के मूल (अविकारी) और विकारी दो रूप हैं उसी प्रकार सर्वनामों के भी मूल रूप और विकारी रूप हैं। सर्वनामों का रूपान्तर पुरुष, वचन, कारक की दृष्टि से होता है। इनमें लिंग भेद नहीं होता।

कुमाउंनी के मूल सर्वनाम हैं--

मैं (मैं), तु (तू), उ (वह), तौ (वह), यो (यह), जो (जो), को (कौन), के (क्या), क्वे (कोई), के, कुछ (कुछ), आप--आफी (आप, अपने आप)।

लिंग, वचन, और कारकों के कारण इन्हीं सर्वनामों के रूपान्तर हो जाते हैं। कारकों में परसर्ग लगाने पर एक वचन और बहुवचन में सर्वनाम जो रूप धारण करते हैं उन्हें विकारी रूप कहते हैं--

१. पुरुष वाचक सर्वनाम—

	एक वचन	बहुवचन
(क)	उत्तम पुरुष—मैं, मी	हम
	मि, मी, मइं,	हमौ, हमन (विकारी)
	मेरो, मेरि, म्यारो, म्यार	हमर, हमारो, हमरो (संबंध)
(ख)	मध्यम पुरुष—तू	तुम
	त्वे, त्वी, त्वि,	तुमौ, तुमन (विकारी)
	तेरो, त्यार	तुमर, तुमारो, (संबंध)
(ग)	अन्य पुरुष--उ, तौ	ऊँ, तौं
	वि, वी,	उन, उनन, तन, तनन (विकारी)
	उइको, वीको, तैकी, वीकी	उनरो, उनरि, तनरो, तनरि (संबंध)

कुमाउंनी में मैं के विकारी रूप मी, मि, मइं के रूपों में मिलते हैं। तू के विकारी रूप त्वे, त्वि, त्वी रूपों में मिलते हैं। बहुवचन का विकारी रूप तुम के स्थान पर तुमन् है। परसर्ग जोड़ने के पूर्व तुम पर बहुवचन बनाने के लिये न प्रत्यय जोड़ना कुमाउंनी की विशेषता है।

इसी प्रकार हम से विकारी बहुवचन हमन् बना है। वह का विकारी रूप कुमाउंनी में वि होता है। इसी के बहुवचन का विकारी रूप उनन् है। उन में सम्बन्ध कारक चिन्ह रो लगाकर उनरो (उनका) रूप बनता है।

२. **निश्चय वाचक सर्वनाम--**

एक वचन	बहुवचन
उ, यो, तौ,	ऊँ, यों, तौं, यौ
यै, ये तै,	उन, उनंन, इन, इनंन, तन, तनन(विकारी)
ये को, वीको,	इनरो, तनरो, उनरो (सम्बन्ध)

इनमें यो निकटवर्ती पदार्थ का द्योतक है और तौ दूरवर्ती पदार्थ का सम्बन्ध कारक में जिस प्रकार पहले उनरो हुआ था, यहाँ बहुवचन रूप बनाते समय इन के साथ रो जोड़ कर इनरो रूप बनता है। वीको (उसका) का सम्बन्ध कारक बहुवचन में अन्य सर्वनामों की भाँति 'तनरो' हो जाता है।

३. **अनिश्चय वाचक सर्वनाम--**

कुमाउंनी में इसके लिये क्वे, कुछ, के, सर्वनाम, प्रयुक्त होते हैं। क्वे व्यक्ति बोधक है। कुछ, के, किसी वस्तु का द्योतक है—

एक वचन	बहुवचन
क्वे, के, कुछ	क्वे, कुछ
कैं, कै, कुछ	कन, कनन, कुछ, (विकारी)
----	कनरै (सम्बन्ध)

संबन्ध कारक बहुवचन में रै जोड़ कर कनरै (किनका) बनता हैं। हिन्दी की भाँति के/की नहीं जोड़ा जाता। क्वे नी छ (कोई व्यक्ति नहीं है), के नीछ (कोई वस्तु नहीं है)।

४. **निज वाचक सर्वनाम—**

हिन्दी का 'आप' इसके लिये कुमाउंनी में आपूं--आफू के रूप में प्रयुक्त होता है। सम्बन्ध और अधिकरण कारक को छोड़ कर 'आपूं' के रूप नहीं बदलते—

एक वचन	बहुवचन
आपुंन	आपुंनान
आपुना, आफुना	आपुना, आफुना (विकारी)
आपणो	आपणा (सम्बन्ध)

जोर देने के लिये अफी, आफी रूपों का प्रयोग होता है—

वीले आफी गोरू चरायो (उसने आप ही गाय चराई)।

५. सम्बन्ध वाचक सर्वनाम—

एक वचन	बहुवचन
जो, जे, सो, तो, ते	जे, जो, सो, तो, के
जै, ज्यै, जे, ते, तै, त्यै	जन, जनन, तन, तनन (विकारी)
तैक, जैक	तनरो, जनरो (सम्बन्ध)

कुमाउंनी में इसका सम्बन्ध कारक बहुवचन रूप जनरो है। हिन्दी की भाँति को, के, की कारक चिन्ह (परसर्ग) नहीं लगाने पड़ते।

६ प्रश्नवाचक सर्वनाम—

एक वचन	बहुवचन
को, के (क्या)	कों
के (क्या)	कन, कनन (विकारी)
	कनरो (सम्बन्ध)

बहुवचन में सम्बन्ध कारक विकारी 'कनन' (किन्होंने) के स्थान पर 'कनरो' हो जाता है। हिन्दी 'क्या' के लिये कुमाउंनी सर्वनाम 'के' है जिसका बहुबचन रूप भी 'के' है। 'को' का प्रयोग व्यक्ति के लिये करते हैं। 'के' का प्रयोग किसी वस्तु के लिये होता है—

को छ ? = कौन (आदमी) है ?

के छ ? = क्या (कौन वस्तु), है ?

जब अनेक मे किसी एक को छाँटना हो तब व्यक्ति-वस्तु में कोई अन्तर नहीं किया जाता और दोनों के लिये 'को' प्रयुक्त होता है—

१· तीन जाणियान में को जानेर छ (तीन जनों में कौन जाने वाला है) ?

२. सब फुलान में को फूल चैं छ (सब फूलों मे कौन सा फूल चाहिये) ?

७. संयुक्त सर्वनाम —

कुमाउंनी में कभी दो सर्वनाम एक साथ आते हैं अथवा एक सर्वनाम पुनरुक्त रूप में आता हैं—

जो क्वे आलो त मैंज्यू कणि खबर करि दिया (जो कोई आएगा तो मामी को खबर करना)।

क्वे क्वे जाणी यसो कूंनी (कुछ कुछ लोग ऐसा कहते हैं)।

वीक घर में खाण हुंणि सबै कुछ छियो (उसकें घर मे खाने को सब कुछ था)।

तुम को को किताब मांगन लाग रौ छीया (तुम कौन कौन सी किताब मांग रहे थे)।

म्यार कैल जस कस बात नि कईन (मुझसे जैसी तैसी बात नहीं कही जाती)।

८. सार्वनामिक विशेषण—

पुरुष वाचक, निजवाचक सर्वनामों को छोड़ कर अन्य सर्वनामों के मूल रूपों में अथवा उनके विकारी रूपों में प्रत्यय लगाकर कुमाउंनी में नये सर्वनाम बनाए जाते हैं जो विशेषण का भी काम करते हैं—

यसो, उसो, जसो, कसो, एतुक, उतुक, जतुक, कतुक,—

यसो मैंस (ऐसा आदमी), एतुक दूध (इतना दूध) आदि।

इनके रूप लिंग, तथा वचन के अनुसार बदलते हैं—

यसो च्याल (ऐसा लड़का), यसि चेलि (ऐसी लड़की)।

९. सार्वनामिक क्रिया विशेषण—

कुछ सर्वनाम क्रिया विशेषण का भी काम करते हैं—

रमुलि कैं के कुछ है गौछ ? (रमुलि को क्या कुछ हो गया है)।

विशेषण—

कुमाउंनी में संज्ञा की भाँति विशेषण दो लिंगों, दो वचनों में प्रयुक्त होते हैं। जिस प्रकार हिन्दी में आकारान्त विशेषण आकारान्त संज्ञाओं के समान विकारी रूप धारण करते हैं, उसी प्रकार कुमाउंनी में ओकारान्त विशेषण, ओकारान्त संज्ञाओं के समान विकारी बनते हैं।

जो शब्द संज्ञा की विशेषता बताते हैं उन्हे विशेषण कहते हैं। विशेषण जिस संज्ञा की विशेषता बताता है वह विशेष्य है। कर्त्ता कारक, एक वचन विशेष्य के साथ ओकारान्त विशेषण वैसे ही रहते हैं। किन्तु अन्य कारकों के एक वचन तथा बहुवचन में ओकारान्त विशेषण आकारान्त हो जाते हैं। यदि विशेष्य स्त्री लिंग में हो तो ये विशेषण इकारान्त अथवा ईकारान्त हो जाते हैं।

अर्थ के आधार पर कुमाउंनी के विशेषण चार प्रकार के हैं—

(१) गुण वाचक, (२) संख्या वाचक, (३) परिमाण वाचक, (४) सार्वनामिक। रूप की दृष्टि से इनके विकारी और अविकारी दो भेद हैं। विकारी विशेषणों का रूप लिंग, वचन और कारक के अनुसार बदलता है—

मूलरूप—ठुल (बड़ा); विकृत रूप—ठुली (बड़ी)।
नान (छोटा); ,, नानि (छोटी)।

अविकारी विशेषणों के रूप में कोई परिवर्तन नहीं होता—

सुन्दर भाउ (सुन्दर बच्चा), सुन्दर चेहड़ि (सुन्दर लड़की)। ओकारान्त विशेषणों के रूप हैं—

एक वचन	बहुवचन
पुंल्लिग—भालो मैंस	भाला मैंस
स्त्री लिंग—भलि स्यैणि	भलि स्यैणि
पुंल्लिग—पिङलो लुकुड़	पिङला लुकुड़
स्त्री लिंग—पिङलि चड़ि	पिङली चड़ि

१. गुणवाचक विशेषण—

गुण वाचक विशेषण लिंग तथा वचन के अनुसार परिवर्तित होते हैं—

एक वचन	बहुवचन
पुंल्लिग—निको (अच्छा)	निका (अच्छे)
स्त्री लिंग—निकि (अच्छी)	निकि—(अच्छी)
पुंल्लिग—शारो (कठोर)	शारा (कठोर)
स्त्री लिंग—शारि (कठोर)	शारि (कठोर)

(१) ये विशेषण विशेष्य के गुण, आकार, रंग, दशा, काल और स्थान का बोध कराते हैं—मिठो आम (मीठा आम), ठुलो ढुंग (बड़ा पत्थर), लाल जंपर (लाल जंपर), रोगिल चेहड़ि (रोगिणीं बच्ची) बेलियै रात (कल की रात)।

(२) गुण का अनिश्चय होने पर विशेषण के साथ जस- जसो लगाते हैं—
सुकिल जसो पाथर (सफेद जैसा पत्थर), काव जस ढङु (काला जैसा बिल्ला)।

(३) गुण की कमी या गुण का हलकापन दिखाने के लिए विशेषण की द्विरुक्ति कर देते हैं—
काणि काणि जसी बिराउ (कुछ कुछ कानी जैसी बिल्ली), श्येत श्येत जस हाति (कुछ सफेद रंग का हाथी)।

(४) गुण का आधिक्य व्यंजित करना हो तो विशेषण के अंतिम स्वर को प्लुत कर देते हैं--

चमकणीऽ गिलास (बहुत चमकता हुआ गिलास), मिठोऽ दाड़िम (अत्यन्त स्वादिष्ट दाड़िम)।

२ **संख्या वाचक विशेषण--**

ये विशेषण निश्चित संख्या वाचक और अनिश्चित संख्यावाचक दो प्रकार के हैं।

संख्यावाचक विशेषणों के कुमाउंनी में सात उपभेद मिलते हैं--पूर्ण संख्यावाचक, अपूर्ण संख्यावाचक, क्रमवाचक, आवृत्तिवाचक, समुदाय वाचक, प्रत्येक बोधक, न्यून संख्या वाचक।

(क) पूर्ण संख्यावाचक—एक किताब, द्वी मैंस, तीन पाथर, शौ (सौ), उन्नीश (उन्नीस)।

(ख) अपूर्ण संख्यावाचक—पौ (पाव), आध (आधा), पौन (पौना), डेढ़ (डेढ़), सवा द्वी (सवा दो)।

(ग) क्रमवाचक—पैल, दुहर, तिहर (पहला, दूसरा, तीसरा), चौथ, पंचूं (चौथा पाँचवाँ)।

(घ) आवृत्तिवाचक—एगुण, दुगुण, तिगुण, चौगुण।

(ङ) समुदाय वाचक—द्वीयै (दोनों), तिन्नै (तीनों), चारै (चारों), बिसि (बीसों)।

(च) प्रत्येक बोधक—हर मैंस (प्रत्येक व्यक्ति), अद्धा अद्धा (आधा आधा)--

(छ) न्यून संख्यावाचक—द्वि कम चालीस (३८), चार कम हजार (९९६)।

इनके अतिरिक्त कुमाऊं में कुछ अनिश्चित संख्या वाचक विशेषण प्रयुक्त होते हैं—

कतुक (कितने), उतुक (उतने), एतुक (इतने), जतुक (जितने), एकाध, दसेक।

उदाहरण—दाज्यू, उनर कतुक नान्तिन छन (दादा, उनके कितने बच्चे हैं ?) दशेक म्हैंण में उनेर छ (लगभग दस महीने में आने वाला है)। यो त्यार वर्षेक में ऊँ छ (यह त्यौहार लगभग एक वर्ष में आता है)।

३ **परिमाणवाचक विशेषण--**

ये अपने विशेष्य की नापतोल बताते हैं। इन्हें भी निश्चित और अनिश्चित दो प्रकार का मान सकते हैं।

लुटि भर दूद (लोटा भर दूध), अधसेर पिश्यू (आधा सेर आटा)। ये निश्चित परिमाण बतलाते हैं। दूसरे प्रकार के विशेषण अनिश्चित परिमाण बताते हैं--

मणि गूड़ दि दे (थोड़ा गुड़ दे दे), भौत काम है गो (बहुत काम हो गया), शब्बै दाल खै हालि (सभी दाल खा डाली)।

४ **सार्वनामिक विशेषण--**

इनकी चर्चा सर्वनामों के अंतर्गत हो चुकी है। पुरुष वाचक तथा निज-वाचक सर्वनामों को छोड़कर शेष सर्वनाम जब संज्ञा के साथ रहते हैं तो उन्हें सार्वनामिक विशेषण कहते हैं--

एतुक पाणी (इतना पानी), कसो सौरास (कैसी ससुराल), कतुक दिन हैगीं (कितने दिन हो गये)?

कुमाउँनी में कुछ मूल सर्वनाम विशेषण की भाँति प्रयुक्त होते हैं।
या, उ, जो, के,।

रूप रचना की दृष्टि से कुमाउँनी विशेषण दो प्रकार के हैं--रूढ़ और यौगिक।

रूढ़ वे हैं जो मूलतः विशेषण हैं और जिनके खंड नहीं किए जा सकते--भलो (भला), नको (बुरा) हरियि (हरा) भौत (बहुत) आदि।

शब्दों में आन, आउ, ईल, ऐल, बेर, नेर आदि प्रत्यय जोड़कर जो विशेषण बनते हैं उन्हें यौगिक कहते हैं। इनके कुछ उदाहरण हैं--

भुकान (भूखा), तिसान (प्यासा), उड़ान (उड़ता हुआ)।
कमाऊ, लुटाऊ, उड़ाऊ, उजाड़ू (उजाड़ने वाला)।
रंगिल, रसिल, भंगिल (भांग से युक्त)।
निमैल, दुधैल, दंतैल (दाँत वाला)।
खै बेर, न्है बेर (नहाकर)।

दौड़नेर (दौड़ने वाला), पढ़नेर (पढ़ने वाला), हिटनेर (चलने वाला)।

जोर देने के लिए प्रायः विशेषण शब्दों को द्वित्त कर दिया जाता है—

एक्कै (केवल एक), द्वीयै (केवल दो), तिन्नै (केवल तीन)।

रूपान्तर की दृष्टि से कुमाउंनी विशेषण तीन प्रकार के हैं—

(१) कुछ विशेषणों में लिंग, वचन के अनुसार कोई परिवर्तन नहीं होता— घैल (घायल), गँवाड़ि (गँवार), पहाड़ि (पहाड़ी)।

(२) कुछ विशेषणों के पुल्लिंग में कोई प्रत्यय नहीं लगता किन्तु स्त्रीलिंग में 'इ' प्रत्यय लगता है—

काल-कालि (काला-काली), ठुल-ठुलि (बड़ा-बड़ी)।

(३) कुछ विशेषणों में प्रत्यय न लगकर आंतरिक रूपांतर होता है—

लंब (लंबा), दुबल (दुबला), यस (ऐसा)।

क्रिया पद—

क्रिया रूपों का विवेचन कुमाउंनी में (क) रूढ़ (मूल) क्रियाएं, (ख) यौगिक क्रियाएं, (ग) अकर्मक क्रियाएं-सकर्मक क्रियाएं (घ) सहायक क्रियाएं, तथा (ङ) कृदन्त शीर्षकों के अंतर्गत कर सकते हैं।

क्रिया का अर्थ है वह काम जो या तो किया जाता है या होता है—

लेख्यूं (लिखता हूँ), फोकी छ (गिरा हुआ है)।

रचना की दृष्टि से कुमाउंनी में अन्य भारतीय भाषाओं की भाँति सरलीकरण की ओर विशेष प्रवृत्ति है। कुछ धातुओं में उच्चारण भेद हो जाता है—

ऊँ–आ (आता है)।

इस आधार पर कुमाउंनी क्रियाएँ रूढ़ और यौगिक दो प्रकार की हैं।

(क) रूढ़ (मूल) क्रियाएँ—

ये धातु से बनती हैं—

हिट् (चल), गण् (गिन), पढ़् (पढ़), खण् (खन्), खा (खा) आदि।

संस्कृत तथा हिन्दी से आई हुई प्रायः सभी धातुएं कुमाउंनी में है। इसके अतिरिक्त कुछ संस्कृत णिजन्त से आई हैं और कुछ देशज हैं।

कुमाउंनी में धातुओं पर णो जोड़ने से क्रिया का सामान्य रूप बनता है— खा+णो (खाणो)। जो धातुएँ ड़, ढ़ पर अंत होती हैं उनके क्रियारूप बनाते समय णो के स्थान पर नो जोड़ते हैं–पढ़+नो= पढ़नो।

(१) संस्कृत से आई धातुएँ–ये साधारण और उपसर्ग युक्त दो प्रकार की हैं साधारण—हँसण < हँस, जपण < जप, लिपण < लिप, खणण (खन)।

उपसर्ग युक्त—परसण < प्र+सृ=परोसना, विसूण < वि+श्रम=विश्राम करना ।

(२) णिजन्त धातुएँ जो अब मूल धातुएँ बन गई हैं—
पुरयूण, < पूरयति (किसी कमी को पूरा करना), थापण < थापयति (स्थापित करना) ।

(३) देशज धातुएँ—इनकी उत्पत्ति संस्कृत से प्रतीत नहीं होती—
ठोकण, (ठोकना), टोकण (टोकना) ।

(ख) यौगिक क्रियाएँ—

यौगिक क्रियाएँ बनाने के लिए एकाधिक तत्व मूल धातु के साथ जोड़ते हैं। ये चार प्रकार की हैं। (१) प्रेरणार्थक, (२) संयुक्त, (३) अनुकरणात्मक, (४) नाम धातु ।

(१) प्रेरणार्थक क्रियाएँ—

धातु के अंतिम अ का लोप करके ऊँ जोड़ा जाता है। इस प्रकार प्रेरणार्थक रूप बनते हैं—
पढ़ूं (पढ़वाना), लिखूं (लिखवाना), चढ़ूं (चढ़वाना), खेलूं (खिलवाना), पिलूं (पिलवाना), ।

(२) संयुक्त क्रियाएँ—

जो किसी क्रिया अथवा संज्ञा आदि के साथ दूसरी क्रिया जोड़कर बनती हैं—

पत्त लागण (पता लगना)=संज्ञा+क्रिया
नको हुण (बुरा लगना)=विशेषण+क्रिया
सुणि लियौ (सुन लीजिये)=क्रिया+क्रिया
दूर हट (दूर हट)=क्रिया विशेषण+क्रिया ।

इस वर्ग के अंतर्गत अन्य क्रियाएँ हैं—चाण (देखना), सकण (सकना), पैठण (घुसना), लिण दिण (लेना देना), खानै रूँछ (खाता रहता है), ब्वे हाल छ (बो डाला है) ।

(३) अनुकरणात्मक क्रियाएँ—

किसी ध्वनि के अनुकरण में बनायी जाती हैं इसलिए ध्वन्यात्मक क्रियाएँ भी कहलाती हैं—

चरचराण (चरचराना), घिरकण (घिरकना)।

कुमाउंनी में संयुक्त क्रियाएँ पुनरुक्त भी होती हैं—

करणो-धरणो (करना धरना), देखण-भालण (देखना भालना)।

(४) नाम धातुएँ –

संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण में प्रत्यय जोड़कर कुमाउंनी में नाम धातुएँ बनती हैं –

हथ्यूंण (हथियाना), चोख्यूंण (शुद्धकरना), खट्यूण (खट्टा करना)।

(ग) **अकर्मक-सकर्मक क्रियाएँ**—

जिन क्रियाओं के प्रयोग में किसी कर्म की आवश्यकता नहीं पड़ती वे अकर्मक हैं—

मैं सित्यूं (मैं सोया), चड़ि फुर्र उड़ि (चिड़िया फुर्र उड़ गई)।

ऊ हिटणो छी (वह चल रहा था)।

जिन क्रियाओं का अर्थ पूरा होने के लिये कर्म की अपेक्षा रहती है वे सकर्मक क्रियाएँ हैं—

मी आफि पाणि भरि ल्यूं लो (मैं स्वयं पानी भर लाऊंगा)।

बोट माँजी आड़ू पाकि रया (पेड़ में आड़ू पके हुए हैं)।

कुछ क्रियाएँ कभी सकर्मक होती हैं, कभी अकर्मक—

सकर्मक मी उ काथ भुलण लागी र्यूं (मैं वह बात भूल रहा हूँ)।

अकर्मक मी भुलण लागी र्यूं (मैं भूल रहा हूँ)।

कुछ सकर्मक क्रियाओं में दो दो कर्म लगते हैं—

मील बाछ कणि पाणि दे (मैंने बछड़े को पानी पिलाया)।

ब्वारिल जोगी कणि पिस्यू दी हालौ (बहू ने जोगी को आटा दे दिया)।

(घ) **सहायक क्रियाएँ**—

ये मुख्य क्रिया के रूप को पूरा करने में सहायक होती है। कुमाउंनी में कभी एक क्रिया और कभी एकाधिक क्रियायें सहायक का काम करती हैं। वाक्य रचना में इनका प्रयोग व्यापक है और इनके हेर फेर से क्रिया का अर्थ तक बदल जाता है। मुख्य क्रिया और सहायक क्रिया का भेद इस प्रकार है—

उ जाणौ छी (वह जाता था), बौज्यू श्ये रौ छिया (पिता जी सो रहे थे) खिमुली लिखणैं छी (खिमुली लिख रही थी) आदि।

इन वाक्यों में जाण, सितण, लेखण मुख्य क्रियाएं हैं। वाक्यों में इन्हीं का अर्थ प्रधान है। अन्य क्रियाएं छी, छीया सहायक हैं।

निम्नलिखित वाक्यों में सहायक क्रियायें नहीं हैं—

उ छी (वह था), मैं बिमार छ्युं (मैं बीमार था)।

कुमाउंनी की मुख्य सहायक क्रिया छ है। इसके रूप हैं—

	एक वचन	बहुवचन
वर्तमान काल——	मैं छुं, मी छुं	हम छुं
	तू छै, तू छी	तुम छा
	उ छ,	ऊँ छन।
भूतकाल——	मैं छियुं छ्यूँ	हम छियाँ, छ्याँ
	तू छिये, छि	तुम छिया
	उ छियो, छि	ऊँ छिया, छिन।

निषेधार्थक स्थिति स्पष्ट करने के लिए न में हाति जोड़कर न्हाति (नहीं है) रूप बनता है——

एक वचन		बहुवचन	
मैं न्हातूं,	न्हात्यूं	हम न्हातूं,	न्हातियूं
तू न्हातै,	न्हात्यै	तुम न्हाता,	न्हातिया
उ न्हाति,	न्हाते	ऊँ न्हातन,	न्हातन।

र के साथ छ के रूप जोड़कर रछ सहायक क्रिया बनाई जाती है। स्त्रीलिंग में इसके स्थान पर रैं होता है और छ के रूप पूर्ववत् चलते हैं। अन्य पुरुष एक वचन में केवल र से काम चल जाता है।

द्वी मैंश याँ रौ छिया-(दो आदमी यहाँ रहते थे)।

उ काँ रौं ?—(वह कहाँ रहता है)?

(ङ) कृदन्त

क्रियाओं के वाच्य, काल, अर्थ, लिंग आदि प्रकट करने के लिए कभी तो धातु से काम चल जाता है। किन्तु कभी धातु पर, विशेष प्रत्यय जोड़कर

कृदन्त बनायें जाते हैं जो वाक्य में क्रिया का काम करते हैं। धातु में कृत् प्रत्यय जोड़कर बनाने वाले रूप कृदन्त हैं।
कुमाउंनी क्रिया रचना में निम्नलिखित कृदन्तों का प्रयोग होता है--

(१) **क्रियार्थक संज्ञा--**

यह धातु पर 'णों' 'नों' जोड़ने से बनती है। बोलते समय इसका अकारान्त हो जाता है। ओकारांत अकारान्त दोनों रूप साथ साथ चलते हैं--
जाणो--जाण (जाना), लड़नो-लड़न (लड़ना)।
कुछ धातुओं के साथ उणों जोड़ना पड़ता है--
कुणो--कूण (कहना), रुणो-रूण (रहना), ल्यूणो-ल्यूण (लाना)।

(२) **वर्तमान कालिक कृदन्त--**

धातु पर 'नों' 'न' 'आँ' लगाकर बनाया जाता है। इन्हें अपूर्ण कृदन्त भी कहते हैं और कभी विशेषण के रूप में भी इनका प्रयोग होता है--
हिटन-हिटां (चलता), खान-खाँ (खाता), मरन-मराँ (मरता)।
उदा०--हिटन किलै न्हाति (चलता क्यों नहीं ?)।
कार्य की निरंतरता सूचित करने के लिए इनके अन्य रूप बनते हैं--
बगण्या (बहता हुआ), नाचण्या (नाचता हुआ)।
विशेषण रूप में प्रयुक्त--हिटण्या मैंश (चलता हुआ आदमी)।
अव्यय रूप में प्रयुक्त--लेखनै लेखनै से गो (लिखते लिखते सो गया)--
दौड़नै दौड़नै थकी गो (दौड़ते दौड़ते थक गया)।

(३) **भूत कालिक कृदन्त--**

धातु पर 'यों' लगाकर बनता है--
भयो (हुआ), गयो (गया), मर्यो (मरा)।
धातु के अंत में इ, ई आवे तो यो प्रत्यय का न्यों हो जाता है। यह विशेषता मुख्यतः बोलियों में है--
पिन्यो (पिया),।
क्रिया विशेषण के रूप में प्रयोग होने पर पुनरुक्ति कर देते हैं--
मैं भैटि भैटि थाकि गयूं (मैं बैठे बैठे थक गया)।

(४) **पूर्व कालिक कृदन्त--**

धातु पर 'इ' जोड़कर बनाया जाता है। जिन धातुओं के अंत के आ, ओ औ हो उनके स्वर का लोप करके ए जोड़ा जाता है। इसके बाद विकारी रूप में बेर लगता है। यदि दो या दो से अधिक पूर्व कालिक क्रियाएँ हों तो बेर लगाए बिना भी काम चलता है--

देखि बेर (देखकर), खै बेर (खाकर), मारि (मार कर), जोड़ि (जोड़ कर)।

दो क्रियाओं के योग से पूर्व कालिक कृदन्त के सामासिक रूप बनते हैं-- खै पिवैर (खा पीकर), ली दि बेर (ले देकर)।

(५) **तात्कालिक कृदन्त--**

वर्तमान कालिक कृदन्त के विकारी रूप में 'ए' लगाकर बनाते हैं-- लागनै (लगते ही), जानै (जाते ही)।

(६) **कर्तृ वाचक कृदन्त--**

इसे 'एर' प्रत्यय जोड़कर बनाते हैं। करनेर (करने वाला), पिनेर (पीने वाला)।

काल रचना--

रूप रचना के आधार पर कुमाउंनी काल दो प्रकार के हैं--मूल काल और संयुक्त काल। जिनमें सहायक क्रियाएँ नहीं आतीं वे मूल काल हैं-- उ छ (वह है)। संयुक्त कालों में मुख्य क्रिया के साथ सहायक क्रियाएँ प्रयक्त होती हैं -- उ आ छ (वह आया है)--

क्रिया व्यापार की पूर्णता, अपूर्णता, सामान्य स्थिति तथा निश्चय, आज्ञा और संभावना को ध्यान मे रखते हुए कुमाउंनी कालों के कई भेद हैं। सामान्यतः तीन काल हैं-- वर्त्तमान काल, भूतकाल, और भविष्यत् काल जिनके अर्थ के आधार पर लगभग चौदह भेद हो जाते हैं। इनका परिचय नीचे दिया जाता है।

वर्तमान काल

एक वचन	बहुवचन
(१) सामान्य वर्तमान--	
उ. पु.--मैं लेखनूं (मैं लिखता हूँ)	हम लेखनूं (हम लिखते हैं)
म. पु.--तू लेख छै, लेखन छै (तू लिखता है)	तुम लेख छा, लेखन छा (तुम लिखते हो)
अ. पु.--उ लेखणी, लेखन छ (वह लिखता है)	ऊँ लेखणइं, लेखन छन (वे लिखते हैं)।
(२) अपूर्ण वर्तमान--	
उ. पु.--मैं लेखणयूं (मैं लिख रहा हूं)	हम लेखणयाँ (हम लिख रहे हैं)
म. पु.--तू लेखणी छै (तू लिख रहा है)	तुक लेखणी छा (तुम लिख रहे हो)
अ. पु.--उ लेखणी छ (वह लिख रहा है)	ऊँ लेखणइं (वे लिख रहे हैं)।
(३) पूर्ण वर्तमान--	
उ. पु.--मैंल लेख छ, लेखो छ (मैंने लिखा है)	हमूल लेख छ, लेखो छ (हमने लिखा है)
म. पु.--त्वील लेख छ, लेखो छ (तूने लिखा है)	तुमूं ले लेख छ, लेखो छ (तुमने लिखा है)
अ. पु.--वील लेख छ, लेखो छ (उसने लिखा है)	उनूल लेख छ, लेखो छ (उन्होंने लिखा है)।
(४) संभाव्य वर्तमान--	
उ. पु.--मैं लेखुं (यदि मैं लिखूं)	हम लेखुं (यदि हम लिखें)
म. पु.--तू लेख छै (यदि तू लिखे)	तुम लेख छा (यदि तुम लिखो)
अ. पु.--उ लेख छ (यदि वह लिखे)	ऊँ लेख छन (यदि वे लिखें)।

भूत काल

एक वचन	बहु वचन
(१) सामान्य भूत--	
उ. पु.--मैं लेख छ्युं, लेखन छ्युं (मैं लिखता था)	हम लेख छियां, लेखन छ्यां (हम लिखते थे)
म. पु.--तू लेख छिए, लेख नछिये (तू लिखता था)	तुम लेख छिया, लेखन छ्या (तुम लिखते थे)
अ. पु.--उ लेख छियो, लेखन योछ् (वह लिखता था)	ऊ लेख छिया, लेखन छ्या (वे लिखते थे)।
(२) निश्चयार्थ भूत--	
उ. पु.--मैंल लेखौ (मैंने लिखा)	हमूंल लेखौ (हमने लिखा)
म. पु.--त्वील लेखौ (तूने लिखा)	तुमूंले लेखौ (तुमने लिखा)
अ. पु.--वील लेखौ (उसने लिखा)	उनूंले लेखौ (उन्होंने लिखा)।
(४) अपूर्ण भूत--	
उ. पु.--मैं लेखण रौ छ्युं (मैं लिख रहा था)	हम लेखण रौ छियां (हम लिख रहे थे)
म. पु.--तू लेखण रौ छिये (तू लिख रहा था)	तुम लेखण रौ छिया (तुम लिख रहे थे)
अ. पु.--उ लेखण रौ छी (वह लिख रहा था)	ऊँ लेखण रौ छि (वे लिख रहे थे)।
(४) पूर्ण भूत--	
उ. पु.--मैंल लेख छी, लेखो छियो (मैंने लिखा था)	हमूंन लेख छी, लेखो छियो (हमने लिखा था)
म. पु.--त्वील लेख छी, लेखो छियो (तूने लिखा था)	तुमूंल लेख छी, लेखो छियो (तुमने लिखा था)
अ. पु.--वील लेख छी, लेखो छियो (उसने लिखा था)	उनूंल लेख छी, लेखो छियो (उन्होंने लिखा था)।
(५) संभाव्य भूत--	
उ. पु. मैं लेखन्युं ((यदि मैं लिखता)	हम लेखनां (यदि हम लिखते)
म. पु. तू लिखनै ((यदि तू लिखता)	तुम लेखनां (यदि तुम लिखते)
अ. पु. उ लेखन (यदि वह लिखता)	ऊँ लेखन (यदि वे लिखते)।

भविष्यत् काल

	एक वचन	बहु वचन
	(१) सामान्य भविष्यत्--	
उ. पु.	मै लेखुंलो (मैं लिखूंगा)	हम लेखुंला (हम लिखेंगे)
म. पु.	तू लेखलै (तू लिखेगा)	तुम लेखला (तुम लिखोगे)
अ. पु.	उ लेखल (वहलिखेगा)	ऊँ लेखल (वे लिखेंगे) ।
	(२) संभाव्य भविष्यत्--	
उ. पु.	मीं लेखण हुन्यूं ((मैं लिखता होउंगा)	हम लेखण हुनलां (मीं लिखते होंगे)
म. पु.	तू लेखण हुनलै (तू लखत। होगा)	तुम लेखण हुनला (तुम लिखते होंगे)
अ. पु.	उ लेखण हुनल (वह लिखता होगा)	ऊँ लेखण हुनला (वे लिखते होंगे) ।
	(३) करणीय भविष्यत	
उ. पु.	मैंल लेखण छ (मुझे लिखना है)	हमूल लेखण छ (हमें लिखना है)
म. पु	त्वील लेखण छ (तुझे लिखना है)	तुमूल लेखण छ (तुम्हें लिखना है)
अ. पु.	वील लेखण छ (उसे लिखना है)	उनूल लेखण छ (उन्हें लिखना है) ।
	आज्ञार्थक रूप--	
उ. पु.	मीं लेखूं (क्या मीं लिखूं)	हम लेखूं (क्या हम लिखें)
म. पु.	तू लेख (तू लिख)	तुम लेखौ (तुम लिखो) ।
अ. पु.	×	×
	विध्यर्थक रूप--	
उ. पु.	मैंल लेखण चैंछ (मुझे लिखना चाहिए)	हमूंल लेखण चैंछ (हमको लिखना चाहिए)
म. पु.	त्वील लेखण चैंछ (तुझे लिखना चाहिए)	तुमूल लेखण चैंछ (तुमको लिखना चाहिए)
अ. पु.	वील लेखण चैंछ (उसे लिखना चाहिए)	उनूल लेखण चैंछ (उन्हें लिखना चाहिए) ।

उक्त क्रिया रूपों में द्रष्टव्य है कि कुमाउंनी में 'छ' सहायक क्रिया अत्यन्त महत्वपूर्ण है। वर्त्तमान एवं भूतकाल में इसका अत्यधिक प्रयोग होता है। यह मुख्य क्रिया के रूप में भी प्रयुक्त होती है। इसके छुं, छ्यां, छै, छौ, छे, छी, छिया, छिन जैसे अनेक रूप हैं।

स्त्रीलिंग तथा पुल्लिंग में इसके भिन्न रूप हैं। 'उ छियो' (वह था), एक वचन, पुल्लिग रूप है किन्तु 'उ छी' (वह थी) एक वचन स्त्रीलिंग रूप है। बहुवचन में इनके रूप–'ऊं छिया' (वे थे), पुल्लिग तथा 'ऊं छिन' (वे थीं) स्त्रीलिंग में प्रयुक्त होते हैं।

छ का निषेधात्मक रूप न्हाति–न्हां (नहीं है) होता है जो वर्त्तमान काल अन्य पुरुष के दोनों लिगों में मिलता है। इसमें न जोड़कर बहुवचन बनाते हैं—न्हातिन (नहीं है)। छ का प्रयोग बंगला, गुजराती, राजस्थानी और पुरानी अवधी में भी होता है।

विद्वानों का अनुमान है कि इसकी व्युत्पत्ति संस्कृत के अस्ति से हुई होगी। प्राकृत 'आ छ' अपभ्रंश 'अच्छा–अच्छी' रूप मिलते हैं। अस्ति असति–अच्छइ–छई छ–इस प्रकार परिवर्तन संभावित है। नेपाली व्युत्पत्ति कोषके प्रणेता टर्नर इसे आ+क्ष से व्युत्पन्न मानते हैं। डाक्टर चटर्जी इसकी उत्पत्ति कल्पित धातु 'अच्छ' से मानते हैं।

धातु पर 'लो' जोड़ने से कुमाउंनी में सामान्य भविष्यत् का रूप बनता है जो लिग, वचन और पुरुष के अनुसार बदलता है। यह 'लो' प्रत्यय राजस्थानी से अवश्य मिलता जुलता है। किन्तु इसके विविध रूपान्तर कुमाउंनी की विशेषता है। इसके साथ पुरुष, लिग, वचन के द्योतक प्रत्यय जुड़ते हैं। उत्तम पुरुष में कोई लिग भेद नहीं है किन्तु मध्यम पुरुष, अन्य पुरुष में इसके रूपान्तर उल्लेखनीय हैं।

भूतकाल का द्योतक तत्व छ्य है जो पुरुष, वचन, लिंग के अनुसार, यो छ, ऐ छ, रूपों में भी मिलता है– गे छ (वह गयी), कर्‌यो छ (किया था)। अन्य पुरुष एक वचन पुल्लिंग में इसका आ छ' (आया) रूप मिलता है जो स्त्रीलिंग में 'ऐं छ' (आयी) होता है। अन्य पुरुष बहुवचन पुल्लिंग का रूप है आयान् (आये)। किन्तु स्त्रीलिंग का इसी में रूप है-ऐ छिन (आयी थी)। यही कभी 'ऐ छन' (आयी थीं) बहुवचन के रूप में प्रयुक्त होता है। ऐ छिन–ऐछन जैसे क्रिया रूपों का लोकगीतों में दर्शन होता है।

कुमाउंनी क्रिया रूपों की एक और विशेषता है अनुनासिक तत्वों का विद्यमान होना–खांन छ (खाता है), चाँण छ (देखता है), के मैं जूं ? (क्या मैं जाउँ) ? आदि । कुछ क्रिया रूपों में यह विशेषता नहीं रहती है ।

कभी उत्तम पुरुष एक वचन के रूप में अनुनासिकता रहती है–मैं ल्यूंलों (मैं लाऊंगा)। किन्तु एक वचन अन्य पुरुष या मध्यम पुरुष रूप में अनुनासिक तत्व नहीं रह जाता–उ ल्यालो (वह लायेगा) 'तू बुलालै (तू बुलाएगा), आदि ।

वाच्य ––

वाच्य क्रिया के रूप परिवर्तन का एक आधार है । वाच्य द्वारा देखा जाता है कि क्रिया का मुख्य विषय क्या है–कर्त्ता, कर्म अथवा भाव । कुमाउंनी में तीनों वाच्य उपलब्ध हैं—(१) कर्तृ वाच्य, (२) कर्म वाच्य (३) भाववाच्य ।

(१) **कर्तृ वाच्य––**

इसमें क्रिया कर्त्ता के अनुसार रूप धारण करती है-मैं आदीम छुं (मैं आदमी हूँ) । कर्तृ वाच्य में सकर्मक और अकर्मक दोनों तरह की क्रियायें हो सकती हैं––उ ऊंणो छ (वह आता है), ऊ चेलो छ (वह लड़का है)= अकर्मक । उ घर ऊंणों छ (वह घर आता है), गोरु बण जाँ छ (गाय वन जाती है) =सकर्मक ।

(२) **कर्म वाच्य––**

इसका प्रयोग सकर्मक क्रियाओं तक सीमित है । इसमें मुख्य धातु के साथ प्रत्यय जोड़ते हैं । खा>खाई, मार>मारि कर्म वाच्य हैं उस पर पुनः छ सहायक क्रिया के रूप लगते हैं । कभी कर्म वाच्य धातु पर जा, जौ जुड़ता है । इसमें क्रिया का लिंग, वचन, पुरुष कर्मानुसारी होता है––

मैं मारि जाणयूं (मैं मारा जाता हूँ), पाणि पिई जां (पानी पिया जाता है), तू मारि जां छै (तू मारा जाता है), म्यारा बटि लेखीग्यो (मेरे द्वारा लिखा गया), उ मारि जां छ्यो (वह मारा जाता है) ।

(३) **भाव वाच्य––**

इसका प्रयोग केवल अकर्मक क्रियाओं तक सीमित है। इसकी क्रिया सदा पुल्लिग एक वचन में रहती है । इसमें क्रिया का अन्वय न तो कर्त्ता से होता है न कर्म से, बल्कि भाव से रहता है। इसे बनाने के लिए धातु के बाद ईन् प्रत्यय जोड़ते हैं जिससे प्रायः असमर्थता का भाव प्रकट होता है–

म्यारा कैंल नि हिटीन --(मुझसे नहीं चला जाता), अब यां आई जालो (अब यहां आया जावेगा)। व्यापार की निरंतरता बताने के लिए कभी क्रिया की द्विरुक्ति करते हैं–

मैं हिटनै हिटनै थाकि गयूं (मैं चलते चलते थक गया),
भाउ खैलनै खैलनै शे गयो (बच्चा खेलते खेलते सो गया),
कभी पूर्वकालिक अव्यय की द्विरुक्ति करते हैं–
उ घोघि घोघि बेर पास भयो (वह रट रट कर पास हुआ),
के तू खेल खेल में थाकि गेछी (क्या तू खेल खेल में थक गई है)।

कभी प्रथम प्रेरणा की द्विरुक्ति होती है–

वी कन दूध पिवै पिवै बेर एतु ठूल बणा छ (उसको दूध पिला कर इतना बड़ा वनाया है)।

अपूर्ण रूप वाली क्रियाएँ--

समापिका क्रियाएँ प्रायः कालों और प्रकारों में लिंग, वचन और पुरुष के अनुसार रूपायित होती हैं। किन्तु कुछ क्रियायें काल और पुरुष की दृष्टि से अत्यन्त सीमित हैं–पधारणो (पधारना), भोजन करणों (भोजन करना)।

इन क्रियाओं को उत्तम पुरुष एक वचन में प्रयुक्त नहीं किया जाता। मध्यम पुरुष बहुवचन में ही इनका प्रयोग होता है जो आदर सूचक है। अन्य पुरुष में भी सम्मान प्रकट करने के लिए इन क्रियाओं का प्रयोग होता है–

आपूं पधारला (आप पधारेंगे), ऊं भोजन करला (वे भोजन करेंगे)। इन क्रियाओं का यह सीमित प्रयोग सामाजिक व्यवहार के कारण है।

अव्यय—

अभी तक कुमाउंनी विकारी शब्दों के अंतर्गत संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण और क्रियापदों का परिचय दिया गया। अब अविकारी शब्दों पर विचार करना चाहिए जो मुख्यतः चार प्रकार के हैं–(क) क्रिया विशेषण, (ख) समुच्चय बोधक (ग), सम्बन्ध बोधक, और (घ) विस्मयादि बोधक। इन्हें अव्यय कहते हैं क्योंकि इनका रूप परिवर्तन नहीं होता।

(क) क्रिया विशेषण--

रूप रचना के आधार पर इनके मूल और यौगिक दो भेद हैं। ठीक, आज, दूर, अचानक आदि इनके मूल अथवा रूढ़ रूप हैं जिनके खंड नहीं हो सकते।

जो क्रिया विशेषण, उपसर्गों प्रत्ययों और दूसरे शब्दों के योग से बनत हैं उन्हें यौगिक कहते हैं--अज्याल (आजकल), पोरिबेर (पिछले वर्ष)। जबै=जब+ऐ, कबै=कब+ऐ आदि।

अर्थ की दृष्टि से कुमाउंनी में क्रिया विशेषणों के चार भेद हैं--(१) स्थान वाचक, (२) काल वाचक, (३) रीति वाचक, (४) परिमाण वाचक।

(१) स्थान वाचक क्रिया विशेषण—

याँ (यहाँ), वाँ (वहाँ), काँ (कहाँ), जाँ (जहाँ), मुणि (नीचे), टाड़ (दूर), माथि (ऊपर), उति-उथकै (वहाँ), कति (कहाँ), जति (जहाँ) अघिल (आगे), पछिल (पीछे), मलि (ऊपर), निसि (नीचे), तलि (नीचे) भितेर (भीतर), भैर (बाहर)। इनके द्वारा स्थिति और दिशा का बोध होता है।

हिन्दी के माध्यम से दो एक अरबी फारसी के अव्यय भी आ गए हैं--तरप (तरफ), नजीक (नजदीक),।

(२) काल वाचक क्रिया विशेषण--

आज (आज), दोफरि (दोपहर), रत्तै (तड़के). बेलि (बीता हुआ कल), भोल (आने वाला कल), पोहूँ (परसों),परार (पिछला), अल्लै (अभी), अज्याल (आज कल), अब-जब-तब कब, झट (तुरन्त), अबेर (देर से), सबेर (जल्दी से), कबार (कब), तबार (तब), जबार (जब)।

(३) रीति वाचक क्रिया विशेषण--

इलै (इसलिए), उलै (उसलिए), किलै (किस लिए), यसिकै (ऐसे ही), उसिकै (वैसे ही), कसिकै (कैसे ही) जसिकै (जैसे ही), इन क्रिया-विशेषणों से निश्चय, अनिश्चय, निषेध, प्रश्न और अवधारणों आदि का ज्ञान होता है।

(४) परिमाण वाचक क्रिया विशेषण--

एतुक (इतना), उतुक (उतना), जतुक (जितना), कतुक (कितना), थ्वाड़ा (थोड़ा), कम (कम), भौत (बहुत), जादे (ज्यादा), हौर (और), मस्त (अधिक),।

उक्त क्रिया विशेषणों की रचना कई प्रकार से होती है--

(१) **संज्ञा में प्रत्यय लगाकर--**

रात हुणि (रात को), लेखण हुणि (लिखने के लिए), बोट बटि (पेड़ से)।

(२) **विशेषण में प्रत्यय लगाकर--**

अच्छो-बुरो (अच्छा-बुरा), निको-निको (भला बुरा)।

(३) **संज्ञा में विशेषण लगाकर--**

एक्कै दगड़ि (एक साथ), हर दम (हर समय)।

(४) **दो क्रिया विशेषण एक साथ** भी लगाए जाते हैं--

जब कभैं (जब कभी), याँ-वाँ (इधर-उधर) आज रत्तै (आज सुबह), पौरूं दोफरि तक (परसों दोपहर तक), कां कां (कहाँ कहाँ)।

(५) **सार्वनामिक क्रियाविशेषण बनाकर--**

तू यति आए, मैं उति गयूं (तू यहाँ आया मैं वहाँ गया), जाँ तू वाँ मैं (जहाँ तू वहाँ मैं)।

(६) क्रिया विशेषण के अर्थ को बल देने के लिए अथवा विस्तृत करने के लिए निपात जोड़े जाते हैं अबै-अब्बै (अभी), कबै-कब्बै (कभी), यत्ती (यहाँ ही), जत्ती (जहाँ ही)।

(७) कुमाउंनी के मुख्य निपात हैं–ले (ने ही)) लगै (भी), इ (ही), तक (तक), त (तो)।

कुछ क्रिया विशेषणों में प्रयोग के अनुसार अर्थ भेद हो जाता है--
मकान अघिल छ (मकान आगे है),=स्थान वाचक।
वील अघिलै को छी (उसने पहले ही कहा था)=काल वाचक।

(ख) **समुच्चय बोधक अव्यय--**

रूप रचना की दृष्टि से समुच्चय बोधक अव्ययों के दो रूप हैं--(१) रूढ़ जैसे–और, यदि, कि। (२) यौगिक–किलै कि (क्योंकि), नंतर (नहीं तो)।

अर्थ की दृष्टि से इनके भेद हैं– (१) संयोजक, (२) वियोजक, (३)

कारण वाचक, (४) विरोध वाचक, (५) रूप वाचक, (६) परिणाम वाचक, (७) संकेत वाचक।

१. **संयोजक--**

ये दो मुख्य वाक्यों को जोड़ते हैं—

मैं लै हिटूं और तुम लै हिटौ (मैं भी चलूं और तुम भी चलो)।

(२) **वियोजक--**

ये दो वाक्यों को अलग करते हैं—

तुमन कैं यो काम करण छ या नैं (तुमको यह काम करना है या नहीं)।

के खालि भात कि र्‌वाट (क्या खाएगी भात कि रोटी)।

त्वील वीकि वात मानि ले नंतर उ मारनौ (तू ने उसकी बात मान ली नहीं तो वह मारता)।

(३) **कारण वाचक--**

इसके द्वारा किसी व्यापार के कारण का पता चलता है--मैं नि लेखि सक्यु किलै कि आँखन में पीड़ छी (मैं नहीं लिख सका क्योंकि आँखों में दर्द था)।

(४) **विरोध वाचक--**

इनसे दो स्थितियों का विरोध प्रकट होता है--

तुम ठीक कूंछा मगर उ नी माननो (तुम ठीक कहते हो मगर वह नहीं मानता)।

(५) **रूप वाचक--**

इनसे किसी बात का स्पष्टीकरण होता है--

यस नि हो कि उ मरि जौ (ऐसा न हो कि वह मर जावे)।

द्याप्त यस लागणौ छी जाणि कौल बलाण फैटोल (देवता ऐसा लग रहा था जैसे मानो बोलने लगेगा)।

(६) **परिणाम वाचक--**

ये अव्यय किसी होने वाले परिणाम को प्रदर्शित करते हैं--

रत्तै ह्वणै छी यो लिजिया बाबू न्है गई (सबेरा हो रहा था इसलिए पिता जी चले गए)।

(७) **संकेत वाचक--**

ये नित्य सम्बन्धी अव्यय हैं--
यदि तुमन कणि पास हुण छ त रात दिन पढ़ौ (अगर तुम्हें पास होना है तो रात दिन पढ़ो)।
अगर पाणि नि बरसनो त मैं जरूरै उन्यूं (अगर पानी नहीं बरसता तो मैं जरूर आता)।

(ग) **संबंध बोधक अव्यय--**

ये अव्यय संज्ञा या सर्वनाम के बाद लगकर वाक्य में दूसरे शब्दों के साथ उसका संबंध निश्चित करते हैं। ये परसर्ग हैं क्योंकि संज्ञा--सर्वनाम के वाद जोड़े जाते हैं—घर मांजि (घर में), त्यार मलि (तेरे ऊपर) आदि।
रूप रचना की दृष्टि से ये दो प्रकार के हैं--
(१)–रूढ़, जिनमें रूपान्तर नहीं होता, (२) यौगिक, जिनमें रूपान्तर होता है। कुमाउंनी में इनकी संख्या बहुत कम है।
अर्थ की दृष्टि से ये कालवाचक, स्थान वाचक, दिशा वाचक और विरोध वाचक कई प्रकार के हो सकते हैं। अर्थ के आधार पर कुछ उदाहरण हैं--
बोट मांजी बानर छी (पेड़ पर बन्दर था), राम कणि दियौ (राम को दो), म्यर कैल नि हुनौ (मुझसे नहीं होता), त्वी हुणि लायूं (तेरे लिए लाया हूँ), त्वी पार के खोर मारूँ (तुझ पर क्या सिर पटकूं)।
रचना के आधार पर इनके दो भेद हैं--(१) रूपान्तर रहित (२) रूपान्तर सहित।

१. **रूपान्तर रहित--**

इन्हें विकारी कारक के प्रत्ययों के बाद जोड़ते हैं। कुमाउंनी में ले, कैं, (कणि), वुति, हुणि, लिजि, बटि, लै, में आदि इस कोटि के परसर्ग (अव्यय) हैं—

(१) वीले कयो (उसने कहा), त्वीले न्हा छ (तू ने नहाया), कलम ले लेख्यो (कलम से लिखा)।
(२) तुकैं बुल्युणई (तुझको बुला रहे हैं), तुमन कणि जाण छ (तुमको जाना है।
(३) वीक वुति के घाणि नि हुनि (उसके द्वारा कोई काम नहीं होता)।
(४) त्वी हुणि ल्यूं लो (तेरे लिए लाऊंगा), म्यार लिजि के ल्याले (मेरे

(५) घर बटि न्है गो छी (घर से चला गया था)।
(६) उति लै बैठ (वहां पर बैठ), छाज में बुज्यू भै रईं (छज्जे में दादा जी बैठे हैं)।

२. रूपान्तर सहित—

ये लिंग वचन के साथ रूपान्तरित होते हैं—
जरा सा चाँवल चैंनि (जरा सा चावल चाहिए)।
जराशि गौंत चैछं (जरा सा गोमूत्र चाहिए)।
उ गौं वाला मैंश कांगयीं ? (उस गांव के आदमी कहाँ गए) ?
झुमुक वालि गितारि कां छ ? (झुमके वाली गितारिन कहाँ है) ?

(घ) विस्मयादि बोधक अव्यय—

आश्चर्य, हर्ष, शोक, घृणा आदि भावों को व्यक्त करने के लिए प्रयुक्त होते हैं। ये अविकारी हैं और इनका विशेष अर्थ बोलने के ढंग से प्रकट होता है। संबोधन सूचक एकाधिक शब्द इनके अंतर्गत हैं—
(१) विस्मय सूचक—अरे, ओहो, सच्ची, क्या, आब्बाबा हो।
(२) हर्ष सूचक—आहारे, आहा, हो, वाह वा।
(३) शोक सूचक—हे राम, हाइ, शिबौशिब, हाइ रे।
(४) घृणा सूचक—छि, हट, घत, थू।
(५) पीड़ा सूचक—ओ वबा, ओ इजा, उ इ।
(६) समर्थन सूचक—होइ होई, भलो भलो, ठीक।
(७) आशीर्वाद—जै हो, जीरये, बचि रये, शाबसि।
(८) तिरस्कार सूचक—छि, हाड़ि।
(९) निराशा, व्यंग्य—द ऽ,।
(१०) संबोधन—अरे, ओ, हंहो, रे।

(ङ) ध्वन्यात्मक अव्यय—

(१) स्यां स्यां—नदी और हवा की ध्वनि।
(२) छण मण—छनछनाना।
(३) टुनटुन—घंटी की ध्वनि।
(४) सर सर—तेजी से।
(५) दना दन—जल्दी जल्दी।
(६) सुर सुर—चुपचाप।
(७) दण मण—आधिक्य।

४/४. वाक्य रचना

कुमाउंनी भाषा में वाक्यों की हिन्दी की भांति निश्चित बनावट है और इनके पारस्परिक संबंध भिन्न भिन्न प्रकार के हैं। पद क्रम भी कई प्रकार का है। चूंकि किसी भाषा का मुख्य अंग वाक्य होता है इसलिए कुमाउंनी वाक्य रचनाओं की विशेषता से परिचित होना आवश्यक है।

कुमाउंनी भाषा की इन विशेषताओं पर—(क) पदबंध (ख) वाक्य विश्लेषण, (ग) वाक्य भेद, (घ) अध्याहार, (ङ) वाक्य परिवर्तन, (च) वाक्य विन्यास, (छ) कथन भेद, (ज) विशिष्ट प्रकार शीर्षकों के अन्तर्गत विचार करेंगे।

(क) पदबंध—

वाक्य का वह भाग जिसमें एकाधिक पद परस्पर संबद्ध होकर अर्थ प्रकट करते हैं, वाक्यांश अथवा पदबंध कहलाता है। कुमाउंनी में इसके मुख्य उदाहरण हैं—

(१) संज्ञा पदबंध—

ठुलो पहाड़ (बड़ा पहाड़), नान हाति (छोटा हाथी)। यह पद समूह वाक्य में संज्ञा का काम देता है—नान भाउले (छोटे बच्चे ने)।

(२) विशेषण पदबंध—

यह पद समूह संज्ञा की विशेषता बताता है—सब झणा (सब जने)। भौतै खट्ट (बहुत खट्टा), चारै आदिम (कुल चार आदमी), भौत नानि चेलिले (बहुत छोटी बच्ची ने)।

(३) सर्वनाम पदबंध—

जो पद समूह सर्वनाम का काम देता है—
मैं एकलो (मैं अकेला), जो क्वे (जो कोई), जै कैले (जिस किसी ने)।

(४) क्रिया पदबंध—

जो पद समूह क्रिया का काम करता है—

भलो कूं छ (अच्छा कहता है), रात में न्है गो (रात में चला गया), शे जालि (सो जायेगी), भोल आलि (कल आयेगी)।

(५) क्रिया विशेषण पदबंध--

जो पद समूह क्रिया विशेषण का काम करता है-

घर है बेर जूंलो (घर से होकर जाउंगा), भौत माठु माठु बलाण लागो (बहुत धीरे धीरे बोलने लगा)।

मुहावरे पदबंध ही होते हैं जिनकी व्याख्या शब्द विचार के अन्तर्गत की जा चुकी हैं।

(ख) **वाक्य विश्लेषण--**

वाक्य के दो मुख्य अंग होते हैं-कर्त्ता और क्रिया ! कर्त्ता और उसके विस्तार को उद्देश्य कहते हैं। क्रिया और उसके (कर्म सहित) विस्तार को विधेय कहते हैं। कुमाउंनी में भी वाक्य के अवयव उद्देश्य और विधेय हैं। प्रत्येक वाक्य में सामान्यत: उद्देश्य और विधेय अवश्य विद्यमान रहते हैं। कभी उद्देश्य लुप्त रहता है जो पूर्वापर संदर्भ से अथवा क्रिया के विभक्ति प्रत्ययों द्वारा स्पष्ट होता है। उद्देश्य के विस्तारक, विशेषक होते हैं। ये उद्देश्य का निर्धारण करते हैं। क्रिया विशेषण केवल विधेय का निर्धारण करते हैं।

उ एतुक गरम दूद हर रोज नि पिनौ (वह इतना गरम दूध हररोज नहीं पीता)।

उक्त वाक्य में 'दूद' (कर्म) का विशेषक गरम (विशेषण) है जिसका एक और विशेषक एतुक (सर्वनामिक विशेषण) है। ये दोनों मिलकर 'दूद' का निर्धारण करते हैं। इसी प्रकार 'नि पिनौ' विधेय है जिसका निर्धारण 'हररोज' (क्रिया विशेषण) द्वारा होता है। इसमें भी 'हर' शब्द ने 'रोज' शब्द को निर्धारित किया हैं।

वाक्य में उद्देश्यगत कर्त्ता कभी वास्तविक कर्त्ता होता है। जैसे- ऊ बीमार छ (वह बीमार है)। कभी केवल व्याकरणिक कर्त्ता होता है-भौत झणा मारि गयीं (बहुत जने मारे गए)। और कभी कर्त्ता होता ही नहीं। तब क्रिया द्वारा व्यक्त कार्य से कर्ता का काम संपादित होता है-त्यार बुति नि आइ जालो (तुझसे नहीं आया जाएगा)।

उद्देश्यगत कर्त्ता की रचना मुख्यत: पांच प्रकार से होती है-

(१) संज्ञा से–मुश दौड़न छ (चूहा दौड़ता है), च्यल पढ़न छ (लड़का पढ़ता है)।

(२) सर्वनाम से–मैं आयूं (मैं आया), वील चिट्टी लेखी (उसने पत्र लिखा)।
(३) विशेषण से–नानि न्हैं गे (छोटी लड़की चली गई)।
(४) क्रियार्थक संज्ञा से (कृदन्त संज्ञा से)–घुमण भलो छ (घूमना अच्छा है)।
(५) क्रिया विशेषण से– घर बै कौ छ (घर में से कहा)।

उद्देश्य के बारे में जो कुछ कहा जाय वह विधेय है। यह दो प्रकार का है--(१) क्रिया परक विधेय, (२), संज्ञा परक विधेय।
पहले में एक सामान्य संयुक्त समापिका क्रिया होती है जो किसी भी वाच्य, काल, पुरुष, लिंग. वचन के लिए रूपान्तरित हो सकती है--
बेलि रावण मारि गो छ (कल रावण मारा गया)।
चेलि दवै लै छ (लड़की दवा लाई)--

दूसरे में संज्ञापरक विधेय रचना सहकारी क्रिया है। विधेय की रचना निम्नलिखित प्रकार से होती है--

(१) क्रिया से–मुश दौड़न छ (चूहा दौड़ता है), च्यल पढ़न छ (लड़का पढ़ता है)।

(२) कर्म और क्रिया से–कुकुर रोटि ल्या (कुत्ता रोटी लाया)।

(३) कर्म के विस्तार और क्रिया से–बुड़ नानि नानि एक ब्वारि लायो (बूढ़ा छोटी सी एक बहू लाया)।

(४) पूरक और क्रिया से–उ भौतै कमजोर छ (वह बहुत ही कमजोर है)।
(५) क्रिया विस्तार और क्रिया से–रामुलै बिरालु कैं ढुंगल मारौ (रामू ने बिल्ली को पत्थर से मारा)।

कुमाउंनी में वाक्य विश्लेषण के लिए उक्त आधारों को इस प्रकार स्पष्ट किया जा सकता है—

उदाहरण--बेलिया म्यर हंसण सब लोगनकैं भौतै नक लागौ (कल मेरा हँसना सब लोगों को बहुत बुरा लगा)।

उद्देश्य		विधेय					
विस्तार	कर्त्ता	कर्म विस्तार	कर्म	पूरक-विस्तार	पूरक	क्रियाविस्तार	क्रिया
म्यर	हंसण	सब	लोगन कैं	भौतै	नक	बेलिया	लागी

(ग) **वाक्य भेद--**

अर्थ के आधार पर कुमाउंनी वाक्य ६ प्रकार के माने जा सकते हैं--

(१) सामान्य कथन--मैं आयूं (मैं आया), हमर देश ठुल छ (हमारादेश बड़ा है)।

(२) विधानार्थक--वाँ जाण चैंछ (वहाँ जाना चाहिए)।

(३) निषेधार्थक--उ घर नी गयो (वह घर नहीं गया)--

(४) प्रश्न वाचक--के तुम आजै जाला (क्या तुम आज ही जाओगे)?

(५) इच्छार्थक--हिटौ घुमण हुंणि हिटनूं (चलिए घूमने के लिए चलें)।

(६) संभावनार्थक--वीले कयो हुनलो (उसने कहा होगा)।

(७) निश्चयात्मक--मैं खूंलो (मैं खाउंगा)।

(८) आज्ञार्थक--तू तलि खेतम जा (तू नीचे खेत में जा)।

(९) विस्मय सूचक--अरे! तू फेल है गो छै (अरे तू फेल हो गया)।

रूप रचना के आधार पर ये वाक्य तीन प्रकार के होते हैं--

(१०) साधारण वाक्य, (२) मिश्र वाक्य, (३) संयुक्त वाक्य।

१. **साधारण वाक्य** में एक ही विधेय होता है। ये एक क्रिया वाले वाक्य हैं जिनमें कहीं कहीं क्रिया लुप्त रहती है।

व्यक्त क्रिया वाक्य--कतुक आदिम छन? (कितने आदमी हैं)।

लुप्त क्रिया वाक्य--च्याला रे (ए लड़के)।

२. **मिश्र वाक्य** में एक प्रधान वाक्य होता है, अन्य आश्रित वाक्य रहते हैं।

वाक्यक्रम में जिस उपवाक्य का मुख्य स्थान हो उसे प्रधान उपवाक्य कहते हैं-

जब उ आलो तब मैं घर न्है जूंलो (जब वह आएगा तब मैं घर चला जाऊँगा)।

उक्त वाक्य में पहला प्रधान उपवाक्य है, दूसरा आश्रित उपवाक्य है। दो साधारण वाक्यों से यह मिश्र वाक्य बना है। इसी प्रकार निम्न-लिखित वाक्य है--

बाबुलै कौ छियो कि वां जरूर जाया (पिता ने कहा था कि वहाँ जरूर जाना)।

इस मिश्र वाक्य में पहला उपवाक्य "बाबु लै कौ छियो" प्रधान उप वाक्य है, और दूसरा "वाँ जरूर जाया" आश्रित उपवाक्य है।

आश्रित उप वाक्य तीन प्रकार के होते हैं--

(अ) संज्ञा उपवाक्य--

दशरथैल कौ कि मैं मरि जूंलो (दशरथ ने कहा कि मैं मर जाऊंगा)। इस वाक्य में "मैं मरि जूंलो" संज्ञा उपवाक्य है। 'दशरथैल कौ' प्रधान उपवाक्य है।

(आ) विशेषण उपवाक्य--

उ मैंश कां छ जो नाचण लागि रौ छियो (वह आदमी कहाँ है जो नाच रहा था)।

इस वाक्य में "जो नाचण लागि रौ छियो" विशेषण उपवाक्य है क्योंकि यह प्रधान उपवाक्य "उ मैंश काँ छ" में "मैंश" (आदमी) की विशेषता बताता है।

(इ) क्रिया विशेषण उपवाक्य--

ये समय, स्थान, रीति कारण आदि की सूचना देते हैं—

"जब पाणि नि बरसनो त अकाव पड़ौ (जब पानी नहीं बरसता तो अकाल पड़ता है)।

इसमें 'जब पाणि नि बरसनो' प्रधान उपवाक्य है और दूसरा वाक्य "अकाव पड़ौ" आश्रित उपवाक्य है जो "बरसनो" क्रिया की विशेषता बताने के कारण क्रिया विशेषण उपवाक्य है।

३. **संयुक्त वाक्य--**

जिस वाक्य में एक से अधिक प्रधान उपवाक्य होते हैं वह संयुक्त उपवाक्य होते हैं--

इज बण गे छ और मैं स्कूल गयूं (मां जंगल गई और मैं स्कूल गया)। यहाँ दो साधारण वाक्य और द्वारा संयुक्त हैं। कभी यह संयोजक तत्व लुप्त होता है। कुमाउंनी में यह संयोजक और, मगर, या, समुच्चय बोधक अव्यय होते हैं।

यदि दो या दो से अधिक स्वतन्त्र वाक्यों के साथ कोई आश्रित उपवाक्य प्रयुक्त हो तो भी संपूर्ण वाक्य संयुक्त वाक्य होता है--

मैं वाँ गयूं और मैलै देखौ कि वाँ भितेर क्वे न्हैं (मैं वहाँ गया और मैंने देखा कि वहाँ भीतर कोई नहीं है)।

इस वाक्य में एक स्वतन्त्र वाक्य (मैं वाँ गयूं) एक प्रधान उपवाक्य (मैले देखौ), और एक आश्रित उपवाक्य (भितेर क्वे न्है) जुड़े हुए हैं। इनके जोड़ने का कार्य "और" तथा "कि" संयोजक करते हैं।

(घ) अध्याहार--

वाक्य रचना में बहुत से शब्द छोड़ दिए जाते हैं। इस प्रक्रिया को अध्याहार कहते हैं। कुमाउंनी के मुहावरों, कहावतों तथा अन्य स्थानों पर इसका प्रयोग देखा जाता है। इस प्रक्रिया द्वारा वाक्य छोटे होते हैं और भाषा मुहावरेदार बनती है। कुमाउंनी में इसके कुछ उदाहरण हैं-

सर्वनाम लोप--

काँ जै रई (कहाँ गए हुए हैं)।

संज्ञालोप--खूब खरि, खरि सुणै (खूब खरी खरी सुनाई)।

क्रियालोप--नौ त्यर, गौं म्यर (नाम तेरा, गांव मेरा)।

(ङ) वाक्य परिवर्तन--

कुमाउंनी के शब्द समूह पर विचार करते समय इसकी अर्थ व्यंजकता के अनेक उदाहरण दिए जा चुके हैं। यहां वाक्य के धरातल पर द्रष्टव्य है कि कुमाउंनी में एक ही बात कितने प्रकार से कही जा सकती है। कुमाउंनी में वाक्य कई तरीके से बनाए जा सकते हैं किन्तु मूल अर्थ नहीं बदलता। वाक्य परिवर्तन की इन विशेषताओं से कुमाउंनी की क्षमता सिद्ध होती है।

कभी कोई शब्द रूप बदल कर, कभी वाक्य योजना में परिवर्तन करके, कभी पदक्रम में हेरफेर करके, अभिव्यक्ति को विशेष रूप दिया जाता है--

(१) भाल नान्तिन डाड़ नि मारन (अच्छे बच्चे नहीं रोते)।
जो नान्तिन भाला हुंनि ऊ डाड़ नि मारन (जो बच्चे अच्छे होते हैं वे रोते नहीं)।

(२) थातिन में उत्तम उप्रड़ो छ (स्थानों में उपराड़ा उत्तम है)।
उपराड़ा है बेर उत्तम क्वे थाति न्हा (उपराड़ा से उत्तम और कोई स्थान नहीं है)।

(३) उ एकलै कसिकै रौल (वह अकेला किस प्रकार रहेगा)।
एकलै वी है बेर कसिक रइ जाल (अकेले उससे कैसे रहा जाएगा)।

(४) त्वीकणि अब के करण छ ? (तुझको अब क्या करना है)।
त्वी कैं अब के करण न्हा (तुमको अब कुछ करना नहीं है)।

(५) उ भल मैंश न्हाति (वह अच्छा आदमी नहीं है)।
उ नक्को मैंश छ (वह बुरा आदमी है)।

(च) **वाक्य विन्यास--**

इसके अंतर्गत वाक्यों का पदक्रम और अन्वय विवेच्य है। आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं की भांति कुमाउंनी में पहले कर्त्ता, बीच में कर्म तथा अंत में क्रियापद रहते हैं। वाक्य के बीच में आने वाले संज्ञा शब्द प्राय कर्म को छोड़कर सभी परसर्ग युक्त होते हैं। कर्म कारक अन्य कारकों की अपेक्षा क्रिया के अधिक निकट रहता है--

ब्वारिल मैं कणि निमु दे (बहू ने मुझको नींबू दिया)।

विशेषण हिन्दी की ही भांति विशेष्य से पूर्व आते हैं। क्रिया विशेषण क्रिया के तुरन्त पहले आते हैं किन्तु काल वाचक और स्थान वाचक विशेषणों को वाक्य में क्रिया के पहले कहीं भी रख सकते हैं।

१. **पदक्रम--**

चूंकि कुमाउंनी अन्य आधुनिक भारतीय भाषाओं की भाँति वियोजक भाषा बन रही है अतः इसमें व्याकरणिक संबंधों को व्यक्त करने के लिए पदक्रम अत्यन्त महत्वपूर्ण हो गया है। इसके विपरीत संस्कृत भाषा संयोजक भाषा थी। उसमें व्याकरणिक संबंधों को प्रगट करने के लिए प्रत्येक पद स्वतंत्र था और पदक्रम के परिवर्तन करने से विशेष अन्तर नहीं पड़ता था।

कुमाउंनी की वाक्य रचना में पदों के सुनिश्चित क्रम को देखने के लिए निम्नलिखित बातें स्मरणीय हैं--

(१) वाक्य में अकर्मक क्रिया होने पर उद्देश्य अपने विस्तार सहित आद्य स्थिति में आता है तथा विधेय अपने विस्तार सहित अंत्य स्थिति में आता है—
म्यारा बाबू पुरेत छन(मेरे पिता पुरोहित हैं)। मोहन कूं छ (मोहन कहता है)।

(२) वाक्य में सकर्मक क्रिया होने पर पहले कर्त्ता (उद्देश्य) फिर कर्म, अन्त में क्रिया (विधेय) आती है। यदि वाक्य में दो कर्म हों तो गौण कर्म पहले और मुख्य कर्म बाद में आताहै–
त्वीले कसि मुरुलि बजै (तूने कैसी मुरली बजाई)।
बौज्यू बाछ कणि दवै लगूंणौ छी (पिता जी बछिया को दवाई लगा रहे थे)।

(३) कर्त्ता और कर्म सूचक संज्ञा पदों के विशेषण अपने अपने विशेष्य के पूर्व आते हैं। कृदन्त विशेषण और पूर्वकालिक कृदन्त अपने कर्म के बाद आते हैं—
म्यारा ठुल भाउले आपणि नानि बैणि कणि मारौ छ–
(मेरे बडे लडके ने अपनी छोटी बहिन को मारा है)।
बणी गूड़ ल्ही बेर घर नि आयो (बनियाँ गुड़ लेकर घर नहीं आया)।

(४) क्रिया विशेषण सामान्य रूप से क्रिया के पूर्व प्रयुक्त होते हैं। कभी स्थान, समय सूचक क्रिया विशेषण वाक्य के आरम्भ में भी आते हैं–
किताब घर भितेर धरि बेर मैं गयूं (किताब घर के भीतर रखकर मैं गया)।
बेलिया तू उति किलै जाणों छिये (कल तू वहाँ क्यों जा रहा था)।

(५) परसर्ग प्रायः संज्ञा, सर्वनाम, के विकृत कारक रूपों के पश्चात् जुड़ते हैं–
लुटा माँजी को पणसी छियो (घास के ढेर में कौन घुसा था)।

(६) स्वीकृति अथवा निषेध सूचक निपात वाक्य के पूर्व प्रयुक्त होते हैं–
स्वीकृति सूचक– 'एइ' 'हुं' 'उ हूँ'–,
होइ, मै जरूरै ऊँलो (हाँ मैं जरूर आउंगा)।
निषेध सूचक निपात 'नि' 'न्ह' 'न' क्रिया के पूर्व आते हैं किन्तु 'झन' (मत) क्रिया के पहले भी आता है, और बाद में भी–

ऊ नी सितो (वह नहीं सोया), तू आये झन–तू झन आये (तू मत आना)।

(७) प्रश्न वाचक 'के' 'क्या' निपात प्राय: वाक्य के अन्त में आते हैं–
त्वीले लेख छ के? (तूने लिखा है क्या)

(८) संबोधन और विस्मयादि बोधक शब्द वाक्य आरंभ करने के पूर्व आते हैं–
शिव ! शिव ! ऊ भलो मैंश छियो (शिव! शिव ! वह भला आदमी था)।

(९) भाव और तीव्रता प्रगट करने के लिए, अथवा वाक्य के किसी अंश पर बल देने के लिए सामान्य पद क्रम में हेर फेर करते हैं। तब क्रिया पद प्राय: वाक्य के प्रारम्भ में या बीच में आते हैं–
जानै न्हाती कसि कै (जाता ही नहीं किसी प्रकार)।
म्यारि काथ सुणन पड़ैलि तुमन कन् (मेरी कथा सुननी पड़ेगी तुमको)

१०) लोक रचनाओं में तो पदक्रम गायकों की सुविधानुसार निश्चित होता है। गीतों में यह प्राय: तुकान्त योजना पर निर्भर करता है––
"बागेश्वर धुरा बुरूंशी फुलिगे" (बागेश्वर की चोटी पर बुरूँश खिल गया है)।

"तू जाँ छै लदाख मानी, कब औलै यती" (तू जाता है लदाख मानी, कब आएगा यहाँ)।

"छाना बिलौरी का घामा बौज्यू" (छाना बिलौरी के घाम, पिता जी)।

२ पदान्वय–

अन्वय का अर्थ है 'मेल'। किसी वाक्य में आने वाले संज्ञा, क्रिया आदि विभिन्न पदों में परस्पर मेल होना चहिये। इस दृष्टि से कुमाउंनी वाक्य विन्यास में निम्नलिखित विशेषताएं द्रष्टव्य हैं––

(१) कर्त्ता और क्रिया में अन्वय–एकाधिक कर्त्ता होने पर क्रिया बहुवचन में होती है– इजा, बौज्यू सब गौं न्है गीं (माता पिता सब गाँव चले गए)।
दो या अधिक कर्त्ताओं में पुल्लिग और स्त्रीलिंग दोनों प्रकार के कर्त्ता होने पर क्रिया बहुवचन पुल्लिग में रहती है–
च्याल चेलि खेलण लागि रईं (लड़के लड़कियाँ खेल रहे हैं)।

आदर प्रदर्शित करने के लिये एक वचन पुल्लिग और स्त्रीलिंग कर्त्ता के साथ पुल्लिग बहुवचन की क्रिया प्रयुक्त होती है–

बुड़ बौज्यू भैंटी रौ छिया (दादा जी बैठे हुए थे)।

(२) कर्म और क्रिया में अन्वय–कर्तृ वाच्य की भूतकालिक सकर्मक क्रिया कर्म के लिंग और वचन के साथ अन्वित होती है। कर्म वाच्य की क्रिया कर्म के लिंग वचन और पुरुष से अन्वित होतीहै–

विराउ मारि गो छ (बिल्ली मारी गई)।

एक से अधिक भिन्न लिंग, बचन और पुरुष वाले कर्म होने पर क्रिया के साथ अन्वय कर्त्ता और क्रिया की स्थिति के अनुसार होता है–

बेलि दाल भात पाकि छी, मैंल दूद, र्‌वाट और जुनाल खाई, (कल दाल भात बना था, मैंने दूध रोटी और भुट्टे खाए)।

आदरार्थ 'आपुं' का लोप होने पर प्रेरणार्थक क्रिया के अन्य पुरुष का प्रयोग होता है–

मलि भैंटियौ (आप ऊपर बैठिये)।

सकर्मक क्रिया का लिंग, वचन कर्मानुसारी होता है–

सैंपैल गोलि चलै छ (साहब ने गोली चलाई)।

यदि सप्रत्यय कर्म हो तो क्रिया पुल्लिग एक वचन में रहती है–

मैंल खेत उजाड़नेर कणि मारौ (मैंने खेत उजाड़ने वालों को मारा)।

(३) कर्त्ता, कर्म और क्रिया में अन्वय– भाव वाच्य की क्रिया कर्त्ता, कर्म के साथ अन्वित नहीं होती। वह पुल्लिग एक वचन अन्य पुरूष में रहती हैं–

त्यार कैल नि खाईन (तुझसे नही खाया जाता)।

(४) विशेषण और विशेष्य का अन्वय–विशेषण का रूप विशेष्य के अंनुसार चलता है–

ठुलो चेलो (बड़ा लड़का), ठुली चेली (बड़ी लड़की)।

कभी संख्या वाचक विशेषण के साथ एक वचन विशेष्य प्रयुक्त होता हैं–

पैंक कणि सोर पुजंण में तीन दिन लागीं (वीर को सोर पहुँचने में तीन दिन लगे)।

आदर सूचक एक वचन पुल्लिग विशेषण के साथ बहुवचन पुल्लिग विशेषण प्रयुक्त होता है। स्त्रीलिंग विशेष्य के साथ स्त्रीलिंग बहुवचन विशेषण प्रयुक्त होता है ––

ठुल ज्याठज्यू अल्लैं न्है गईं (बड़े जेठ जी अभी चले गए हैं)।

(५) संबन्ध सूचक रूप निकटस्थ संज्ञा के अनुसार अन्वित होते हैं–

मेरि चेलि (मेरी लड़की), त्यर च्यल (तेरा लड़का), हमार च्याल (हमारे लड़के)।

(६) दो या अधिक संज्ञाओं के एक ही कारण से संबद्ध होने पर कारक चिन्ह (परसर्ग) अंतिम कर्म से अन्वित होता है–

ऊ आपण माल मत्ता ली बेर ब्या करण लिजि भावर न्है गो (वह अपना माल –मता लेकर विवाह करने को भावर चला गया)।

(छ) **कथन भेद**–(नरेशन)–

कुमाउंनी में मुख्य रूप से प्रत्यक्ष **कथन** की विधि अपनाई जाती है। अर्थात् वाक्य रचना में वक्ता के कथन को ज्यों का त्यों उद्धृत किया जाता है–

बुड़ियैल 'कौ= "हे भगवान ! म्यर नाति गोरू चरूंण जै रछ !"

(बुढ़िया ने कहा –"हे भगवान ! मेरा नाती गाय चराने गया है")।

पुरानी लोक कथाओं और लोक गायकों की उक्तियों में यही प्रत्यक्ष कथन शैली प्रयुक्त हुई हैं। किन्तु हिन्दी और अँग्रेजी के प्रभाव से अब परोक्ष कथन की विधि भी स्वीकार्य है जिसमें दो रूप अपनाए जाते हैं।

(१) एक तो प्रधान वाक्य की क्रिया को कथन के अनुसार बदल दिया जाता है। तदुपरान्त 'कि' लगाकर वही बात दोहराई जाती है। यह परोक्ष कथन की पहलो विधि है–

बुढ़ियैल कौ कि म्यर नाति गोरूं चरूण जै रौछ—
(बुढ़िया ने कहा कि मेरा नाती गाय चराने गया है)।

(२) परोक्ष कथन की दूसरी विधि यह है कि कहे गए वाक्य में पुरुष और काल को प्रधान वाक्य के अनुरूप कर देते हैं–

बुड़ियैल कौ कि वीक नाति गोरु चरूंण जै रौछ—
(बुढ़िया ने कहा कि उसका नाती गाय चराने गया है)।

कुमाउंनी वाक्य रचना में प्रत्यक्ष कथन विधि के अतिरिक्त परोक्ष कथन की पहली विधि अपनाई जाने लगी है। परोक्ष कथन की दूसरी विधि लोक व्यवहार में प्रचलित नहीं है।

(ज) वाक्यों के विशिष्ट रूप–

कुमाउंनी वाक्य रचना में अनेक तत्व उसे विशिष्ट रूप प्रदान करते हैं। जब कुमाउंनी भाषी हिन्दी बोलते समय अपने भावानुकूल हिन्दी शब्दरूप नहीं पाते तो वे कुमाउंनी मिश्रित हिन्दी बोलने लगते हैं।

उनकी अपनी वाक्यावली में कुछ ऐसे तत्व हैं जिनसे वे अलग पहचाने जाते हैं––

(१) बल–

वाक्यों में विभिन्न सन्दर्भों में प्रयुक्त 'बल' या 'भल' शब्द उसे विशेष अर्थ-व्यंजकता प्रदान करता है। यह शब्द अपने सामान्य अर्थ के अतिरिक्त विशिष्ट आग्रह का द्योतक है–

'उ भाबर न्है गो छ बल,' वाक्य का अर्थ इतना ही नहीं है कि वह भाबर चला गया है। इसके साथ कहा जाता है, सुना जाता है की भावना प्रकट होती है जो वक्ता की उदासीनता का व्यंजक है। यही शब्द 'बलि' 'भलि' रूप में किसी विधि, आग्रह, आदेश, अथवा किसी विशिष्ट संकेत के अर्थ में प्रयुक्त होता हैं––

"भलि कै जाए बलि" (अच्छी तरह जाना) वाक्य का तात्पर्य है–– उससे कह देना कि वह इस बात का ध्यान रक्खे कि अच्छी तरह जाये।

(२) घैं–किसी को चुनौती देने अथवा संभावना प्रकट करने के संदर्भ में 'घैं–पैं' शब्दों का एक साथ अथवा अलग अलग प्रयोग होता है। इसके वाक्यगत प्रयोग है–

"आ घैं" (आ तो)। अर्थात् तेरी सामर्थ्य कितनी है यह आकर दिखा। "खा घैं" (खा तो)। अर्थात् तेरी हिम्मत है तो खाकर दिखा? इसी कोटि का एक वाक्य है–"घैं उ अब के करौं" (देखें तो अब वह क्या करता है)? 'घैं' शब्द को हटाने पर विशिष्ट व्यंजना नहीं रहेगी।

(३) 'पैं'-शब्द का प्रयोग कहीं आशा, कहीं स्वीकृति, कहीं पुनरावृत्ति के अर्थ में होता है। "तू जाले पैं" (तू जाएगा) प्रयोग में किसी के जाने की आशा प्रकट की जाती है। "होइ पैं तस्सै भय" (हाँ तो वैसा ही हुआ) में इसका प्रयोग तो के अर्थ में हुआ है। कभी वह धमकी देने के अर्थ में प्रयुक्त होता है।

एक लोकोक्ति है–"जाँ खसियँल द प कयो एक घड़ी नि मानन" (जहाँ राजपूत ने देखूंगा कहा फिर कुछ नहीं सुनता)।

(४) 'ला'–यह विशेषकर पूर्वी कुमाउंनी की वाक्य-रचना का अंग है जिसका प्रयोग बातचीत करते समय मध्यम पुरुष के लिये होता है। इसका पुल्लिग में "ला" और स्त्रीलिंग में 'ली' रूप है– "के खां छै ला" (क्या खाता है रे), "वां को छ ला" (वहाँ कौन है रे)। हिन्दी के प्रयोग अरे रे शब्द इसके मूल आशय का द्योतन नहीं कर पाते। "ला" के प्रयोग से एक विशेष आत्मीयता और कोमलता व्यंजित होती है।

पश्चिमी कुमाउंनी में 'वे' और 'हँवे' इसके समानार्थी शब्द हैं। दो स्त्रियों के वार्तालाप में इनका प्रयोग होता है—

"हंवे उ कें कूणौ छी" (हां री ! वह क्या कह रहा था) !

(५) 'कशप'–यह शब्द "पता नही" के अर्थ में प्रयुक्त है और इसमें एक पूरा पदबंध विद्यमान रहता है। दो व्यक्तियों के प्रश्नोत्तर में इसका प्रयोग किया जाता है। प्रश्न––"इज कां छ" (मां कहाँ है)। उत्तर–"कशप" (पता नहीं)। विकल्प से इसके समानार्थक 'मालूम न्हाति' (मुझे मालूम नहीं है का प्रयोग होता है)।

(६) 'भैं, भये, भयूं'–इन शब्दों के द्वारा भी वाक्यों में एक व्यंजकता लाई जाती है जिसका आशय हिन्दी में स्पष्ट नहीं किया जा सकता। ये वाक्य हैं–"मैं यस कूनेर भयूं" (मैं ऐसा कहता था), मैं यस कूं छ्यूं (मैं ऐसा कहता था)। पहले वाक्य का ठीक वही आशय नहीं है जो दूसरे वाक्य का है। उसमें कुछ अधिक निरंतरता का बोध होता है। हिन्दी में इस आशय को प्रकट करने के लिए कुमाऊँवासी कहेगा "मैं ऐसा कहने वाला ठहरा"।

(७) 'कै'––कै शब्द के प्रयोग द्वारा वाक्य रचना में एक विशेषता लाई जाती है—"मैं हिटूंल कै बेर, त्वील किलै कौ ?" (मैं चलूंगा करके तूने क्यों कहा)? हिन्दी में इस प्रकार 'करके' रूप का प्रयोग नहीं होता। कुमाउंनी वाक्य भेदों में मिश्र वाक्यों के अंतर्गत इसके अनेक उदाहरण मिलते हैं— "मैं ऊंलो कै (बेर) त्वील किलै कौ" (मैं आउंगा करके तूने क्यों कहा) ?

"तू आलै कै मैल भात पका'' (तू आएगा करके मैंने भात पकाया)। ''मैं बण निजूं कै बेर नातिल कै हाछी'' (मैं वन नहीं जाऊंगा करके नाती ने कह दिया था)।

(८) 'जै'—इस शब्द का एक नवीन प्रयोग द्रष्टव्य है जो हिन्दी के सम्बन्ध वाचक से भिन्न है। इसके वाक्यगत उदाहरण हैं—
''मैं जै कूनूं मेरि हिरू ऐ रै छ'' (मैं जो कहता हूँ तो मेरी प्रेमिका आ रही है), द्याप्त अब जै ऊँछ (देवता अब जो आता है तो)।

(९) 'तौ'—कुमाउंनी सर्वनामों में 'तौ' के प्रयोग की विशिष्टता लक्षित होती है। 'तौ' अन्य पुरुष सर्वनाम है जो दूरवर्ती 'वह' का द्योतक होने पर भी 'उ' (वह) से भिन्न है। इसका व्यवहार विशिष्ट संदर्भ में अधिक निश्चय करने के लिए होता है—

"उ जाणौ" (वह जा रहा है), "तौ जाणौ" (वह जा रहा है)। इन वाक्यों में 'उ' वह का सामान्य निर्देशक है। किन्तु 'तौ' विशेष 'वह' अर्थात् व्यक्ति विशेष का निर्देशक है, सामान्य 'वह' का नहीं। इसके एक वचन और बहुवचन में अलग अलग रूप चलते हैं।

इस प्रकार शब्दों के प्रयोग से कुमाउंनी वाक्य-रचना की विशेष प्रवृत्तियाँ परिलक्षित होती हैं।

———

४/५. अर्थविचार

अर्थ विचार–(सीमेंटिक्स)–आधुनिक भाषाविद् किसी भाषातात्विक विवेचन को ध्वनि विचार एवं पद विचार तक सीमित रखना चाहते हैं क्योंकि उनके मतानुसार शब्दार्थ पर विचार करना दर्शन एवं मनोविज्ञान का विषय है। किन्तु अर्थतत्व भाषा की आत्मा है, उसका विचार किये बिना किसी भाषा का विवेचन संपूर्ण नहीं होता। इसी कारण प्राचीन भारत में यास्क ने अपने 'निरुक्त' में तथा वैयाकरणों, नैयायिकों एवं मीमांसकों ने अपने शास्त्रीय ग्रन्थों में अर्थ तत्व का विवेचन किया था। पश्चिम में मैक्समूलर, कार्ल ब्रुगमैन, माईकेल ब्रील, उलमान आदि ने इस विषय पर महत्त्वपूर्ण कार्य किया है। हिन्दी में डा० हरदेव बाहरी का 'हिन्दी सीमेन्टिक्स' तथा विद्याभूषण विभु का 'अभिधान अनुशीलन' इस दृष्टि से पठनीय ग्रन्थ हैं।

कोष विज्ञान (लेग्जिकाग्राफी) इस विषय की महत्वपूर्ण शाखा है जिसकी ओर अब भाषाविद् पर्याप्त ध्यान दे रहे हैं। सन् १६३१ में प्रकाशित राल्फ लिलि टर्नर का 'नेपाली कोष' इस विषय का एक अद्वितीय ग्रंथ है जो भारतीय आर्य भाषाओं का प्रथम वैज्ञानिक नैरुक्तिक कोष माना जाता है।

१. अर्थ तत्व–

कुमाउंनी भाषा के संदर्भ में अर्थ-विचार की प्रशस्त सामग्री फैली पड़ी है जिसके व्यवस्थित अध्ययन का अभी श्री गणेश ही हुआ है. जैसा कि पूर्व विवेचन से स्पष्ट है। कुमाउंनी के प्रत्येक शब्द का एक निश्चित अर्थ, भाव अथवा विचार होता है जो उसका प्राण तत्व है। शब्द की सम्पूर्ण सत्ता उसी अर्थ पर निर्भर करती है। अर्थ विस्मृत होने पर उस शब्द का प्रचलन घटने लगता है और कालांतर में वह अवशेष (सरवाइवल) मात्र बनकर रह जाता है।

हम देखते हैं कि इन शब्दों का अर्थ सदा एक सा नहीं रहा है। धीरे धीरे उनमें परिवर्तन या विकास हुआ है। इसी अर्थ परिवर्तन की सम्यक् व्याख्या अर्थ-विचार के अन्तर्गत की जाती है। इस विषय में मुख्यतः तीन प्रश्नों पर विचार किया जाता है–

(१) किसी वस्तु, स्थान, व्यापार अथवा प्राणी का नामकरण किस आधार पर हुआ ?

(२) अर्थ परिवर्तन की दिशा क्या है ?

(३) इस परिवर्तन के प्रमुख कारण कौन से हैं ?

उदाहरणार्थ, 'कुमाऊँ' शब्द को ही लें जिसकी व्युत्पत्ति पर दूसरे अध्याय में विचार कर चुके हैं। सामान्य धारणा के अनुसार यह नामकरण कूर्मावतार पर आधारित है। कूर्मावतार 'कूर्मांचल' में हुआ, जिससे कालांतर में 'कुमूं' बन गया। आरम्भ में यह नाम एक छोटे से भूभाग का द्योतक था जिसे अब काली कुमाऊँ कहते हैं। चंद राजाओं के राज्य-विस्तार के साथ कुमूं>कुमाऊँ शब्द का अर्थ विस्तार हुआ जो ब्रिटिश शासन काल में कुमाऊँ कमिश्नरी नाम से गढ़वाली क्षेत्र तक का द्योतक हो गया।

प्रशासनिक सुविधा के कारण आजकल यह क्षेत्र केवल जिला नैनीताल एवं अलमोड़ा के भूभाग का द्योतक है। अर्थात् 'कुमाऊँ' शब्द के विकास में अर्थ विस्तार और अर्थ संकोच की दोनों प्रवृत्तियाँ लक्षित होती हैं जिनका प्रमुख कारण शासकीय है।

२. अर्थ परिवर्तन–

कुमाउंनी शब्द प्रयोगों में अर्थ परिवर्तन की अनेक दिशाएँ लक्षित होती हैं–

(१) कुछ शब्दों का अर्थ पहले की अपेक्षा अत्यन्त व्यापक हो गया है जिसे अर्थ-विस्तार (एक्सपेंशन आफ मीनिंग) कह सकते हैं। उदाहरणार्थ 'भोल' 'पोरूँ' जैसे शब्दों को लें। 'भोल' शब्द आगामी कल का द्योतक है–
उ भोल ब्याल बजार जालो (वह कल शाम बजार जाएगा)।
किन्तु इस शब्द का अर्थ आगामी अनेक दिनों तक विस्तृत हो गया है जिसका द्योतक एक वाक्य है–

भोल भोल कुने उ नी गयो (कल कल करते वह नहीं गया)।
'पोरूँ' शब्द सं० परश्वः से व्युत्पन्न है। इसलिए आगामी कल से तुरन्त अगले दिन के अर्थ में इसका व्याकरणिक अर्थ सीमित होना चाहिये। किन्तु 'पोरूं' शब्द लोक व्यवहार में अनन्त काल का सूचक है––
बेलि पोरूं करनै कामै नि भयो (कल परसों करते काम नहीं हुआ)।

कभी यह भूतकाल का भी द्योतक होता है–
''मैल पोरूं करि हाल छी''(मैंने परसों कर दिया था)।
इसी प्रकार का एक प्रयोग 'एक द्वी मैल' है जिसका विस्तार कुमाऊँ में एक दो मील के अतिरिक्त अनेक मीलों तक संभव है।

(२) 'गंध' और 'बास' जैसे शब्दों का प्रयोग संकुचित अर्थ में सीमित हो गया है जिसे अर्थ संकोच (कनट्रैक्शन आँफ मीनिंग) कह सकते हैं। 'गंध' शब्द हिन्दी में सुगंध और दुर्गन्ध दोनों के लिए प्रयुक्त होता है। किन्तु कुमाउंनी में उससे प्रायः किसी अप्रिय प्रकार की गंध का द्योतन होता है। कुमाउंनी में गंध द्योतक जितने शब्द हैं-'हन्तरैंनि'(कपड़ा जलने की गंध), 'खरखरैंनि' (मिर्च जलने की गंध), 'खौंकेनि' (पुराना चावल जलने की गंध) आदि उनसे सुगंध का कोई साहचर्य नहीं है।

'बास' शब्द सं० 'वास' से व्युत्पन्न है जिसका प्रयोग सुगंध अथवा दुर्गन्ध के लिए होना चाहिए। किन्तु कुमाउंनी में यह निश्चित रूप से दुर्गन्ध का द्योतक है। यही उसका अर्थ संकोच है।

(३) कुछ शब्दों में जैसे 'घर-कुड़ि' (मकान), डान (दण्ड) आदि में अर्थादेश (ट्रांसफरेंस आफ मीनिंग) हो गया है। आरम्भ में इनके मुख्यार्थ के साथ-साथ साहचर्य के कारण दूसरा गौण अर्थ भी चलने लगा जो कालान्तर में प्रमुख हो गया। अतः इन शब्दों को नया अर्थ प्राप्त हो गया है।

'घर' शब्द सं० गृह से व्युत्पन्न है जो मूलतः गृहस्थ के निश्चित निवास स्थान का द्योतक था। किन्तु कुमाउंनी में यह परिवारों के अर्थ में प्रयुक्त होता है—

''यो गौं में कतुक घर रूँनीं'' (इस गांव में कितने परिवार रहते हैं)। 'घर वार' 'घर वाल' रूप बनाकर भी इसका अथदिश होता है। 'कुड़ि' निश्चित मकान का द्योतक है जिसमें मनुष्य रहते हैं। 'घर' शब्द के साथ जुड़कर यह शब्द धन सम्पत्ति का द्योतक हो जाता है।

'डान' सं० 'दन्ड' से व्युत्पन्न है। पहले दन्ड>डन्डे से सजा दी जाती थी। इसलिए दन्ड शब्द एक विशिष्ट अर्थ में प्रयुक्त होता था। कालांतर में डन्डे के अतिरिक्त अन्य प्रकार से भी शारीरिक या आर्थिक सजा दी जाने लगी और शब्द का मूल अर्थ दूसरे अर्थ में रूढ़ हो गया।

कुमाउंनी में यह किसी प्रकार के सामान्य जुर्माने अथवा कर्ज चुकाने के अर्थ में प्रयुक्त होता है।

(४) कुछ शब्द संस्कृत से व्युत्पन्न होने पर भी हिन्दी आदि भाषाओं में पूर्णतः नवीन अर्थ ग्रहण कर चुके हैं और उनका मूल अर्थ लुप्त हो गया है। किन्तु कुमाउंनी में उनका मूल अर्थ अभी तक सुरक्षित है। इन शब्दों में परिवर्तन की गति उतनी तीव्र नहीं है।

उदाहरणार्थ, 'गुसैं' और 'साग' शब्दों पर विचार करें। 'गुसैं' शब्द संस्कृत 'गोस्वामी' से व्युत्पन्न है जिसका मूल अर्थ था 'गायों का स्वामी'। कालान्तर में यह माननीय समृद्ध व्यक्ति के लिए प्रयुक्त होने लगा। हिन्दी में इसने 'गुसाईं' का रूप धारण कर लिया जो जातिवाचक रूप में प्रयुक्त होता है। किन्तु कुमाउंनी के 'गुसैं' शब्द के रूप में इसका मूल अर्थ विद्यमान है। ग्रामीण लोग अपने से बड़े धनी-मानी व्यक्तियों को 'गुसैं ज्यू' कहकर सम्बोधित करते हैं जिसमें बड़प्पन का भाव सन्निहित हैं। ग्रामीण परिवारों में स्त्रियों के लिए प्रयुक्त 'गुस्याणि' शब्द इसी कारण आदर सूचक है।

इसी प्रकार 'साग' शब्द संस्कृत 'शाक' से व्युत्पन्न है। हिन्दी में इसने साग सब्जी का रूप ग्रहण कर लिया है जिसमें कच्ची, पक्की सभी तरह की सब्जियाँ सम्मिलित हैं। किन्तु कुमाउंनी में 'साग' केवल पकाई हुई सब्जियों के लिए प्रयुक्त होता है। इसने संस्कृत के मूल अर्थ को प्रायः सुरक्षित रक्खा है।

(५) कुछ शब्दों में अर्थापकर्ष हुआ है। अर्थात् पहले की अपेक्षा उनके अर्थ में कुछ हीनता आ गई है जैसे 'डूम' 'खसिया' और 'जजमान' शब्द हैं।

'डूम' (डोम) आदिवासियों के वंशज हैं जो अत्यंज जातियों में परिगणित होते हैं। इन्हें अब हरिजन अथवा शिल्पकार कहते हैं क्योंकि डूम शब्द हीनता द्योतक होने के कारण समाज में इनकी तिरस्कृत स्थिति का द्योतक था। 'जजमान' वैदिक शब्द यजमान से व्युत्पन्न है जो मूलतः यज्ञ करने वाले के लिए प्रयुक्त होता था। अब सामान्य पौरोहित्य के अर्थ में प्रयुक्त होता है। ''जजमान'' रूप में प्रयुक्त होकर उसका अर्थ गिर गया है। इसी श्रेणी का 'पातर'-पातृर शब्द वेश्या के

लिए तिरस्कार के अर्थ में प्रयुक्त होता है। 'पात्र' के मूल अर्थसे इसका अपकर्ष हो गया है।

(६) कुछ शब्द तत्सम-तद्भव रूपों में चलने पर भिन्न भिन्न अर्थों के सूचक हैं। जैसे ब्राह्मण-बामण, साधु-साहु, श्राद्ध-सराध, गर्भिणी-गाभिन आदि। ब्राह्मण शब्द से सामाजिक मान्यता एवं पद मर्यादा का बोध होता है किन्तु 'बामण' उपेक्षा के अर्थ में प्रयुक्त है। 'साधु' सामान्य साधु संत का वाचक है किन्तु 'साहु' शाह, सौंज्यू बन कर व्यापारियों की विशिष्ट जाति का बोधक हो गया है जो कुमाउंनी समाज में अपने आचार-विचार, बोलचाल एवं धन सम्पन्नता के कारण प्रतिष्ठित हैं।

'श्राद्ध' पितृ तर्पण क्रिया के अर्थ में प्रयुक्त होता है जिसे कुमाऊँ वासी आचार सहित सम्पन्न करते हैं। किंतु उसी का तद्भव 'सराद' अप-शब्द के रूप में प्रचलित है--

"वील सराद जसो करि दे" (उसने श्राद्ध जैसा कर दिया)।

वाक्य का तात्पर्य है उसने खूब गाली गलौज की। 'गर्भिणी' किसी स्त्री की गर्भावस्था का द्योतक है किन्तु 'गाभिन' शब्द मादा पशुओं के गर्भ-धारण तक सीमित है।

(७) कुमाउंनी शब्दावली में भेदीकरण का नियम (लॉ ऑफ डिफरेंसिएशन) बहुत काम करता है। भाषा ज्यों ज्यों विकास करती है उसके शब्दों में अर्थगत भेद बढ़ने लगता है। इस कारण न केवल पर्यायवाची शब्दों में भेद किया जाता है बल्कि समूह वाचक शब्दों में भी अन्तर हो जाता है।

पहरा देने के अर्थ में 'पहरयूंण' और 'फाम करण' दो शब्द प्रचलित हैं। किन्तु 'पहरयूंण' अपने रूढ़ अर्थ में प्रचलित है। 'फाम करण' में अधिक सावधानी और जागरूकता का भाव अपेक्षित है।

'आँच' चूल्हे की लपट को कहते हैं। इसका कार्य-भेद 'चीस' और 'राफ' शब्दों द्वारा प्रकट किया जाता है। लपट छूने की अनुभूति को 'चीस' कहते हैं। दूर से उष्णता की प्रतीति के लिये 'राफ' शब्द का प्रयोग करते हैं। इस पुस्तक के चौथे अध्याय में अर्थ व्यंजकता के अन्तर्गत इस प्रकार के विशेष उदाहरण द्रष्टव्य हैं। प्रसिद्ध भाषाविद् ब्रील का कथन है कि जो जाति जितनी अधिक सभ्य होगी उसकी शब्दावली में उतना ही अधिक भेदीकरण होगा।

३. पर्यायवाची शब्द–

कुमाउंनी में पर्यायवाची शब्द एकार्थी न होकर समानार्थी हैं। जैसे अग्नि के लिए 'आग' और 'भिनेर' दो शब्द हैं जो क्रमशः संस्कृत 'अग्नि' और 'वैश्वानर' से व्युत्पन्न हैं। किन्तु ये एक दूसरे के पूर्ण पर्याय नहीं हैं। हथ चक्की के लिये प्रयुक्त 'चाख' और 'जानर' शब्दों में सूक्ष्म अर्थ भेद है। इसी प्रकार भुट्टे के लिए प्रयुक्त 'जुनाल, 'ब्वाध' 'काकुनी' जैसे पर्यायवाची शब्दों में अंतर है जिसे कठिनाई से समझा जा सकता है। बाँस की चटाई के लिये 'महट', 'फिण' और 'मोंट' जैसे शब्द चलते हैं। कुमाउंनी शब्दावली इस दृष्टि से पर्याप्त समृद्ध है। इधर हिन्दी तथा अन्य भाषाओं के सम्पर्क से कुमाउंनी के पर्यायों में वृद्धि हो रही है। भाषाविद् टकर ने ठीक ही कहा है कि शब्द तो एक प्रकार का सिक्का है जिसका मूल्य निश्चित नहीं रहता। बोलने वाले की दृष्टि में उसका चाहे जितना मूल्य हो, किन्तु उसका वास्तविक मूल्य श्रोता की अर्थ-ग्रहण क्षमता पर निर्भर करता है। अर्थात् श्रोता अपनी योग्यता के अनुसार ही बात समझता है।

४. व्युत्पत्ति (इटिमॉलॉजी)–

शब्दों की उत्पत्ति अथवा व्युत्पत्ति का अध्ययन करना भाषा-विज्ञान का रोचक विषय है जिसे अर्थविचार का प्रमुख अंग माना जाता है। इसमें किसी शब्द के आरंभ तथा मूल धातु पर विचार करते हुए ध्वनि और अर्थ की दृष्टियों से उसका इतिहास दिया जाता है। जॉन बीम्स, रेवरेंड केलॉग्स, रूडोल्फ हार्नले, जॉर्ज ग्रियर्सन, जूल ब्लाख तथा सुनीति कुमार चैटर्जी प्रभृति विद्वानों ने हिन्दी तथा भारतीय भाषाओं के व्याकरणिक रूपों पर व्युत्पत्ति की दृष्टि से उल्लेखनीय कार्य किया है।

पहाड़ी भाषाओं में इस प्रकार का ऐतिहासिक तथा तुलनात्मक अध्ययन टर्नर ने अपनी 'नेपाली डिक्शनरी' में किया था जिसके द्वारा अनेक कुमाउंनी शब्दों के इतिहास पर प्रकाश पड़ता है। इस विषय के अंतर्गत चूंकि किसी शब्द का सभी दृष्टियों से पूरा जीवन चरित्र ही प्रस्तुत करना पड़ता है, इसलिए यह अत्यन्त श्रमसाध्य कार्य है।

कुमाउंनी में व्युत्पत्तिमूलक अध्ययन की एकाधिक दिशाएं संभव हैं जिनमें तीन दिशाओं का यहां संकेत कर सकते हैं—

(१) स्थानीय नामों का अध्ययन।

(२) जातीय नामों का अध्ययन।

(३) ग्राम देवताओं के नामों का अध्ययन।

१. स्थानीय नामों के अन्तर्गत पर्वतों, नदियों, धार्मिक स्थानों, कसबों तथा ग्रामीण नामों के इतिहास पर विचार संभव है कि उनके यही नाम क्यों प्रचलित हुए ? 'गंगा' यहाँ सामान्य नदी वाचक शब्द है। जिस स्थान से होकर नदी बहती है उसी का द्योतक शब्द 'गंगा' के पूर्व जोड़ देते हैं। जैसे–कुटी गंगा, धौली गंगा, गोरी गंगा आदि। 'भीमताल' नाम पाण्डव भीम के नाम पर आधारित है जिन्होंने स्थानीय जनश्रुति के अनुसार यहाँ भीमेश्वर का मन्दिर स्थापित किया। 'नैनीताल' नैनादेवी अथवा नन्दा देवी के नाम पर प्रसिद्ध है जो कुमायूं की सर्वमान्य स्थानीय देवी है। "बौरारौ' नाम बौर जाति के प्रभुत्व पर आधारित है। 'महराकोट' महरा जाति का निवास स्थान होने के कारण प्रसिद्ध है। 'हलद्वानी' नाम हळ्दू वृक्ष की अधिकता के कारण पड़ा। किसी मलुवा नामक वीर के द्वारा स्थापित होने से 'मलुवाताल' नाम प्रचलित हुआ।

कुछ स्थानीय नामों की व्युत्पत्ति पौराणिक स्रोतों पर आधारित है। दानपुर का 'नाकुरी' स्थान प्राचीन नाग वंश का केन्द्र माना जाता है। यह 'नागपुरी' रहा होगा जो बोलचाल में 'नाकुरी' हो गया। 'गंगोली' शब्द की व्युत्पत्ति 'गंगावली' से है। रामगंगा और सरयू दो नदियों के बीच बसे होने के कारण पहले इसे 'गंगावली' कहा गया जो भाषागत प्रवृत्तियों के आधार पर 'गंगोली' रूप में विकसित हुआ। 'अलमोड़ा' नगर का नाम किलमोड़ा, भिळमोड़ा, जैसे नामों के शब्द साम्य पर आधारित कहा जाता है। 'छखाता' षष्टिखात से व्युत्पन्न है जिसका शाब्दिक अर्थ है "साठ तालाब"। इसी प्रकार 'बागेश्वर' स्थान का नामकरण दो प्रकार से व्युत्पन्न किया जाता है—(१) वाक्+ईश्वर=बागेश्वर, (२) व्याघ्र+ईश्वर=व्याघ्रेश्वर $\leqslant$ बागेश्वर।

पौराणिक कथा है कि जब महादेव और पार्वती यहाँ रहने के लिए आए तो आकाशवाणी द्वारा शिव की प्रशंसा की गई। इसलिए वाक्+ईश्वर अर्थात् बागेश्वर नाम पड़ा। दूसरी कथा के अनुसार चूंकि शिव ने

व्याघ्र का रूप धारण कर यहाँ पार्वती रूपी गाय पर झपटना चाहा था इसलिए मार्कण्डेय ऋषि ने शिव की स्तुति करते हुए कहा कि तुम्हारा नाम व्याघ्रेश्वर भी है। यही कालांतर में 'बागेश्वर' हो गया।

कुमाऊँ में इस कोटि के स्थानों की कमी नहीं जो किसी न किसी देवता अथवा ऋषि के नाम पर आधारित न हों। इस दृष्टि से अठकिसन का यह कथन आज तक सत्य है कि कुमाऊँ की प्रत्येक पाषाण शिला और नदी किसी देवता अथवा महापुरुष से सम्बद्ध है जिसकी अपनी विशिष्ट दन्त कथा बन चुकी है। यहाँ की कठोर प्रकृति इस लोक विश्वास का प्रमाण है कि सर्वात्मा ईश्वर का निवास यहीं पर है।[1]

२. कुमाऊँ में भिन्न भिन्न स्थानों से अनेक जातियाँ आकर बसती गयीं। अतः स्थानीय निवासियों के कुल नाम उनका जातीय इतिहास जानने में सहायक होते हैं। कभी जातीय नामों द्वारा व्यक्तियों के मूल व्यवसाय का भी ज्ञान होता है। 'नेगी', 'हरबोला', 'फुलारा', 'ततरिया', 'बड़ुवा', 'दड़म्वाल', 'भंडारी', 'जगाती,' 'टमटा' आदि जातीय नाम इसी प्रकार के उदाहरण हैं।

चन्द राजा जिसको 'नेग' अर्थात् कर वसूल करने का अधिकार देते थे वह 'नेगी' कहलाता था। ऐसा व्यक्ति ब्राह्मण, राजपूत कोई भी हो सकता था। आगे चलकर 'नेगी' विशिष्ट जाति बन गई। चन्द राजाओं के दरबार में जो लोग ब्राह्म मुहूर्त्त में हरिबोल, हरिबोल कह कर दूसरों को जगाते थे उनका नाम 'हरबोला' पड़ गया। राज दरबार में फल-फूल लाने वाले 'फुलारा' नाम से प्रसिद्ध हुए। पानी गरम करके देने वाले 'ततरिया' कहलाए (तात<तप्त)। टोकरी बनाने का काम करने

---

१ शेरिंग द्वारा "वेस्टर्न तिब्बत एण्ड ब्रिटिश बॉर्डर लैंड" में उद्धृत—पृ. ४. "ईच रॉक और रिवूलेट इज डेडीकेटेड टु सम डिटी, और सेंट, एण्ड हैज़ इट्स ओन एप्रोप्रियेट लीजेंड, नेचर इन हर वाइलडेस्ट एण्ड मोस्ट रगेड फार्म्स बीयर्स विटनेस टु दी करेक्टनेस ऑफ द बिलीफ़ दैट हीयर इज़ द होम ऑफ द ग्रेट गॉड।"

वाले 'बड़िया', बड़ुवा' कहलाने लगे। 'दड़म्बाल' शब्द दाड़िम+वाला से बना है। राजा के भंडार की देखभाल करने वाले 'भंडारी' कहलाने लगे। 'जगातीं', जकात (कर) से व्युत्पन्न है। ये लोग कर वसूल करने का काम करते थे। 'टमटा' संभवतः 'ताम्रकट' से व्युत्पन्न है। ये लोग अभी तक तांबे के बर्तन बनाने का काम करते हैं।

३. कुमाऊँ के लोक देवताओं (फोकडिटीज) में 'गंगनाथ', 'भोलानाथ' 'सैम', 'एड़ी', 'छुरमल्ल', 'कलविष्ट', 'खेतरपाल', 'हरू', 'ग्वाल्ल', 'चौमूं', 'भूमियाँ' आदि प्रसिद्ध हैं। इनमें कुछ नामों की उत्पत्ति स्वतः स्पष्ट है। "नाथ" नामधारी देवता नाथ संप्रदाय के व्यापक प्रभाव के प्रमाण हैं जो मध्यकाल में गढ़वाल से लेकर कुमाऊँ तक फैला था। 'भूमियाँ' भूमि पालक देवता हैं और 'खेतरपाल' 'क्षेत्रपाल' का अपभ्रंश रूप है। 'चौमूं' चौपायों का देवता है जो संभवतः 'चतुर्मुख' शब्द का अपभ्रंश है, जिसका तात्पर्य है चारों ओर देखने वाला।

इसी प्रकार अन्य देवताओं के विशिष्ट नामकरण की व्याख्या संभव है।

कुमाउंनी भाषा के इतिहास में व्युत्पत्ति का क्या महत्व है इसे उपर्युक्त विवेचन से समझा जा सकता है। इस प्रकार के शब्दों का अर्थ-मूलक इतिहास देखने से स्थानीय संस्कृति और विचार-परम्परा के न जाने कितने धूमिल पक्षों का उद्घाटन होगा।

-----

५. कुमाउंनी की बोलियाँ

कुमाउंनी भाषा की ध्वनि रचना, शब्द रचना, पदरचना और वाक्य रचना का विश्लेषण करने के उपरान्त अब उसकी स्थानीय बोलीगत विशेषताओं पर विचार करना चाहिये। इस पुस्तक के तीसरे अध्याय में कुमाउंनी के मानक रूप का स्पष्टीकरण करते हुए देखा गया था कि कुमाउंनी में क्षेत्रीय भेदों के अतिरिक्त जातिगत स्तरीय भेद भी विद्यमान हैं। जातिगत भेदों की ओर सर्व प्रथम पंडित गंगादत्त उप्रेती ने ध्यान आकर्षित किया था। उन्होंने अपनी पुस्तक 'पर्वतीय भाषा प्रकाशक' में सत्रह स्थानीय बोलियों के उदाहरण प्रस्तुत किये। ग्रियसर्न ने अपने भाषा सर्वे में कुमाउंनी के भाषा रूपों पर प्रकाश डालते हुए इसकी तेरह बोलियों का सोदाहरण उल्लेख किया जो स्थानगत भेदों पर आधारित हैं।

श्री उप्रेती और ग्रियसर्न द्वारा विवेच्य उदाहरण चूंकि लगभग ७०-७५ वर्ष पुराने हो चुके हैं, अतः यह कहना कठिन है कि वे वर्त्तमान संदर्भ में कहाँ तक समीचीन होंगे। कोई भी भाषा हो, वह निरंतर प्रवाहशील होती है। समाज और संस्कृति के बदलते हुए संदर्भो में उसका ,विस्तार होता है। इसलिये जातिगत एवं स्थानगत आधारों के अतिरिक्त समाज के गतिशील ऐतिहासिक आधारों को उसके विवेचन में स्थान देना चाहिये।

अतः सर्वप्रथम उक्त विद्वानों द्वारा निर्दिष्ट कुमाउंनी के विभिन्न उदाहरणों की तुलना वर्त्तमान कालिक कुमाउंनी के उदाहरणों से करनी होगी। तदुपरान्त इस कालावधि में विकसित भाषागत प्रवृत्तियों का विश्लेषण करते हुए कुमाउंनी की वर्त्तमान बोलियों का वास्तविक स्वरूप निर्धारण किया जा सकता है।

---

(१) 'लिंग्विस्टिक सर्वे ऑफ इन्डिया'—खंड ६, भाग ४, पृ० ११०, प्र० सं० १९१६।

रूपान्तरों को तुलना–

इस दृष्टि से लेखक ने आज कुमाउंनी के उन्हीं क्षेत्रों के कुछ उदाहरण प्रस्तुत किये हैं जिनसे उक्त विद्वानों ने अपने उदाहरण प्रस्तुत किए थे। इन उदाहरणों की तुलना करने पर कुमाउंनी के परिवर्तनशील स्वरूप पर प्रकाश पड़ेगा।

१. गंगादत्त उप्रेती (पाली पछाऊँ)–१९०० ई०

(क) "द्वीयै झणा गौं मजि गया। येक बुड़ि दगड़ि भेट है। द्वीयै झणों ले बुड़ि हांति कय कि तु हमरि लड़ै देख दे, धै को जितुंछ। बुड़ियैलै कय, 'म्यर नाति गोर भैंस चराहणि बण जा रौ छ, वे कणि रोट दे हणि जानू, पछा तुम द्वी झणों कि लणैं कणि देखुला।' यतुक कबेर बुड़िय ले द्वीयै पैकों कणि लकणां के बोझ सुद्दि आपण कानाम धर दि। आपण नाति कणि जै बेर रोट दि।"

(ख) तल्ला गिवाड़ (पाली पछाऊँ) –१९७६ ई०

"द्विय झन बस्ति हैं नहै गया। वाट में उनूकैं एक वुणि मिली। द्विनूं लैं वुणि हैं कय तू हमर लड़ै देखि बेर अन्ताज करि दैं। वुणियलैं क–म्यर नाति जंगव म गोर भैंस चराहैं जैं रौ। उँ कैं र्वाट दि हैं जानू। पैं जैं तुम द्विनूंक लड़ै देखूंल। एतु कैं बेर वुणिय लैं द्वियं पैकुं कैं लकड़क गौढव दगैं कनम धरिली और अपण नातिक नजिक जैं बेर उंकैं र्वाट दि दी।"

(ग) हिन्दी रूपान्तर —

(दोनों जने बस्ती को गये। मार्ग में उनको एक बुढ़िया मिली। दोनों ने बुढ़िया से कहा–"तुम हमारा युद्ध देख कर परीक्षा कर दो"। बुढ़िया ने कहा–" मेरा पोता गाय भैंस चराने को बन में गया हुआ है। उसे रोटी देने जाती हूँ। पीछे तुम दोनों का युद्ध देखूंगी।" इतना कह कर बुढ़िया ने दोनों वीरों को लकड़ी के बोझ सहित अपने कंधे पर रख लिया और अपने पोते के समीप जाकर उसे रोटी दे दी।)

२. जार्ज ग्रियर्सन–(पछाईं)–१९१६ ई०

(क) "कै आदिमक द्वी च्यल छिय। अर उनूं मजि छ्वटैल अपण बब हांति कय-इ बवा जाजत मुजि है जो, बांट मैं कणि मिलछ उ मैं कणि वदे। अर वेल उनरा बीचम अपणि जाजात बांटि दिय। अर भौत

दिन नि हृछिय तन र्‍यैलैल सबै कुछ यक बट करि बेर प देश चलै गय अर वति लुङाडु पनो मजि रहै बेर अपण सबै माल टाल उड़ै दिय। अर जब उ सबै कुछ खर्च करि बैठ, वे देशम बड़ अकाल पड़ अर उ तङ हृण बैठ"।

(ख) द्वारा हाट–(पाली पछाऊँ)—१९७६ ई०

"क्वे मैंस का द्वि चैल छी। उनमें क्ष छोटल बापू हृण क्य-बापू आपण संपति में जो मैर हक छू उकै मिकण दि दियै। तब वील उकण अपण संपति वांट दी। कुछ दिन बाद छोट चैल सब कुछ इकठ कर बेर परदेश ने गयै। वा वूल लुच्चापन कर वेर अपण सारे संपति फूंक दी। जब वूल सब फूक दी तो ऊ देश में अकाल पड़ गय और व तंग हृण लाग गय।"

(ग) हिन्दी रूपान्तर–

(किसी मनुष्य के दो पुत्र थे। उनमें से छोटे ने पिता से कहा–"पिता जी अपनी संपति में जो मेरा अंश हो वह मुझे दे दीजिए। तब उसने उनको अपनी संपत्ति वांट दी। कुछ दिनों वाद छोटा पुत्र सब कुछ इकट्ठा करके परदेश चला गया। वहाँ लुच्चापन करके अपनीं सारी संपत्ति फूक दी। और जब उसने सभी फूंक दिया तो उस देश में बड़ा अकाल पड़ा और वह तंग होने लगा।)

उक्त रूपान्तरों से ज्ञात होगा कि शब्द रचना की दृष्टि से एक ही बोली में कालक्रमानुसार पर्याप्त अन्तर उत्पन्न हो जाता है जिसका प्रमुख कारण न केवल भौगोलिक अथवा जातीय है बल्कि वक्ता का सामाजिक स्तर, उनकी शिक्षा दीक्षा, तथा उस पर पड़ने वाले बाह्य प्रभाव भी होते हैं।

कुमाऊं के अन्य क्षेत्रों से इस प्रकार के रूपान्तर एकत्र करने पर उनमें पर्याप्त उच्चारणमूलक, ध्वनितात्विक तथा व्याकरणिक विशेषताएँ लक्षित होती हैं। इन्हीं विशेषताओं के आधार पर स्थानीय बोलियों पर विचार करना चाहिये। केवल शब्द भंडार बोलियों तथा भाषाओं का भेदक लक्षण नहीं होता। इसके निर्धारण हेतु रूपतात्विक लक्षणों पर निर्भर रहना ही शास्त्रीय विवेचन के लिए उपयुक्त है।

वर्गीकरण--

उच्चारण, ध्वनि तत्व, और रूपरचना के आधार पर इस समय कुमाउंनी की १२ प्रमुख बोलियाँ निश्चित होती हैं जिन्हें निम्नलिखित चार वर्गों में विभाजित कर सकते हैं--

१. **उत्तरी कुमाउंनी वर्ग--**

(१) जोहारी (भोटिया)।

२. **पश्चिमी कुमाउंनी वर्ग--**

(१) खस परजिया, (२) पछाईं, (३) फल्दाकोटी, (४) चौगर्खिया, (५) गंगोई, (६) दनपुरिया।

३. **पूर्वी कुमाउंनी वर्ग--**

(१) कुमय्याँ, (२) सोर्याली, (३) सीराली, (४) असकोटी।

४. **दक्षिणी कुमाउंनी वर्ग—**

(१) री चौभैंसी।

उत्तरी कुमाउंनी का क्षेत्र जोहार और दारमां के इलाके हैं। 'जोहारी' अथवा भोटिया बोली इस क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करती है। पश्चिमी कुमाउंनी का क्षेत्र बारा मंडल, पाली पछाऊँ, गंगोली और दानपुर के इलाके हैं। 'खस परजिया' बोली इसका प्रतिनिधित्व करती है। पूर्वी कुमाउंनी काली कुमाऊं, सोर, सीरा, तथा असकोट केक्षेत्रों में बोली जाती है। 'सोर्याली' बोली इसका प्रतिनिधित्व करती है। दक्षिणी कुमाउंनी जिला नैनीताल के पहाड़ी भागों च्यानीरी, छखाता, रामगढ़, धनियाँ कोट, पहाड़ कोटा आदि स्थानों में तथा आंशिक रूप में भाबर-तराई तक प्रयुक्त होती है। री और चौभैंसी पट्टियों के आसपास प्रयुक्त बोली को इसका प्रतिनिधि मान सकते हैं।

कुमाउंनी के उक्त चार वर्गों के मुख्य भेदक लक्षण इस प्रकार हैं—

(१) कुमाउंनी को हिन्दी की तुलना में जो ओकारान्त बहुला कहा जाता है वह पूर्वी कुमाउंनी के आधार पर सिद्ध होता है। पश्चिमी कुमाउंनी में स्वरान्त रूपों की अपेक्षा व्यंजनान्त रूप अधिक मिलते हैं। पूर्वी वर्ग में द्वित्व की प्रवृत्ति है जबकि पश्चिमी वर्ग में यह प्रवृत्ति कम है। उत्तरी कुमाउंनी में संयुक्त तथा वियक्त दोनों रूपों में 'ह' का प्रयोग अधिक होता

है। 'श' के स्थान पर 'स' का प्रयोग किया जाता है। दक्षिणी कुमाउंनी में शब्दों की ओकारान्त तथा आकारान्त प्रवृत्तियाँ द्रष्टव्य हैं तथा "श" का भी प्रयोग होता है।

प० कुमाउंनी	पू० कुमाउंनी	उ० कुमाउंनी	द० कुमाउंनी	हिन्दी
म्यल	म्यलो	मेला	मेला	मेला
ठुल	ठुलो	ठुली	ठुल	बड़ा
गोय, ल्यूंल	गयूं, ल्यूंलो	ल्हौंल	लि ऊंल	गया, लाउंगा
पढ़न छि	पड़न छि	पनरौ छि	पढ़न छि	पढ़ता था
जाँछ	जान्छ	झान्छ	जाँछ	जाता है
सल्ला	शल्लो	सल्लाक	शल्ला	सलाह
भै	भै	भै	भै	भाई
नान	नान	नानो	नान	छोटा
हम	हम	हामि	हम	हम
रौ, अन्यार	रयो, अन्यारो	अन्हयार	अन्यार	रहा, अँधेरा
त्यर	तेरो	त्यड़	त्यर	तेरा
सबूंल	सबन ले	शबनल	सबूं ले	सबने
करण	करनो	कनो	करणो	करना
गैण	गैणो	गैनों	गैण	गाना
और	और	हौर	और	और
छुं	छुं	छौं, (झौं)	छूं	हूँ
जौंया	जूँल्या	जौंल्या	जौंल	जुड़वाँ।

(२) ध्वनि तत्वों की दृष्टि से कुमाउंनी के उक्त चारों वर्गों में स्थानगत भिन्नताएँ हैं। पूर्वी वर्ग में शब्दों के अन्त अथवा मध्य में जहाँ 'न' है वहाँ पश्चिमी वर्ग में उसका 'ण' अथवा 'ड़' होता है। उत्तरी वर्ग में सामान्यत: इसका 'ड़' रूप प्रयुक्त होता है। पूर्वी वर्ग में शब्द का मध्यवर्ती व्यंजन 'ल' पश्चिमी वर्ग में अर्द्ध स्वर 'व' अथवा अ, इ, उ, स्वरों में बदलता है। 'ल' का 'र' भी हो जाता है। इसलिये पश्चिमी कुमाउंनी में हर (हल), होटर (होटल), भ्योव (भ्योल = ढलान) शब्द रूप मिलते हैं।

पूर्वी वर्ग में तालव्यीकरण (पैलेटाइजेशन) की विशेष प्रवृत्ति है जो पश्चिमी वर्ग में नहीं मिलती। पश्चिमी वर्ग में प्रयत्न लाघव के कारण व्यंजनों का अथवा कारक चिन्हों का प्रायः लोप होता है। इसलिये 'ग्यूं' (गेहूँ), न्हा' (नहीं हैं), 'कौ' (कहा), जैसे रूप प्रचलित हैं। पूर्वी वर्ग में ये शब्द रूप क्रमशः 'ग्यूंन' 'न्हाति' अथवा 'क्यो छ' होते हैं। आद्य व्यंजन 'क' का 'ग' हो जाना भी इसकी विशेषता है। उदाहरण हैं--

प० कुमाउंनी	पू० कुमाउंनी	उ० कुमाउंनी	द० कुमाउंनी	हिन्दी
पाणि	पानि	ती	पाणि	पानी
हुणियाँ	हुनिया	हुँड़िया	हुणिया	हूण
बण	बन	बंड़	बण	वन
कुणन	कुनान	लुक्तनन	कूंनी	कहते
वैणि	वैनि	बैंड़ि	बैंणी	बहन
खाण	खानो	खाड़	खाण	खाना
श्यैणि	श्यैनि	श्याड़ि	स्यैणि, सैणि	स्त्री
यसि कै	इस्सी कै	ऐनै रुक्तै	यस कै	इसी तरह
कावो	कालो	वम्यै	काव	काला
है गो	है गयो	कल्ली	है गयो, है गो	हो गया
करँछ	कर्छ	स्युताँ	करौंछ, करंछ	करता है
करन छीया	करन छ्या	करन थ्या	करन छी	करते थे।

(३) कुमाउंनी के बोलीगत वर्गीकरण का मुख्य आधार रूप रचना की विविधता है जो एकाधिक रूपों में लक्षित होती है। संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, क्रिया विशेषण तथा क्रिया रूपों की बनावट में तो यत्किंचित भेद है ही, कारक चिन्हों के प्रयोग में भी अनेकरूपता विद्यमान है। शब्दों की रूप रचना में ण–न, ल–व, क–ग के ध्वनि परिवर्तन की स्थिति उपर्युक्त उदाहरणों में देखी जा सकती है।

सर्वनामों में एक वचन उत्तम पुरुष का मान्य रूप पश्चिमी वर्ग के अंतर्गत 'मैं' है जो अन्य भागों में 'मि', 'मू' रूपों के साथ विकल्प से प्रयुक्त होता है। भूककालिक क्रिया रूप 'छ' भी पूर्वी वर्ग में 'थ' है। उत्तरी वर्ग के क्रिया रूपों में अधिक लाघवता है, किन्तु दक्षिणी वर्ग में स्वरों का अधिक प्रयोग है। क्रिया रूपों का सरलीकरण दक्षिणी भागों की विशेषता है।

भेदात्मक दृष्टि से स्थान वाचक क्रिया विशेषण उल्लेखनीय हैं। उत्तर और पूर्वी क्षेत्रों में यदि कथ, जथ, इथ, उथ जैसे रूप प्रचलित हैं तो अन्य भागों में काँ, जाँ, याँ, वाँ, जैसे रूप हैं—

प० कुमाउंनी	पु० कुमाउंनी	उ० कुमाउंनी	द० कुमाउंनी	हिन्दी
जाणी छ, जाणा री छ	जान्नी छ, जान मर्यौछ	जाआँ रौंछ	जाण री छ	जाता है
पिङव, पिङइ	पिङल, पिंगलि	पिंगली	पिंहल, पिंहलि	पीला, पीली
बुति	पिति	खच्ची, जा	बुति	से
तैं बटि	तैं वै	उजा खच्ची	तैं है बेर	उससे
त्वी ह्वणि	त्वी थैं	त्वी हाती	तु थैं	तुझको
द्वी, द्वीवै	दुवे	द्वीयें	द्वी	दोनों
गौंहुणि, गौंमजि	बस्ती खन; खौं	गौंक तौप	बस्ती सूं	गाँव को
चरूण हूणि, चराहणि	चरौंना खन, चरौंन खिं	चरौंन	चरूना सूं, चरूण में	चराने
जैरछ; जा री छ	जाइ रौछ, जै रयोछ	जै रछ	जाइ रौछ	गया है
येक है येक	एक है एक, यक है यक	एक है बेर एक	यक है यक	एक से एक
छिय; रूं छिय	छ्या, रूंछ्या	थी	छिया	था
बव थैं कय	बबा थैं कयोछ	बासैं लुक्सो	बाब थैं कयो	पिता से कहा।

(४) शब्द समूह की दृष्टि से भी कुमाउंनी के क्षेत्रीय भेदों की स्थिति स्पष्ट होगी। जोहार, दारमाँ की ओर प्रयुक्त भोटिया बोळी के अनेक शब्द सामान्य कुमाऊंवासियों के लिये अपरिचित लगते हैं। पूर्वी और पश्चिमी कुमाउंनी में भी शब्दगत भेद हैं– हङ' (खेत), 'लगिल' (लता) 'पिस्यू' (आटा), 'म्वाव' (घर) यदि पश्चिमी वर्ग के विशिष्ट शब्द हैं तो 'जानर' (चक्की), 'भौंराड़ौं' (चकला), 'घुळो' (आटा) पूर्वी वर्ग के ऐसे ही शब्द हैं। दक्षिणी वर्ग में हिन्दीं की सामान्य शब्दावली के बहुळ प्रयोग की प्रवृत्ति है।

परिचय एवं उदाहरण—

(१) जोहारी–

जोहार परगने की बोळी है जो उत्तर में तिब्बती से प्रभावित है। द्विभाषी होने के कारण यहाँ के निवासी एक ओर तिब्बती–बर्मी प्रभावित भाषा बोलते हैं जिसे भोटिया कहते हैं। दूसरी ओर तिब्बती–बर्मी मिश्रित कुमाउंनी बोलते हैं जिसे जोहारी कहते हैं। इस समय जोहारी का केन्द्र मुंश्यारी थळ, मदकोट और तेजम नामक स्थान हैं।

इस बोली में 'र' का का प्रायः 'ड़' हो, जाता है। अंतिम स्वर का उच्चारण नहीं किया जाता– त्यर > त्यड़ (तेरा), च्यल>च्यल् (लड़का)। भूतकाल में क्रिया इकारान्त होती है– 'गँणा छि' (गा रहे थे), 'पनरौछि' (पढ़ता था)।

(क) उदाहरण–गंगादत्त उप्रेती–

"शबनल आफि थैं हेल्ला शर्मजि बेर, परमेश्वर थैं बिंति कै, हौर कै कि हे परमेशर ! हामि तेरा भवीं लोक मांशब है नानों छौं। यू शनसार मा क्वै बातक घमनं मैंसन थैं नि कनो चैंन। एक है बेर, एक ठुलो हौर एक है एक नानो छ। परमेशर क भवीं लोक मां हामि सब किड़ जशा (ज्ञों) छौं।"

(ख) ग्रियर्सन–

"तब ल्हेक वीकौ ज्याठो च्यल् गाड़ा में थी। हौर जब वी अै हौर थड़क नजीक पुजि त वील गँनों बजौनो हौर नाचना को वचन सुनि। हौर बीळ श्रापन खुरतुरियान म है एक थैं भट्यै बेर सुद्यैकि इनक की है रै छ।

बील बीहै कै कि त्यड़ भै अै रैछ हौर त्यड़ बाबुल खबै लिहवं कै राख छ—"

(२) **खस परजिया—**

यह बोली बारामंडल परगने में बोली जाती है और कुमाउंनी की मानक बोली है जिसे अल्मोड़ा–रानीखेत के पढ़े लिखे एवं ग्रामीण लोग बोलते हैं। इस क्षेत्र में पुराने १२ मण्डल थे—(१) स्यूनरा, (२) महरूड़ी, (३) तिखून, (४) काली गाड़ (५) बौरारौ, (६) कँड़ारौ, (७) अठागुलि, (८) रिउणी, (९) द्वार सौं, (१०) खास-परजा, (११) उच्यूर, (१२) बिसौत। इन मंडलों में चन्द राजाओं के खास कर्मचारी रहते थे।

इस परगने के ग्रामीण क्षेत्रों में उच्चारणगत भेद अवश्य हैं जो निवासियों की कम शिक्षा-दीक्षा तथा बाह्य प्रभावों के कम संपर्क में आने के कारण हैं। कारक चिन्ह, विशेषण, सर्वनाम और क्रिया रूपों की दृष्टि से तथा सुर (पिच), लय (टोन) आदि की दृष्टि से यह बोली अलग पहचानी जाती है।

इसकी प्रवृत्ति ह्रस्व स्वरांत है—"हुनल" (होगा), 'आइन' (आया), 'खिमुलि' (खिमुली)। ओ, ए जैसे दीर्घ स्वरों का एक एक रूप होता है। दीर्घ शब्द 'जोड़' (जोड़ा) विशेषण है और ह्रस्व शब्द 'जोड़' (जोड़ना) क्रिया है। 'स' के स्थान पर 'श' का प्रयोग अधिक मिलता है—'श्यैंणि' (स्त्री), 'मैंश' (पुरुष)। कर्म कारक में प्रायः 'कणि' परसर्ग होता है—'त्वी कणी' (तुझको)।

उदाहरण—

"चैताक मैंहैण जब वंण में काफव पाकनी, दोफरि उदासि लागैं और त्याखुल उदासि जाँ, त एक चड़ डान डान म्योव भकार में ठौर ठौर बासनै रौं—पुरे पोथी ऽ पूर पूर।" पूरे पोथी ऽ ऽ पूर पूर। "हर सालचैताक मैहैंण भरि जति जानै जङ्व में काफव देखिनीं त य चड़ यस कौने रौं। जब बोटन में काफव नी रौंन त चड़ लै नि देखींन। यौ चडै कि लै यक काथ छ। यक दिनै की बात छ कि जब चैताक मैहैण काफव बोटन में पाकि बेर लुटि रौनीं, यक गौं कि यक स्यैंणि रत्ति ब्याण छापरि लि बेर काफव टोडन्हुं जङव गै। वीक बंण बै लौटन जानै बोफरि है गे छि।"—

(३) **पछाइं—**

यह पाली पछाऊँ परगने की बोली है। द्वाराहाट, चौखुटिया और मासी इसके केन्द्र हैं। इसमें 'ल' के स्थान पर 'व' हो जाता है जो

खस परजिया की भी विशेषता है--'जंगव' (जंगल) । 'ड़' का (ण) और दीर्घ स्वरों के ह्रस्वत्व की प्रवृत्ति है--''बुड़ि' > बुणि', 'आपण', > 'अपण' '(अपना),, 'है' बेर > 'हबेर' । इसी प्रकार 'हुणि' के स्थान पर 'हणि' मिलता है। पछाईं को खस परजिया का पश्चिमी विस्तार मान सकते हैं।

(४) **फल्दा कोटिया--**

परगना फल्दाकोट में बोली जाती है जिसे कोसी नदी जिला नैनीताल से अलग करती है। नैनीताल का धनियाकोट परगना और चौथान पट्टी इसी के क्षेत्र में सम्मिलित हैं। यह सामान्यत: खस परजिया का अनुसरण करती हैं किन्तु इसमें ''हातणि'' (करण कारक) और 'माँजी' (अधिकरण कारक) परसर्ग स्थानीय प्रवृत्तियों के द्योतक हैं--'बाबू हातणि कय' (पिता से कहा), जैजात मांजी (जायदाद में से)। कर्म कारक में 'कणि' का प्रयोग खस परजिया से इसकी निकटता सिद्ध करता है। 'मी कणि दि दे' (मुझको दे दो)। 'गय' का 'गोय' (गया), 'दी' का 'दिय' (दे दिया) इसकी अन्य प्रवृत्तियाँ हैं। क्रिया शब्दों का आदि 'प' इसमें महाप्राण 'फ' होता है--फैठण (आरम्भ करना)। पूर्ण वर्तमान काल में क्रिया के बीच 'थौ' का आगम करते हैं--'मील पाप करिथौ च' (मैंने पाप किया है)। यह वस्तुत: खस परजिया का दक्षिण पश्चिमी विस्तार है।

(५) **चौगर्खिया--**

परगना काली कुमाऊँ का उत्तर--पश्चिमी भाग, जो बारामंडल परगने से संलग्न है, चौगर्खा कहलाता है। रीठागाड़, रंगोड़, और सालम, लखनपुर पट्टियों में इसके स्थानीय उदाहरण मिलते हैं। 'ए' का 'या' में परिवर्तन इसकी विशेषता है--चेला > च्याला (लड़के)। शब्दान्त के दीर्घ स्वरों को ह्रस्व करने की प्रवृत्ति होने के कारण दो दो रूप प्रचलित हैं--आपणा-आपण (अपना), नाना-नान (छोटा), कयो-कय (कहा)। क्रिया रूपों में प्रायः 'छियो' का 'भियो' (था), 'गयो' का 'गियो' (गया) होता है। एक प्रकार से चौगर्खिया बोली खस परजिया का पूर्वी विस्तार है।

(६) गंगोई--

इसे 'गंगोला' या 'गंङोई' बोली भी कहते है। यह परगना गंगोली की बोली है जो पश्चिम में दानपुर, पूर्व में सोर और सीरा और दक्षिण में बारामंडल परगनों से घिरा है। उत्तर में जोहार परगना है। इस बोली में एक तो स्वरों की अधिकता है और ये स्वर प्रायः अनुनासिक रहते हैं। शब्दों में 'न' के स्थान 'ङ़' अथवा 'ण' मिलता है। कूनीं छ > कूड़ीं छ (कहता है)। स्वर भक्ति का अधिक प्रचार है अतः क्यव, क्याव, क्यावा (केला), रैत्ति, रात्रि (रात) जैसे प्रयोग मिलते हैं। इसमें प्रयुक्त मूर्वन्य 'ण' अन्य बोलियों में कम मिलता है- भान < भाण-भाङ (वर्त्तन); बान>वाण-वाड़ (हिस्सा)।

शब्द के आदि स्वर प्रायः महाप्राण युक्त हो जाते हैं-म्हंतारि (महतारी), म्हैंण (महीना)। 'छ' क्रिया कहीं 'ह' रूप में मिलती है। खानीं छा>खाणौ हा, (खा रहे हो)। इसी प्रकार अन्य रूपगत विशेषताएं गंगोई को विशिष्ट बनाती हैं। खस परजिया की भाँति 'ण' आदि ध्वनियों के प्रयोग की तथा, अनेक उच्चारणों के ह्रस्वीकरण की इसमें प्रवृत्ति अवश्य है किन्तु खस परजिया की अपेक्षा इसके भेदक तत्व अधिक हैं।

(७) दनपुरिया--

दानपुर परगने में बोली जाती है। इसके पश्चिम में गढ़वाली का और पूर्व में जोहारी का प्रभाव पड़ता है। मल्ला दानपुर इसका केन्द्र है। गंगोली की भाँति शब्दान्त के स्वर लुप्त हो जाते हैं। अतः ह्रस्वीकरण की प्रवृति है-'कैं मैंसाक' (किसी मनुष्य का) जो अन्यत्र 'कैं' मैंसाका रूप में प्रयुक्त है। क्रियापदों में अन्तिम स्वर का अनुनासिकीकरण इसकी विशेषता है। 'ब' और 'प' व्यंजन एक दूसरे का स्थान ले लेते हैं। स्वरान्त धातुओं के भूतकाल में 'न' जुड़ जाता है-हुना (थे), दिना (दिया गया)।

(८) कुमय्याँ-

परगना काली कुमाऊँ की बोली है। पश्चिम में चौगर्खा तथा उत्तर में सोर के इलाके हैं और पूर्व में काली नदी इसे नेपाल से अलग करती है। लोहाघाट और चंपावत इस बोली के केन्द्र हैं। खस परजिया से इसका मुख्य भेद 'ण' और 'ल' ध्वनियों में है। इसमें आपनो (अपना), 'अकाल'

जैसे रूप मिलते है और 'आपणों', 'अकाव' जैसे रूप नहीं मिलते। अर्थात् खस परजिया का 'ण' यहाँ 'न' होता है।

पुंल्लिग शब्द के विकारी रूप में संबंध द्योतक परसर्ग का लोप हो जाता है– 'कै मैंसा' (किसी मनुष्य का) ''उइ मुल्का' (उसी देश का)। संप्रदान कारक का चिन्ह 'कणि' यहाँ 'खन' होता है–'चरौंन खन'- (चराने के लिये)। 'से' परसर्ग का स्थान 'सित' ले लेता है। सर्वनामों में 'उन' का विकारी बहुवचन 'उनौ' होता है, 'उनन' नहीं। क्रिया रूप 'छिया' का 'छ्या' होता है।

(९) **सोर्याली–**

वर्त्तमान पिथौंरागढ़ जिले का केन्द्रीय भाग सोर इस बोळी का क्षेत्र है। इसके पश्चिम में गंगोली परगना है और पूर्व में काली नदी के उस पार नेपाल है। मध्ययुग में नेपाली शासन के अंतर्गत रहने के कारण इस पर पर्याप्त नेपाली प्रभाव पड़ा। ऐतिहासिक प्राचीनता के कारण यह स्थान कुमाऊँ के इतिहास में महत्वपूर्ण रहा। सोर्याळी पूर्वी कुमाउंनी की उसी प्रकार मानक बोली है, जिस प्रकार पश्चिमी कुमाउंनी की खास परजिया बोळी।

डा० भवानीदत्त उप्रेती ने इस बोली का सूक्ष्म भाषातात्विक विश्लेषण करके प्रशंसनीय कार्य किया है। उच्चारण, पद रचना, कारक विभक्ति, क्रिया रूप एवं शब्दावली की दृष्टि से यह कुमाऊँ की अन्य बोलियों से कुछ भिन्न है। उच्चारण संबंधी प्रमुख भेद न और ण पर आधारित है। खस परजिया के देखण, मशिण जैसे शब्द सोर्याली में देखनो (देखना) मशिनों (महीन) हो जाते हैं। सोर्याली में व्यंजन द्वित्व की प्रवृत्ति अधिक है। भूतकालिक रूप थ्यो, थ्या, थि जैसे बनते है–'च्येला थ्या' (लड़के थे)। 'हुण' के स्थान पर 'हुन', 'कणि' के स्थान पर'' 'खि' 'भई' के स्थान पर 'भ्यान' आदि का प्रयोग इसकी अन्य विशेषताएं हैं। भूतकाल के रूपों में भी कुछ अन्तर है–'जान मछूंयो' (जा रहा था)। अन्य बोलियों की भाँति इसकी प्रवृत्ति ह्रस्व अकारान्त न होकर ओकारान्त है– रोटो (रोटी), बोजो (बोझा), मेरो (मेरा) आदि।

उदाहरण–

''चैताक मैन जब बन में काफल पाकनान दोपहर निरास और

सांझ उदास ह्वै जां कि तब एक चड़ि 'जंगव' और पहाडों में वोलनै फिर छ्य "पूर च्यैली पूर छन्। जो छन च्यैली पूर छन।" हर वर्ष चैत का मैना जब तक वन में काफल हुनान यो चड़ि इस्सी कै बौलनै रू छ्य। और जब रूखौंन में काफल खतम ह्वे जनान तब यो ले दिखाइ दिन वन्द ह्वे जां छी। यो चड़िकी ले एक काथा छ। एक वर्षै की बात छ, चैता मैन में जब रुख काफलों ले लादिना का थ्या तब एक गांवै की औरत रत्तै टोकरी लि जा भेरी जंगलक तरफ काफल ल्यूना की थैं गैछ। ऊ का वन बठै लौटन तक दोपहर ह्वै गै थी।"—

(१०) सीराली—

सोर के उत्तर में सीराली परगना है जो असकोट, गंगोली के क्षेत्रों से घिरा हुआ है। इस परगने की बोली "सीराली" कही जाती है जो एक प्रकार से सोर्याळी से अभिन्न है। इसे सोर्याली का उत्तरी विस्तार मान सकते हैं। खस परजिया बोली की तुलना में इसका वही अन्तर है जो सोर्याळी का है। क्रिया रूपों में 'छ्यो', 'थ्यो' (था) दोनों रूप मिलते हैं। सोर्याली से इसकी भिन्नता 'खिन' के प्रयोग में है जो वहाँ 'खी' है और अन्य बोलियों में 'कणि' है। 'ए', 'ऐ' स्वर परस्पर स्थान बदल लेते हैं। इस कारण कर्त्ता कारक में 'ले', 'लै' दोनों परसर्ग विकल्प से प्रयुक्त होते हैं।

(११) असकोटी—

'सीराली' का उत्तरी भू भाग असकोटी बोली का है जो जोहारी, नेपाली और सीराली का मिला-जुला रूप है। इसकी एक विशेषता आद्य ध्वनि 'व' का महाप्राण 'भ' होना है—भिट्या (बीता)। 'को' और 'से' के अर्थ में 'थै' और 'तै' दोनों का प्रयोग मिलता है। इसी प्रकार अपनूं—आपनूं (अपना) दोनों रूप प्रयुक्त होते हैं। क्रिया रूप के साथ जुड़ने वाला 'बेर' प्रत्यय 'बेरि' भी होता है—रै बेर रै बेरि (रहकर), 'बस्यो' (लगा) क्रिया रूप तथा संप्रदान कारक का परसर्ग 'कितैं' (के लिए) इसकी अन्य विशेषता है। कुछ शब्दों में 'ज' के स्थान पर 'झ' और 'छ' के स्थान पर 'थ' मिलता है—"झान छा" (जाते हो), पढ़न पेरि थ्या (पढ़न छ्या-पढ़ते थे)।

(१२) रौ चौभैंसी--

यह पूर्वी नैनीताल की 'रौ' तथा चौभैंसी पट्टियों की बोली है। जिला नैनीताल के पहाड़ी भाग में धनियाँकोट तथा चौथान पट्टी फल्दाकोटिया बोली के अन्तर्गत है जब कि रौ चौभैंसी, रामगढ़, छखाता आदि स्थानों में बोली जाती है। इसमें नैनीताल की सामान्य बोलचाल भी सम्मिलित है। यह खस परजिया के अत्यन्त निकट है।

केवल 'स' का 'श' होना-मैंश (आदमी), ओ के पूर्व ए का 'यो' होना-च्योलो=(लड़का) इसकी स्थानीय विशेषता है। इसमें 'नानैले', 'बबैले' (छोटे के द्वारा, पिता के द्वारा) जैसे रूप बनते हैं। 'हुणि' के साथ 'सुणि' भी मिलता है। 'लियो' (लिया) प्रायः 'ल्हीयो' के रूप में प्रयुक्त होता है।

उदाहरण--

चैत भैण में जब जंगव में काफल पाकण लागिनीं दिन उदास हुण लागूं और ब्याल निरस त एक चड़ि जंगल जंगळ पर्वत पर्वत बुलाते फिरीं "पुर छन। ओ चेली पुर छन। ओ चेली पुर छन। 'हर साल चैता मैण जब जंगलन में काफल दिखनीं यौ चिड़ि एसइ कूनैं रूँ। जब काफल बोटन में निरूंन यौ लै नि दिखाइ दिन। एक किस्सं छ यो चड़िकलै। एक सालै कि बात छ कि चैता मैण में जब काफल बोटू में लादी रूनीं क्वे गौंकि एक स्यैणि रोज रति टोकरि ली बेर जंगल में काफल तोड़ण हुणि जैं, उकै जंगल बै उण तक दिन है गो छी—।"

ऊपर उद्धृत कुमाउंनी बोलियों के उदाहरणों का हिन्दी रूपान्तर इस प्रकार है जो इसकी उच्चारण एवं व्याकरणिक प्रवृत्तियों को स्पष्ट करता है—

"चैत माह में जब वनों में काफळ पकने लगता है, दोपहरियाँ नीरस होने लगती हैं और साँझ उदास तो एक पक्षी वन वन, पर्वत पर्वत, कुहकता फिरता है—"पूरे हैं ओ बिटिया पूरे हैं। ओ बिटिया पूरे ही हैं।" हर वर्ष चैत माह भर जब तक वनों में काफल दिखते हैं यह पक्षी ऐसे ही कूकता रहता है। जब काफल वृक्ष पर नहीं रहते तो यह भी नहीं दिखाई देता। एक कहानी है इस चिड़िया की भी। एक वर्ष की बात है कि चैत माह में जब काफल के वृक्ष फलों से लदे रहते हैं, किसी गाँव की एक औरत प्रातःही टोकरी लिये वन की ओर चली-काफल तोड़ लाने के लिये। उसके वन से लौटते समय तक दोपहर हो चुकी थी।"

उपर्युक्त बोलियों में 'चौगर्खिया' और 'सीराली' के अब नाम मात्र रह गये हैं। उनके जिन ध्वनि तात्विक लक्षणों का ग्रियर्सन ने अपने भाषा सर्वेक्षण में उल्लेख किया था, वे अब कम लक्षित होते हैं जिसका प्रमुख कारण आवागमन की सुविधा से पड़ने वाला बाह्य प्रभाव है। इस प्रकार प्रमुखता की दृष्टि से वर्तमान समय में कुमाउंनी की दस बोलियाँ ही विवेच्य रह जाती हैं।

कुमाउंनी बोलियों का जातिगत विभेद भी द्रष्टव्य है जैसा कि स्वयं ग्रियर्सन ने खस परजिया बोली का विवेचन करते समय संकेत किया था। यह विभेद स्थानीय जन साधारण की शिक्षा–दीक्षा, सामाजिक स्थिति तथा आवागमन की सुविधा–असुविधा पर निर्भर है। ब्राह्मण जाति की बोली में स्वभावतः परिष्कार की भावना मिलेगी क्योंकि संस्कृत के पठन–पाठन के कारण एवं पौरोहित्य कर्म संपादित करने के कारण उनकी भाषा तत्सम प्रधान होती है। इसके विपरीत राजपूत तथा शिल्पकार वर्गों की भाषा स्थानीय वातावरण के अनुसार अनगढ़ बनी रहती है।

जो ब्राह्मणेतर जातियाँ व्यवसायों पर आधारित हैं जैसे लोहार, सुनार, बढ़ई, हुड़किया, हलिया, राज, मजदूर आदि, वे अपनी व्यवसाय मूलक शब्दावली का अपने ढ़ंग से प्रयोग करते हैं।

नैनीताल के शाह लोगों में प्रचलित 'साहबुलि' (साह बोली) इसी प्रकार की एक स्तरीय बोली है जिसमें अंग्रेजी, उर्दू, हिन्दी के शब्द मिले जुले रहते हैं। वे लोग दूसरी भाषाओं के शब्दों को कुमाउंनी में ढाल कर नया रूप दे देते हैं। जैसे 'टूरिस्टान' (टूरिस्ट्स), स्टूडेंटान' (स्टूडेंट्स) आदि, जो अंग्रेजी शब्दों के स्थानीय रूपान्तर हैं। इस प्रकार के स्तरीय भेदों के कुछ उदाहरण पहले तीसरे अध्याय में दिये जा चुके हैं।

---

६. कुमाउंनी का लिखित साहित्य

कुमाउंनी भाषा में कविता, कहानी, निबंध और नाटक सभी प्रकार की रचनाएं प्राप्त होती हैं। इनके अतिरिक्त समय समय पर संस्कृत, बंगला, उर्दू जैसी अन्य भाषाओं से अनूदित रचनाओं द्वारा इसकी अभिव्यंजना शक्ति निखरी है। स्थानीय साहित्य को प्रकाशित करने में 'अल्मोड़ा अखबार', 'शक्ति साप्ताहिक' तथा 'कुमाऊँ कुमुद' जैसी पत्र पत्रिकाओं ने श्लाघनीय कार्य किया है।

कुमाउंनी भाषा में ही प्रकाशित 'अचल' नामक पत्रिका के पुराने अंक तथा छुट पुट लेख इसके भाषागत प्रयोगों के अन्य उदाहरण हैं। कुमाउंनी के लिखित साहित्य को काल क्रमानुसार तीन चरणों में विभाजित कर सकते हैं--

(१) १९वीं शताब्दी का साहित्य,

(२) २०वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध का साहित्य

(३) २०वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध का साहित्य।

१९वीं शताब्दी का साहित्य--(सन् १८००-१९००)--

कुमाउंनी में १९वीं शताब्दी के पूर्व ताम्रपत्रों आदि में स्थानीय भाषा के उल्लेख मिलते हैं किन्तु साहित्यिक रचनाओं के उदाहरण नहीं मिलते। पढ़े लिखे लोगों की भाषा संस्कृत होने के कारण लोक रचनाएं उपेक्षित ही रहीं। सन् १८१५ में ब्रिटिश शासन की स्थापना के उपरान्त कुमाऊं निवासी पाश्चात्य सभ्यता व नवीन शिक्षा-दीक्षा के सम्पर्क में आए। काशी, लखनऊ, प्रयाग जैसे स्थानों में आते जाते रहने के कारण उनका ज्ञान विस्तृत हुआ और राष्ट्रीय चेतना के फैलने से उनका ध्यान अपनी भाषा-रचना की ओर गया। हिन्दी का कुमाऊं में प्रचार हो चुका था जिसके माध्यम से लोगों को कुमाउंनी में लिखने की प्रेरणा मिली।

ग्रियर्सन के भाषा सर्वेक्षण में सहायक पंडित लीलाधर जोशी, गंगादत्त उप्रेती, चिंतामणि जोशी, ज्वालादत्त जोशी जैसे कुमाउंनी पंडितों ने स्वयं स्थानीय भाषा के लिखित उदाहरण प्रस्तुत किए। ईसाई धर्म के प्रचार हेतु पादरियों ने कुमाउंनी को एक साधन बनाया। इस प्रकार स्वदेशी आंदोलन

एवं राष्ट्रीय चेतना की व्यापक पृष्ठभूमि में कुमाउंनी लोगों द्वारा साहित्य-सृजन किया जाने लगा। इसी शताब्दी के प्रमुख कवियों में श्री गुमानी कवि, कृष्णा पाण्डे, चिन्तामणि जोशी, लीलाधर जोशी आदि की गणना होती है।

(१) गुमानी कवि--(सन् १७९०-१८४६)--

गुमानी कवि अभी तक ज्ञात कुमाउंनी के प्राचीनतम लेखक हैं जिनकी 'गुमानी नीति' (सं० रेवादत्त उप्रेती), और 'गुमानी कवि विरचित काव्य संग्रह' (सं० देवीदत्त शर्मा) पर्याप्त लोकप्रिय हैं। ग्रियर्सन ने इण्डियन एंटीक्वेरी की पुरानी जिल्दों में लिखा था कि कुमाऊँ का शायद ही कोई ऐसा व्यक्ति होगा जो उन्हें न जानता हो। संभवतः अपनी छोटी-छोटी कविताओं के कारण भारत के मैदानों में तिरहुत तक उनका नाम सुना जाता है[1]।'

'गुमानी' का वास्तविक नाम लोकरत्न पन्त था जिनका जन्म सन् १७९० काशीपुर में हुआ। यद्यपि इनका मूल निवास स्थान गंगोली का उप्राड़ा गाँव था। इनके पूर्वज महाराष्ट्रीय ब्राह्मण थे जो पौरोहित्य कर्म करते हुए उप्राड़ा में बस गए। गुमानी बचपन से कुशाग्र बुद्धि थे। २४ वर्ष की अवस्था तक विद्याध्ययन करने के उपरान्त देशाटन करते हुए भारत के अनेक स्थानों में घूमते रहे। वे तत्कालीन कुमाऊँ के राजा गुमान सिंह देव और टेहरी नरेश श्री सुदर्शन शाह देव के राज्याश्रित कवि थे। संस्कृत, कुमाउंनी, हिन्दी, नेपाली और उर्दू के अतिरिक्त अंग्रेजी, ब्रजभाषा और फारसी का ज्ञान रखते थे जैसा कि उनकी कविताओं से ज्ञात होता है।

उनके द्वारा रचित ग्रंथों की संख्या लगभग १८ कही जाती है जिनमें 'राम नाम पंच पंचाशिका', 'गंगा शतक' 'कृष्णाष्टक', 'नीति शतक', 'शतोपदेश,' ज्ञान भैषज्य मंजरी 'आदि प्रमुख हैं।'[2] कुमाउंनी रचनाओं की दृष्टि से श्री रेवादत्त उप्रेती और देवीदत्त शर्मा द्वारा सम्पादित पुस्तकों के अतिरिक्त निर्णय सागर प्रेस बम्बई से प्रकाशित 'काव्यमाला' की कुछ कविताएँ पठनीय हैं।[3]

---

१. 'इंडियन एंटीक्वेरी'--जिल्द १४ (१८८५), जिल्द ३८ (१९०९)

२ 'धर्मयुग' अक्तूबर ३१, १९५४।

३. 'धर्मयुग' अक्तूबर ३१, १९५४।

गुमानी आशु कवि थे। तत्कालीन राजनैतिक स्थिति का सम्यक् ज्ञान होने के कारण वे अँग्रेजी शासन के कुप्रभावों तथा सामाजिक कुरीतियों की सटीक आलोचना कर देते थे। लोकोक्तियों के रूप में उन्होंने छन्दों द्वारा समाज में प्रचलित धारणाएं व्यक्त की हैं। कुछ छन्द समस्यापूर्ति हेतु लिखे गए होंगे जिनमें हिन्दी, कुमाउंनी, नेपाली और संस्कृत के साथ साथ प्रयोग मिलते हैं। जैसे वे लिखते हैं—

"एतमत्यु च्चै रस कृन्यायी, कुरते काक ।पुरतः स्थायी
अहिरा खूना गृहे मूशायी, कणो कचवायी डुनो अन्यायी।"

अर्थात् कपटी कौवा सामने आकर बार बार ऊँचे स्वर से काँव काँव करता है। साँप चूहों के बिल में निवास करता है। काना झगडालू तथा लंगड़ा अन्यायी होता है। इस छंद का अन्तिम पंक्ति कुमाऊँ की प्रसिद्ध लोकोक्ति है।

एक अन्य छन्द में विभिन्न प्रदेशों की देव गणना करते हुए कवि राम को अपना आराध्य घोषित करता है—

"बाजे लोक लित्रोक नाथ कीपूजा करें तो करें (हिन्दी)
क्वे क्वे भक्त गणेश का जगत में बाजा हुनी तौ हुनौ। (कुमाउंनी)
राम्रो ध्यान भवानि का चरण मां गरदन कसेले गरन (नेपाली)
धन्यात्मा तुलधाम नीह रमते रामे गुमानी कविः।।" (संस्कृत)

पूर्णतः कुमाउंनी में रचित उनकी कविताओं से राष्ट्रीय भावनाओं का परिचय मिलता है। उन्होंने गोर्खा और अँग्रेजी शासन की कठोरता दमन चक्र और बेगार प्रथा को स्वयं देखा था। अतः व्यंग्यात्मक स्वरों में उसका चित्रण किया। उन्होंने गोरखा अत्याचारों का उल्लेख किया—

"दिन दिन खजाना का भार का बोकणा लै,
शिव शिव चुली में बाल नै एक कै का।
तदपि न तेरो मुल्क लै छोड़ी भाजा,।।
इति वदति गुमानी धन्य गोरखाली राजा ॥"

अर्थात् नित्य खजाने का बोझ उठाते उठाते किसी की चोटी में एक बाल तक नहीं रह गया। फिर भी तेरा राज्य छोड़कर नहीं भागे हे गोरखाली राजा। तुम्हें धन्य है। गुमानी ने अँग्रेज अधिकारियों की दुर्नीतियों का भी वर्णन किया है। उन्होंने लिखा कि कौन जानता था कि जलमार्ग से फिरंगी यहाँ आकर हिन्दुस्तान को दवा लेगा ? राज्यों में फूट, विद्या का

अभाव, वीरों का न रहना अंग्रेजों को सफल बना गया। अन्यथा लाखों वर्षों में भी वे नहीं जीत पाते। कवि के शब्दों में एक पीड़ित और लाचार कृषक पत्नी लम्बी साँस लेकर कहती है कि मुझ अभागिन के लिये मृत्यु भी खो गई। मैं कहाँ जाऊँ और क्या करूँ ?–

"मैं ढ्वाला सूं काल हराणो कां जूं के धन्दा करूँ ?"

तत्कालीन स्थिति वर्णन के अतिरिक्त गुमानी की कविताओं से स्थानीय जीवन की सरलता एवं लोगों के परिश्रमी स्वभाव पर प्रकाश पड़ता है। वे किसी व्यक्ति की अर्थ संचयता की वृत्ति का रोचक वर्णन करते हैं जिसने सोने की एक बिल्ली बना कर कहीं गाड़ दी थी। मरते समय वह अपने तीन पुत्रों को बुला कर कहता है–

"ओ मदुवा ? ओ भूमियाँ; ओ किसुनवाँ, कभैं कै थैं जन कया
हमरा घर में एक सुन की बिराली छ,
जैका एक खुटो नाना का व्रतबंध, ब्याई नाशौ कियौ
अब तीनै खुटा रया, तीनौं भाई बरोबर बांटि लेला
सुनारगूँ का घर की करेड़ी, तरूड़ की खाड़ पड़ी बिराई।।"

कहीं पर्वतीय पादप, पुष्पों और फलों के सौंदर्य पर मार्मिक उक्तियाँ हैं जो कवि के कल्पनाशील हृदय का परिचय कराती हैं। ग्रीष्म काल में काफल और हिसालू पक जाते हैं जिनका स्वाद अत्यन्त मधुर होता है। काफल पकने पर लाल होता है और बहुत पकने पर नीला काला हो जाता है। फल की उक्ति है–

**"खाणा लायक इन्द्र का हम छीयां, भूलोक आई पड़ा
पृथ्वी में लग यो पहाड़ हमरि, थाती रची दैवले।।
योई चित्त विचारि काफल सबै, राता भया क्रोध लै,
कोई और बुड़ा खुड़ा शर्म लै, नीला थुमेला भया।।**

अर्थात् हम तो इन्द्र के खाने योग्य थे, इस धरती पर आ पड़े। पृथ्वी में भी इन पहाड़ों को ईश्वर ने हमारी जन्म भूमि बनाया। यही मन में विचार करके हम सब काफल क्रोध के कारण लाल हो गए। और हममें जो कोई वृद्ध थे वे लज्जा से नीले काले पड़ गए।

गुमानी ने अपने मूल निवास स्थान गंगोली और उप्राड़ा की प्रशंसा में छन्द लिखे जो अभी तक सुने जाते हैं। इनसे अनेक स्थानीय विशेषताओं पर

प्रकाश पड़ता है। कवि ने गंगोळी वासियों का वर्णन सुकाल और अकाल दोनों समयों में किया है। समृद्धि के समय यदि वे लोग केला, नींबू, अखरोट दाड़िम, गन्ना, अदरख, दही, नारंगी गाढ़ा दूध, जमाली भात और गाय का दानेदार घी खाते हैं तो अकाल के समय मोटे अनाज और साधारण तरकारी का उपयोग करते हैं। उस समय गुरूंस, भट, गहत, पिनालु जैसी साधारण चीजें भी मुश्किल से प्राप्त होती हैं।

इस प्रकार गुमानी ने एक जागरूक कवि की भांति स्थानीय विशेषताओं की पृष्ठभूमि में तत्कालीन परिस्थितियों पर प्रकाश डाला और अपने निवास स्थान को सर्वोत्तम माना। उनकी उक्तियों में कहीं कहीं हिन्दी कवि भारतेन्दु की भाँति ओजस्वी स्वर मिलता है।

उनकी कुछ उक्तियाँ तो बिलकुल लोकोक्तियाँ जैसी बन कर लोक मानस में बस गई हैं। वे कहते हैं कि हिसालु फल की जाति अत्यन्त रसीली होती है किन्तु उसे तोड़ने के लिये नजदीक जाने पर कांटे चुभते हैं। इस बात का बुरा नहीं मानना चाहिये क्योंकि दुधारू गाय की लात सहनी ही पड़ती हैं–

"हिसालु की जाति बड़ी रिसालु, नजीक जै बेर भभोड़ि खां छ।
यो बात कौ के नको नी माणनो, दुद्याल को लात सौंणी पड़न छ।।"

(२) कृष्णा पांडे–(सन् १८००–१८५०)–

श्री पांडे जी अल्मोडा जिले में पाटिया ग्राम के निवासी थे। गंगादत्त उप्रेती ने उनके विषय में लिखा है कि जब मैं एक बालक था तो उन्हें बैर और भगनौल गाते हुए देखता था। वे अपनी रचनाओं को मेलों में सैकडों गाँव वालों के बीच सुनाया करते थे। ग्रामीण लोग उन्हें बहुत मानते थे। अपने समय के वे संस्कृत पंडित थे। ढोल बजते बजते स्वयं ग्रामीणों के संग नाचने लगते और ढोल बजाने लगते थे जो उस समय ब्राह्मण जाति वालों के लिये उपयुक्त नहीं माना जाता था।[१]

कृष्णा पांडे कमिश्नर ट्रेल के समकालीन थे जो सन् १८१५–१८३५ के बीच कुमाऊँ का कमिश्नर था। ट्रेल का मुख्य कार्य यहाँ अँग्रेजी शासन की गहरी जड़ें जमाना और जमीन का बंदोबस्त करना था। कृष्णा पांडे ने नवीन बंदोबस्त से उत्पन्न अव्यवस्था पर कविताएं लिखीं, किन्तु ट्रेल उनका आदर

१: 'इण्डियन एंटीक्वेरी', जिल्द–२६–१९१०, पृ० ७८–८२

करता था। वह बिना किसी सहायक के गाँव में जाकर अपने ही सामने व्यंग्य पूर्ण कविताओं को सुनता था।[1]

उनकी कविताओं में नवीन व्यवस्था के प्रति सामान्य अरुचि प्रकट की गई है। कवि ने दीवानी, फौजदारी के नये कानूनों, पति-पत्नी को बराबर मानने वाले नियमों, छोटी जाति के ब्राह्मणों की नियुक्तियों पर व्यंग्य किये और तत्कालीन दुर्भिक्ष—गरीबी का चित्रण करते हुए उसका दोष अँग्रेज शासकों को दिया।

तत्कालीन सामाजिक यथार्थ का चित्रण करते हुए वे लिखते हैं कि अनाज उधार लेने में ब्याज की दर इतनी ऊँची हैं कि प्रत्येक वर्ष मूलधन का तिहाई बढ़ जाता है। कुछ वर्ष बाद छोटा सा उधार इतना बढ़ जाता है कि विवाह के लिये एक लड़की खरीदी जा सकती है—

"द्वी माणो धान में धनुली ऐं छ,
एक माणा मडुवा में मनुली ऐं छ।"

दो माणा धान (प्रायः एक सेर) में एक ऊँची जाति की लड़की (धनुली) आती है। और एक माणा (प्रायः आधा सेर) मडुवा में निम्न जाति की लड़की (मनुली) खरीदी जा सकती है।

एक अन्य पद में ब्राह्मणों की दरिद्रता का वर्णन करते हुए वे कहते हैं—

"बामण यारों को बड़ो ज्ञान,
मडुवा मानिर बिन घर घर चान।"

भाई बिरादरों में घर घर आपसी झगड़े इतने बढ़ते जा रहे हैं कि कुमाऊँ में जैसे राख पड़ गई है! अर्थात् पारस्परिक कलह में सब कुछ नष्ट होता जा रहा है। इस प्रकार की अनेक पारिवारिक स्थितियों का उन्होंने चित्रण किया है।

बिलैतीं कपड़ा का वणाया कोट,
रीणा करि बेर घर कुड़ि चोट।"

बिलायती वस्त्र के कपड़े बनवा लिये और ऋण लेकर घर की दुर्दशा करवाई। मूल्यवान वस्त्राभूषणों के अनुकरण में लोगों की दुर्दशा हो रही है—

"एक गौं का नौ छिया पधान"
गों बजी गयो कै न्हाती फाम।"

---

1. 'जर्नल ऑफ रॉयल एशियाटिक सोसायटी'—१९०१, पृ० ४७५—४७६

एक एक गाँव में नौं नौ पधान हो गये । सारा गाँव नष्ट हो गया और किसी को चिन्ता ही नहीं है। गाँव के अधिकारी अपने कर्तव्यों का पालन नहीं करते।

इसी प्रकार की कविताओं में कवि ने कहीं घर द्वार बेचकर स्टांप खरीदने पर आक्षेप किया है तो कहीं धार्मिक आडंबरों पर व्यंग्य किया है। गोरखा शासन के अत्याचार भी उनकी दृष्टि से ओझल नहीं रहे ।

उनकी एक लंबी व्यंग कविता "कृष्णा पांडे कौ कलियुग' नाम से प्रसिद्ध है जिसने अपनी लोक प्रियता के कारण ग्रियसर्न का ध्यान आकर्षित किया था। ग्रियर्सन ने 'एन ओल्ड कुमाउंनी सैटायर' नाम से १९०१ में अँग्रेजी अनुवाद सहित इसे प्रकाशित किया था।[1] इसमें अँग्रेजी शसान की लूट-खसोट, नयी वस्तुओं से जनता को लुभाने, अकाल पड़ने और उजाड़ होने का मार्मिक वर्णन है।

कवि कहता है कि इस कलियुग में अब ऐसा समय आ रहा है कि पुत्र के हाथों 'पिता मार खाएगा। पति से पत्नी अलग हो जाएगी। अधिक अनाज बोकर कम उत्पादन होगा ओर कुमाऊँ में पत्थर ही पत्थर रह जाएँगे। कुछ पंक्तियाँ उद्धृत की जाती हैं--

"कलकत्ता बटि फिरंगि आयो ।
जाल जमाल का बीजा बांदि लायो ।।१।।
फिरंगि राजा कलि अवतार ।
आपन पाप लै औरन मार ।।२।।
लाट गवर्नर बाड़ा बाड़ा भूप ।
मुलक लुटण सुणि अनेक रूप ।।३।।
फिरंगि राजै कि अकल देख ।
कुड़ि बाड़ि न्यचि बेर इस्तव लेख ।।४।।
पितला को टुकड़ा को चपड़ास कियो ।
मुलक को सुनो रूपो लुटि लुटि लियो ।।५।।
जाल धौलड़िया है गे दिवान ।
मुलक उजड़ि गयो कै न्हाति फाम ।।६।।

१. 'जर्नल ऑव रॉयल एशियाटिक सोसाइटी'--१९०१, पृ० ४७५-४७९

(३) **नयन सुख पांडे--**

ये अलमोड़ा से लगभग सात-आठ मील की दूरी पर पिलखा गाँव के निवासी थे। इनका समय १९वीं शताब्दी का अंतिम चरण है। विशेष पढ़े लिखे न होने पर भी इनकी स्मरण शक्ति तीव्र थी एवं संस्कृत पुराणों की मूल कथाएँ कंठस्थ थीं। कृषि और पौरोहित्य इनकी आजीविका के मुख्य साधन थे।

एक कविता में इन्होंने ऐसी स्त्री की मनोदशा का चित्रण किया है जो दुर्दशाग्रस्त है। उसकी समझ में नहीं आता कि वह क्या करे। घर में अपना हिस्सा मिलने पर ही सुख होता है, वैसे चाहे कितनी सम्पत्ति हो। घर में प्रसन्नता तभी सम्भव है जब ऋण का बोझा न हो--

"हल कहुंलो ब हुँलो बड्याठ, रमुटो निकाणो भो।
फल काटिया कुलों भलो दनलिया, डालो कनो सूडंडी ।।
घर में साज एतुक पड़ी लग जबै हो आपुणा अंस की।
ये है लग खुसि नै सिवाय घर में रिण जब कतकै नि हों।"

४. **गौरीदत्त पांडे--**

ये भी १९वीं शताब्दी के अंतिम भाग में विद्यमान थे। अलमोड़ा से १५-२० मील दूर बल्दीगाड़ नामक स्थान के निवासी थे। इन्हें संस्कृत और उर्दू का ज्ञान था। धार्मिक विषयों में विशेष रुचि रखते थे। आने जाने वाले साधु संतों के साथ तर्क-वितर्क करते हुए इनका अनुभव व्यापक हो गया था।

गुमानी कवि की भाँति इनके कुछ छन्द संस्कृत एवं कुमाउंनी में रचित कहे जाते हैं। मामा की संतान किस प्रकार स्वार्थ-सिद्धि के लिए घर में मधुर व्यवहार करती है, तथा कार्य सिद्ध होने पर कैसे पलट जाती है इसकी तुलना के लिए उन्होंने सिंह, गीदड़, बकरी और बन्दर जैसे पशुओं के स्वभाव का वर्णन किया है। एक अन्य स्थान पर उन्होंने तत्कालीन वणिक वर्ग की विशेताएँ बताते हुए लिखा है--

"ब्यापारी मसिणां प्रयोजन पड़ी, पाणी है पताला हुनि,
पर आपद में कभैं आपुण नैं, वरनी सुणि अण सुणी।
आदर वाक्य निरानिरी कटुता, कै बेर लै निगुणी,
जब कै क्वे हो बराबरी चलन को, कूनीं गरीबै छुं पुनी ।।

अर्थात् व्यापारी लोग बहुत चतुर बुद्धि वाले होते हैं। मतलब पड़ने पर पानी से भी पतले हो जाते हैं। दूसरे की विपत्ति में कभी अपने नहीं होते। सुनी अनसुनी किया करते हैं। आदर वाक्य कहने पर भी कटु व्यवहार करते हैं और गुण नहीं मानते। जब किसी से बराबरी करने की बात आ पड़ती है तो पुनः कहते हैं कि हम तो गरीब ही हैं।

अनुवाद कार्य--

यह कार्य सिरामपुर के ईसाई पादरियों द्वारा 'न्यू टेस्टामेंट' के कुमाउंनी रूपान्तर से प्रारम्भ हुआ था। सन् १८३२ में अनुवादक की मृत्यु होने पर यह कार्य स्थगित करना पड़ा। सन्त मैथ्यू के प्रवचनों का दूसरा अनुवाद फिर लखनऊ से सन् १८७६ में प्रकाशित किया गया।[1]

१९वीं शताब्दी के अन्त में अन्य भाषाओं से कुमाउंनी में अनेक अनुवाद किए गए। इन अनुवादों में साहित्यिक रचनाओं के अंतर्गत श्री चिंतामणि जोशी, ज्वालादत्त जोशी और श्री लीलाधर जोशी का नाम प्रमुख है।

श्री चिंतामणि जोशी ने (सन् १८६०–१९३३) संस्कृत में 'दुर्गा (चण्डी) पाठ सार' का कुमाउंनी अनुवाद किया जो सन् १८९७ में अल्मोड़ा से प्रकाशित हुआ। जोशी जी दन्या के निवासी थे। सन् १९३३ में सत्तर वर्ष की आयु में उनकी मृत्यु हुई। देहरादून से वन विभाग संबंधी शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात् उन्होंने नाहन, श्रीनगर आदि रियासतों में नौकरी की थी। तदुपरांत पीलीभीत में चीनी मिल के मैनेजर हो गए। संस्कृत का ज्ञान उन्होंने घर में ही प्राप्त किया।

'चण्डी पाठ' जैसी पुस्तकों के अनुवाद करने की उपयोगिता पर उन्होंने लिखा था कि कुमाउंनी में ऐसी पुस्तक होने पर मुख्यतः स्त्रियों और बालकों का बड़ा लाभ होगा। इन्हें लाभ होने से देश का लाभ होगा। अतः देशानुरागी और संस्कृत भाषानुरागी लोगों को इस बात पर ध्यान देना चाहिये।[2]

चंडी पाठ का उक्त कुमाउंनी अनुवाद तेरह अध्यायों में किया गया है जिसके प्रथम अध्याय की आरम्भिक पंक्तियाँ इस प्रकार हैं—

कभै कै काल मैं पैली। मनु स्वरोचि है गई।
तै समय में कोई राजा। चैत्र का वंश में भयो ॥१॥

---

१. 'लिंग्विस्टिक सर्वे, ऑफ इण्डिया' खण्ड ९, भाग ४, पृ० ११९

२ 'दुर्गा (चण्डी) पाठ सार'-भूमिका

नाम्ना सुरथ धर्मात्मा । प्रजा पालक नित्यदा ।
अनेक राजा पापिष्ठी । तैंका शत्रु बणी गया ।।२।।
नगर् घेरि लियो तै को । तन्सबह् ले मिली मिली ।
नगर में कारदारन ले । खजानो सब लुटि लियौ ।।३।।[1]

श्री ज्वाला दत्त जोशी (सन् १८६२–१९३०) ने संस्कृत से हिन्दी और कुमाउंनी में 'दशकुमार चरित' का अनुवाद किया जो अल्मोड़ा से सन् १८९२ में प्रकाशित हुआ। वे अल्मोड़ा सेलाखोला के निवासी थे और इलाहाबाद हाईकोर्ट में वकील थे। ग्वालियर रियासत के तत्कालीन महाराजा के परामर्श दाता भी थे। उनके कुमाउंनी अनुवाद का उपयोग ग्रियर्सन ने अपने भाषा सर्वेक्षण मे किया जिसका एक उदाहरण है—

"एक दिन वामदेव ऋषि राजा थैं आयो, और वीले कयो कि जसो च्योलो तु चाँ छीये तसो च्योलौ तेरो है गछ। अब यै कणि छ्यत्तिन जो काम छने करणो चैं छ। और लड़ै कर बेर ये कण मुलुक जितण चैंनी। राजा ले मुनि की बात मानि ली। दिन बार करि बर, नौ कुमारन दगड़ि वीकणि आपण देश है भैर भेजो। थवाड़ा दिन जालै यों येथ ऊथ फिरा, पछा विंध्याचल का जंगल मे पुजा। वाँ उनन एक अदिमि मिलो जो भीलन जसो देखी छियो पर वी का गलन जन्यो छी, राज बाहन कणि वी देखिबेर आसज भयो और वीले वीथैं पुछौ–कि तू को छै, काँ बटि आछै।"[2]

श्री लीलाधर जोशी (सन् १८६७–१९१२) ने कालिदास के 'मेघदूत' का कुमाउंनी में छन्दोबद्ध अनुवाद किया जो अल्मोड़ा से सन् १८९४ में प्रकाशित हुआ। वे लखनऊ में जज थे और अवकाश मिलने पर साहित्य सेवा में संलग्न रहते थे। उन्होंने 'गीता' का भी अनुष्टुप छन्द में कुमाउंनी अनुवाद किया। 'मेघदूत' का अनुवाद शार्दूल विक्रीड़ित छन्द में है जिसके दो उदाहरण निम्नलिखित हैं—

(पूर्व मेघ) "सीता स्नानैल शुद्ध जाँक जल छ, जाँ बोट छायावाला
ऐसा राम गिरी का आश्रम दिषे, एक यक्ष रोनो भयो।
जैकन काम विषे प्रमत्त हुण लै, धनुराज लै वर्ष भर
स्त्री को संग नि हो कै और महिमा, न्है जौ कै शाप दियो।"

१. 'दुर्गा (चण्डी) पाठ सार', पृ०—१
२. 'लिंग्विस्टिक सर्वे ऑफ इण्डिया'–खंड ९, भाग ४, पृ० १६७

(उत्तर मेघ) "बिजली की रमणीय स्त्री जनल लै चित्रन लै इंद्रैणि की,
गैरा गर्जन की मृदंग ध्वनि लै, गायन विषे बाजना।
घर का बूनन की मणिन लै, घर की चोटली ले ऊँचाई की
वीका अलका का भवन बबोबरि, तुमरि करना सु तैयार छन ॥"

उक्त साहित्यिक रचनाओं के अतिरिक्त कुमाउंनी में अन्य विषयों पर भी पुस्तकें अनूदित हुई जिन्हें श्री भैरवदत्त जोशी, तथा गंगादत्त उप्रेती ने संपन्न किया। भैरव दत्त जोशी ने 'सुख को बाटो' शीर्षक स्वास्थ्य विषयक एक पुस्तक लिखी जो इलाहाबाद से सन् १८९४ में प्रकाशित हुई। श्री गंगादत्त उप्रेती ने सन् १८९२ में 'फारस का महाराज की रानी अस्तर को इतिहास' शीर्षक पुस्तक लिखी जो एक अनूदित रचना है। यह अंग्रेजी की 'द बुक ऑफ ईस्थर' का अनुवाद है।

श्री उप्रेती जी अल्मोड़ा में डिप्टी कलक्टर थे। संस्कृत, फारसी और अँग्रेजी के विद्वान थे। उन्होंने कुमाऊँ की जातियों, कहावतों तथा भाषा पर जो कार्य किया वह तो आज तक आदर्श बना हुआ है। कुमाउंनी भाषा और लोकसाहित्य की विभिन्न प्रवृत्तियों तथा अंतर्कथाओं को समझने के लिए उनकी रचनाएँ महत्वपूर्ण हैं।

२०वीं शताब्दी पूर्वार्द्ध (सन् १९००–१९५०)--

इस शताब्दी के पूर्वार्द्ध में मुख्य कुमाउंनी रचनाएँ पद्य में हैं जिनमें गीतात्मक अथवा तुकांत रचनाओं की विषय-वस्तु प्रकृति प्रेम, राष्ट्र-प्रेम, स्वतन्त्रता आंदोलन, स्वदेशी प्रचार तथा नाना प्रकार की सामाजिक समस्याओं से संबंध रखती हैं। इन रचनाओं में भाव एवं विचार दोनों की उत्कृष्ट अभिव्यक्ति हुई है। यदि कहा जाए कि इन्हीं रचनाओं ने कुमाउंनी को आभिजात्य संस्कार प्रदान किया तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। भाव, भाषा और शिल्प के उत्कृष्ट उदाहरण इनमें स्थान स्थान पर मिलते हैं।

इस काल के प्रमुख कवि श्री शिवदत्त सती, गौरी दत्त पांडे 'गौर्दा', शिरोमणि पाठक, श्यामाचरण दत्त पंत, रामदत्त पंत 'कविराज', चन्द्रलाल वर्मा आदि हैं।

१. शिवदत्त सती--

श्री सती जी का जन्म सन् १८७० के आसपास फल्दाकोट (रानीखेत) में हुआ था। वे वहीं रह कर कृषक जीवन व्यतीत करते थे। वे बड़े धार्मिक विचारों

के व्यक्ति थे और उनमें समाज सुधार की प्रबल भावना थी । अपने भाई तथा बाल विधवा बेटी की मृत्यु से उन्हें बड़ा आघात लगा जिसे 'गोपी गीत' रचना में बड़ी मार्मिकता से व्यक्त किया गया है। वे वेदशास्त्र, तथा पुराणों के अतिरिक्त वैद्यक भी जानते थे।

सती जी की 'बुद्धि प्रवेश' (३ भाग), 'मित्र विनोद' तथा 'गोपीगीत' शीर्षक तीन मुख्य रचनाएँ हैं जो लक्ष्मी वेंकटेश्वर प्रेस, बम्बई से प्रकाशित हुई थीं।

'बुद्धि प्रवेश' में लोक हितार्थ गीत हिन्दी और कुमाउंनी दोनों भाषाओं में लिखे गये हैं। 'मित्र विनोद' (सन् १६०६) की रचना का मुख्य उद्देश्य लोगों का मनोरंजन करना था जैसा कि उसकी भूमिका से विदित होता है । इसमें सात छोटी छोटी रचनाएं संग्रहीत हैं--(१) भाबर का गीत, (२) घसियरी नाटक, (३) नेपाली भाषा के गीत, (४) गोरखाली गीत, (५) रुक्मिणि विवाह, (६) गोपी देवी का गीत, (७) 'प्रेम और मोह' । इनसे ज्ञात होता है कि कवि ने गीतों के अतिरिक्त नाटक और गद्य रचनाएँ भी लिखीं । यही इनकी प्रतिनिधि पुस्तक है जिसके सन् १९५३ तक आठ संस्करण हो चुके थे ।

'भाबर के गीत' में पर्वतीय प्रदेश की प्रशंसा तथा भाबर की कठिनाइयों का वर्णन है । जो ब्राह्मण अपना विद्या का उपयोग केवल आजीविका के लिए करते हैं कवि उनसे बचने के लिए कहता है क्योंकि वे दान दक्षिणा के लालच में सब कुछ करा सकते हैं । अपनी स्वार्थसिद्धि के लिए वे शुभ दिन, वार, नक्षत्रों का विचार करते हैं किन्तु स्वयं भाग्य की गति नहीं जानते । कवि ऐसे ब्राह्मणों को तिरस्कार युक्त बोली में 'पतड़िया' कहता है—

"माल जाले घर वटि दिन वार करी ।
दिन वार करिया ले उती जानीं मरी ॥
भलो दिन वार छकै वामण कै दिनी ।
सम्मुख चरन मां वाई छ योगिनी ॥
नक्षत्र लै भलो कूंनी पीठी दिशाशूल ।
हंस को वाहन कौला बड़ो अनुकूल ॥
के जाणनी पतरिया करमो का हाल ।
पर्वत रौणों भलो जन पड़े माल ॥ "[1]

---

१. 'मित्र विनोद'—पृ० ७

कवि ने प्रधानों के अत्याचार, बनियों का ऋण, नित्य नये अतिथियों का आगमन, अनेक प्रकार की शारीरिक व्याधियों से उत्पन्न परेशानियों का उल्लेख करते हुए अपने ही स्थान में निवास करने को श्रेष्ठ बतलाया। चाहे मडुवे की रोटी, सिसूण का साग, भट की दाल और मादिरे का भात ही क्यों न मिले, रूखा सूखा खाकर भी अपने स्थान में रहना अच्छा है।

'घस्यारी' नाटक में उन्होंने पतिव्रता स्त्री का आदर्श प्रस्तुत किया। सत्संग को जीवन के लिए आवश्यक माना। सीता के समान आचरण करने का उपदेश देकर वे संसार के सुख-आनन्द को नाशवान कहकर धर्म की अमरता सिद्ध करते हैं। उन पर गांधीवादी विचार धारा का प्रभाव स्पष्ट है क्योंकि 'घस्यारी' नाटक के अंत में, आर्य धर्म पालन, अहिंसा और परोपकार का महत्त्व प्रतिपादित किया गया है--

"पराया लिजिया जो करनी कारज।
ज्ञान वान तौई छन तौई छै आराज ॥
आरज धरम में छ बड़ो उपकार।
सुणि वेर यो धरम किलै खांछा खार ॥
कै देख छा आरजया कौ छै ऐसा मैंश।
बाजा बाजा आरज हे कमोनि यो पैंश ॥
सूम लग येतीपन आरज छौ कौनी।
नि करना खरच यो सूम बणि रौनी ॥
अहिंसा धरम कणि मानि जाया सब।
दया धरम ह्लोली हिरद में जाणला पै तब ॥"[1]

'गोपी देवी का गीत' अनुभूति की दृष्टि से कवि की सर्वोत्कृष्ट रचना है जिसमें वैधव्य-वर्णन के माध्यम से सामाजिक वैषम्य को उभारा गया है। कवि के अनुसार जो स्त्री विधवा हुई उसके कर्म ही फूट जाते हैं। उसका मर जाना अच्छा है क्योंकि उसे दसों आदमी नाम रखते हैं। उसकी अपेक्षा तो शेर वाघ पालना अच्छा है। बात बिगड़ने पर यदि वह फाँसी भी लगा ले तो शहर गांव वाले रुकते नहीं। वह तो घर में शत्रु के समान रहती है। फिर उपदेश के रूप में गोपीदेवी स्त्रियों को सम्बोधित करती हुई कहती है कि पातिव्रत पालन

---

१. 'मित्र विनोद'--पृ० ३१

सर्वश्रेष्ठ धर्म है। जो स्त्री बुरी बात और कुसंग देखकर डरती है वही इसका पालन कर सकती है।

सती जी की ये कविताएँ पाली पछाऊँ के गाँव गाँव में आज तक प्रचलित हैं क्योंकि उनमें वर्त्तमान समाज का यथार्थ प्रतिबिंब है।

(२) गौरीदत्त पांडे 'गौर्दा'—(सन् १८७२–१९३९)

ये दूसरे गौरीदत्त पांडेय हैं जो 'गौर्दा' के आदर सूचक संबोधन से प्रसिद्ध हैं। हिन्दी के यशस्वी कवि श्री सुमित्रानन्दन पन्त की मान्यता है कि पहाड़ी भाषा के संगीत तथा व्यंजना शक्ति का ऐसा कुशल पारखी अन्यत्र मिलना कठिन है। वे लिखते हैं—'पहाड़ी भाषा की स्वर संगति, उसके सरस प्रवाह, उसके मुहावरों तथा सूक्ष्म व्यंजनात्मक शब्द चयन पर जो सिद्धि गौर्दा को प्राप्त थी वह मुझे अन्यत्र देखने को नहीं मिली। पहाड़ी बोली जैसे उन्मुक्त कलरव करती हुई निर्झरिणी की तरह उनकी समर्थ कला कुशल लेखनी से प्रवाहित होकर उनकी उंगलियों के मार्मिक इंगितों पर नाच उठती थी।'[१]

'गौर्दा' जिला अल्मोड़ा में ग्राम पाटिया के रहने वाले थे जिनके पूर्वजों ने वैद्यकी में पर्याप्त यश अर्जित किया था। उन्होंने बरेली और अल्मोड़ा में प्रारंभिक शिक्षा प्राप्त की। फिर जंगलात में नौकरी करने लगे। फिर उन्होंने वैद्यक का पैतृक व्यवसाय अपना लिया। 'गौर्दा' हिन्दी, अँग्रेजी का अल्पज्ञान रखते हुए भी अपनी तीव्र स्मरण शक्ति के कारण बड़े प्रत्युत्पन्न मति थे। उन्हें रामलीला का आयोजन कराना बड़ा प्रिय था। जनता के सुख-दुख में घुलमिल जाना, गाना-बजाना उनकी प्रकृति का अंग था। हास्य-विनोद के तो वे साक्षात् अवतार थे।

महात्मा गाँधी का दर्शन करने के पश्चात् वे राष्ट्रवादी बन गए और स्वरचित गीतों द्वारा खादी का प्रचार करने लगे। अंध विश्वासों, धार्मिक पाखंडों और छुआछूत, खान-पान संबंधी कुरीतियों से उन्हें बड़ी चिढ़ थी। सन् १९२१ में उन्होंने कुली उतार आन्दोलन का समर्थन किया जिस कारण बन्दी बनाए गए। सन् १९३४ में अल्मोड़ा की जनता ने उन्हें एक सोने का पदक प्रदान किया जिसमें उन्हें कुमाउंनी भाषा का महान कवि लिखा गया था।[२]

'गौर्दा' की कविताओं का एक संग्रह 'गौरी गुटका' नाम से प्रसिद्ध है

---

१. 'कुमाउंनी कवि 'गौर्दा' का काव्य दर्शन'—दो शब्द, पृ० २

२. 'कुमाउंनी कवि 'गौर्दा' का काव्य दर्शन'—पृ० ७

और एक अन्य संग्रह 'प्रथम वटिका' नाम से प्रकाशित है। १२१ कुमाउंनी कविताओं का एक और संग्रह मूल पाठ एवं हिन्दी भाषान्तर सहित सन् १६६५ में देशभक्त प्रेस, अल्मोड़ा से प्रकाशित हुआ है। उन्होंने राष्ट्रीय चेतना की जागरण वेला में प्रसिद्ध जातीय गीत "हमरो कुमाऊँ, हम छौं कुमइयां" लिखा जिसमें कहा गया था कि कुमाऊँ हमारा है और हम कुमाऊँ के हैं। यहाँ की पनचक्कियाँ, नदियाँ पहाड़ सब हमारे हैं।

असहयोग आंदोलन छिड़ने पर उन्होंने कुमाऊँ वासियों को ललकारा कि विदेशी लोग हमारे भीतर घुस आए हैं। तुम निश्चित होकर सोए हो। तुम्हारे पास फूटा बर्तन तक नहीं बचा। अब स्वराज्य प्राप्ति के अतिरिक्त दूसरा कोई उपाय नहीं—

"लोगन पकड़ी जेल पुजूनी डंडन कौ भरमार,
छातिन में पिस्तौल अड़ूनी गरदन में तलवार।
अन्यायि राज में न्याय नि मिलनो, मारन नि दिना डाड़,
मुलक हमारो ठगि ठगि खायो, ठगणा का रूप हजार" ॥[1]

'गौर्दा' स्वदेशी और स्वराज्य के रंग में इतना रंग गए थे कि वे कपड़े, कफन, सुई, तागा, मशीन और बटन तक स्वदेशी चाहते थे। उन्होंने कहा कि घर घर में स्वदेशी चर्खा चलाना चाहिए। उन्होने कहीं लाल तिरंगा फहराने के लिए भाई-बहनों को उत्साहित किया तो कहीं तकुवे चरखे की जय बोलने के लिए कहा क्योंकि वही भारत का रक्षक है। जो लोग दमन से शांति चाहते हैं, वे मूर्ख हैं। प्रेम से ही सब कुछ अपना होता है, सता कर नहीं।

इसी भाव का एक गीत है जिसमें कोई पत्नी चरखा मंगाने की अनुनय करती है। वह चाहती है कि उसका घाघरा, ओढ़ना और बिछौना तक सब स्वदेशी हो—

"मानौ सैंया हमार, मैं सूँ चरखा मंगै दियौ,
माल विदेसि कि मरि जाली चाल, रौंलो समुँदर पार।

---

१. 'कुमाउंनी कवि 'गौर्दा' का काव्य दर्शन—पृ० १४

आंगड़ों स्वदेसी बिछूंण स्वदेसी, स्वदेसी पलंग हमार,
माल विदेसि कि मरी जालि चाल, मैं लागँछ बड़ि खार ॥"[1]

कहीं पर कवि जनता से सत्यवादी गाँधी का सिपाही बन जाने को कहता है तो कहीं वोट मांगने की व्यर्थता सिद्ध करता है। कुली उतार आन्दोलन पर उनकी एक प्रसिद्ध कविता में कहा गया है कि कुली बेगार मत देना, चाहे डन्डों की मार पड़ जावे। इसी के साथ गाँधी जी का अवतार होने के कारण यह शुभ-कामना प्रकट की गई है कि अब देश में सुधार हो रहे हैं, धीरे-धीरे अधिकार मिलेंगे। भारत माता की सरकार बनेगी, आदि। 'गौर्दा' का यह स्वप्न आगे चल कर पूरा हुआ यद्यपि यह सुदिन देखने के लिए वे स्वयं जीवित नहीं रहे।

समाज सुधार के लिए उन्होंने काव्य के माध्यम से जो कार्य किया है उसका अलग ही महत्त्व है। इसके लिए अछूतोद्धार करना, स्त्री शिक्षा का प्रचार करना, पाखंड का त्याग करना, खान पान तथा आचार-विचारों की पुरानी रूढ़ियों को तोड़ना आवश्यक था। इसके लिए उन्होंने हास्य और व्यंग्य का आश्रय लिया। इस दृष्टि से नशा निषेध, द्यूत निषेध, चाय लीला, फैशन परस्ती जैसे विषयों पर उनकी कविताएँ पठनीय हैं। उन्होंने ठीक ही कहा कि अब कलियुग के भगवान चाय में बस गये। अतिथि का स्वागत भी चाय से होने लगा। भक्त, राजा, दीवान, रोगी बच्चे सबके प्राण चाय में बस गए। चाय के लिए किसी परिचय की आवश्यकता नहीं जो हर समय रसोई में चढ़ी रहती है। मांग कर चाय पीने में लोग नहीं शरमाते। सारा देश इसमें नष्ट हो गया —

"हैं गई सब मैंस हैरान चहा में,
खातिर लै रै गेछ मेंहमान चहा में।
मानि जानि एक प्याला को अहसान चहा में,
भरि हाली तिथान कब्रिस्तान चहा में।
तातो पाणि चैंछ न पहचान चहा में,
तौलि कितलि चढ़ि यै रूँ रिस्यान चहा में।

---

१. 'कुमाउंनी कवि 'गौर्दा' का काव्य दर्शन'—पृ० ३५

माँगि खाणा में फिरि ले नि शरमान चहा में,
है गछ यो नष्ट हिन्दुस्तान चहा में ।।[1]

व्यंग्य की दृष्टि से 'गौर्दा' की दो कविताएँ 'बृक्षन को विलाप' और 'हल माहात्म्य' विशेष उल्लेखनीय हैं। इनमें यह चेतावनी दी गई है कि जंगल गाँव की अमूल्य संपत्ति हैं जिनकी शीतल छाया में ग्रामीण जीवन का विकास होता है। इसलिए वनों का संरक्षण होना चाहिए। उन दिनों जंगलों के काटे जाने से बड़ी हानि हो रही थी और जंगलात की व्यवस्था भी शिथिल थी। उसी से प्रेरणा लेकर 'गौर्दा' ने यह कविता लिखी थी।

'हल माहात्म्य' में उन उच्चवर्गीय ब्राह्मणों को चेतावनी दी गई है जिन्हें समय की गति न पहचानने पर हानि होगी। जिसके पास हल बैल नहीं हैं वह खेती छोड़ दे। अब कृषि कार्य करने के लिए स्वयं खेत के कंकड़ पत्थर साफ करने होंगे और परस्पर हाथ बँटा कर बीज बोने होंगे।

इतना होने पर भी 'गौर्दा' कितने मस्तमौला और फक्कड़ थे, यह 'गौर्दा की इच्छा' शीर्षक कविता से स्पष्ट होता है। उनकी इच्छा थी कि उनके प्राण उड़ें तो उस दिन होली की पूर्णिमा हो, दिन के नौ दस बजे का समय हो। सब लोग खा पी लेने के बाद उनके सिर पर रंगीन पगड़ी बाँध कर डांडी में बिठा कर ले जाएँ और होली का राग अलापते हुए जै जै कन्हैया कहें। घर में न तो कोई रोए और न शोक प्रकट करने आए। उनका बुरा भला कोई मन में न रक्खे।

तत्कालीन जन समाज पर 'गौर्दा' का बड़ा प्रभाव था क्योंकि लोग डरते थे कि कहीं वे उन्हीं पर कविता न लिख दें। काव्य तत्व को निखारने में उन्होंने तत्कालीन परिस्थितियों को आधार बना कर स्तुत्य कार्य किया, इसमें कोई संदेह नहीं। उनके विषय में प्रचलित यह दोहा अत्यन्त सार्थक है—

"गौर्दा भै खस भाषि का भगनौली कविराज।
आपू थैं कवि कूण में, वी ऊंछ बड़ि लाज ।।"

३. शिरोमणि पाठक (सन् १८९०–१९५५)—

श्री पाठक जी शातलाखेत के रहने वाले थे। कृषि कार्य और दुकानदारी

---

१. 'कुमाउंनी कवि 'गौर्दा' का काव्य दर्शन'—पृ० १५८

से अपनी आजीविका चलाते थे। विशेष पढ़े-लिखे न होने पर भी सोमवारी बाबा के आशीर्वाद से उनकी प्रवृत्ति रामनाम कीर्तन की ओर हुई। फिर वे भक्ति परक रचनाएं करने लगे। वे गृहस्थ होकर भी पूर्णतः विरक्त होकर साधु संतों की सेवा में लगे रहते थे। शीतलाखेत वासी 'भगत जी' कह कर अभी तक प्रायः उनका स्मरण करते हैं।

पाठक जी की कुछ कविताएँ 'श्री राम सहस्रावलि' शीर्षक से सन् १६३४ में इलाहाबाद से प्रकाशित हुईं। उनकी हस्तलिखित कविताओं में धार्मिक भावनाओं की प्रधानता है। भजनों में राजा हरिश्चन्द्र, भक्त प्रह्लाद और भक्त ध्रुव पर उक्तियाँ कही हैं। 'भक्ति प्रेम योग' शीर्षक कविता में ईश्वर के द्वारा सृष्टि रचना और पालन का वर्णन है। आत्म संयम, आत्म संतोष जैसे गुणों की महिमा बतलाते हुए सांसारिक विषय वासनाओं से बचने का उपदेश दिया है।

पाठक जी ने कुछ होलियाँ लिखीं थीं जिनमें हास–परिहास मुख्य है। लोक गीतों की शैली पर कुछ 'झोड़े' 'चाँचरी', 'भगनौल' आदि भी लिखे जो प्रायः ईश्वर विषयक हैं।

एक कविता में उन्होंने 'गौर्दा' की भांति स्वराज्य प्राप्ति के लिए तकली कातने को एक मात्र साधन माना है। स्वयं वस्त्र बनाने, गन्ना उगाने, तेल बनाने की चर्चा की है, तभी गरीबी दूर हो सकती है। एक अन्य कविता में यह आशंका प्रकट की गई है कि अँग्रेजी पढ़कर भुखमरी फैलेगी। दशा तो तभी सुधरेगी जब कोई हुनर सीखेंगे। उद्यम करने और आत्मबल बढ़ने से ही मनुष्य पेट भर खा पी सकता है—

ई हो शिरोमणि देखी हाली त्वीलै।
कै हाल छीया पैलि लै मैलै॥
अंगरेजी पढ़ि बेर भुकमरी होली।
घ कि सैंणिरै पेट भरि बेर रौली॥
ठाड़ै है मुति बेर शुराल पैड़ाल।
यासा मैं हौब काँ बटि वाला॥
फिर के होलो भुकमरी होली।
भितैरै की के भ्यारै की लै रौली॥
ज्वार चाण बुकै बेर बखत काटला।
तब कै क्वे दिना में जागला।

पै फाम आली जब जब राज होलो।
तब हव जागला ठोंकि बहौंलो।।
येई बात हैड़िया खान बाबा लै कूँ छीया।
जो प्रसिद्ध जोगी छीया जंगलन में रौं छीया।।
अंगरेजी भुलै हाछ धरम नौकरी का फेर।
भारतै कि दाशा शुदरण में देर।।
इस्कूलन में लै जब हुनरौ सिकौनेर बल आलो।
तब दुनियौंक मैंस पेट भरि खलो।।"

४. श्यामाचरण दत्त पन्त (सन् १६०१–१९६७)—

श्री पन्त जी का जन्म रानीखेत में हुआ था। उन्हें अपने पिता श्री अंबिकादत्त पन्त से संस्कृत साहित्य एवं ज्योतिष का ज्ञान उत्तराधिकार में मिला। उन्होंने सन् १६१८ से काव्य रचना आरम्भ की। कुमाउंनी के साथ वे हिन्दी और ब्रजभाषा में भी लिखते रहे। नैनीताल में रहकर उन्होंने ए० वी० प्रेस के माध्यम से न केवल कुमाउंनी की सेवा की बल्कि अनेक नवयुवकों को भी स्थानीय रचना में प्रोत्साहित किया।

उन्होंने गीतों एवं नीतिपूर्ण सूक्तियों के अतिरिक्त अनेक गल्पें लिखीं जो मनोरंजन प्रधान हैं। किन्तु अन्योक्ति रूप में वे जीवन के वैषम्य की आलोचना भी करते हैं।

फुटकर रचनाओं के अतिरिक्त 'दातुलै की धार' शीर्षक उनका एक काव्य संग्रह प्रकाशित हुआ है जिसमें काव्यगत कल्पना के सुन्दर उदाहरण मिलते हैं। वे गीता का नित्य पाठ करते थे जिसका उन्होंने कुमाउंनी पद्य–गद्य में अनुवाद किया। इसकी विशेषता यह है कि मूल श्लोकों का छन्दों में तथा उनके अर्थों का कुमाउंनी गद्य में अनुवाद हुआ है। टिप्पणियों में उन्हीं अर्थों के साथ विशिष्ट स्थलों की व्याख्या की गई है। 'अमृत-कलश' शार्षक से यह अनुवाद सन् १९६१ में प्रकाशित हुआ।

एक कविता में वे भाग्याश्रित रहने वाले मनुष्य को कर्म मार्ग में प्रवृत्त होने का संदेश देते हुए कहते हैं कि अरे भोले पुरुष! चिन्ता करने से क्या होगा? होनी तो होकर रहती है। घुटनों में सिर डालकर क्या छिपा है जैसे

रात्रि में बन्दर छिपता है ? तुरन्त उठ और कर्म द्वारा रहस्य के द्वार खोल। बाहर प्रकाश हो गया है, अपने मार्ग पर चल। नकद-उधार जो कुछ भी करना हैं उसे पूरा कर ले--

"अरे फिकर करि क्ये करलै हो भुला, हुनेरै भैहु णिहार,
घुनन मुनलि हालि क्ये लुकि रौ छै, हिवैं रात बानर की चार।
उठ पड़ नी कर, उठ पड़ झटपट, करमा मरमा खोलि लै द्वार,
भैर उज्याउ है गछ हिटण चल, दिण लिहण कर ले नकद उधार''॥

"दातुलै की धार" संग्रह में वे देवी-देवताओं का स्तवन करते हुए आरंभ में ही कहते हैं--श्री गणेश जी को मैं पहले नमस्कार करता हूँ जो पार्वती पुत्र हैं, विघ्न बाधाओं की जड़ काटते हैं और मंगल करने वाले हैं। वीणा की अधिष्ठात्री सरस्वती देवी को नमस्कार करता हूँ जो कविता की मूल आधार हैं। ब्रह्म विद्या का सार होने से बुद्धि को कुशाग्र करती हैं जिससे गीतों का उच्चार होता है। लक्ष्मी नारायण को नमस्कार करता हूँ जो शेषनाग के सहस्रफनों की छाया में संसार का पालन करते हैं और सब वस्तुओं के भंडार हैं--

"दातुलै की धार। पार्वती कुमार।
चलै दिनीं बिघन हुँ जड़ि बै कुठार।
मंगल दातार।
श्री गणेश ज्यू हूँ पैल करो नमस्कार॥१॥
दातुलै की धार,। कविता आधार।
तीखी तीव्र करैं बुद्धि ब्रह्म विद्या सार।
गींत कैं उचार।
वाक् वीणा सरस्वती देवी नमस्कार॥२॥
दातुलै की धार, शेष का हजार
फणन का छत्र तली पालनीं संसार।
सब तिरा भनार।
लछमी नरैण हुणि करौ नमस्कार॥३॥

उक्त पंक्तियों की विशेषता यह है कि ये लोकगीत के 'भगनौल' छन्द पर आधारित हैं जिसमें प्रथम पद टेक की भांति प्रयुक्त होता है। इसे

लोक गायक 'जोड़' कहते हैं। कवि ने इसका प्रयोग दराँती की धार की तरह अर्थात् तीक्ष्ण होने के अर्थ में किया है। यह संग्रह एक ओर यदि कवि की भक्ति-भावना का परिचायक है तो दूसरी ओर काव्य की परिष्कृति की। यही तीसरी ओर साहित्यकारों द्वारा लोक छन्द की स्वीकृति का भी उदाहरण है।

किस स्थान पर किस शब्द को रखना चाहिए इसका पन्त जी को सूक्ष्म ज्ञान था। इसी कारण वे अपने भावों को स्पष्ट और सरल भाषा द्वारा प्रस्तुत करने में सफल हुए। यही सरलता उनके गीता के अनुवाद में मिलती है जिसका पहला पद इस प्रकार है--

(धृतराष्ट्र बलाण) ऊ धर्म क्षेत्र जो कुरुक क्षेत्र,
वां लड़ैं करणहु एक् बटींणौ ।।
मेरा और पाडू का च्याल नैल।
क्यै करी सुणा सब ओ संजय ।।
घृतराष्ट्र लै पुछ् --ओ संजय।
पुण्य भूमि कुरुक्षेत्र में एक बटि बेर ।।
म्यारा च्याला और पांडू का पुत्रन लै,
लणैं कि इच्छा करि क्यै क्यै करौ ?[२]

५. रामदत्त पन्त (सन् १९०२-१९६८)--

कुमाउंनी के लेखकों में श्री रामदत्त पन्त 'कविराज' का नाम प्रमुख है। उनका जन्म रानीखेत में हुआ था। आरंभिक शिक्षा अलमोड़ा में होने के पश्चात् कलकत्ता से उन्होने आयुर्वेद पढ़ा, तदुपरान्त अपने घर आकर वैद्यक करने लगे। उन्होंने अपना ए० वी० प्रेस खोला जहाँ से उनकी कविताओं के संग्रह प्रकाशित होते रहे। 'कविराज' उनका उपनाम था।

कविराज ने अनेक विषयों पर लिखा। उनकी प्रकाशित रचनाओं में (१) 'गीतमाला,' (२) 'गांधी गीत', (३) 'गीत बाद और 'क्वीड़ कैंण' प्रमुख हैं। यद्यपि उनकी स्फट रचनाएं और हस्तलिखित रचनाएँ भी बहुत अधिक हैं।

---

१. 'दातुलै की धार'--पृ० १-२
२. 'अमृत-कलश'--पृ० १

उन्होंने कुमाउंनी को लोकगीतों, कथाओं, गल्पों, रेखाचित्रों, हास्य-रचनाओं, चुटकुलों और बालोपयोगी रचनाओं से अत्यंत समृद्ध किया। उन्हें संस्कृत, उर्दू, पंजाबी, मराठी, बंगला जैसे भारतीय भाषा-साहित्य के अतिरिक्त विदेशी साहित्य का भी पर्याप्त ज्ञान था जिसका प्रभाव उनकी रचनाओं पर है। वे प्राय: कविता, गल्प और विनोद रचना (कैरीकेचर) के लिए सामयिक विषय चुनते थे।

उन्होंने नाटक भी लिखे हैं और कुछ वर्षो तक 'हिमालय' नामक एक पत्रिका निकालते रहे। बालकों के साथ अथवा ग्रामवासियों के साथ रामलीला में स्वयं अभिनय कर लेते थे। पद्य एवं गद्य दोनों में समान गति होने के कारण उन्हें साहित्य सृजन में बहुत सफलता मिली। भाव शवलता के अतिरिक्त कुमाउंनी भाषा पर पूर्ण अधिकार होने के कारण उनकी रचनाएँ बड़ी प्रभावशाली बन गई हैं।

'गीतमाला' की कविताएँ राग बद्ध हैं जिनमें विहाग, देश, काफी, भैरवी, मलार, पीलू, दरबारी आदि रागों के अतिरिक्त 'गज़लें' भी हैं। पारिवारिक जीवन, तीर्थयात्रा, होली जैसे विषयों के साथ साथ 'मौडर्न राधाक कृष्णाक प्रति' जैसी रचनाएँ भी हैं जिनमें कवि का सामाजिक हास्य निखरता है। 'आपणो घर' शीर्षक उनकी एक प्रसिद्ध कविता में कूर्माचल के प्रति उत्कट प्रेम की भावना इस प्रकार व्यक्त हुई है—

"ठंडी पौन ठंडो पाणी, उजेला अति भला।
बाड़ा भिड़ा गाड़ छिड़ा, ऊजेला अति भला॥
नीला वी अकाश माथ बादलन बिजुली नाच।
सूर्य चन्द्र तारा साथ, ऊजेला अति भला।"[१]

कवि की उक्ति है कि यहाँ का शीतल पवन, जल और प्रकाश सुन्दर हैं। खेतों और नालों में प्रकाश है, नीले आकाश पर बिजली नाचती है। रजत मंडित हिमालय की तलहटी में हिम नद हैं और ऋषि मुनियों के सुन्दर स्थल हैं। जंगलों में बुरूंश, बाँज, देवदार के पेड़ हैं। यहाँ की गोल चक्कियाँ सुन्दर हैं। इनकी मर्यादा रखने के लिए हम सुन्दर कर्म करते रहेंगे।

---

१. 'गीत माला'—पृ० ३

'देश्वाइ रमैण' रचना में उस रूढ़िग्रस्त हिन्दू परिवार की हँसी उड़ाई गई है जिसमें सास बहू की अनबन, देवर भाभी के भद्दे मजाक, अशिक्षित पति पत्नी के वार्तालाप प्रमुख हैं। इस वर्ग की कविताओं में नौकर घरि ल्हीयौं, कलजुगी होली,' 'देवर भौंज थै,' 'बाँका', 'कलजुगी बिराली,' 'कण सुणा' जैसी रचनाएं सम्मिलित की जा सकती हैं।

सामयिक विषयों पर 'जोड़-तोड़,' 'कतुवौ गीत,' 'सिनेमा,' 'डुबी बामण' जैसी उनकी रचनाएं हैं जिनमें चार चार पंक्तियों के छन्द प्रयुक्त हूए हैं। इन कविताओं में कहीं कहीं अंगरेजी शब्दों का प्रयोग द्रष्टव्य है--

"यूनीफार्म ठीक छ मिलणा छ फ्री रैशन
अमां थै पूछौ अब क्ये उनरो फैशन?
उनरी तें कन्ट्री क्वे चीज नैं
क्ये बात भै नेशन?
अमा थै पूछौ के छी उनरो फैशन?
उधार पारि बेर दी गई भलो लैसन
अमां थैं पूछौ के छी उनरौ फैशन?
नाक में नथुली नै, हजबैंड दगै नै रिलेशन
अमां थैं पूछौ के छी उनरो फैशन?"[२]

'कविराज' ने गाँधी जी द्वारा अनुप्राणित सर्वोदय तथा संत विनोबा के भूदान पर कविताएँ लिखकर नवीन चेतना को प्रश्रय दिया। 'गाँधी गीत' में उन्होंने गाँधी जी का संक्षिप्त वृतान्त देकर उनके गोली मार दिये जाने का करुण चित्रण किया।

इस प्रकार वे सम सामयिक प्रवृत्तियों का निर्वाह करते चले हैं। वे भाव और शिल्प दोनों के धनी थे जिसका परिचायक उनकी 'नाच' शीर्षक कविता है जिसमें गीतात्मकता के अतिरिक्त कोमल भावों का अद्भुत सौंदर्य है। इसमें उन्होंने जंगल में फैली हुई चाँदनी का वर्णन करते हुए वातावरण पर पड़ने वाले तज्जन्य प्रभावों को रेखांकित किया है—

---

२. 'गीत माला'--पृ० ५

"कसि जून बिराजिछ फूलन में,
कस उत्सव है रै छ यो बण में ।।
कसि सुन्दर शीतल पौन चली,
मन आज मनै मन छ बिचली ।।
अति उच्च डना बटि तान सुणी,
उति बांसुरि बाजि छ बोटि मुणि ।
हँसनै अति मोद भरी यन लै,
तार चन्द्रम नाच दिखूंणी भलै,
कस शोभित आज अकाश छ हो,
घट नाचछ गाड़ नचूंछ अहो ।।
मन कैक नि ह्वो थिरकी थिरकी,
तब गोप लली लग याँ धिरकी ।।"[1]

शब्दार्थ यह है कि चारों ओर कैसी ज्योत्स्ना फैली हुई है। इस वन में कैसा उत्सव छाया हुआ है। कितनी सुन्दर शीतल पवन चल रही है। मन आज भीतर ही भीतर विचलित हो उठता है। बहुत ऊँचे शिखरों से तान सुनाई पड़ती है। वहाँ वृक्ष के नीचे बांसुरी बज रही हैं। हँसते हुए अत्यन्त प्रसन्न मन तारे और चन्द्रमा भी सुन्दर नाच दिखा रहे हैं। आज आकाश कितना शोभित है। पनचक्की नाचती है, छोटी नदी उसे नचाती है। ऐसे में किसका मन नहीं थिरकेगा ? तभी तो राधा भी यहाँ नाची थी।

'कविराज' जी की उक्त श्रेणी की अनेक कविताएँ हैं जैसे 'मगन मन बादल', 'ऊ को', 'मुरुलि' आदि जो रसात्मक दृष्टि से उच्च कोटि की हैं। वे अपनी गद्य रचना में भी किसी से पीछे नहीं रहे। 'कविराज' जी सचमुच कवि हृदय थे, इसमें कोई संदेह नहीं। उक्त रचनाओं से उनकी बहुमुखी प्रतिभा ही प्रमाणित होती है।

(६) चन्द्रलाल वर्मा चौधरी (सन् १९१०–१९६६)–

श्री वर्मा जी का जन्म अल्मोड़ा में हुआ। आरंभिक शिक्षा–दीक्षा घर में हुई। परिस्थितियाँ अनुकूल न होने के कारण उन्हें अल्प शिक्षा मिली किन्तु बाद

---

१. 'गीत माला'—पृ० ३३

में स्वाध्याय से उर्दू, हिन्दी और पुराण साहित्य का व्यापक ज्ञान प्राप्त किया। वे लक्ष्मी भंडार क्लब के सक्रिय–सदस्य रहे। वे व्यवसाय में बहुधंधी थे। वर्मा जी ने सन् १९३५ से लोक साहित्य विषयक सामग्री का संग्रह आरंभ किया जिससे प्रेरणा लेकर बीच–बीच में स्वयं लिखते रहे।

साहित्य के प्रति तुलनात्मक दृष्टिकोण उनकी प्रमुख विशेषता थी। स्थानीय गीतों और कहावतों की सटीक व्याख्या करके वे छोटी सी प्रतीत होने वाली उक्ति के संपूर्ण सौंदर्य को सामने रख देने में निपुण थे। उर्दू भाषा की अनेक उक्तियों को उन्होंने कुमाउंनी की तुलना में न्यून सिद्ध किया था।

उनके संग्रहों में कुमाउंनी कहावतें, गीत, पहेलियाँ, न्योली, दन्तकथाएं, पक्षी कथाएं, बालकों के खेल आदि सम्मिलित हैं। लगभग १२५० कुमाउंनी कहावतों का एक संग्रह 'प्यास' शीर्षक से उन्होंने प्रकाशित किया। 'शक्ति' साप्ताहिक तथा अन्य स्थानीय पत्र–पत्रिकाओं में उनकी कविताएँ प्रकाशित होती रहती थीं।

वर्मा जी की विशेष ख्याति उनके मौलिक गीतों से हुई। कुमाउंनी की एक एक उक्ति को लेकर नवीन प्रसंगों की उद्‌भावना करते हुए श्रोताओं को मंत्र मुग्ध करना और हँसाना उनका प्रमुख गुण था। साहित्य की दृष्टि से उनके गीतों में जो भावात्मक गहराई है वही उन्हें अधिक स्थाई बनाती है। उन्हें एक एक शब्द की शक्ति का पूरा ज्ञान था अतः उनके शाब्दिक प्रयोग अत्यन्त सटीक और मूर्त्त विधान करने वाले होते थे।

वर्मा जी जब स्वयं अपने गीत सुनाते थे तो उनकी विशिष्ट मुद्राएँ, स्वर, लय, आदि उनके अर्थ को विशिष्ट संदर्भ प्रदान करती थीं। उनके जैसा भाषा व्यंजना का ज्ञान बहुत कम लोगों में होता है। इसी कारण उनके गीत भाव–गांभीर्य से युक्त होने के साथ–साथ उपयुक्त शब्द चयन के आधार पर अत्यन्त प्रभावोत्पादक सिद्ध होते थे। इसी गुण के कारण आज तक उनकी रचनाएँ हमारे मर्म को छू लेती हैं।

वर्मा जी की एक लोकप्रिय रचना है 'धार में को पौ'। कुमाउंनी में 'पौ', प्याऊ को कहते हैं। पर्वत के शिखर पर एक प्याऊ है जिसकी ओर दृष्टि लगाए हुए कोई पर्वतारोही चला जा रहा है। चढ़ाई से उसका गला सूख गया है, और धूप से मुँह। कुछ स्मरण सा करते हुए उसका प्राण निकलने लगता है, किन्तु मुँह से वचन नहीं निकलता। इधर–उधर मिट्टी के घड़े,

बालू के ऊपर 'सिरूँन' (कपड़े–रस्सी की गद्दी) पर रक्खे हुए हैं। उसने गले गले तक पानी पिया, तब जाकर आंख कान कुछ खुले। वह पानी पिलाने वाले बालक का मुँह देखता रहा। प्याऊ ने उसका मन लूट लिया। गीत की मुख्य पंक्तियाँ इस प्रकार हैं—

"धार में को पौ, आँखिन रिटि रौ
उकालि लै घांटि सुकी, मुखड़ी घामै लै।
हंसा मेरा धारा लागो, कवा का फामै लै
बुलाणै नि ऊंणै कौ, धार में को पौ॥
यथा उथा घड़ा माट उथां उथां अलुवा
चूनी लै पोतिया छन, सिरूंनी बलुवा
घटा घटा पाणी पियौ, मणी हिया भिजौ
आँख कान छाला भया, मणी खुलौ गिज
कै की छँ उ भौं, धार में को पौ॥
तीस बुझी, तीस लागी, फिरि पाणी पियौ
मैं मुखी चानैं रै गयूं, भरि लायौ हियौ
नि जाणनीं नौं, धार में को पौ॥
पौ लगाई लुटि लियो, मेरो मना वी लै
गल नै छिरनी पाणी, यसो पाणी पिलै
लगिया स्योल पौ, धार में को पौ॥"

एक अन्य गीत में जंगली जानवर 'सौल' द्वारा नष्ट किए गए खेत का वर्णन है। 'सौऴ' पिनालू के खेत में घुस पड़ा। स्थान स्थान पर गढ्ढे बना कर न जाने कहाँ चला गया। कोंपल, डंठल सभी तोड़ गया। एक गीत में गेंदे के फूल खिलने का नयनाभिराम दृश्य है। नवोढ़ा के घाघरे की तरह दीवाल दूर तक हरी पीली दिखाई देती है। मांग की रेखा जैसी कलियाँ फूट रही हैं।

कहीं छोटा बालक पैर में काँटा चुभने पर रोने लगता है। मां छिः कहती हुई काँटा निकालने लगती है। कहीं कच्ची नींद टूटने पर मां बच्चे की पीठ थपथपा कर फिर सुलाती है। अपना सारा काम छोड़कर उसकी डलिया हिलाने लगती है। बालक उसका दूध नहीं पीता है।

ऐसे अनेक पारिवारिक एवं प्राकृतिक दृश्यों के सूक्ष्म चित्रण से कवि ने बड़े हृदयग्राही चित्र प्रस्तुत किये हैं जिनमें जीवन के सूक्ष्म एवं स्थूल सभी पक्ष सम्मिलित हो जाते हैं।

वर्मा जी ने समसामयिक विषयों पर भी अनेक कविताएँ लिखीं जिनमें कल्पना का चमत्कार लक्षित होता है। यहाँ भाव चित्रण की अपेक्षा तुकबन्दी पर अधिक ध्यान रक्खा गया है। सन् १९४२ के आंदोलन की स्थिति प्रकाशक एक कविता में वर्णित है कि गरीबी के कारण हुड़का बाजा तक नीलाम हो गया। वारंट और सम्मन भेजे जा रहे हैं। बछड़ों की तरह वे मनुष्यों को पीट रहे हैं। किन्तु अपना दुख कह कर मार कौन खाएगा।

जब सन् १९४७ में बुझता हुआ दीपक मशाल जैसा जगमगा उठा तो देश के स्वतंत्र होने पर कवि ने देखा कि सभी प्राणी प्रसन्न हो रहे हैं। इस कारण कवि भी हर्षित हुआ कि अब किसी की धौंस नहीं सहनी पड़ेगी। उसे आशा बँधी कि अब बच्चों के गाल लाल होंगे। अपने पराए का भेदभाव दूर हो जाएगा। अन्न, धन, दूध, दही की वृद्धि होगी। देश के बच्चे अपना पूर्ण विकास कर सकेंगे, इत्यादि। कवि ने यथा स्थान इन विचारों को अभिव्यक्ति प्रदान की है।

सन् १९४८ में गाँधी जी की मृत्यु पर जैसे सारा संसार स्तब्ध रह गया। कवि ने इस घटना से पड़ने वाले व्यापक प्रभाव का चित्रण बड़ी सूक्ष्मता से किया है। उसकी शब्दावली में आकाश भी शून्य हो गया और धरती भी। दसों दिशाएं स्तब्ध रह गईं। सुख-दुख भी जैसे इस वेदना में मूक रह गए। न प्रसन्नता रही न उद्वेग। शून्य तक सुन्न रह गया। जब कवि ने शून्य से ही पूछा कि तुम क्यों सुन्न हो तो उसने उत्तर दिया कि बापू सुन्न हो गए हैं--

"सुन्न लग सुन्न भयो, हंसा लग सुन्न,
सुन्न सुन्न ठौर ठौर, जाई ताई सुन्न।
सुन्न हुणि पुछौ मैले, के है रौ छै सुन्न,
भुकुरि भुकुरि कयो, बापू भया सुन्न ॥"

इस प्रकार उक्त कविता में वर्मा जी ने केवल एक शब्द सुन्न की ही बहुल आवृति द्वारा वातावरण के समग्र विषाद को मूर्तिमान किया है। कम शिक्षित होने पर भीं उन्होंने कुमाउंनी भाषा का कलात्मक उपयोग किया है क्योंकि उनमें भावगंभीर्य के साथ साथ उपयुक्त शब्द चयन की अद्भुत क्षमता थी।

७. जीवन चन्द्र जोशी—

श्री जोशी जी का जन्म सन् १९०१ में हुआ था। उच्च शिक्षा प्राप्त करने के बाद वे अल्मोड़ा के नैनीताल बैंक में कार्यरत रहे। संस्कृत, उर्दू और फारसी के ज्ञाता हैं। पुरातत्व की ओर इनकी बचपन से रुचि रही है। धार्मिक भावना प्रधान व्यक्ति हैं और हैड़ीखान के बावा को अपना गुरु मानते हैं। इन्होंने बहुत पहले राष्ट्रीय रंग-मंच की स्थापना का प्रयत्न किया था। स्वयं मंच पर अभिनय करने में कुशल हैं। कुमाउंनी–राजस्थानी भाषाओं के पारस्परिक प्रभाव के संबंध में इनकी धारणा है कि कुमाउंनी का प्रभाव भी तो राजस्थानी-मेवाड़ी आदि पर कहा जा सकता है।

जोशी जी का उल्लेखनीय कार्य कुमाउंनी में 'अचल' पत्रिका का प्रकाशन है जिसका प्रथम 'श्रृंग' (अंक) फरवरी सन् १९३८ में प्रकाशित हुआ। दो वर्ष पश्चात् यह बन्द हो गया किन्तु इन्ही दो वर्षों की अवधि में इसके द्वारा अनेक कुमाउंनी निबंध, कहानियाँ, कविताएँ और बाल विनोद संबंधी रचनाएँ प्रकाशित होती थी। इसके संपादकीय महत्वपूर्ण होते थे जिन्हें जोशी जी स्वयं लिखा करते थे। इनके द्वारा उन्होंने प्राचीन, प्रकाशित—हस्तलिखित दोनों प्रकार की उपलब्ध साहित्य सामग्री की ओर ध्यान आकर्शित कराया। जैसे उन्होंने एक संपादकीय में लिखा था—

"कूणा को तात्पर्य यो छौ कि पहाड़न में आजी लग कई हस्तलिखित पुस्तक छनौं जनरो प्रकाशन अत्यन्त लाभप्रद हइ सकन छौ—यैं प्रकार पाटिया का सुप्रसिद्ध विश्वेश्वर ज्यू का कई ग्रंथ अप्रकाशित छनौं। किंवदंती यो छौ कि इन पुस्तकन में श्री हर्ष का 'नैषध,' भारवि का 'किरातार्जुनीय,' माघ का 'शिशुपाल वध' या कालिदास का 'कुमार संभव' है कम रोचक और ललित न्हातिनौ—कई और काव्य ग्रंथ, चंपू, नाटक आदि प्रकाशित छनौं। कूर्माचल काव्य 'कल्याण चन्द्रोदय' आदि ग्रंथन बट लग कई महत्व की बात ज्ञात होनी। किंतु अप्रकाशित हूंणा लै इनरो गौरव सबन कैं मालुम नै। कुछ वर्ष भया एशियाटिक सोसाइटी लै 'श्येन शास्त्र' नामक एक पुस्तक प्रकाशित करवाई छी। यो पूस्तक लग कुमाऊँ का राजा का लीजिया लेखि गे छी। यै कन बड़ा, विद्वान महत्त्व पूर्ण कूनीं,।"[1]

---

१. 'अचल', जुलाई १९३८ श्रेणी—१, श्रृंग—६.

जोशी जी ने स्वयं विविध उपनामों से बहुत कुछ लिखा। एक कविता मे वे में अपनी मनोदशा का वर्णन करते हुए लिखते हैं न मालूम क्यों छाती की धक धक बढ़ गई है। मन न जाने क्यों इस प्रकार अपने आप सहम रहा है। आज मैं कुछ अजीव सा क्यों हो रहा हूँ जैसे दूसरे लोक में चला गया होऊँ। वे कैसे होंगे, इसी चिन्ता में प्राण सूख गए।

८. तारादत्त पांडे (सन् १९०३-१९६६)—

'तर्दा' नाम से प्रसिद्ध श्री पांडे जी अल्मोड़ा, कसून के निवासी थे। शिक्षा का आरंभ फारसी से हुआ। तद्परान्त अनेक स्थानों में प्रारंभिक शिक्षा प्राप्त करके प्रयाग विश्वविद्यालय से बी० ए०, एल० एल० बी० किया। फिर अल्मोड़ा में वकालत करने लगे। 'तर्दा' युवावस्था से ही साहित्य में रुचि लेने लगे थे। प्राचीन भारतीय इतिहास और ज्योतिष के प्रति उनका विशेष झुकाव था। उन्हें संस्कृत, उर्दू के अतिरिक्त बँगला, गुजराती जैसी भाषाओं का भी ज्ञान था जिसका परिचय विविध अनुवादों से होता है।

कुमाउंनी भाषा के संबंध में ग्रियर्सन और चैटर्जी का दृष्टिकोण उन्हें स्वीकार नहीं था। उनकी मान्यता थी कि यह हिन्दी की एक बोली मात्र नहीं है। उनकी स्वरचित रचनाओं में शब्द शोधन की विशेष प्रवृति मिलती है। जैसे यह उदाहरण है—

"उदय है गयो, उरी औ गयो,
म्यार् मन भितर जो धमकी छियो रोज धमकुड़ी जसो,
वी राग आव् पूर्वे दिशि मणी
निशा आवरण कैं निवारण करी, मनै कालिमा कैं स्वर्णैल ढकि
प्रगट है गयो, उदय है गयो।"

इसका शब्दार्थ है— उदय हो गया है। अवतीर्ण (उरी) हो गया है। मेरे हृदय में जो रोज 'धमकुड़ी' जैसा धमकता रहता था, वही राग अब पूर्व की दिशा में रात्रि का आवरण दूर करते हुए मन की कालिमा को सुवर्ण से ढकते हुए प्रगट हो गया है।

'तर्दा' की विविध हस्तलिखित रचनाएं हैं जिनमें मौलिक एवं अनूदित दोनों प्रकार की कृतियाँ हैं। उन्होंने उमर खय्याम की रूबाइयों के कुछ कुमा-

उंनी अनुवाद किए। इसके अतिरिक्त उर्दू की अनेक गजलों को कुमाउंनी में लिखा।

९· जयंती देवी पन्त—

श्रीमती पन्त कुमाऊँ के संभ्रान्त परिवारों से संबंध रखती हैं जिन्हें साहित्यिक एवं सांस्कृतिक रुचि परम्परा से प्राप्त हुई। इनके पिता संस्कृत साहित्य के प्रकाण्ड पंडित थे जो अनेक वर्षों तक रामपुर, जूनागढ़, राजकोट आदि रियासतों में राजकुमारों के अभिभावक शिक्षक रहे। वे भी कुमाउंनी में लिखते थे। इसी कारण श्रीमती पन्त की शिक्षा-दीक्षा अनेक स्थानों में हुई। उच्च शिक्षा रवीन्द्रनाथ ठाकुर के चरणों में बैठकर शांति निकेतन, बंगाल में प्राप्त की। फिर देवेन्द्र सत्यार्थी जैसे लोकगीत संग्रहकर्ता से परिचय होने पर अपने स्थानीय लोक साहित्य की ओर इनकी दृष्टि गई।

इनका पक्षी विषयक लोक-कथा संग्रह विशेष उल्लेखनीय है जिसमें कुमाउंनी की प्रसिद्ध लोक कथा 'जूं हो' के सभी रूपान्तरों की तुलना करते हुए उसका मूल रूप खोजने का प्रयत्न किया गया है। कुमाउंनी के अतिरिक्त हिन्दी तथा अंगरेजी समाचार पत्रों द्वारा स्थानीय विषयों एवं संस्कृति पर लेख लिखती रही हैं। श्रीमती पन्त का गद्य पर अच्छा अधिकार है जिसका प्रमाण इनकी कुमाउंनी कहानियाँ हैं। 'राधि बुलै दि' शीर्षक कहानी से इनकी लेखन शैली स्पष्ट होगी—

"गांगुलि उठण हुं तो उठि गे पर वीक हंसा उड़ि जसोरै। के काम में मन नि लागणै। कलजन बैर जासा पड़ी अत्ती भारि हइ भै। बेलि राताक नाका स्वैण भुलूणें ऊ कतूक कोशिश करनै पै ऊ कसिकै नि भूलियौ। दिन भर वीक हात खुटट में लकलकाट जै हई भै। रात पसूनौ बाशण नि भुलियौ। उठन उठनै ढढवो मुख देखि हाल। दै ठेकिल लै उदिनै फुटण हु नल। कसर है रे कूण हुँ पूरबै उज्यणि कौ लै बासिग्वे। आपुं हुणि के शगुन अशगुन चै छी। द्वी बुड़ पराणि भै। दुनियाक सब सुख दुख भुगति हालि। अब गौ कुण में आंपण थात्, कुड़ि, टुड. पहरुण हुं बुड़या काल दिन काटण भै—"[1]

---

१. 'स्मारिका'—सन् १६७५. पृ. १.

१०. पार्वती उप्रेती—

श्रीमती पर्वती उप्रेती का जन्म सन् १९२१ में नैनीताल में हुआ। बचपन से ही लिखने की ओर उनकी रुचि रही। पारिवारिक विषमताओं के कारण उनका लेखन कार्य छूट सा गया किन्तु व्यक्तिगत रूप से वे संस्कृत हिन्दी का अध्ययन करती रहीं।

'घात' शीर्षक एक कविता में उन्होंने दिनकर की कविता 'मेरे नगपति मेरे विशाल' की भांति हिमालय को उद्बोधित करते हुए अपने प्राचीन इतिहास का स्मरण करने को कहा है जिसकी शरण में स्वयं भागीरथ आए थे और शिव जी ने जिसका भार ग्रहण किया था। आज फिर यह देश उसकी ओर टकटकी लगाकर देख रहा है। वह सदा दूसरों का संकट हरण करने के लिये तैयार रहा। उसी के सदा-शिव ने लोक कल्याण के लिये विषपान किया था। वह सदा इस देश का रक्षक और पहरेदार रहा है। आज झंझट की घड़ी में रास्ता भटका हुआ यह देश पुनः उसकी ओर देख रहा है।

अन्य लेखक—

आलोच्य अवधि के अन्य साहित्यकारों में श्री स्वामी दयानन्द नारायण, भोलादत्त 'भोला', लक्ष्मी देवी, दुर्गादत्त पांडे, दीनानाथ पन्त, हरीराम त्रिपाठी आदि लेखक हैं जिनकी स्फुट कविताएं 'शक्ति साप्ताहिक', 'कुमाऊँ कुमुद,' 'पर्वतीय' जैसी स्थानीय पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रही हैं।

स्वामी दयानंद नारायण ने बंगला के प्रसिद्ध कवि यतीन्द्र मोहन बागची द्वारा लिखित 'दिदि हारा' शीर्षक कविता का अनुवाद कुमाउंनी में किया था। भोला दत्त 'भोला' मुख्यतः धार्मिक-नैतिक कविताएँ लिखते हैं। श्री दुर्गादत्त पांडे ने स्वर्गीय पंडित गोविन्द वल्लभ पन्त की ६७ वीं वर्ष गांठ पर कुमाउंनी परिषद् कानपुर में एक कविता पढ़ी थी जिसमें पर्वतीय विकास संबंधी उनके कार्यों की प्रशंसा की गई थी। श्री दीनानाथ पंत ने सुन्दर अन्योक्तियाँ लिखी हैं। श्री हरिराम त्रिपाठी ने 'वन्दे मातरम' गीत का कुमाउंनी अनुवाद किया जो "जय जय माई जन्मभूमि, जन्म भूमि तुम" पंक्ति से आरंभ होता है।

इन कवियों के अतिरिक्त कुछ अन्य लोगों ने केवल उपनामों द्वारा कविताएं प्रकाशित की हैं जिनके विषय में हम अधिक नहीं कह सकते। 'साधक', 'आनंदी,' 'कृष्ण' और 'नाद' जैसे उपनामों वाले एकाधिक लेखकों की रचनाएँ प्राप्त होती हैं।

स्फुट रचनाएँ—

उक्त साहित्यकारों के अतिरिक्त अन्य लोगों ने भी कुमाउंनी में छोटी बड़ी पुस्तिकाएं लिखी हैं जो विषय-वैविध्य की दृष्टि से विचारणीय हैं। नंदा देवी के मेलों पर, चुनाव-प्रचार के समय, अन्य सामूहिक अवसरों पर ये पुस्तिकाएं बिकती हैं। सामयिक, पारिवारिक, राजनैतिक स्थितियों की चर्चा करना इनका मुख्य उद्देश्य रहता है। ग्रामीण लोग इन्हें खरीद खरीद कर पढ़ते हैं।

ऐसी फुटकर रचनाओं के लेखकों में श्री बचीराम, हरीवल्लभ शर्मा, चिंतामणि पालीवाल, पीतांबर पांडे, दीवान सिंह, श्रीकृष्ण कर्नाटक आदि के नाम मुख्य हैं जो प्रायः "जमाना का हाल" (समसामयिक विवरण) लिखते रहते हैं।

श्री बचीराम ने सन् १६३७ में प्रकाशित 'विपती का हाल' रचना में ऊँच-नीच भावना का खंडन किया था। बुराई और गरीबी का मुख्य कारण उनकी दृष्टि में अँग्रेजी फैशन का अनुकरण है। द्वाराहाट वासी श्री हीरा वल्लभ शर्मा ने 'विद्यादान महिमा', 'पैमायशी फूल', 'देवर भाभी संवाद', 'पिता पुत्र चेतावनी' 'सासू ब्वारी,' 'जमानाक हाल, जैसी छोटी मोटी १०-१२ पुस्तिकाएँ लिखी हैं जिनमें सामाजिक कुरीतियों, अशिक्षा, गरीबी, वैमनस्य, जाति भेद, कर्ज की बुराई, स्त्री सुधार, 'अभिमानी की दुर्दशा' जैसे विषय वर्णित हैं।

जैसे कुछ वर्ष पूर्व 'झोड़ा' गीत के अनुकरण में लिखित उनकी ये पंक्तियाँ लोकप्रिय हुई थीं जिनमें किसी वणिक पुत्री से कहा गया है कि वह नाप तौल में बेईमानी न करे। अब समय बदल गया है—

"बणियै की चेली जमाना, भलि कै तोल,
कलजुग उजड़ि वे गोछ, झूठ नि बोल।
बन्दूकी का बना जमाना, भलि कै तोल,
रौहटो की भेट जमाना, भलि कै तोल।
ते कई चाइया रै गयौं, भलि कै तोल,
लौटलि कबेरा जमाना, भलि कै तोल।
ढीकुली का ढाया जमाना, भलि कै तोल,
नौ सेर चावल लि गयो, भलि कै तोल॥"

इसी शैली में श्री चिन्तामणि पालीवाल ने दिल्ली से छोटी बड़ी १०-१२ पुस्ति-

काएं प्रकाशित कीं जिनमें 'धन्यवाद पत्रिका', 'बलिदान खंडन', 'मछली मार मेला', व 'दिल्ली की झलक' आदि मुख्य हैं। इनका जन्म सन् १९१६ में पाली पछाऊं में हुआ था। आजकल दिल्ली में रह कर कुमाऊँ के हितार्थ सक्रिय कार्य करते हैं। 'दिल्ली की झलक' रचना लोक प्रिय हुई है जिसमें यथार्थ है। इस पुस्तक के दो भागों में इन्होंने बाहर जाने वाले कुमाऊँ वासियों का चित्रण किया है। सामाजिक बुराइयों का संकेत करते हुए, धार्मिक अंध विश्वासों का खंडन करते हुए वे कहते हैं कि पशुबलि, भूत पूजा सब निरर्थक हैं। मृत्यु के बाद श्राद्ध आदि में दान देने से क्या लाभ होगा यदि जीते जी पिता की सेवा नहीं की। कवि ने ग्रामीण जनता को साहूकारों द्वारा सताये जाने, भोजन की व्यवस्था न होने का यथार्थ चित्रण किया है। वे आज कल दिल्ली में ही रह कर कुमाऊँ के हितार्थ सामाजिक कार्य करते हैं।

श्रीं पीताबंर पांडे ने 'भ्रमर गीत' शीर्षक कविता संग्रह प्रस्तुत किया जिसमें चिड़ियों की बारात का एक सुन्दर रूपक बांधा गया है। 'मुश्यिा' नामक पक्षी, 'घुघुतं' नामक पक्षी की कन्या से विवाह करना चाहता है। बराती बन कर असंख्य पक्षियों के पहुचने पर कौआ सूचनार्थ आगे आगे चला, तीते ने शकुनकिया, 'कफुआ' पुरोहित बना और 'करौली' नाचने वाली बनी। इसी शैलीं की उन्हीं की एक अन्य कविता 'खटमल' हास्य की दृष्टि से रोचक हैं।

कवि दीवान सिंह राम लीला के अभिनय में बड़ी रुचि लेते थे जिसमें वे स्वयं रावण बनते थे। उनकी 'दीवानी विनोद' रचना संसार की क्षण भंगुरता और अंध विश्वासों की व्यर्थता पर प्रकाश डालती है। श्रीकृष्ण कर्नाटक ने सन् १९४१ में 'गरीब भारतीय' पुस्तिका द्वारा दुर्व्यसन, लड़ाई-झगड़ा जुआ खेलना, कुसंगति आदि की निन्दा की। उन्हे इस बात का दुख है कि जब सुहाग की चूड़ी बिन्दी तक विदेशों से आने लगी है और सौभाग्य बेचा जाता है, तो उद्धार कैसे होगा ?

२०वीं शताब्दी-उत्तरार्द्ध (सन् १९५०—)—

स्वातंत्र्योत्तर युग का कुमाउंनी साहित्य तीन दृष्टियों से उल्लेखनीय है। एक तो इसमें पूर्वार्द्ध की स्फुट रचनाओं का पूर्ण पल्लवन हुआ है। दूसरे, मानव जीवन की विषमताओं से उत्पन्न परिस्थतियों का विश्लेषण करने की प्रवृति उभरी है। तीसरे, काव्य भाषा के उपयुक्त संस्कार की ओर लेखकों का ध्यान गया है जिससे भाषा सूक्ष्म भावों की अभिव्यक्ति में समर्थ हुई है।

नाटकों की गद्य-पद्य मिश्रित भाषा ने यदि इस बीच कुमाउंनी को प्रखर बनाया तो लोक गीतों की प्रश्नोत्तर शैली ने उसे सजीवता प्रदान की। परिणाम यह हुआ कि आधुनिक कुमाउंनी रचनाएँ सांकेतिक हो गई हैं।

स्फुट रचनाओं के पल्लवन की दृष्टि से पूर्वार्द्ध में उल्लिखित श्री हीरावल्लभ शर्मा, चिंतामणि पालीवाल की परंपरा में भी नरसिंह हितबिष्ट, नारायण राम आर्य, कुंवरसिंह रावत, आनंद सिंह और गंगासिंह बिष्ट जैसे लोग हैं जो कवि होने के साथ साथ स्थानीय गायक भी हैं। ये लोग स्वरचित पंक्तियों वाली कविताओं का गायन करते हैं। इन्होंने वर्त्तमान गरीबी, नये फैशनों, पुराने संस्कारों, प्राचीन रीति-रिवाजों के प्रति असंतोष, चाय बीड़ी पीने तथा जुआ खेलने कीं बुराइयों, नव जागरण का उद्‌बोधन, हरिजन उत्थान, ग्रामीण साक्षरता, नयी भूमि व्यवस्था जैसे विषयों को कविताओं का आधार बनाया है।

जैसे श्री गंगासिंह बिष्ट 'वोट कि चोट' में कांग्रेस के लिये वोट माँगते समय पुराने चुनावों की याद दिलाते हुए जनता को सावधान करते हैं कि कांग्रेस के बाहर पैर मत उठाना। इसके गुण रोम-रोम में भीगे हैं। दो बैलों की जोड़ी देखकर ही पर्चीं डालना। यह कविता प्रचारात्मक साहित्य का अच्छा उदाहरण है—

कुमाऊँ का भला मैंसो यो मेरी अरज
सुणी लीया माठु माठु पहाड़ी तरज ॥ १ ॥
आपुं थैं लै के लै आजि कय कि नि कय
लौटी फिरी आई पुजौ भोटों को समय ॥२॥
पैलीया का भोट हाड़ी आजी याद ऊँनी
जसि है गे भीड़ भाड़ अब्ब कें नि कूनी ॥३॥
के भली रौनक रैं छी कसी है बहार
भोट दे छी कांगरेस कैं सुर सुरा चार ॥४॥
आजी वी रौनक होली तुम देखी लीया
घर-घर फिरी रौला भोटों का लिजीया ॥५॥[1]

---

१. 'बोट कि चोट'—पृ० १—२.

वर्तमान समय में कुमाउंनी साहित्य को सर्जनात्मक मोड़ देने की दृष्टि से श्री चारुचन्द्र पाण्डे, वृजेन्द्रलाल शाह, शैलेश मटियानी, कुलानंद भारतीय, कुतुबचंद भारती, बंसीधर पाठक जिज्ञासु, नंदकुमार उप्रेती, गिरीश तिवाड़ी और दुर्गेश पन्त आदि के नाम प्रमुख हैं। इनमें पुरानी और नवीन दोनों पीढ़ियों के लोग हैं जो साहित्यक रचनाओं को मनोरंजन मात्र नहीं मानते। इन लोगों की रचनाएं स्थानीय परिवेश की विशिष्ट भौगोलिक एवं प्राकृतिक विशेषताओं को उभारती हैं जिनमें स्थानींय निवासियों की परपरा-प्रियता और प्रगतिशीलता दोनों का रहस्य छिपा हुआ है।

श्री चारुचन्द्र पांडे (जन्म सन् १९२३–) हिन्दी और कुमाउंनी के हास्य कवि और सुमधुर गायक हैं जिनका गद्य-पद्य दोनों में समान अधिकार है। उनकी कविताओं के कुछ उदाहरण –'यौं परबत जान है प्यारा छन', 'मेर भितरैं कि सज समाव', 'हास्य व्यंग्य' जैसी रचनाओं में मिलते हैं।

श्री वृजेन्द्रलाल शाह (जन्म सन् १९२८––)–पहाड़ी संगीत के ज्ञाता होने के अतिरिक्त लोक रचनाओं को निखार कर प्रस्तुत करने में कुशल हैं। इनकी रचित पहाड़ी रामलीला कुमाऊँ के गाँव गाँव में लोकप्रिय हुई है। रंगमंचीय प्रस्तुतीकरण का इन्हें अच्छा ज्ञान है। शैलेश मटियानी (जन्म सन् १९३१) कुमाउंनी साहित्य के आंचलिक परिवेश को हिन्दी में उतार लाने के कारण प्रसिद्ध हुए हैं। हिन्दी के अतिरिक्त कभी-कभी कुमाउंनी में भी लिखते हैं। उनकी ''शिव हरी कैलाश बटि' शीर्षक कविता जिस पृष्ठभूमि पर आधारित है उसमें त्याग और बलिदान जैसी भावनाओं को ही देश की एकता का सूत्र समझा गया है। यह कविता भारत पर सन् १९६२ में चीनी आक्रमण के समय लिखी गई थी। कवि के शब्दों में कैलाश से पुकार आई है कि लड़ने को तैय्यार हो जाओ। अपनी धरती नहीं देंगे, भले ही प्राण चले जाएँ।

श्री कुलानंद भारतीय (जन्म सन् १९२६) अल्मोड़ा, सल्ट क्षेत्र के निवासी हैं और दिल्ली में सक्रिय सामाजिक कार्यकर्त्ता हैं। 'डौलया', उनकी सर्वाधिक प्रसिद्ध रचना है जिसमें पहली बार दिल्ली आए हुए दो नवयुवकों के माध्यम से पहाड़ी जीवन का मूर्त्त चित्रण किया है। ये 'भारतीय' पत्रिका संपादन करते हैं और कुमाउंनी, गढ़वाली के अतिरिक्त हिन्दी में आंचलिक कहानियां भी लिखते हैं।

श्री कुतुब चंद भारती (जन्म सन् १९४२) रानीखेत निवासी हैं जो अपने मधुर कंठ और गीत प्रधान कविता लिखने के कारण लोकप्रिय हैं। 'नंद भाभी',

में इन्होंने यदि नारी की करुण स्थिति का चित्रण किया है तो 'दिदी-भुली' रचना में कुमाऊँ के ग्रामीण जीवन का तथा भाई बहिन के प्रेम का मार्मिक चित्रण किया है।

आधुनिक प्रतीकात्मक शैली की दृष्टि से इनकी एक कविता 'बलदौं थैं-हलियै कि' स्मरणीय रहेगी जिसमें नये युग की आकांक्षाएँ तथा व्यंग्यात्मकता दोनों उभरती हैं। हल चलाने वाला कोई किसान अपने बैलों से कहता है कि जल्दी जल्दी काम पूरा करो! दिन ढल रहा है। आधा खेत अभी बाकी है। तेरी-मेरी पीड़ा को कौन समझता है? जब धान पकेंगें और बालों के गुच्छे झूमेंगे तो तेरे लिये झूल बनाउंगा। बड़े मिलाकर पुए खिलाऊँगा और अपनी घर-वाली के लिये भी पहुँची बना दूंगा—

"देख रे मोतिया! दिन ढलि ऐगो, आंदु खेत रै गो
थिरकनै थिरकनै हिट, करि ल्हे जरा काम झिट,
हौ भैल सिया! तीर तीर!
को जाणु छ त्यरि पीड़ा, को जाणु छ म्येरि पीड़,
उठ कान मंज जू संभाल, मुणि रै गो यों निसाल
धान ह्वोला झुपझुपा, बालाड़ झुकि झुमला,
तै हणि बणूंल ततैल झूल, सैंणि हणि धागुला
चांदिक बणूंल जू, बाड़ सानी पू खऊँल॥"[1]

श्री बंशीधर पाठक (जन्म सन् १९३४) अपने 'जिज्ञासु' उपनाम से अधिक प्रसिद्ध हैं। इन्होंने कविताएँ, नाटक, कहानी और निबंध सभी प्रकार की रचनाएँ लिखी हैं। आजकल आकाशवाणी लखनऊ के 'उत्तरायण' कार्यक्रम से संबद्ध हैं। इन्होंने पिछले वर्ष एक 'स्मारिका' का संपादन किया है जिसमें गढ़वाली और कुमाउंनी लोक भाषा की रचनाएँ सम्मिलित हैं। इसके संपादकीय में 'स्मारिका' का उद्देश्य स्पष्ट किया गया है कि जिन लोगों को अपने पर्वतीय होने का गर्व है और अपनी भाषा तथा संस्कृति के प्रति लगाव है उन्हीं के प्रति यह समर्पित है—

---

१. 'शिखरों के स्वर'—पृ. ८६.

''त्वीलै धारो बोला तीन शब्दन यो जोड़ आपुं लोगनैलि जरूर सुण हुनल। आपुं चाहे गढ़वाली छा चाहे कुमय्यां यो जोड़ों अर्थ समजण में समर्थ छा। तो योई जोड़ कै अपण्ये बेर हम आपण हाथों में यो स्मारिका सौंपणया। गढ़वालि व कुमाउंनी लोक भाषा साहित्याक प्रेमियों निमित्त यो हमरि एक अद्वितीय भेंट छ। इमें न तस्वीर छ और न क्वे तड़क भड़क। इमें जो लै पठनीय सामग्री संकलित करि गे छ ऊ आपूं कै दूसरि पत्रिकान में नि मिलि सकन। होय हो यो स्मारिका सिरफ उन लोगनां लिजि छ, जो पहाड़ि छन, जनन कै आपणि पहाड़ि हुणौ मान छ, पहाड़ि करणों गुमान छ और जनन कै आपणि पहाड़ि बोली, भाष और संस्कृति दगाड़ अत्ति लगाव छ॥''[1]

श्री नंद कुमार उप्रेती (जन्म सन् १९३०) हिन्दी, अंग्रेजी, बंगला के अतिरक्त कुमाउंनी में भी लिखते हैं। इनका जन्म पिथौरागढ़ में हुआ था। कविताओं में 'भुलि नि जान आपुण देश' शीर्षक इनकी रचना स्मरणीय है जिसमें स्थानीय पशु पक्षियों, वनस्पतियों, फल फूलों के प्रति आसक्ति प्रगट की गई है। रवीन्द्र नाथ की एक कविता पर आधारित इनकी कविता 'नगर नटी वासवदत्ता' भी अपने शब्द-चयन के कारण स्मरणीय है। इससे ज्ञात होता है कि बंगला भाषा की सस्वर पदावली का अनुकरण करने पर कुमाउंनी में कितनी संगीतात्मकता आ जाती है।

इनके एक पहाड़ी नाटक 'मी यो सटक्यूं, मी यो गयूं' से कुछ पंक्तियाँ उद्धृत हैं। इसके संवादों में कहीं कहीं हिन्दी का प्रयोग हुआ है। कुमाउंनी भाषी किस प्रकार वार्तालाप के बीच अन्य भाषाओं का प्रयोग कर लेते हैं, यह इस नाटक से स्पष्ट होता है–

''रुक्ना– सपाड़ि बेर ऐ गेछा घर ?
सोपनियाँ–रुक्ना ! काटि में चूक न लगा।
रुक्मा–किलै कि भौ छ?

---

१. 'स्मारिका—नवंबर, १९७५, (संपादकीय)

सोपनियाँ—हुंछि इ कि? मीं तें सबै भ्यार भतर भुति रईं भ्या। सैंप कूण फैठो।

रुक्मा—के कूण पैठो?

सोपनियाँ-तेरी छाती ताण कर द्वि इंचि तानी है, लंबै भी कम है वजन भी कम है। जा भग जा।

रुक्मा—तसै हुनल पै।

सोपनियाँ—कि जाणनेर भेई तू? खिमु भरती है ग्यो, नरुव भरती है ग्यो। तनरा है मी नी के भयुं। मीलि सैंप कि निरै खुरै लै करी।

रुक्मा—कसि निरैं खुरै?

सोपनियाँ—मीलि कौ छ हजूर! मैं षण्ड ज्वान भेयूँ। गिणियाक धुर बै घर ऊँण जाणैक सुतरक सुयाँठ विसनेर नि भेयूं। लड़ै ल्हि सैंप तैं खिम्मु, नरुव कणि, एकै लड्ड़ि में नि भटड़कै द्यूंल तपै कय।

रुक्मा-लणै करै छ कि पै सैंपलि?

सोपनियां—मीलि को छ। उलट मीकि तै बिगड़ि ग्यो—तुम लड़ै झगड़ा करना मांगता है। भाग जाओ। मीलि कौ—हजूर! लड़ै झगड़ कन्नकि तै त सिपाई भरती करि जानेर भ्या। सिपाइनक तौ कामै लणै ग।इ भै कि भ्यो?

रुक्मा—मैं त पैलि लै जाण छ्युं तुमन कै के ल्याख नि लगा कै?

सोपनियाँ—नै आँखिरकार मीं में कमीं की छ? यों फिनार, यो पाखुड़, गोर उज्वाव रंड.।

रुक्मा—तौइ त मुसकिल है गेछ! तुम आपुं जस कैकणि देखनै न्हाता।"[1]

इस प्रकार अनेक प्राचीन और नवीन लेखक और नाटककार इस समय कुमाउंनी के लिखित साहित्य की समृद्धि कर रहे हैं।

कुमाउंनी साहित्य एवं संस्कृति के संवर्धन में जिन संस्थाओं ने पर्याप्त योग दिया है उनमे वे कूर्माचल परिषदें तथा समितियां मुख्य हैं जो दिल्ली, लखनऊ, कानपुर, इलाहाबाद जैसे नगरों में क्रियाशील रही हैं। दिल्ली के 'कुमाउंनी साहित्य मंडल' ने इस दृष्टि से बड़ी सेवा की जिसे श्री चिन्तामणि पालीवाल

---

१. 'स्मारिका'—नवंबर १९७५, पृ. १५-१६.

ने स्थापित किया था। अल्मोड़ा के 'डिबेटिंग क्लब', और 'अल्मोड़ा लेखक संघ' आदि संस्थाओं ने वर्षों तक स्थानीय साहित्यकारों को एक मंच पर एकत्र करके उन्हें लिखने की प्रेरणा दी।

सन् १९५५ में वहाँ 'लोक कलाकार संघ' ने कुमाउंनी लोक संस्कृति का एक विशाल केन्द्र स्थापित करने की आवश्यकता पर जोर दिया था। नैनीताल में यही कार्य 'हैप्पी क्लब', 'शारदा संघ' तथा 'हरि संकीर्तन सभा' ने किया है।

सन् १९६० तक के लेखकों का मूल्यांकन करते हुए डा. नारायणदत्त पालीवाल ने अपने शोध प्रबंध में एक सराहनीय प्रयास किया। नैनीताल के श्री तारादत्त सती ने लोक नृत्यों के मंचीकरण की दिशा में पर्याप्त सफलता प्राप्त की है। दिल्ली में रह कर 'भारतीय कला केन्द्र' के माध्यम से श्री मोहन उप्रेती ने इस साहित्य के लालित्य को देश-विदेश तक पहुँचाया है।

इधर आकाशवाणी के लखनऊ एवं रामपुर केन्द्र 'उत्तरायण' जैसे विशेष कार्यक्रमों के अन्तर्गत कुमाउँनी साहित्य के प्रचार-प्रसार में पर्याप्त योग देते हैं।

सद्यः स्थापित कुमाऊँ विश्वविद्यालय ने भी कुमाउंनी भाषा एवं साहित्य को अपने स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम में स्थान देकर इसके अध्ययन-अध्यापन का मार्ग प्रशस्त किया है। इस विश्वविद्यालय में अब कुमाउंनी साहित्य पर शोध प्रवन्ध भी प्रस्तुत किये जाने लगे हैं जिससे आशा है कि भविष्य में स्थानीय भाषा एवं संस्कृति के विविध अंगों पर उल्लेखनीय सामग्री प्रकाश में आने लगेगी।

७. कुमाउंनी लोकगीत

संक्षिप्त परिचय तथा विवेचन के लिए समस्त कुमाउंनी लोकसाहित्य को सात वर्गों में विभाजित किया जा सकता है—

(१) लोक गीत (फोक साँग्स)
(२) कथा गीत (बैलेड्स)
(३) लोक गाथाएँ (फोक इपिक्स)
(४) लोक कथाएँ (फोक टेल्स)
(५) लोकोक्तियाँ और कहावतें (प्रावर्ब्स)
(६) पहेलियाँ (रिडिल्स)
(७) फुटकर रचनाएँ।

ये सभी प्रकार की विधाएँ विषय—वस्तु एवं गायन शैली के आधार पर परस्पर जुड़ी हुई हैं और कुमाउंनी लोक साहित्य का समन्वित रूप उपस्थित करती हैं। पहले लोकगीत विचारणीय हैं जिनके नौ-दस प्रमुख भेद किए जा सकते हैं।

कुमाउंनी लोकसाहित्य गीतों की दृष्टि से बहुत समृद्ध है जिनका सर्वेक्षण तो हो चुका है किन्तु क्षेत्रीय आधार पर कोई व्यापक संग्रह अभी तक प्रकाशित नहीं हुआ।[१] इनके द्वारा सामाजिक गतिविधियों की अभिव्यक्ति मुख्यतः परम्परागत गीतों के रूप में और ऋतु त्यौहार जैसे प्रकृति परक गीतों के रूप में हुई है। विषय-वस्तु, गायन-शैली और अवसर विशेष के आधार पर ये लोकगीत मुख्यतः १० प्रकार के हो सकते हैं—

(१) संस्कार गीत,
(२) नृत्य प्रधान गीत,
(३) अनुभूति प्रधान गीत,
(४) तर्क प्रधान गीत,
(५) संवाद प्रधान गीत,
(६) ऋतु गीत,

---

१. देखिए लेखक का शोध प्रबंध—'कुमाउंनी जन साहित्य का अध्ययन (नैनीताल अल्मोड़ा क्षेत्र)।'—आगरा विश्वविद्यालय, सन् १९६०

(७) देवी देवताओं के गीत,
(८) व्रत त्यौहारों के गीत,
(९) कृषि गीत,
(१०) स्फुट गीत।

१. संस्कार गीत—

कुमाउंनी स्त्री समाज में प्रचलित संस्कार गीत हिन्दू धर्म के षोड़श संस्कारों से घनिष्ठ सम्बन्ध रखते हैं। ये (क) अनिवार्य गीत और (ख) विशेष गीत दो प्रकार के हैं। अनिवार्य गीत प्रत्येक संस्कार के आरंभ में गाए जाते हैं। दूसरे प्रकार के गीत संस्कार विशेष के साथ जुड़े हुए हैं जो अनिवार्य गीतों के उपरान्त आरम्भ होते हैं।

(क) अनिवार्य गीत—

अनिवार्य गीतों में 'शकुनाखर' और 'न्यूतणों' प्रमुख हैं। शकुनाँखर (शकुनाक्षर) मंगलाचरण है जिससे प्रत्येक कार्य आरंभ होता है। जोहार-भोट के लोग इसे 'सोगुना' कहते हैं। इसमें शकुन के लिए प्रार्थना की जाती है ताकि सभी काम सिद्ध हों। एक गीत में उस समय शंख-घंट बजने की, दाईं ओर कलश स्थापित करने की तथा रंगीन गुलाब और कमल फूल लाने की प्रार्थना की जाती है जिन्हें धारण कर गणेश, राम, लक्ष्मण, सीता जैसी देवी-देवता अमर बने रहते हैं।

तदुपरान्त परिवार के पुरुषों और स्त्रियों का क्रमशः नाम लेकर उनके अमरत्व की कामना की जाती है। कुमाउंनी लोक गीतों में पहले विवाह की स्त्री के लिए 'सुन्दरी' और दूसरे विवाह की स्त्रियों के लिए 'मंजरी' शब्दों का प्रयोग होता है। एक 'शकुनाँखर' है—

"शकूना दे, शकूना दे, सब सिद्धि
काज ए अति नीको, शकूना बोल दईणां
वाजन छन शंख शब्द, दैणी तीर भरीयो कलेस
अति नीको सो रंगीलो पाटल, आँजलि कमल को फूल
सोही फूल, मोलावन्त, गणेश, रामीचन्द, लछीमन, लवकुश,
जीवा जनम आद्या यमरो ए,

सोही पाटो पैरी रैनां, सिद्धि बुद्धि, सीता देही
बहूराणी आयुवान्ती, पुत्रवान्ती होए ।।"

जोहार-दारमां की ओर प्रचलित 'शकुनाँखर' गीतों में भोजन पदार्थों और प्रकृति के मांगलिक पदार्थों का मुख्य वर्णन होता है। दारमा के गीत में स्त्रियाँ कांस्य पात्रों में जल भर कर पुष्पों से अभिषेक करती हुई मंगल गीत गाती हैं जिन्हें 'छीरा' कहते हैं ।

दूसरा गीत 'न्यूतणों' है। प्रत्येक शुभ कार्य का आरम्भ करते हुए पहले प्राकृतिक शक्तियों को, फिर देवी देवताओं को, फिर कार्य सम्पन्न कराने वाले स्त्री पुरुषों को सादर आमंत्रित किया जाता है। इनमें प्रातः कालीन सूर्य, संध्या कालीन चन्द्रमा, गणेश, विष्णु आदि देवताओं के साथ मालिन, कुम्हारिन, अहीरिन, बंधु-बांधुओं और शंख घंट तक को निमंत्रित किया जाता है जो कर्म के आवश्यक उपकरण हैं। फिर एकत्र दैवी तथा मानवीय शक्तियों से सकुशल कार्य सम्पन्न कराने की प्रार्थना की जाती है।

अनिवार्य गीतों का एक भेद कर्म सम्बन्धी गीतों का है जो गणेश पूजा, मातृ पूजा, आब देव, पुण्याह वाचन, कलश स्थापना, नवग्रह पूजा और अग्नि स्थापना से संबंध रखते हैं। उस समय शास्त्रोक्त कर्मों का जैसा जैसा पुरोहित विधान करता है तदनुसार गीतों की भावभूमि बदलती चलती है। गणेश पूजा के गीत में पहले पुरोहित किसी दोने या थाली में गोबर से गणेश बनाकर मंत्रों द्वारा उसकी प्रतिष्ठा करता हैं। तब स्त्रियाँ अपने गीतों में गणेश की शारीरिक तथा चारित्रिक विशेषताओं का वर्णन करती हैं।

मातृ-पूजा के समय पुरोहित 'विस्वार' (पिसा हुआ चावल) से एक चौकी लीप कर उसमें गोबर की सोलह मात्रिकाएं स्थापित करता है। तब स्त्रियाँ जो गीत गाती हैं उसमें देवियों के जन्म और आगमन की मनोहर कल्पनाएं हुई हैं—

"कैरे लोक उबजनीं, माई मात्रा देव ए,
कैरे लोक उबजनीं, नारायण पुत्र,
कैरै कोखी उबजनीं, रामीचन्द पूत ए,
चली तुमी माई मात्रा, इनूं घरी आज ए,
इनूं घरी धौली हरा, काज सोह ए,
कौशल्या राणी कोखी, उवजनीं लछीमन पूत ए
माथ लोक उबजनीं, माई मात्रा देव ए ॥"

'आबदेव' के गीत में पितरों को आमंत्रित किया जाता है तथा गृह दीपक जलाने, फूलों की सेज बिछाने का वर्णन होता है। पुरोहित जब अर्घ्य देकर ब्राह्मणों की पूजा करता है तो इस अवसर पर स्त्रियाँ पुण्यावाचन का गीत गाती हैं। प्रत्येक शुभ कार्य के आरम्भ में एक कलश, चंदन, दही, आदि से शुद्ध करके रक्खा जाता है जिसके नीचे सात प्रकार के धान्य रक्खे जाते हैं। कलश स्थापना के गीत में इन्हीं वस्तुओं का वर्णन होता है।

नवग्रह पूजा के गीत ग्रहों की प्रतिष्ठा से सम्बन्ध रखते हैं जिनकी उपस्थिति मंगल कार्य के लिए आवश्यक मानी जाती है। अग्नि स्थापना के गीत में उस अग्नि की खोज की गई है जो संस्कार के लिये आवश्यक है। अग्निदेव पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण किसी दिशा में भी नहीं मिलते। वे पीपल वृक्ष के नीचे बगल में पुस्तक दबाये मिलते हैं। तब उनसे मध्यलोक अर्थात् मर्त्यलोक में आने की प्रार्थना की जाती है क्योंकि उनके बिना यज्ञ होम करना संभव नहीं है।

इस श्रेणी के गीतों में 'संजवाली' नाम से प्रसिद्ध गीत घर घर में गाया जाता है जिसमें दीपक जलाकर उसके अखंड जलते रहने की मनोरम कल्पना हुई है। दीपक अगरु चंदन का है, कपूर की उसमें बत्ती है। स्त्रियाँ उससे निवेदन करती हैं कि गृहपति के घर में रात भर जलते रहो —

"सांज पड़ी संजवाली पाया चली ऐन
आस पास मोत्यूं हार, बीच चलिन गंगा,
लछिमि पुछना छन स्वामी, आपणा नाराइण,
किनु घरी आनंद बधाई, किनु घरी सुलच्छिणि राणि ए,
दियड़ा तैंन जाग हो सैंगली रात्रि,
जाग हो दियड़ा इनूं घरि रात्रि ए,
रामिचन्द घर, लछिमन घर, सांज को दीयो जगायो
सुहागिलि सीता देहि, बहूराणी जनम ए वांति, पुत्र कल्याणी ए
इन बहुअन की शोभुण कोख ए,
दियड़ा तैंन जाग हो, सगली रात्रि ए,
जाग हो दियड़ा इनू घरि रात्रि ए,
अगर चन्दन को दीयड़ा, कापुर सारी बाति,

जाग हो दियड़ा इनूँ घरि रात्रि ए—
जाग हो दियड़ा सुलच्छणि रात्रि ए।"

(ख) विशेष गीत—

विशेष संस्कार गीत कुमाऊं में मुख्यतः जन्म, व्रतबंध और विवाह के अवसरों से सम्बन्ध रखते हैं। जन्म सम्बन्धी गीत पाँच प्रकार के हैं—

(१) जन्म दिन के गीत,
(२) छट्ठी के गीत,
(३) पासिणी के गीत,
(४) नामकरण के गीत,
(५) जनमवार के गीत।

पहला गीत 'विहाई' (बधाई) गणेश पूजा से लेकर जन्मोत्सव के अवसर तक समान रूप से गाया जाता है। इस समय के 'मदन मोहन' गीत में पुत्र जन्म से लेकर विवाह तक दैनिक, मासिक और वार्षिक संस्कारों का संक्षिप्त उल्लेख हुआ है। जन्म दिन से नामकरण तक के कर्मो का विवरण दिया गया है—पहले दिन 'जात' लगाना, तीसरे दिन 'तिछोड़ी' करना, पाँचवे दिन 'पंचोली' होना, छठें दिन षष्ठी पूजन, नवें दिन 'नौल' स्नान, ग्यारहवें दिन नामकरण करना, आदि।

तदुपरान्त इस गीत में बाइसवें दिन 'बैसोली' करने का, छठे महीने अन्न प्राशन का, वर्ष भर में जन्मोत्सव मनाने का, तीसरे वर्ष चूड़ा कर्म का, पाँचवें वर्ष कर्णवेध का, आठवें वर्ष जनेऊ का और बारहवें वर्ष विवाह करने का वर्णन है। लोक व्यवहार में आज इतने कर्मो का तो विधान नहीं होता किन्तु गीत में उनके नाम सुरक्षित हैं।

छठी के गीतों में नव प्रसूता की इच्छाओं और मनस्थितियों की चर्चा करके सास, ननद आदि को दिये जाने वाले नेगों की चर्चा मिलती है जिन्हें स्त्रियाँ, 'नारंगी', 'नीबू', 'तिलड़ी', 'बड़ी', 'तोरयाँ', 'खेलंती नार', 'लपझाप पुरियाँ', 'कंकर कुइयाँ' नामक गीतों के अन्तर्गत गाती हैं। ग्यारहवें दिन नामकरण संस्कार होता है। प्रसूता के शुद्धीकरण से लेकर शिशु द्वारा भूमि-स्पर्श कराने तक की भावनाओं को व्यक्त करने वाले ये गीत 'मंगल ध्वनि', 'सूर्य दर्शन', 'ज्यूंति पूजा', 'सेली' जैसे नामों से गाये जाते हैं।

'सूर्य दर्शन', के गीत में वर्णन है कि आँगन में लीप पोत कर चौक पूर गया और पीला वस्त्र पहने राम लक्ष्मण यज्ञ में बैठे। और लाल पीले रंग की 'रंगवाली' धारण कर सीता बहूरानी चौके में बैठीं। जगत शोभित हो गया—

"लिपि घैंसी अंगना में पुरै हाली चौकी,
तसू चौका बैठल पंडित रामीचन्द, पंडित लछीमन,
सेतो जरद पैरी रामीचन्द, पंडित लछीमन,
आण छ पाट, बुणै हाली डोरी,
तस डोरा पैरली सीता देई गोरी,
रातो पिङ.लो पैरी, सीता देई, बहूराणी चौका बैठली ए,
आजु सुहावन, नगरी सुहावन, रातो ए, सेतो ए जगत सोहावै।"

छठें या आठवें महीने शुभ मुहूर्त्त देखकर बालक को पहली बार भोजन कराया जाता है जिसे 'पासिणो' (अन्न प्राशन) कहते हैं। इस अवसर के गीतों में खाद्य सामग्री, वस्त्राभूषण और बालक को खिलाने का वर्णन होता है। ये गीत 'थाल', 'ज्यूनार', 'झँगुलि', 'भात' जैसे नामों से प्रसिद्ध हैं। जब बालक थाली में रक्खी किसी वस्तु को छू लेता है तब उसे सोने चांदी की अँगूठी से भात खिलाते हैं। कामना की जाती है कि वह भात खाने से भाग्यवान होगा, दाल खाने से दयावान होगा, साग खाने से सत्यवादी होगा। पूरी खाने से पुण्यात्मा होगा, आदि।

व्रतबंध के गीत 'गृह जाग' और 'जनेऊ' पहनाने के आधार पर दो भागों में बँटे हैं। पहली श्रेणी के गीतों में 'दार काटणों' (लकड़ी काटना), 'यज्ञ-शाला वणौणी', (वेदी बनाना), 'दियो जगूणो' (दीपक जलाना), 'मनला' (कलश स्थापित करना), 'हूम, (होम) करने का विस्तार पूर्वक वर्णन किया जाता है। इन गीतों से तत्संबंधी विधि विधानों पर प्रकाश पड़ता है। दूसरी श्रेणी के गीतों में 'लटी न्यूतणों' (लट आमंत्रित करना), 'नाई कन सौंपणों' (बाल उतरवाना), 'बटुकन नउणों' (स्नान कराना),' 'जन्यो पैरूंणों' (जनेऊ पहनाना), 'भिच्छा माँगणो' (भिक्षा माँगना), 'काशी पठ्यूंणो (काशी भेजना), जैसे विभिन्न कर्मों का क्रमबद्ध वर्णन किया जाता है।

'जन्यो पैरूंण' के गीत का भावार्थ द्रष्टव्य है जिसमें स्पष्ट किया गया है कि किस प्रकार वह बना है—पहले कपास बोयी गई, देवरानी-जेठानी

ने मिलकर उसे गोड़ा, फिर उसे धुनकर काता गया। फिर उसे एक गुना, दो गुना करके नौ पल्ले का बनाया गया। तब यह जनेऊ बटुक को पहनाया गया।

विवाह संबंधी गीत वर एवं कन्या दोनों के घरों में गाए जाते हैं जिनका आरंभ 'गणेश पूजा' तथा 'सुंवाल पथाई' से होता है। वर पक्ष के गीतों में विशेष हर्ष, उत्साह की आनंदपूर्ण भावनाएँ मिलती हैं। कन्या पक्ष के गीतों में अवसाद, विषाद एवं करूणा की अंतर्धारा विद्यमान रहती हैं। ये गीत अधिकतर कन्या के घर गाए जाते है क्योंकि बारात आने के बाद विधि–विधान उसी के घर सम्पन्न किए जाते हैं।

वैवाहिक रीति–रिवाजों के आधार पर तत्सम्बन्धी गीत कुमाऊँ में लगभग १५ प्रकार के माने जा सकते हैं––

(१) स्नान के गीत,
(२) सुंवाल पथाई के गीत,
(३) रात के गीत,
(४) पूर्वांग के गीत,
(५) बारात चलते समय के गीत,
(६) बारात आते समय के गीत,
(७) गोठ बैठने के गीत,
(८) कन्या दान के गीत,
(९) रत्याली के गीत,
(१०) सुबह के गीत,
(११) कन्या विदा करने के गीत,
(१२) बारात लौटते समय के गीत,
(१३) नौल सेऊँण के गीत,
(१४) बहू बेटियों को बिदा करने के गीत,
(१५) वस्त्रा भूषण देने के गीत।

स्नान के गीत वर अथवा कन्या को स्नान कराते समय गाए जाते हैं जिनमें मैल छुड़ाने, उबटन मलने, दरजी के यहाँ से कपड़े सिलाने आदि का वर्णन होता है। 'सुवाल पथाई' के गीतों में एक गीत के द्वारा सारे पास पड़ोस को निमंत्रण भेजा जाता है जिसमें प्रकृति तक सारे मानव हृदय का विस्तार इस प्रकार प्रदर्शित है–

"सुवा रे सुवा, बनखंडी सुवा,
हरिया तेरो गात पिङ.ल तेरो ठून,
लला तेरि आँखी, नजर तेरि बाँकी' दे सुवा नगरी न्यूत
न नौं जाणन्यू, न गौं पछाणन्यू, कै घर कै नारी न्यूतूँ ?
अयोध्या गौं छ, सुभद्रा देइ नौंछ, वीका पुरीख अर्जुन नौं छ,
वी घर वी नारी न्यूत।
अधिल अधिवाड़ी, पछिल फुलवाड़ी,
छाजौं बैठन छन, झरोखा देखन छन,
हाथ छ बेला, गोदी छ चेला,
औ बेटी खिलकनीं मैता।
सरस्वती देइ नौं छ, खणतोली गौं छ,
उनरा पुरीख नरोत्तम नौंछ,
वी घर वी नारी न्यूत।
चंदा देवी नौं छ चौंदिसा गौंछ, वीका पुरीख बामण नौं छ,
वी घर वी नारी न्यूँत।"

इस अवसर पर 'कणिकी मोलाई' और 'तै लगूंण' को गीत गाये जाते हैं जिनमें लड्डू तथा सुंवाले बनाने की विधि वर्णित है। स्त्रियाँ बड़ी सूक्ष्मता से एक एक विधि का पालन करती हुई चूल्हे पर कड़ाही रखती हैं और घी में पिठा भूनती हैं। चूल्हा लकड़ी मांगता है, चूल्हे की मिट्टी 'ऐपण' (अल्पना) मांगती है। कड़ाही पाग बनाने के लिए गुड़ मांगती है और गृह स्वामिनी अपने स्वामी के अखण्ड राज्य की कामना करती हुई पुत्र-पुत्री के कार्य की इस प्रकार सफल परिणति माँगती है--

"को एउ ताइ मोलाला अबीयन ए
को ए उ चूलि हलालि, सुहागिलि ए।
रामीचन्द, लछीमन ताइ मोलाला अबीयन ए
सीता देइ बहूराणी चूलि हलालि सुहागिलि ए।
चूलि जो मांग छ श्रीखण्डदार अबीयन ए,
ताइ जो मांग छ गुड़ किया भोग सुहागिलि ए,

माइ जो मांग छ सैंयां को राज अबीयन ए
करन छन लल्ला को काज सुहागिलि ए ॥"

पूर्वांग के गीत लगभग वही हैं जो अनिवार्य रूप से प्रत्येक संस्कार के पूर्व गाये जाते हैं। बारात चलते समय के गीतों में मंगलाचार के अतिरिक्त माता के दूध मोल की चर्चा होती है। माता ही पुत्र को दूध पिलाकर इस योग्य बनाती है।

जोहार में प्रचलित इस अवसर के गीत में पंच देवताओं सहित कुटुम्बियों को भी आमंत्रित किया गया है। पांडवों की बारात मोरी नरैन कोट जा रही है जहाँ से वे बाला द्रौपदी को विवाह कर लाएंगे। बारात आने पर कन्या की माता जिज्ञासा करती है कि बारात में कौन कौन लोग होंगे ?

तदुपरान्त कन्यादान के गीतों में नारी हृदय की करुण भावनाएँ केन्द्रीभूत हो जाती हैं। प्रत्येक रीति के अनुसार अलग अलग गीत क्रमशः 'छोली को गीत' (वर पक्ष से आया सामान) 'गड़ुवे की धार को गीत,' 'अंगुठा पकड़न को गीत', 'अंतरपट उठूंण को गीत' (अंतर्पट उठाने का गीत), 'दहेज बखत को गीत,' 'चेलि समझूंण को गीत' (कन्या को समझाना), 'सज्जादान' (शय्यादान) आदि नामों से प्रचलित हैं। प्रातःकाल 'रात ब्याण' के गीत गाए जाते हैं जिनमें पौ फटने की सूचना देते हुए सभी को जगाया जाता है।

तत्सम्बन्धी एक गीत में प्रातः काल के समय प्रकृति के विभिन्न व्यापारों की पृष्ठभूमि में मानव भावों में होने वाले सूक्ष्म परिवर्तनों को चित्रित किया गया है। प्रातः काल के समय होने वाले प्रकृति के विभिन्न क्रिया व्यापारों का तथा सुबह के समय नाक के स्वर के जोर जोर से बजने, आभूषणों के शीतल होने आदि का स्वाभाविक चित्रण हुआ है--

"बिजौं गुसैं रामीचन्द, लछीमण तुम बिजौं,
भैर रयनि बिवै छ सुहागिलि नींद !
ततुक बिजै छिण धना मेरी,
कसी जाणी रयनि बिवैछ सुहागिलि नींद।
गंग को शोर चलन लागो,
तब जाणी रयन बिवै छ सुहागिलि नींद।

घोड़ी शाला घोड़ी खिलण लागी,
तब जाणी रयनि बिवै छ सुहागिलि नींद ।
डाइ को काग बोलण लागो,
तब जाणी रयनि बिवै छ सुहागिलि नींद ।
गोदी बालो खेलण लागो,
तब जाणी रयनि बिवै छ सुहागिलि नींद ।
नाक को शुर चलण लागो,
तब जाणी रयनि बिवैछ, सुहागिलि नींद ।"

कन्या विदा करने के गीतों में अनेक मार्मिक प्रसंग मिलते हैं। चूंकि विवाह के दूसरे दिन ही कन्या को बिदा किया जाता है अतः पूर्व स्मृतियाँ ताजी होने के कारण वेदना अधिक मुखर होती है। जिस माता ने उसे पाल पोस कर इतना बड़ा किया, गृहिणी के सभी कर्त्तव्य सिखाए, वही इस समय अपने को असहाय पाती है।

ये गीत भावानुसार तीन प्रकार के हैं--(१) कुछ आशीर्वचन संबंधी हैं, (२) कुछ माता-पिता और संबंधियों की भावनाओं को व्यक्त करते है, तथा (३) कुछ गीत सद्यः विवाहिता कन्या की मनोदशाओं से सम्बन्ध रखते हैं।

एक गीत में कन्या का दुख वर्णित है कि उसका ससुराल तो परदेश जैसा है। वहाँ कौन भोजन देगा, कौन पानी ? वह अपने पिता से भिन्न भिन्न वस्तुएं भेजने के लिए निवेदन करती है। एक गीत में वह बिदा के समय माता, चाची, बहिन आदि से अपना मोह छोड़ने को कहता है क्योंकि अब तो उसका कन्यादान हो चुका है—

"हरियालो ठाड़ो मेरो द्वार, इजा मेरी पैंलागी,
छोड़ो छोड़ो इजां मेरी आंचली, काखी मेरी आँचली,
बबज्यू लै दियो कन्यादान, ककज्यू लै दियो सत बोल
इजा मेरी पैंलागी।"

कुमाऊँ में अब मृत्यु संबंधी गीत प्रचलित नहीं हैं। शायद पहले कभी प्रचलित रहे हों।

उपर्युक्त उदाहरणों से ज्ञात होगा कि अधिकांश संस्कार गीतों की भाषा ब्रज मिश्रित कुमाउंनी है। वस्तुतः ये गीत ब्रजमंडल और अवधी के पड़ने वाले प्रभाव हैं जैसा कि इनकी विषयवस्तु से भी सिद्ध होता है। इनकी मौलिकता संदिग्ध हैं।

कुमाउंनी लोक जीवन का वास्तविक प्रतिनिधित्व वे मुक्तक गीत करते हैं जिनका सम्बन्ध यहाँ की प्राकृतिक, भौगोलिक, सामाजिक वे एवं आर्थिक परि-स्थितियों के साथ है। इन्हीं गीतों के द्वारा वातावरण जन्य विशेषता के साथ जीवन में संघर्ष, परिहास एवं उल्लास की सभी भावनाएँ अभिव्यक्त हुई हैं। प्रेम इन गीतों की व्यापक आधारशिला है जिसके प्रायः सभी पक्ष इन गीतों में उभरते चलते हैं।

सामान्य रूप से प्रवासी प्रिय के लिए संदेश, मातृ भूमि की स्मृति, क्षणिक यौवन की चंचलता, प्रकृति के साथ गहरी आत्मीयता, पारिवारिक जीवन की विषमता, वर्त्तमान जीवन की जटिलता, नव जागरण, सामाजिक मान्यताओं में परिवर्तन, पश्चिमी सभ्यता का प्रभाव, स्त्री शिक्षा और फैशन आदि इन गीतों के मुख्य विषय हैं। परंपरा–प्रियता के साथ साथ आधुनिकता इनकी जीवन्त शक्ति का प्रमाण है। ग्रामीण जन समुदाय के जीवन का प्रत्येक क्षण इन्हीं मुक्तक गीतों के ताने बाने से बुना गया है। ये गीत नृत्य, अनु-भूति, संवाद, धार्मिकता तथा अवसर विशेष के आधार पर कई प्रकार के हो सकते हैं।

२ नृत्य प्रधान गीत—

ये मुक्तक गीत संगीत व नृत्य के साथ इतने एकात्म हैं कि इनका नाम-करण नृत्य शैलियों के ही आधार पर हुआ है। इनकी लय एवं छन्द रचना, नृत्यों की गति से निर्धारित होती है। ये गीत मुख्यतः मेलों-त्यौहारों पर गाये जाते हैं यद्यपि विशेष अवसरों पर भी इनका आयोजन किया जाता है। स्थानीय भेदों से इनमें विशिष्टता उत्पन्न हो जाती है।

ये तीन प्रकार के हैं—

(क) झोड़ा,
(ख) चाँचरी,
(ग) छपेली।

(क) झोड़ा—

कुमाऊँ का प्रसिद्ध नृत्य-गीत 'झोड़ा' है जिसमें दो दो सौ तक स्त्री-पुरुष सम्मिलित हो जाते हैं। वे पहले एकत्र होकर एक वृत्ताकार घेरा बनाते हैं और एक दूसरों के कंधों पर हाथ रखकर धीमे धीमे पद संचालन से नृत्य आरम्भ करते हैं। वृत्त के बीच में प्रमुख गायक 'हुड़किया' किसी गीत की टेक आरंभ

करता है। फिर अन्य व्यक्ति वृत्ताकार नाचते हुए गीत की पंक्तियाँ दुहराते हैं। इस प्रकार झोड़ा आरम्भ हो जाता है।

'झोड़ा' य 'झवाड़ा' शब्द संस्कृत के 'झटिति' से व्युत्पन्न प्रतीत होता है। इसमें पग संचालन और लय दोनों द्रुत रहते हैं। गति की तीव्रता के साथ इसका आकर्षण बढ़ता है। वृत्त का गोल होना आवश्यक नहीं। कभी दो दल बनाकर स्थान परिवर्तन करते हुए झोड़े गाये जाते हैं। ये दो तीन मंजिल तक के होते हैं। कुछ वर्ष पूर्व तक मासी नामक स्थान में आयोजित सोमनाथ मेले के अवसर पर सात-सात मंजिले झोड़ों तक का प्रदर्शन होता था।

विषय-वस्तु की दृष्टि से उक्त झोड़ों के तीन रूप हैं--(१) धार्मिक, (२) भाव मूलक, और (३) सामयिक।

(१) धार्मिक झोड़ा--

धार्मिक झोड़ों में किसी स्थान विशेष तथा अवसर विशेष सम्बन्धी देवी-देवताओं का स्मरण, पूजा, विनय आदि की भावनाएँ प्रकट की जाती हैं। जैसे एक गीत में माता भवानी से धर्मद्वार खोलने की प्रार्थना की है। देवी पूछती है कि तुम लोग क्या भेंट लाए हो? भक्त उत्तर देते हैं कि हम तुम्हारे लिए दो जोड़ बकरे लाए हैं, दो जोड़ निशान लाए हैं, और दो जोड़ नगाड़े लाए हैं,। किवाड़ खोल दो। इस प्रकार नृत्य के माधुर्य के साथ गीत आगे बढ़ता है। पंक्तियाँ हैं--

"ओहो, गोरी गंगा भागीरथी को, के भल रेवाड़ा।
ओहो, खोली दे माता, खोल दे माता, धरम केवाड़ा।
ओहो, के ल्यै रै छ भेंट पहौंड़ा, के खोलूं केवाड़ा?
ओहो, द्वी जौंया का लाखा ल्यै रयूं, खोल दे केवाड़ा।
ओहो, खोलि दे माता खोल भवानी, धरम केवाड़ा
ओहो, के ल्यै रै छ भेंट पहौंड़ा, के खोलूं केवाड़ा?
ओहो, द्वी जोड़ा निसाण ल्यै रयूं, खोलि दे केवाड़ा।
ओहो, खोलि दे माता खोल भवानी, धरम केवाड़ा।
ओहो के ल्यै रै छ भेंट पहौड़ा के 'खोलूं केवाड़ा?
ओहो, द्वी जौंयां नगारा ल्यै रयूं, खोली दे केवाड़ा।
ओहो, खोली दे माता खोल दे माता, धरम केवाड़ा।"

(२) भावमूलक झोड़ा—

भावमूलक झोड़ों में लोक गायक का उद्देश्य मनोरंजन और कौतूहल उत्पन्न करना होता है। जीवन के कठोर पक्ष को क्षण भर के लिए भूलकर वे आमोद प्रमोद में मग्न होते हैं। इसलिए किसी गीत में कोई प्रेमी यदि प्रेमिका के लिए वस्त्राभूषण लाने का वचन देकर उसे प्रसन्न करना चाहता है तो कहीं थोड़ा सा परिचय हो जाने पर वह उससे दोपहर में बांज काटने के लिए चलने को कहता है। गायक बीच-बीच में चुटकी लेते हुए हँसी की कोई ऐसी बात कह देते हैं कि श्रोताओं की थकान दूर हो जाती है।

इसी प्रकार के एक गीत में कोई व्यक्ति अपने पुत्र की इसलिये प्रशंसा करता है कि सब लोग तो दुकान जाते हैं, किंतु वह बाजार जाता है। सब आलू गोभी लाते हैं, किंतु वह शिकार लाता है। सब कोट पतलून पहते हैं, किंतु वह सलवार पहनता है। सब गाय भैंस पालते हैं किंतु वह बकरी पालता है। सब पहाड़ रहते हैं किंतु वह भाबर रहता है। किन्तु सबसे बड़ी बात तो यह है कि सब नकद सामान खरीदते हैं किंतु वह उधार ले आता है।

झोड़ों का एक अन्य रूप प्रचलित है जिनमें भावनाओं की गहराई अधिक मिलतीं है। इनमें वर्णित प्रेम प्रकृति के बीच पल्लवित होने के कारण उदात्त होता है। इनमें कहीं लोक कल्याण की भावना है, तो कहीं प्रेम आत्म बलिदान के रूप में निखरता है। प्रेमी का स्वर सुन कर वहाँ उड़कर पहुँचने की इच्छा होती है। ऐसे गीतों की प्रतीक योजना भी सुन्दर है। इन भावनाओं के एक गीत में जिज्ञासा की गई है कि शिखर के उस पार मुरली और 'बिणाई' बाजा कौन बजा रहा है? शिखरोंपर तो हिमपात हो चुका है। पंख होने पर तुम्हारी ओर उड़ आती। तेल बत्ती समाप्त हुई और दीपक भी बुझ चला, किन्तु तुम्हारे परदेस चले जाने पर मैं कहाँ जाउंगी ?—

"पार डाना को छै भागी, सूर सूर,
मुरुलि बाजी गे, हो मुरुलि बाजिगे।
पारा डाना को छै भागी रूण—झूण
बिणुलि बाजिगे, हो बिणुलि बाजीगे।
पड़ी गो बरफ सुआ, पड़ी को बरफ,
पांखी हुन्यूं उड़ि औन्यूं तुमरि तरफ
भागी फूर फूर, मुरुलि बाजिगे।

तेल बाती बुजी गयो, यो दियो निमाणो
तुमुले जाणो परदेस, मैल कतिकै जाणौ ।
भागी सूर सूर, मुरुलि बाजिगे ।"

(३) सामयिक झोड़ा—

सामयिक झोड़ों में राजनैतिक विषयों के अंतर्गत शासन व्यवस्था, विकास योजना, नेताओं की नीति जैसे विषयों पर प्रकाश पड़ता है। आर्थिक झोड़ों में गरीवी और दुर्दशा का चित्रण करते हुए शोषण से उत्पन्न स्थितियों का उल्लेख हुआ है। सामाजिक झोड़े, मद्य निषेध, मुर्गी पालन, कलियुग जैसे विषयों से संबंध रखते हैं। गायक सुधार योजनाओं का उतना ही खूलकर वर्णन करते हैं जितना समाज सेवी कार्यकर्त्ताओं के त्याग का। कोसी नदी से अल्मोड़ा बाजार में पानी आ गया। गाँव गाँव में पानी पहुँच गया। अब ग्राम सेवक ग्राम सुधार करने लगे और पंचायतों में रेडियो लग गए। बागेश्वर से आगे कपकोट नाकुरी तक सड़क बन गई। एक झोड़े की यही विषय वस्तु है।

कुमाऊँ के लोक गायकों ने नेहरू चाचा को 'नेहरू कका' बना कर अपने परिवार का सदस्य मान लिया और "ओ काका ! नेहरू काका ! भारत सिरमौरा जम"—शीर्षक से उन पर एक गीत बना दिया। देशभक्त भगत सिंह पर एक दूसरा गीत बन गया जो स्वतंत्रता के लिये बलिदान हो गए थे। सायंकाल ७ बजे उन्हें फांसी हुई तो स्वर्ग से उन्हें लेने के लिये विमान उतरा। भारत भर में उनका इतिहास छप गया—

"धन्य धन्य भगत सिहा, धन्य तुमूँ हणि
पाणि को पिजिया बीरा, पाणि कों पिजिया ।
फांसी हणि गयो वीरा, आजादी का लिजिया
हल हल आमां वीरा, हल हल आमां ।
आहा ते वीरा कैं फांसी है छ, सात बाजी शामा ।
आबा न्है गया वीरा, बैकुंठा का धामा
तै वीरा आया ह्वो वीरा, फुलों का विमाना ।।
खेली हाल तास वीरा, खेली हाला तासा
भारत माँ छपो वीरा, तेरा इतिहासा ।।

लसी पसी खीरा देसा, लसी पसी खीरा,
भारत जाहिर है गे तेरी तसबीरा ।।"

इन्हीं गीतों में एक गीत कुली बेगारप्रथा संबंधी है जिसकी घोषणा सन् १९२१ में की गई थी। बागेश्वर में उत्तरायणी के अवसर पर श्री बद्रीदत्त पांडेय के नेतृत्व में चालीस हजार कुमाऊँ वासियों ने गंगाजल उठाकर प्रतिज्ञा की थी कि अब से वे न तो बेगारी करेंगे और न जबर्दस्ती बोझा उठाएंगे। अंग्रेज अधिकारी देखते ही रह गए। गीत में इसी कारण बद्रीदत्त पांड़े के अतिरिक्त विक्टर मोहन जोशी और हरगोविंद पन्त का भी उल्लेख हुआ है–

"ओ झकूरी ऊंनी यों हृदय का तारा, याद ऊं छ जब कुल्ली बेगारा।
खै गया खवै गया बडी बेर सिरा, निमस्यारी डाली गया चौरासी फेरा।
सुण रे पधाना यो सब पुजी गो, धान ल्या, चौथाई ध्यू को।
ह्यूँन चौमास जेठ असाढ़ा, नाड. भुखै बाट लागा अलमोड़ी हाटा।
बोजिया बाटा लागा यो छिन कानै धारा, पाछी पड़ी रै यो कोंड़ों की मारा
यो दीन दशा देखी दया को, कूर्मांचल केसरी बदरीदत्त नामा
यो विक्टर मोहना हरगोविन्द नामा, ऐ पूजा तीन वीरा।
सन् इक्कीस उतरैणी मेला यो, ऐ पूजा तीन वीरा गंगा ज्यू का तीरा।
सरजू बगड़ा बजायो लो डंका, अब नी रौली यो कुल्ली बेगारा।
क्रुक सन सैप यो चाए रैगो, कुमैया वीर को जब विजय है गो।
सरयू गोमती जय बागनाथा, साँति लै सकीगे कुल्ली प्रथा ।।"

स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरांत यहाँ पर कुछ राष्ट्रीय त्यौहार प्रचलित हुए जिनकी तिथियाँ २६ जनवरी, १५ अगस्त, २ अक्टूबर आदि हैं। कुमाऊँ में इन अवसरों के गीत भी बने हैं। गायक आर्थिक शोषण से कितना दुखी है इसका ज्ञान एक अन्य गीत से होता है। कोई पुरुष विनोदपूर्ण स्वर में अपनी प्रेयसी से कहता है कि घर में मोटा अन्न 'मडुवा' तक खाने को नहीं है और तू पान मांगती है। समय ही ऐसा आ गया है कि भूख के मारे प्राण निकल रहे हैं। बच्चे बहुत हो गए। काम कुछ नहीं है। बेकारी के कारण भूखे मर रहे हैं। अगले वर्ष फिर संतान हो जाएगी। खेती बारी भी सब नष्ट हो गई। क्या काम करें?

विनोद के साथ साथ व्यंग्य भी चलता है। बाजार में गेहूँ के स्थान पर जब

बाजरा बिकने लगा तो लोगों को उसी से संतोष करना पड़ा। किन्तु सूखा पड़ने से जब जंगल में घास तक नहीं उगी तो बिना घास पात के भैंस दूध कैसे देती ? बाजार से दो सेर बाजरा लेकर आने में कंधे में पीड़ा होने लगी। पत्नी ने सुन्दर रोटी बनाई किन्तु जेठ जी बीमार पड़ गये।

एक गीत में यही भाव है जो कंट्रोल के समय बना था। उस समय प्रत्येक व्यक्ति के लिये अन्न का वितरण सीमित कर दिया गया था। इसी की व्यंजना हुई है--

"राणी खेता बजारा, बाजीर कें चलो झक्।
नान भाऊ का बौज्यू, बाजीर के ल्याया झक्।
द्वि सेर बाजिरा मेरी, कानी जै पिड़ैंगे।
बिन घासा बिन पाता, मेरि थोरी जै पटैगे।
नान भाउ की इजा, तू र्‌वाट के हाल छी टक्।
मालखन भितेरा म्यारा ज्याठज्यू लकड़ पट्ट्।"

कुमाऊँ में जमींदारी प्रथा तो नहीं है फिर भी कुछ लोगों के पास बहुत जमीन हो गई है। दूसरे लोग बटाई पर काम करते हैं। जमीन भी 'तलाऊँ,' 'मलाऊँ,' 'आबाद,' 'बंजर' कई प्रकार की है। नदियों की घाटियों वाली भूमि अधिक उत्पादक होती है जिसे 'स्यारा' या 'कुऊीन' कहते हैं। दलदली भूमि 'सेमार' या 'गांजो' कहलाती है। इनकी उत्पादन क्षमता को ध्यान में रखकर जो लगान वर्षों पूर्व अंग्रेजों द्वारा निर्धारित किया गया था उसमें समय समय पर परिवर्तन होते गए। जब कुछ वर्ष पूर्व भूमि-नाप सम्बन्धी नई योजना आरम्भ हुई तो कुछ लोग अपनी जमीन बढ़ा चढ़ा कर लिखाने लगे। कुछ पीछे रह गये। गीतकारों ने इस स्थिति की सटीक व्याख्या की है।

समाज में विवाह-पूर्व सन्तानों का जन्म लेना भी उनकी दृष्टि से ओझल नहीं रहता। वह किसी विवाह के प्रसंग पर टिप्पणी करता है कि बाहर बारात खड़ी है और घर के भीतर बालक का जन्म हुआ है। इधर कन्यादान होता है तो उधर बालक रोता है। अब 'ब्योली' (बहू) 'ज्यूंति पूजा' करेगी और दूल्हा बच्चे को संभालेगा। एक अन्य गीत में कोई बहू अपने ससुर और जेठ जी के सामने धान कूटने में संकोच करती है क्योंकि उसकी घाघरी, अंगिया फटी हुई है। सास ने बड़ी युक्ति से उसे धान कूटने की विधि बतलाई है।

स्मरणीय है कि ऐसे गीत मात्र विनोद उत्पन्न नहीं करते बल्कि दरिद्रता के कटु यथार्थ पर व्यंग्य करते हैं। 'झोड़े' चूंकि प्रत्येक समय पर अवसर के अनुकूल बना लिए जाते हैं इसलिए उनमें अत्यधिक प्रभावोत्पादकता होती है। इसी कारण ये कुमाऊं के सर्वाधिक लोकप्रिय गीत हैं। लोक जीवन सम्बन्धी किसी भी घटना या व्यापार को इनका लक्ष्य बनाया जा सकता है।

(ख) चांचरी--

'चाँचरी' कुमाऊं के जातीय नृत्य-गीत हैं जिनमें स्त्री और पुरुष समान रूप से सम्मिलित होते हैं। "इसका सबसे बड़ा आकर्षण वेशभूषा की विभिन्नता और रंगीनी है। सारा वातावरण रंग बिरंगे वस्त्रों से रंजित हो उठता है और दर्शक की आँखें नर्तक समूह पर गड़ी रह जाती हैं। कोई मेला, कोई पर्व और कोई त्यौहार 'चांचरी' नृत्य के समारोह के लिए उपयुक्त अवसर है। इसलिए यह नृत्य विभिन्न अवसरों पर सम्पन्न किया जाता है।" [1]

'चाँचरी' संभवतः 'झोड़े' का प्राचीन रूप है और उससे मिलता जुलता है। इसका सम्बन्ध 'चंचरीक गति' से मालूम पड़ता है। चंचरीक की भांति वृत्ताकार घेरे में क्रमशः आगे बढ़ते हुए और पीछे हटते हुए घेरे को घटाते बढ़ाते रहते हैं। अलमोड़ा, नैनीताल में इसे भी 'झोड़ा' कहते हैं। किंतु चाँचरी में पद संचालन अपेक्षाकृत मंद होता है तथा स्वरों के आरोह अवरोह की गति भिन्न होती है। इनमें झोड़ों की अपेक्षा धार्मिक भावना भी अधिक रहती है। बागेश्वर स्थान में उत्तरायणी के अवसर पर 'चाँचरी' का सौंदर्य विशेष मोहक होता है।

धर्मपरक एक 'चाँचरी' में कोई गायक शिव जटाधारी भैरव की शरण में जाकर पूर्ण आत्म समर्पण की कामना करता है। भैरव जैसा भी करेंगे, उसे स्वीकार होगा। इस गीत में यह विशेषता है कि संपूर्ण देश की राष्ट्रीय कल्पना करते हुए भैरव को उसका रक्षक कहा गया है। हिमांचल से आसमुद्र भूमि उसकी चौकी है। इसका ध्यान रखना उसका कर्त्तव्य है। अब वह जैसा करे। गीत है--

"शिव जटाधारी भैरूँ तुम जे करला,
बद्रीनाथ वली हो भैरूँ तुम जे करला।

---

१. 'उत्तर प्रदेश में लोक नृत्य'--पृ० २१।

ह्यो तुमरि चौकी हो, भैरूँ तुम जे करला।
शिव जटाधारी भैरूँ, तुम जे करला।
गंगोतरी वली हो भैरूँ तुम जे करला,
ह्यो तुमरि चौकी, भैरूँ तुम जे करला।
काशमीरा वली हो भैरूँ, तुम जे करला।
ह्यो तुमरि चौकी हो भैरूँ तुम जे करला ॥"

(ग) छपेली—

'छपेली' दो प्रेमियों का युगल नृत्य है जिसमें प्रेमी या प्रेमिका के एक हाथ में रूमाल रहता है तथा दूसरे में दर्पण। दो तीन सहायक हुड़का, बाँसुरी लेकर अलग से गीत गाते हैं अथवा पुरुष ही हुड़के की थाप पर नाचता गाता है। यद्यपि यह नृत्य गीत प्रेमी प्रेमिका के युगल अर्थ में रूढ़ हैं किन्तु इसके पात्र कोई भी दो व्यक्ति हो सकते हैं। इसकी नृत्य शैली ढली हुई है जिसकी गति धीरे धीरे तीव्र होती है। अपने विशिष्ट ताल (रिदम) के कारण यह अत्यन्त आकर्षक होता है। विषय वस्तु भी तदनुसार मनोरंजक एवं उल्लासपूर्ण रहती है।

"छपेली' शब्द 'छबीली' से बना है। जहाँ पर छबीली स्त्रियाँ बैती हों, अथवा जिस गीत में छबीली स्त्रियों का प्रसंग वर्णित हो, ऐसा नृत्य गान 'छबीली' या 'छपेली' कहा जाता है। गीत में एक टेक होती है और बीच बीच में जोड़ लगाकर इसकी कलेवर वृद्धि की जाती है। चूंकि गीत में श्लील, अश्लील भावना पर अधिक ध्यान नहीं दिया जाता, अतः वयस्क और आदरणीय व्यक्तियों के बीच यह कम गाई जाती है। इसकी विशेषता उल्लासपूर्ण संगीत, आकर्षक गति, लयपूर्ण व्यवस्था, भावपूर्ण गीतात्मकता तथा सजीव अर्थपूर्ण अंगिमा में मानी जा सकती है। एक उदाहरण दिया जाता है—

"ओ बाना, पनुली चकोरा त्वीले धारौ बोला
ओ लौंडा कुन्दन अमीना त्वीले धारौ बोला।
सुपी भरि धाना वे, सुपि भरी धाना
एतरि दुनियां मांजी त्वे बतूँनी बाना।
पाखै की दन्यारी वे, पाखै की दन्यारी।
दंत पाटी भुली जूँलो, नि भुलूँ अन्वारी।

पहाड़ भोटिया घोड़ो, मैदान को हाती,
त्वीलें यसी बोली मारी धन छ मेरी छाती।
ओ बाना पनुली चकोरा, त्वीले धारौ बोला ॥"

इन पंक्तियों के जोड़ इच्छानुसार घटाए, बढ़ाए जाते हैं। गीत का छन्द, उसकी यति और विराम नृत्य की गति से निर्धारित होता है। विषय स्वच्छंद प्रेम का वर्णन है। पनुली चकोर पक्षी की भाँति कोई रूपसी है जो स्वयं प्रेम करती है, अथवा दूसरे का प्रेम रखती है। विशाल संसार में सब उसी को रूपवान कहते हैं। उसके चलने की ठसक मन को कचोटती है। इतना प्रेम व्यापार नही फैलाना चाहिये। 'छपेली' गीत शृंगार के संयोग पक्ष की अनुभूति कराते हैं। इनमें यौवन का उल्लास और आवेग चरम उत्कर्ष पर पहुँचता है।

नृत्य-प्रधान गीतों में शौक-भोटिया लोगों के 'चौंफुली', 'डंड्याला', 'चाखुली- माखुली' जैसे गीत सम्मिलित किये जा सकते हैं। दक्षिणी क्षेत्र के थाड़ू-बोक्सा जातियों में प्रचलित 'लीला', 'कन्हरी', 'झगड़ों', 'चील्हा', 'रसौता' नामक गीत भी इसी वर्ग के अंतर्गत आते है।

(३) अनुभूति प्रधान गीत—

इनमें नृत्य किया जाना आवश्यक नहीं। प्रधानता भाव सौष्ठव एवं अनुभूति की है। बीच बीच में यदि भावों के अनुरूप अंग संचालन किया जाए तो वह नृत्य की भांति निश्चित ताल बद्ध नहीं होता। आलाप और मुख्य पंक्तियों की आवृत्ति समान रूप से चलती हैं।

ये गीत दो प्रकार के हैं—

(क) भगनौल

(ख) न्योली।

(क) भगनौल—

ये उक्ति परक सौंदर्य गीत हैं जिनमें कोई अनुभूति प्रधान होती है। गायक शारीरिक सौंदर्य अथवा प्रेम विषयक कोई चुनी हुई पंक्ति कहता है जिसकी पुनरावृत्ति अन्य गायक करते हैं। कभी प्रमुख गायक हुड़का बजाना रोक कर दो चार उक्तियों को एक सांस में कह जाता है जिसे प्रायः दूसरे गायक नहीं दुहराते। उत्साह में आकर गायक नाचने लगते हैं।

'भगनौल' सदा खड़े होकर आलंबन की ओर मुहँ करके गाए जाते हैं। मुख्य गायक 'हुड़किया' सजधज कर उपस्थित होता है। साथ ही गायक 'होवार' उसके स्वरों का विस्तार करते हैं। शैली की दृष्टि से ये गीत गद्यात्मक पद्य के अच्छे उदाहरण माने जा सकते हैं।

ग्रामीण क्षेत्रों में भगनौल के दो तीन रूप प्रचलित हैं। कहीं तो प्रथम दो पंक्तियाँ सार्थक होती हैं जो गीत की टेक बनती हैं। फिर जोड़ कहे जाने के उपरान्त उनकी पुनरावृत्ति की जाती है। जैसे–

"जागेश्वर धुरा बुरूंशी फुलि गे,
मैं कैहूं टिपूँ फूला मेरि हंसा रिसै रे।
ओऽऽ ह्वै लाया काकड़ी, मुखड़ी खिसै रे।
मड्डुवा हरियाली लागी, पिरीता भुली गे।
ओऽऽ पिरीता भुलि गे – – –"।

दूसरे प्रकार के भगनौल जोड़ों से तो बंधे होते हैं, इसके अतिरिक्त प्रत्येक पंक्ति का अंतिम शब्द तुकान्त रहता है। बीच की पंक्तियाँ इच्छानुसार गद्य जैसी पढ़ दी जाती हैं। जैसे—

"द्वी माणियाँ तौली, के है रै छै भोली,
द्वी मजला घर म्यरो, छाजा में भै रौली।
औनीं गंगा नैई लीये, ऊनैं जै के रौली।
एक म्यारा घर छ, दोहरि तू नौली।
बड़िया म्यारा मेरि नौली ब्वारी कौली
बगसै की ताई कुच्ची त्यारै हाथै रौली –––।"

भगनौल का तीसरा रूप वह जोड़ वाला है जिसमें गायकों की हवाई कल्पना को छूट मिल जाती है। वह जो कुछ कहना चाहता है, जिस रूप में कहना चाहता है, यहाँ आजादी से कह देता है। इन जोड़ों की एक एक पंक्ति उसके हृदय से निकलती है जिसमें उसके जीवन की गहराई होती है–

(१) "बाकरै की खुटी,
आपुणा जोवन देखी आफि रै छै टुटी।"

(नायिका अपने यौवन का विकास देखकर स्वयं अपने ऊपर मुग्ध होती है)।

(२) "ढोलुकी कसणा,
सबै चीज भुलो जूंलो नि भुलूँ हँसणा"।

(सब कुछ भूला जा सकता है, किन्तु नायिका की मुस्कराहट नहीं)।

(३) "खाटि का पाया,
चिट्ठी में खबर भेजिये, बाटुली में माया'।

(चिठ्ठी से कुशल समाचार देना और हिचकी से प्रेम का स्मरण कराना)।

उक्त उदाहरणों में सूक्ति प्रधान पंक्ति केवल दूसरी है। पहला पद असंबद्ध है जो केवल तुक मिलाने के लिये प्रयुक्त हुआ है। कभी इस पद को दोहरा कर पूरा वाक्य बनाते हैं–

"हिसालु की केड़ी, हिसालू की केड़ी।
सुवा कैं नराई लागि, आँचली में फेड़ी।"

कभी एकरसता दूर करने के लिये पहले पद की आवृत्ति न करके उसे दूसरे तुकान्त पद के साथ रखते हैं। कभी पहले तीन चार असंबद्ध पद कह कर मुख्य सार्थक पंक्ति को सबसे अंत में कहते हैं–

"खमीरै की पाई,
भैंसी नौं छ काई, तारा जसी ब्याई,
एक बाटैलै भौजी हुंछी, एक बाटै लै साई।"

यही जोड़ बनते बनते पूरे गीत का आकार ग्रहण कर लेते हैं, तब 'भगनौल' गीत की पूरी रूपरेखा बन जाती है। शृंगार की प्रधानता होने पर भी इन गीतों में किसी न किसी शाश्वत सत्य की अभिव्यक्ति होती है। इस प्रकार 'भगनौल' शब्द अपनी सार्थकता सिद्ध करता है।

'भगनौल' शब्द की व्युत्पत्ति है--भग+नवल (ऐश्वर्य+नवल) अर्थात् जिस उक्ति या गीत में निरन्तर नवीन सौंदर्य निखरता हो, वह 'भगनौल' है। इसकी व्युत्पत्ति भाग लगाने से भी की जा सकती है अर्थात् आवाज के साथ में आवाज मिलाना।

(ख) 'न्योली'–

'न्योली' प्रेमपरक संगीत प्रधान गीत हैं जो कुमाऊँ के सीमावर्ती भाग डोटी, पिथौरागढ़, सोर और सीरा की ओर गाए जाते हैं। इन पर नेपाली धुनों और उच्चारणों का बड़ा प्रभाव पड़ा है। अपने खिंचे हुए आलापों तथा करुणात्मक अनुभूतियों के कारण ये गीत अत्यन्त प्रसिद्ध हैं। प्रायः जंगलों में ग्राम वासियों द्वारा घास काटते समय अथवा लकड़ी बटोरते समय ये गाए जाते हैं। पहाड़ की धार के एक ओर से कोई पुरुष पहले धीरे धीरे फिर उच्च स्वर से 'न्योली' गीत आरंभ करता है। उसे सुनकर दूसरी धार में कार्यरत कोई स्त्री उत्तर देती है।

ये एक प्रकार के युगल गीत हैं। 'न्योली' शब्द नवेली का रूपान्तर हो सकता है जिसका अर्थ है नवीन स्त्री को नवीन रूप में संबोधित करना। अथवा किसी स्त्री को नवीन रूप में आलंबन बनाकर उसके प्रति स्वर बदल बदल कर अपनी प्रेम परक अनुभूतियों को व्यक्त करना भी इसका अर्थ हो सकता है।

'भगनौल' की भाँति 'न्योली' में भी मूल छन्द दो दो पंक्तियों के होते हैं जिनकी पहली पंक्ति असंबद्ध जोड़ होती है। यह केवल तुक मिलाने के लिए प्रयुक्त होती है। किन्तु 'न्योली' गीत उतना शृंगार परक न होकर जीवन चिन्तन से अधिक अनुप्रणित रहता है। इसमें विरह के स्वर और आलापों के खिंचाव मूल प्रसंग को अधिक करुण बनाते हैं। ये एक प्रकार से विरह प्रधान गीत हैं। इसके विपरीत 'भगनौल' में शारीरिक सौंदर्य का वर्णन प्रमुख रहता है।

दोनों गीतों में शैलीगत भेद भी है। 'भगनौल' में पहले वाक्यांश की आवृत्ति करके वाक्य बनाते हैं, किंतु 'न्योली' में यह पंक्ति पहले से ही पूर्ण वाक्य रहती है। 'न्योली' के छन्द में उत्तरार्द्ध का वाक्यांश, जिसमें गीत का मुख्य भाव अंतर्निहित रहता है, दुहराया जाता है। इस प्रकार छन्द में तीन तीन पंक्तियाँ हो जाती हैं। यह पदक्रम 'भगनौल' में निश्चित नहीं होता। इसके अतिरिक्त 'भगनौल' में हुड़का बजता है, 'न्योली' में नहीं बजता। वह केवल स्वर सौंदर्य पर आधारित है।

'न्योली' गीतों की विषयवस्तु का विवेचन करने पर उनमें भाग्यवादिता, दार्शनिकता, सहनशीलता, तन्मयता, एकान्तिक प्रेम तथा स्थानीयता की प्रवृत्तियाँ मुख्य रूप से लक्षित होती हैं। कुछ उदाहरण हैं—

(१) भाग्यवादिता–

"सुर सुर बयाल पड़ो क्यालूँ का गाबा में ।
के हुंछै फिकर करि जे होलो भागा में ।।
जे होलो भागा में न्योली, जे होलो भागा में ।"

(चिंता करने से क्या लाभ ? होगा तो वही जो भाग्य में होता है) ।

(२) दार्शनिकता–

स्यूँनी काटो, स्यूँन काटो, घा काटो भिड़ी को,
को छ त्यरो को छ म्यरो, दरदा पिड़ी को ।
दरदा पिड़ी को न्योली, दरदा पिड़ी को ।।

(पीड़ा के समय कौन तेरा है कौन मेरा, नहीं जानते) ।

(३) सहन शीलता–

"गोरू गोठ झन जाए, कलड़ि तरकली,
हिया हार झन हए, फिर माया फरकली ।
फिर माया फरकली न्योली, फिर माया फरकली ।।

(हृदय में हार मान मत होना, प्रेम पुनः लौट आएगा) ।

(४) तन्मयता–

"हलद्वाणी का गोरू बाकरा कालढ़ुंगी चरान,
जाँ त्यारा आंसीक बाजौ, न्योंली, वाँ म्यारा परान ।
वाँ म्यारा परान न्योली, वाँ म्यारा परान ।।"

(जहाँ जहाँ तेरी दराती बजती है वहाँ वहाँ मेरे प्राण गूंजते हैं) ।

(५) एकान्तिक प्रेम–

"बाटा तली स्यापा की छड़ी, बाटा में सरप,
पंख हुन्या उड़ि उन्यूँ तुमरी तरप ।
तुमरी तरप न्योली, तुमरी तरप ।।"

(पक्षी होती तो तुम्हारी तरफ उड़ कर आ जाती) ।

(६) स्थानीयता–

नेपाल छत्तीस धारा, पाणी की तुड़ुका,
समजिया बैठी वि ढौरा, र्वे जाये ढुरुका।
र्वे जाये ढुरुका न्योली, र्वे जाये ढुरुका॥"

(नेपाल में पानी के छत्तीस धारे होकर भी पानी की कमी हो गई। बैठने के उपयुक्त स्थान पर दो बूंद आंसू बहा लेना)।

(४) तर्क प्रधान गीत—

कुमाउंनी लोक गायन की प्रतिद्वंदिता पूर्ण शैली 'बैर' नाम से प्रसिद्ध है। 'बैर' शब्द का अर्थ संघर्ष है जो गीत–युद्ध के रूप में गायकों के बीच होता है। इनका उद्देश्य वाद-विवाद तथा प्रश्नोत्तर के रूप में एक दूसरे को पराजित करना है। 'बैरिया' नामक गायक घटना प्रवाह को समझ लेने पर किसी भी प्रसंग या कथा का प्रस्तुत विषय से तालमेल बैठाने में कुशल होते हैं। इनमें व्यंग विनोद की छटा देखने योग्य होती है। अधिक तार्किक 'बैरिया' विजय प्राप्त कर लेता है। फिर दोनों एक दूसरे के प्रति गीतों से ही मंगल-कामना करते हुए बिदा होते हैं।

'बैर' गीतों का मूल कुमाऊँ की विशेष भौगोलिक परिस्थितियों में खोजा जा सकता है। यह पर्वतीय भूमि कठिन भूमि है जहाँ प्रतिक्षण मनुष्य का प्रकृति के साथ संघर्ष होता है। जीवन यापन के लिये मनुष्य को अपने वातावरण के साथ कठोर परिश्रम करना पड़ता है। इसी का जो प्रतिबिंब उसके दैनिक कार्यों व संगीत में उभरता है, वही 'बैर' है। इसमें किसी वाद्य का प्रयोग नहीं होता। प्रतिद्वंदी गायकोंका स्वर ही इसका एक मात्र आधार होता है।

एक बार आरंभ किये जाने पर ये बैर दिन रात, कभी कभी तो रातों तक लगातार चलते हैं जिनका अवसर कोई मेला, कोई त्योहार अथवा सार्वजनिक उत्सव हो सकता है। "बैरियों की कुमाऊँ में बड़ी प्रतिष्ठा होती है। बहुत से अवसरों पर ये लोग आमंत्रित किये जाते हैं। उत्तर पूर्वी कुमाऊँ में तो विवाहोत्सव में कन्या पक्ष और वर पक्ष वाले एक एक 'बैरिया' साथ् में रखते हैं। फिर इनमें गीत-युद्ध होता है और दोनों, अपने अपने पक्ष की प्रतिष्ठा के लिये उत्तरदायी होते हैं। इन अपढ़ बैरियों की कल्पना-शक्ति और उक्ति वैभव

पर बड़ा विस्मय होता है। एक दूसरे पर व्यंग्य करने के लिये जो व्युत्पन्नमति ये दिखाते हैं, उससे चकित रह जाना पड़ता है।"[१]

'बैर' की उपर्युक्त विशेषताएँ कुछ उदाहरणों से स्पष्ट होंगी। जैसे एक गायक ने इस प्रकार पंक्तियां आरंभ कीं—

"हाऽ कटारै की खैं छ, टुनमुन दैं छ,
तुमरि जसी साँची तुमरा पितरन लै कै छ!
यो गत है रै छ, हाऽ हाऽ रोऽ।"

अर्थात् जैसा सच तुम बोल रहे हो वैसा ही तुम्हारे पितरों ने भी कहा था! तभी तो यह हालत हो रही है! यहाँ पर 'बैर' गीत आरंभ हो गया। इन पंक्तियों को सुनने वाले दूसरे गायक ने तुरन्त यह प्रश्न किया—

"हाऽ खाड़ै की रैं छ, दन मनीं दैं छ,
त्यार मुलुक में यक स्यैणिं ख्वारा बै ब्यै रै छ!
यो कसि है रै छ, हाऽ हाऽ रोऽ।"

अर्थात् तेरे देश में एक स्त्री सिर के मार्ग से किसी को जन्म दे रही है। यह कैसी बात हो गई? पहले गायक ने वहीं पर सटीक उत्तर की कल्पना करते हुए पहले उसी स्वर में उत्तर दिया, और फिर दूसरा प्रश्न पूछा—

"हाऽ झपकन झौ छ, मौनीं जावा मौ छ,
तौ त्वील गलत नि कै रे, क्यावा ब्याई रौ छ।
हाऽ हाऽ रोऽ, क्यावा ब्याई रौ छ!
झुङरै कीं धाण, गै पुजो बधाण,
पाँच थान बाकरा ब्यै रईं त्यारा,
पाठा द्वीए है र्‌यान, हाऽ हाऽ रोऽ।"

अर्थात् यह तूने गलत बात नहीं कही। वह तो केला होगा जिसमें ऊपर फल लगे होंगे। अब तू बता कि पाँच बकरियाँ ब्याई हैं किंतु बच्चें दो ही हुए। यह क्या है? प्रतिद्वंदी गायक ने उसी शैली में पहले तो उसका समाधान किया, फिर दूसरा प्रश्न पूछ दिया—

---

१. 'धर्मयुग'—११ अगस्त, १९५७

"हाऽ मड़ुवा को बाला, फूटि घड़ौ टाला,
त्वील कौ पाँच थान बाकर ब्यै रीं, पाठा द्वीए हैं रीं
तौ त्यार बरपंद का दिन काम लागीं,
लखरीरीं का पाला, हाऽ हाऽ रोऽ।
भली कै त्वीले बात, भल लागा रथ
मैंल बाटा में यक स्यैंणिं, यक बैग भेटी छ,
हृगिल बै जाणौं छि बैग, पछिल बै स्यैंणि,
स्यैंणि थैं मैंल पुछ, तु तैंकि के लागन छीं,
स्यैंणि बुलाणि, द्वीं माणिया तौलीं,
गाड़ में पड़ि गों छ हौलीं, कमर बै उनकै
त मैं इनरि बेऊँणि लागन छुं रे, कमर माथा नौलीं!
उनलि कुनलि, में अंताज नि आयो मोहनियाँ,
उ कसि स्यैंणि हुनलि, हाऽ हाऽ रोऽ।"

अर्थात् यह जो तूने प्रश्न किया कि पाँच बकरियाँ ब्याई हैं किन्तु बच्चे दो हुए हैं, इसका अर्थ है कि तेरे व्रतबंध के दिन काम आने वाली कैंची के दो भाग थे (तात्पर्य है कि पहले तेरे बाल पाँच काली जटाओं की तरह उलझे थे जिन्हें जनेऊ के दिन नाई ने दो धार वाली कैंची से काटकर अलग कर दिया)। मैंने मार्ग में एक स्त्री और पुरुष जाते हुए देखे। मैंने उस स्त्री से पूछा—तू इसकी क्या लगती है ? उसने कहा—मैं कमर के ऊपर इनकी विवाहिता हूं और कमर के ऊपर नवेली। मेरी समझ में नहीं आया, वह कैसी स्त्री होगी ?

'बैर' गायन की समाप्ति होने पर दोनों गायक एक दूसरे से हार मान लेने को कहते हैं। यहाँ भी उनका हास-परिहास नहीं छूटता। एक गायक ने अंत में कहा—

"एक नसी कैंकी निरै, उरिये उद्यान,
के त्वेले मुनइ मारूं हिरदया परान
त्यारा गौं की पधानी जी रौ, म्यर गौं का पधान
यो मेरि आशीष त्वे हुं, हाऽ हाऽ रोऽ।"

(अर्थात् तेरे गांव की पधानी जीवित रहे और मेरे गांव का पधान)!

इस पर दूसरा गायक भी जाते जाते हंसते हुए इस प्रकार की आशीष दे गया--

"खोटी मती कुड़ी आग, ओ म्यारा हौंसिया,
पुरुखा हे पुरुखा भागी, सांची जै कूँछिया,
के त्वीलै मुनइ मारूं, भोट को भोटिया,
त्यार गौं की बाकरि जी रौ, म्यारा गौं को बोकिया !
यो मेरी आशीष त्वीहुं हिरदा रे हौंसिया . . . ।"

(अर्थात् तेरे गाँव की बकरी जीवित रहे और मेरे गाँव का बकरा)।

५ संवाद प्रधान गीत--

इन गीतों में स्त्री पुरुषों के पारस्परिक संवाद मुख्य हैं जिनके प्रयोजन, अवसर और वर्ण्य विषय बैर गीतों से भिन्न हैं। संवादों द्वारा गीत का विकास होता है। एकान्तिक प्रेम से लेकर समसामयिक विषय तक इनके प्रतिपाद्य हैं।

ये संवाद प्रधान गीत तीन प्रकार के हैं--

(क) स्त्री पुरुष संवाद प्रधान,
(ख) पुरुष संवाद प्रधान,
(ग) स्त्री संवाद प्रधान।

(क) स्त्री पुरुषों के संवाद प्रधान गीतों में दो व्यक्ति. प्रेमी प्रेमिका, देवर भाभी, अथवा पारिवारिक सम्बन्ध रखने वाले कोई दो व्यक्ति हो सकते हैं। जीजा-साली के वार्तालाप रूप में वर्णित एक गीत है जिसमें जीजा कहता है कि मार्गशीर्ष (नवम्बर) के महीने हम देश चले जाएंगे और चैत्र (मार्च) तक लौटकर आएंगे। हे सुरमा ! तुमसे हमारी भेंट कब होगी ? साली उत्तर देती है कि जयसिंह तुम मेरे बहनोई हो। चंपा चोड़री लताओं के बीच तुमसे भेंट होगी। किन्तु देश जाकर तुम मेरे लिए क्या क्या लाओगे? जीजा का उत्तर है कि पैर का नेवर और कान का गोखर लाऊंगा। संवाद हैं--

जीजा--"मालन जौंल मंगसीर माह पलटूंल चैत
तूमि न हामि साली सुरमा कब होली भेंट ?

साली--तूमि न हामि सुन भीना जैसिंग, चंपा चोड़री भेंट
मालन जाले भीना जैसिग किया किया ल्होले ?

जीजा--त्वैकीं मैं ल्हौंल साली सुरुमा, गाठी को नेवर ।
साली--मालन जाले भींना जैसिंग, किया किया ल्होले ?
जींजा--त्वैकी मैं ल्हौंल साली सुरुमा कानै कीं गोखर--"

(ख) पुरुष संवाद प्रधान गीतों के अंतर्गत, पिता पुत्र के, भाई भाई के, अथवा मित्रों के पारस्परिक संवाद आ सकते हैं जिनके द्वारा या तो प्रसंगानुकूल उपदेश दिये जाते हैं या किसी सामाजिक पक्ष पर विचार किया जाता है । पिता उन सन्तानों की आलोचना करते हैं जो नयी शिक्षा के फेर में पड़ कर बिगड़ रहे हैं । पुत्र उनकी सुनी अनसुनी कर देते हैं । सामान्य रूप से इन गीतों में वर्णित नवयुवक अपने उत्तरदायित्व के प्रति उदासींन हैं । कारण यह है कि इनकी रचना जो प्राचीनता प्रिय गायक करते हैं, उन ा दृष्टिकोण अनुदार रहता है ।

(ग) स्त्री संवाद प्रधान गीतों में माँ-बेटी, सास-बहू, देराणी-जेठाणी, ननद-भाभी तथा अन्य स्त्रियों के वार्तालाप सम्मिलित हैं जिनकी रचना में नारी वर्ग का हाथ रहता है । एक गीत में माता बेटी को समझाती है कि तू बाहर जाने का हठ मत कर । पुत्री ने गंगा स्नान की इच्छा प्रकट की । माता ने कहा--तेरे दादा और पिता उसी प्रयाग में स्नान करने जाकर वहीं रह गए । तेरे सातों भाई वहीं मरे । तू आठवीं रह गई है वंश की जड़ जैसी । मेरा हृदय आशंका से काँपता है ।

सास-बहू के गीतों में ऐसे प्रसंगों का प्राय: अभाव है जहाँ सास उसके सुख-दुख का ध्यान रखती हो । इनमें दारुनियां सास का वही व्यवहार वर्णित है जिसे पुरानी चाल-ढाल कीं बहू चुपचाप सह लेती थी। किन्तु अब सामाजिक चेतना के फलस्वरूप वह कहीं सास की आज्ञा का उल्लंघन भी करती है । जैसे एक गींत में सास ने किताब पढ़ती हुई बहू से कहा कि भैंस को जाकर घास दे आओ, पानी भर लाओ । बहू ने उत्तर दिया कि बीच में मत बोलो, झगड़ा हो जाएगा । मैं अपने मायके में सात बजे सोकर उठती थीं । वहाँ खाने को दाल भात मिलता था । यहाँ मडुवा की रोटी और सिसूण का साग खिलाती हो ।

ननद-भाभीं के वार्तालाप पर आधारित एक गीत द्वारा भाभी कीं आभूषण प्रियता और उसकीं मन स्थिति का ज्ञान होता है । स्वामीं के न रहने पर अकेले दिन बिताना उसके लिए कठिन है । वह ननद से पूछतीं है कि तेरे दाज्यू कहाँ गए हैं ? ननद कभीं कहतीं है कि चमार के यहाँ जूता लेने गए हैं । फिर कभीं

कहतीं है, कि बनियां के यहां घाघरा सिलाने गए हैं। फिर कभी कहतीं है कि सुनार के यहां नथ लेने गये हैं! भाभी इस पर ठहाका मार कर हँसतीं है––

"नन्दू, तेर दादू कॉ जायूं छ ?
दादू चमार वती जायूं छ।
चमार वती के काम छ ?
दादू पोलिया मोल लेनो छ।
भौजी धुतुकै हंसनै छ।
नन्दू, तेर दादू कॉ जायूं छ ?
दादू बनिया वती जायूं छ ?
बनिया वती के काम छ ?
दादू घघिया मोल लेनो छ!
भौजी धुतुकै हंसनै छ।
नन्दू तेर दादू कॉ जायूं छ ?
दादू सुनार वती जायूं छ।
सुनार वती की कामै छ
दादू नथुली मोल लेनो छ
भौजी धुतुकै हँसनै छ।"

६. ऋतु गीत––

कुमाऊँ में इन्हें सामान्यतः 'ऋतु रैण' '(ऋतुरायण) या ''चैतू' कहते हैं। इनके विशेष गायक 'औजी' अथवा 'ढोली' लोग हैं जो सामान्थ हुड़कियों से भिन्न हैं। यह जाति प्राचीन काल से स्थानीय राजाओं, सामन्तों के यहां गायन किया करतीं थी और आज भीं दीवालीं, होलीं जैसे अवसरों पर ग्रामींण मुखिया लोगों के घरों में जाकर गीत गाती है।

शब्दार्थं की दृष्टि से 'ऋतुरैण' कोई भीं ऋतुपरक गींत हो सकते हैं। किन्तु अब ग्रामीण समाज में केवल वसन्त ऋतु के गीतों तक ये सीमित हो चले हैं।

सभी स्थानीय ऋतु गींत मूख्यतः ५ प्रकार के हैं––

(क) विशेष गीत,
(ख) स्मृति विषयक गीत,

(ग) बारामासी गीत,

(घ) होली गीत,

(ङ.) अन्य गीत।

(क) विशेष गीतों में नववर्ष के आगमन पर हर्ष प्रकट किया जाता है। परिवर्तन के उपलक्ष में धन धान्य की प्रचुरता, ऐश्वर्य और वैभव की सम्पन्नता प्रकट करके दीर्घायु होने की आशीष दी जाती है। जोहार के एक ऋतु गीत में यह जिज्ञासा करते हुए कि नौ खंड पृथ्वी की रचना किसने की है, कल्पना की गई है कि यह सब ईश्वर की सृष्टि है जिसके संगीत की ताल पर पृथ्वी घूमती है। साल भर चलने वाले उसके चिरंतन संगीत को भाग्यशाली लोग ही सुन सकते हैं।

नव वर्ष का स्वागत करते हुए इस अवसर पर एक अन्य गीत में बच्चे फूल सजाकर, घर घर की द्वार पूजा करते हुए 'फूल देई', 'छम्मा देई' गाते चलते हैं। कुमाऊँ में नव वर्ष का आगमन चैत्र मास की प्रथम तिथि से होता है। उस समय बच्चे नए वस्त्रों में सज धज कर, रंग बिरंगे फूल लेकर ग्रामीण मुखिया के घर एकत्र होते हैं जहां से मंगल गीत आरंभ होता है।

इस गीत में गृहपति के लिये शुभ कामना करते हुए कहा जाता है कि वृक्षों में नये पत्ते आ गए। रंग बिरंगे फूल खिल गए। पवन नयी आशा लेकर आया है। आपके अन्न रखने के बर्तन भरें। ऋतुएँ आएँगी। इसी प्रकार फूल खिलेंगे। आप और हम जीवित रहें—

"फूल देई, फूल देई, फूलों संग्यान,
सुफल करा नौं बरस, तुम कैं भगवान।
रंगील चंगील फूल ऐ ग्यीं, डाला बोट हरिया है ग्यीं,
भिड़ कानई फूलै फूल, आज फूलौ संग्यान।
पौनं ऐंछ ठंडी ठंडी, फूलूँ हँसी मंदी मंदी,
आश त्यारो नौं बरस, आज फूलौ संग्यान।"———

(ख) स्मृति विषयक गीतों में ससुराल रहने वाली बहू की आशा-आकांक्षाओं का मार्मिक चित्रण रहता है। चैत्र के महीने मायकेका विशेष स्मरण हो आने का कारण यह है कि स्थानीय प्रथा के अनुसार इस अवसर पर कन्या का भाई उसके लिये कुछ भेंट आदि लेकर जाता है जिसे 'भिटौई' कहते हैं। अतः इन गीतों में कन्या की विभिन्न

मनोदशाएं मिलती हैं। उसे रह रह कर अपने मैतुरा देश की याद आती है। कहीं वह न्योली, घुघुती, कफुवा जैसे स्थानीय पक्षियों से प्रार्थना करती है कि वे उसके मायके की दिशा की ओर मुहँ करके बोलें। उसकी मां सुनेगी तो अवश्य भेंट भेजेगी।

एक गीत में इन्हीं पक्षियों से नहीं बोलने को भी कहा गया है क्योंकि उनका स्वर दुखिनी की वेदना को उद्दीप्त कर देता है। नदी की साँय साँय ध्वनि उसे काट खाती है। वह कब तक रोती रहे—

"ओ नि बासिये तु घुघुतिया रूण घूण
मेरि मैती का देशा रूण घूण,
काटि खाँछ गाड़ा को सुसाट,
मैं चाणै रै गयूँ वी को बाट,
बेरुखी पराणी सुवै कि,
मैं उदास घुघुतिया रूण घूण।"——

इस अवसर पर 'औजी' नामक गायक एक गीत-बद्ध कथा कहते हैं जिसमें किसी दूरस्थ बहिन की अपने भाई से मिलने की आतुरता का और भाई की वहाँ तक कठिन यात्रा करने का वर्णन है। कथा प्रधान होने के कारण इसकी चर्चा अगले अध्याय में होगी।

(ग) चैत्र मास में प्रचलित कुछ गीतों में बारहों महीनों की विशेषताएँ उल्लिखित रहती हैं। इनमें चैत्र का विशेष वर्णन होना स्वाभाविक ही है क्योंकि वह सभी महीनों में श्रेष्ठ होता है। गीतों में वर्णन मिलता है कि जिन पत्नियों के स्वामी इस महीने घर आ जाते हैं उनका भाग्य धन्य है। किन्तु जिनके स्वामी परदेश में हैं वे पत्नियाँ कैसे रहेंगी? चैत्र मास तो जीवित लोगों के लिये ही रंगीला होता है।

एक गीत में कोई विवाहिता स्त्री बिन्दी, हँसुली और नथ जैसे आभूषण मांग रही है ताकि इस समय वह अपने मायके जा सके—

"कोर काकड़ बणायो रैत, लागो म्हैण रंगीलो चैत।
ओ लागो म्हैण रंगीलो चैत, ल्यावौ धैं बिंदुलि मैं जानूँ मैत।
ल्यावौ धैं हँसुलि मैं जानूँ मैत, ल्यावौ धैं नथुलि मैं जानूँ मैत।
ओ लागो म्हैण रंगीलो चैत, लागों म्हैण रंगीलो चैत।"

(घ) होलियाँ फाल्गुन मास से आरंभ होती हैं। पहाड़ों में इसके दो भेद हैं –

(१) खड़ी होली, जो आंगन में खड़े होकर या मार्ग में चलते चलते गाई जाती है।

(२) बैठकी होलीं, जिन्हें घरों में बैठकर लोग रात रात भर गाते हैं।

विषय-वस्तु की दृष्टि से होलियाँ भक्ति भावना प्रधान एवं श्रृंगार प्रधान हैं। होलिका दहन के पाँच सात दिन रह जाने पर होली गायन में विशेष उत्साह लक्षित होता है। होलिका दहन के दूसरे दिन 'छलड़ी' मनाते हैं जिस अवसर पर गायक 'होळ्यार' घर घर घूमते हुए, श्रृंगारिक उक्तियाँ गाते हुए आशीष देते हैं। आशीर्वाद इस प्रकार का रहता है––

"गावें खेलें देंय असीस, हो हो होलक रे !
बरस दिवाली बरसै फाग, हो हो होलक रे !
आज को वसन्त कैका घर, हो हो होलक रे !
आज को वसन्त परमानन्द ज्यू घर, हो हो होलक रे !
यनरो पूत परिवार जी रौ लाख बरीस, हो हो होलक रे !
यनरो भरी रौ अन्न धन लै कुठार, हो हो होलक रे !"

कुमाऊँ में अब ठेठ होलियाँ बहुत कम सुनाई पड़ती हैं। ब्रज तथा अवधी क्षेत्रों की होलियों को ही स्थानीय तर्ज में गाया जाता है।

(ङ) कुमाऊँ में ऋतुओं के अवसर पर प्रचलित कुछ विशेष नाम मिलते हैं जिनके अब गीत समाप्त हो गए हैं। इन्हें 'कफलिया,' 'हिनौल,' 'रूड़ी' आदि कहते हैं।

चैत महीने में काफल पकता है अतः चैत, वैशाख और जेठ में 'कफलिया' नाम से प्रसिद्ध कुछ गीत प्रचलित रहे होंगे। 'हिनौल' सम्भवतः शीत ऋतु से सम्बन्ध रखने वाले गीत रहे होंगे। 'रूड़ी' ग्रीष्म काल को कहते हैं। ये जेठ में प्रचलित थे। पिथौरागढ़ तथा गंगोली की ओर के गाँवों में ग्रीष्म का वर्णन करने वाले जो गीत इस समय प्रचलित हैं वे सम्भवतः इन्हीं से सम्बन्ध रखते हैं।

७. देवी देवता सम्बन्धी गीत—

कुमाऊँ में हिन्दू धर्म के सभी देवी-देवता मान्य हैं जिनमें शैव-शाक्त देवताओं की प्रधानता है। विष्णु अथवा उनके अवतार सम्बन्धीं गीत कम ही मिलते हैं।

ये गीत दो प्रकार के माने जा सकते हैं—

(क) पूजा गीत,

(ख) विशिष्ट देव गीत ।

(क) पूजा गीतों में सम्मिलित गीत मुख्यतः पूजन सामग्री से सम्बन्ध रखते हैं। पूजा हेतु मासीं नाम का फूल शुभ माना जाता है जिसकी चारों ओर खोज की जाती है। जब मासी का फूल नहीं खिलता तो कल्पना की जाती है कि माता ने धूप नहीं भरी होगी। पिता अथवा चाचा ने धूप नहीं भरी होगी। वुआ ने लीपा पोता नहीं होगा, इसलिए फूल नहीं खिला।

एक गीत के अनुसार यह फूल ऊँचे हिमाल में होता है। इसे थाती के 'थत्याल', खोलीं के गणेश, नन्दादेवी, भूमि के 'भूम्याल', शिखर भनार आदि देवताओं को चढ़ाया जाएगा। कुछ पंक्तियाँ हैं—

"इजू लैं फूल धूप नै भरो, सो लेखा फूल नै फुलो,
हिमाल मासी को फूल।
सो फूल को देऊं चढ़ौंल, सो फूल खोली को गणेश,
बुवा लैं धूप नै भरो सो लेखा फूल नै फुलो,
हिवाल मासी को फूल।"

(ख) देवी देवताओं के विशिष्ट गीत मुख्यतः मेलों से सम्बन्ध रखते हैं। द्वाराहाट का स्याल्दे मेला, मासी का सोमनाथ मेला, देवीधूरा में वाराही देवी का मेला, अल्मोड़ा-नैनीताल का नन्दादेवी मेला, बागेश्वर का उत्तरायणी मेला काशीपुर का चैती मेला आदि इस दृष्टि से उल्लेखनीय हैं। नन्दादेवी कुमाऊँ की जातीय देवी हैं। भाद्र शुक्ल अष्टमी को इसके उपलक्ष्य में सर्वत्र मेले आयोजित होते हैं जिनमें हर्ष और उल्लास का वातावरण छाया रहता है।

एक गीत में इसी संदर्भ में नन्दादेवी के वस्त्राभूषणों की प्रशंसा करते हुए तत्सम्बन्धी मेले का माहात्म्य वर्णित है। मेले यहाँ 'कौतिक' (सं० कौतुक) कहलाते हैं। पंक्तियाँ है—

"छिला, कारी कुरी कुटेलीक छाली छ बेन।
छिला नंदा क कौतिक हुंछ बरस दिन।
छिला, पारी कोट बुङ मांज हुड़की के बाज ?

छिला, नन्दा को अस्टमी ऐं छ बरस दिन,
छिला, रूपस्या आंगुली मांज मुनरी के छाज ?
छिला, रूपस्या गड्यारी मांज नेवर के छाज ?
छिला, सपूर कमर मांज पटुक के छाज ?
छिला, रूपस्या अंगिया मखिया के छाज ?"

एक गीत में कत्यूर की स्थानीय देवी झाली-माली की प्रशंसा करते हुए कत्यूर घाटी की विशेषताओं पर प्रकाश पड़ता है। इस स्थान से बागेश्वर होकर तिब्बत जाने का रास्ता है। वहाँ से देवी को प्रसन्न करने के लिये चार सींग वाली भेंड़-बकरियां, सुहागा, ऊन आदि लाने वचन दिया गया है। वह देवी निस्संतान को संतान तथा गरीब को धन देती है। वह सभी पर कृपालु बनी रहे--

"कत्यूर झाली माली देवी,
कत्यूर नीली छ चौड़ी,
जौंल मैं मलि हुनि देस,
तरूंलो मैं झपवालो सांगो।
ल्हौंल मैं चार सिङिया लाखो,
कत्यूर झाली माली देवी,
सो देवी किया बर देली,
निपुत्र पुत्र वर देली,
निधन धन वर देली,
कत्यूर झाली–माली देवी,
त्वी देवी सबकी होय दैंन।"

देवियों के अतिरिक्त शिवशंकर भगवान अलग-अलग नामों से पूजे जाते हैं। बौरारौ की घाटी में धान रोपते समय 'पिनाकेश्वर' की आराधना करते हुए कृपालु होने के लिए कहा जाता है ताकि उस समय पानी न बरसे। पंच देवों की पूजा करते हुए निवेदन किया जाता है कि वे दाहिने बने रहें। स्थानीय देवताओं में ग्वाल्ल, लाकड़, हरू, सैम जैसे अन्याय देवताओं की भी इसी प्रकार स्तुति की जाती है।

८. व्रत-त्यौहार सम्बन्धी गीत--

कुमाऊँ में मान्य व्रत-त्यौहारों की संख्या चालीस से अधिक है। चूंकि इनका सम्बन्ध मुख्यतः नारी समाज से रहता है अतः इनके अनुष्ठान और गीत उन्हीं के समाज में अधिक प्रचलित भी हैं। भाद्रपद शुक्ल सप्तमी और अष्टमी को स्त्रियाँ दो मुख्य व्रत रखती हैं। पहले दिन वे सप्त ग्रंथि युक्त डोर धारण करके शिव-पार्वती जी का पूजन करती हैं। दूसरे दिन स्वर्ण, चाँदी या रेशम का दुवड़ा बनाकर अपनी बायीं भुजा में बाँधती है।

इस समय के एक गीत में गणेश, राम और लक्ष्मण शिव जी के घर के बाहर बैठ कर पाँसा खेलते हैं। घर के भीतर सीता, पार्वती व्रत पूजन करती हैं जिसके निमित्त उनसे लाड़ी का पुष्प लाने की प्रार्थना करती हैं। तब परिवार वालों के नाम लिये जाते हैं। इसी प्रकार 'डोर दुबड़' के व्रत गीत में पार्वती नहा धोकर जप करने हेतु बैठ जाती हैं और शिव जी से डोर दुवड़ लाने की प्रार्थना करती हैं।

इन गीतों में भाभी, ननद, बहू आदि का पारस्परिक व्यवहार दर्शनीय है। भाभी ननद का स्वागत नहीं करती। ननद भी चुप नहीं रहती।

कुछ त्यौहार एवं उत्सव सम्बन्धी गीत स्थानीय प्रथाओं से सम्बन्ध रखते हैं। आश्विन में कन्या संक्रान्ति के दिन बालक फूलों के झंडे बनाकर नाचते गाते हैं। सूखी घास का 'खतड़ुवा' बनाकर, होली की तरह जलाते हैं और उसके चारों ओर घूमकर गाते हैं।

९. कृषि गीत--

इस शीर्षक के अंतर्गत कुमाऊँ के "हुड़की बौल" नामक गीत सम्मिलित हैं। 'बौल' का शाब्दिक अर्थ श्रम होता है। हुड़का प्रमुख वाद्य है। अतः हुड़के के साथ जो श्रम किया जाय अथवा हुड़के के स्वर के साथ जो गीत गाये जाएँ, उन्हें "हुड़की बौल" कहते हैं। ये खेती की रोपाई करते समय गाए जाते हैं। इनकी गति बहुत धीमी होती है क्योंकि गायक का उद्देश्य श्रमिक मजदूरों को कृषि कार्य में संलग्न रखना होता है।

श्रमिकों का नेता हुड़किया गायक होता है जो प्रातःकाल प्रार्थना द्वारा इन्हें प्रारम्भ करता है। तदुपरान्त वह देवी देवताओं को कार्य निभाने का निमंत्रण देता है। एक खेत की रोपाई प्रायः शाम तक पूरी हो जाती है। उसी के

साथ ये गीत भी सम्पन्न होते हैं। कुमाऊँ में सोमेश्वर, कत्यूर, बौरारौ, चौखुटिया और गणाई आदि स्थानों के 'हुड़की बौऊ' अत्यन्त प्रसिद्ध हैं। इन स्थानों में आषाढ़ के महीने बीसियों स्त्री पुरुषों को एक साथ खेतों में संलग्न देखा जा सकता है।

ये हुड़की बौल गीत चार प्रकार के हैं–

(क) प्रार्थना मूलक,

(ख) निमंत्रण मूलक,

(ग) कथा मूलक, और

(घ) मंगल कामना परक।

(क) प्रार्थना गीतों में देवताओं से निवेदन किया जाता है कि वे कृषि और श्रमिकों की रक्षा करें। एक प्रार्थना गीत में गायक कहता है कि इन खेतों में उत्पन्न मोतीं जैसे धान को तुम्हें अर्पित किया जाएगा। ओ गाँव की खेती के भूमियाँ देवता! अनुकूल बने रहना। छाया पूर्ण दिन बनाए रखना। यह छाया रोपने वालों और तोपने वालों पर बराबर पड़ती रहे। यह हलिये और बैलों पर भी बराबर पड़ती रहे ताकि वे जल्दी जल्दी चलें और बीज सारे खेत के लिए पर्याप्त हो जाएँ––

"यो सेरी का मोत्यूँ, तुम भोग लाग ला हो
सेवा दिया बिद हो,
यों गौं का भूमिया परो' दैण हया हो,
रोपारों तोपारों बरोबरी दीया हो,
हलिया बल्दा बरोबरी दीया हो,
हाथ दीया छा हो, बीयों दीया फारो हो।"

(ख) इस तरह प्रार्थना के उपरान्त देवी देवताओं को निमंत्रण देकर रोपाई का दृश्य वर्णन होता है कि किस प्रकार बैलों की बाईस जोड़ियाँ खेत जोतने में लगी हुई हैं। छं बीसी (१२०) स्त्रियाँ रोपाई कर रही हैं, दस बीसी (२००) पुरुष खेतो में पानी दे रहे हैं। देवगणों की उपस्थिति से प्रचुर उत्पादन में सहायता मिलेगी। यदि धान की बालियाँ, चांदी की तरह हो जाएँ और भूसी मोती की तरह हो जाए तो खेती बहुमूल्य हो जावेगी। तब किसान महादेव को सुनहरी बालियाँ अर्पित करेगा। यही गीतों के मुख्य भाव रहते हैं।

(ग) गायक दिन भर ऐतिहासिक, पौराणिक और स्थानीय कथा गीतों को गाता चलता है। बीच बीच में वह रोपने वालों का कार्य देखते हुए उन्हें शीघ्रता से काम करने का आदेश भी देता रहता है। गति शिथिल होने पर हुड़के की थाप पर कहता है—'छाल हो छाल' अर्थात् सरासर हाथ चलाओ। ये कथा गीत भी मानव मात्र के प्रति शुभाकांक्षा व्यक्त करते हुए गाए जाते हैं।

ये कथा गीत मुख्यतः तीन प्रकार के होते हैं—

(१) पौराणिक

(२) ऐतिहासिक,

(३) स्थानीय।

ये कथा प्रसंग इस अवसर पर गाए जाने के कारण ही 'हुड़की बौल' कहे जाते हैं अन्यथा कृषिकार्य से इनका कोई सीधा प्रयोजन नहीं रहता। इसी कारण ये अन्य अवसरों पर भी गाए जाते हैं। इनकी चर्चा आगे की जाएगी।

कथा गीतों के बीच में गायक कभी कभी प्रेमपरक मुक्तक गीत गाते हैं। एक ऐसे ही गीत में धान बोने तथा सुन्दर बालें लगने का वर्णन हुआ है—

"ओहो ! भरार बौज्यू लै धाना बोया, धाना,
जाया जौंलिया ओ हो, झक सुन्दरा, झक सुन्दरा धाना !
जाया जौंलिया ओ हो, ताल किनारा धान बोया धाना !
जाया जौंलिया ओ हो !
गाड़ की गोड़ाई लिपी, दस लगाया बौलिया !
ओ हो धाना काटी ठीकै मापा, धाना काटि जौंलिया !
ओ हो म्यर बौजू ले भात पकाया, धाना काटि जौलिया।"

(घ) संध्याकाल तक प्रायः रोपाई समाप्त हो जाती है। तब गायक दो तीन गीतों में मंगल-कामना करता हुआ जो आशीर्वाद देता है उसमें उनके दीर्घायु होने के साथ साथ बैलों तक के प्रति शुभकामना प्रगट की जाती है। एक गीत में वर्णन मिलता है कि पुरखों से लेकर गोदी का बालक और गोठ के बैल तक जीवित रहें।

दूसरे गीत में बैल को संबोधित करके कहा गया है—अरे बैल ! तू सीधे सीधे चल कर ऐसा प्रयत्न कर कि चारों चौकोट की, तल्ला मल्ला कत्यूर की, कोसी वार पार की सारी उर्वरता इस खलिहान में आ जाए। जितनी धान की

बालियाँ हैं उतनी ही डालियाँ हो जाएं, और जितने बोझ हैं उतने ही गोदाम भर जाएं—

"सैलयों बलदा, सैलयों सैलयों,
सींग के ल्यालै, खुर के ल्यालै,
फिरि फिरि जालै, खइ भरि जालै।
गाईं गिंवाड़ की चारों चौकोट की,
वल्ला कत्यूर की मल्ला कत्यूर की।
कोसी वार की कोसी पार की,
सैल्यो बल्दा सैलयों सैलयों।
सैलयों बलदा सैलयों सैलयों,
जतुक बाली ततुक डाली।
जतुक खारा ततुक भखारा,
सैलयों बल्दा सैलयों सैलयों।"

१०. स्फुट गीत—

इस शीर्षक के अंतर्गत गीतों का प्रचलन अब जन साधारण में प्रायः नहीं रह गया। कुछ अन्य गीत जो उपर्युक्त शीर्षकों में स्थान नहीं पाते, इसी वर्ग में रक्खे जाते हैं। इन्हें क्रमशः (क) विशिष्ट और (ख) सामान्य गीत कह सकते हैं।

(क) विशिष्ट वर्ग में 'घन्याली', 'गणतौ,' 'ढोसुक,' 'सोगुन' आदि के उदाहरण तो मिल जाते हैं किन्तु 'कड़खा,' 'फाँक,' 'पींडे,' और 'ड्योड़' आदि के उदाहरण नहीं मिलते।

'घन्याली' को 'घट्याली' अथवा 'घटेली' भी कहते हैं। घंटी बजते रहने के कारण सम्भवतः गीत का यह नाम पड़ा है। अथवा प्रत्येक शब्द के अन्त में 'घन्याली' शब्द की पुनरुक्ति होने के कारण यह नाम पड़ा होगा। 'गणतौ' में ज्योतिष संबंधी प्रश्न का विचार होता है। 'गणतौ' वस्तुतः 'गणतू' (गणना करने वाला) से बना है, जो ग्रामीण क्षेत्रों में ज्योतिषी का नाम है। इसमें अभिमंत्रित वस्तु, द्वारा शुभाशुभ का विचार कराया जाता है। यह दानपुर पट्टी की ओर अधिक प्रचलित है। 'ढोसुक' मुख्यतः मंगलामुखियों द्वारा दीपावली के अवसर पर

गाए जाते हैं और चौखुटिया, मासी क्षेत्रों की ओर अधिक प्रचलित हैं। इनमें 'डफ' बाजा बजता है। 'सोगुन' जोहार के शकुनाक्षर हैं।

(ख) सामान्य गीतों के अंतर्गत देश प्रेम संबंधी, राष्ट्रीय, जातीय, विषयों पर अथवा सामाजिक, आर्थिक स्थितियों पर टिप्पणी की जाती है। कुमाऊँ के एक प्रसिद्ध गीत में संध्या का वर्णन करते हुए भारत की एकता का बोध कराया गया है। नील कंठ, हिमालय से लेकर पंचचूली पर्वत, नौ खंड पृथ्वी, नंदन, बैराठ, पंचवटी, अयोध्या, बंगाल, कृष्ण की द्वारिका और समुद्र तक संध्या फैलती चली जाती है—

"के संध्या झुली गेछ भगवाना, नीलकंठ हिमाला,
के संध्या झुली गेछ हे रामा, आकाश हे पाताला,
के संध्या झुली गेछ भगवाना, नौ खंडी धरती मांजा,
के संध्या झुली गेछ हे रामा, कृष्ण ज्यूँ की द्वारिका।...."

आज के संदर्भ में यथार्थ चित्रण की दृष्टि से वे गीत द्रष्टव्य हैं जिनमें दरिद्रता, अकाल और अभाव का मूर्तिमान चित्रण हुआ है। ऐसे ही एक गीत में वर्णन मिलता है कि वस्त्र फटे हुए हैं। खाने को मुट्ठी भर 'कौणी' (कोरा अन्न) है। साग सब्जी के नाम पर केवल नमक उपलब्ध हैं।

एक अन्य गीत में विवाह के पूर्व संतान उत्पन्न होने पर इस प्रकार व्यंग्य किया गया है--

"एक डोलि में वर ब्योलि, एक डोलि में भौ।
मीं कन बौज्यू शरम लागें, वर कें दियौ भौ।
भ्यार् ऐरैछ बर्‌यात, भितेर है रौ छ भौ,।
एक तरफ हुंछ कन्यादान, वी तरफ रूंछ भौ।
को करँछ ज्यूंती पुजा, को समालौ भौ।
ब्योलि करैलि ज्यूंति पुजा, बर बोत्यालौ भौ।"

कुमाउंनी लोकगीतों के उपर्युक्त संक्षिप्त विवेचन से ज्ञात होगा कि ये लोक मानस की विशिष्ट अभिव्यक्ति हैं जिनके माध्यम से स्थानीय समाज की मधुर कल्पनाएँ, प्राचीन एवं नवीन परंपराएँ तथा लोक विश्वास प्रतिध्वनित होते हैं।

———

८. कुमाउंनी कथागीत

पिछले अध्याय में जिन कुमाउंनी लोकगीतों का विवेचन हुआ है वे मुक्तक गीत हैं। कथा गीत (बैलेड) गेय होते हुए भी आख्यानपरक होने के कारण उनसे भिन्न होते हैं। ये उनकी अपेक्षा लम्बे होते हैं और इनमें किसी ऐतिहासिक, पौराणिक अथवा सामाजिक घटना का वर्णन प्रधान रहता है। कथात्मक होने पर भी कथागीत इतने बड़े नहीं होते कि ये लोक महाकव्यों (फोक इपिक्स) का स्थान ले सकें।

एक बात यह भी है कि किसी क्रिया-विशेष की भूमिका के रूप में इनका गायन होता है। प्रायः ये संस्कारों, ऋतु परिवर्तन, कृषि कार्य अथवा अनुष्ठानों के समय गाए जाते हैं। अतः इस प्रकार इनके वर्ग निर्दिष्ट किये जा सकते हैं—

(१) संस्कार संबंधी,
(२) ऋतु परिवर्तन संबंधी,
(३) कृषि संबंधी,
(४) वीरता संबंधी।

नंदू बालो—

संस्कारों के अंतर्गत 'ज्यूंति पूजा' के अवसर पर स्थानीय स्त्री समाज में 'नंदू बालो' शीर्षक एक कथागीत प्रचलित है जिसमें एक बालक अपनी माता से भोजन तैयार करने को कहता है। उसे जमुना पार जाकर पूजा के लिये फूल लाने हैं। मां पूछती है कि तुम वहां कैसे जाओगे? कौन तुम्हें रास्ता दिखाएगा, कौन जमुना नदी पार कराएगा? वह उत्तर देता है कि दो आंखे रास्ता दिखाएंगी और दो जांघें जमुना नदी पार कराएंगी। वहां से बालक डलिया बिनने वाले के पास जाकर उससे डलिया बिनने को कहता है। फिर वहां से लोहार के पास जाकर छोटा सा एक हथियार गढ़ने को कहता है।

वहां से उठकर मार्ग की कठिनाइयों को पार कर वह नागिन के पास पहुंच कर मासी का फूल तोड़ने के लिये कहता है। नागिन उससे पूछती है कि तू दुखी है या जुए में हारा है? फिर वह उसे टालती हुई कहती है कि तू पइयां

का फूल ले जा। रूखी-सूखी पत्ती ले जा। किन्तु बालक उत्तर देता है कि न तो पइयां के फूल से पूजा होती है और न झड़े पड़े पत्तों से। मैं तो नाग के सिर पर पैर रखकर वृक्ष से तोड़ कर फूल ले जाऊंगा। मेरे मामा कंस राजा के यहाँ ज्यूंति पूजा है। वहीं मासी का फूल चाहिए। तदुपरान्त वह मासी के फूल से अपनी डलिया भर कर लौटता है। कथा गीत इस प्रकार से है—

"जाना, जाना, नंदू बालों, घर चलि जालों,
कर इजू सांचि ज्युनार ए,
हम ले जाणो इजू मेरि चौगंगा पार,
कर इजू सांचि ज्युनार ए।
कों त्वे बाला रे बाटों देखालों,
कों त्वे बाला रे जमुन तरालो,
आँखा जोंला बाटों देखालो,
जंघा जोंला जमुन तरालों ए।
उति कों उठो बालों मेरि बारुड़ि का घर,
बुणि दे बारुड़ि सोंच कुरड़ि ए।
उति कों उठों बालों मेरा लोंहार का घर,
गड़ि दे लोहार कन्यारी कड़याल ए।
उति कों उठों बालों मेरि नागिनी का घर,
टिपि दे नागिनी मासी को फूल ए।
कि तु बाला रे बाला मेरा मासी दुख्यायो,
कि तू बाला रे जुआ हार ए।

ना मैं नागिनी मासी दुख्यायो,
ना मैं नागिनी जुआ हार ए।
मासी का फूल की पूजा नि हुंनी,
ली जा बाला रे पइयां को फूल ए।

लीजा बाला रे झड़िया, पड़िया,
लीजा बाला रे पइयाँ की पाती ए।

झड़िया, पड़िया की पूजा नि हुनी,
ली मैं जूलो रुख का टिपिया ए।
जसा कसा माथ भरोली,
भला भला कुड़रि भरोली,
स्यारा मामा का कंस राजा का ज्यूँ ति पूजा,
वाॅ रे चैंनी मासी का फूल ए।"

'बाली हाजुरा'—

उत्तरी कुमाऊँ में प्रचलित युद्ध की कथा भूमि पर आधारित एक कथा-गीत में कोई पुत्र अपने पिता से कहता है कि कुछ आक्रमणकारी आए हुए हैं। मुझे उनसे लड़ने के लिए बाहर जाना पड़ेगा। किन्तु अपने साथ किसे ले जाऊँ? वह सोचता है कि परिवार में से यदि पिता को ले जाता हूँ तो वे अत्यन्त बूढ़े हैं। चाचा को ले जाता हूं तो वे गाँव भर के मुखिया हैं। भाई को ले जाता हूँ तो वह अभी बहुत छोटा है।

पिता ने सलाह दी कि महर, फड़त्यालों के दल को अपने साथ ले जाओ। गढ़वाल वालों को ले जाओ। पुत्र कहता है इतने लोगों से भी पूरा नहीं पड़ेगा। कथागीत मूलतः इस प्रकार हैं—

"पारी कोट सुनला बाली हाजूरा,
सुन क्या धाद् लैंछ बाली हाजुरा,
मुसिया कटक छ बाली हाजुरा,
धादु सादु के नैं बाली हाजुरा,
मुसिया कटक छ सुनि मैंल जान पड़न छ।
को जाती लै मैं साथ सरीमल।
बाबू जाती लै छ बृहद्द बुड़ो छ।
काकु जाती लै छ, गौंक मुखिया छ।
भाई जाती लै छ, ऐन अलाड़ो छ।
के जती लै मैं साथ सरीमल बाली हाजुरा।
महर फड़त्याल ल्हि जा साथ बाली हाजुरा।

नै भयो पुरलोग बबा ज्यू, बाली हाजुरा ।
कुमूँ को कुमैय्याँ ल्हि जा साथ, बाली हाजुरा ।
ठ्यो पारो गुड़ाल लिह जा साथ, बाली हाजुरा ।
नैं भया पुरलोग बबाज्यू, बाली हाजुरा ।
मुसिया कटक छ सुनि मैंल जान पड़न छ ॥"

"कंपासी मानी—

जोहार की ओर प्रचलित 'कंपासी मानी' नामक कथा-गीत अपने यथार्थ और मार्मिक चित्रण के लिये प्रसिद्ध है। जोहारी जीवन का मुख्य अंग व्यापार होता है। लदाख की ओर जाने के पूर्व किसी भोटिया व्यापारी की तैयारियों का वर्णन इस कथा गीत का मुख्य विषय है। पहले वह 'मानी' (व्यापारी) ब्राह्मण जोशी से यात्रा का मूहूर्त्त पूछने के लिये जाता है। यह सूचना पाकर उसके परिजन आशंकाओं से ग्रस्त हो जाते हैं। लदाख स्थान जोहार से बहुत दूर है। किन्तु वह उन्हें लौटकर आने का आश्वासन देता है। अपनी पत्नी से कहता है कि मेरे बिरादर शत्रु हैं। तू इनसे होशियार रहना। पुत्री का विवाह अच्छी जगह करना। यह सुनकर उसकी बुढ़िया रोकर कहती है कि तेरे लदाख जाने पर मैं कैसे रहूँगी ? तू यहाँ कब लौट कर आएगा ? मानी उत्तर देता है—राम जी की दया होने पर लौटूंगा।

मार्ग में चलते चलते उसके सात जोड़ी जूते फट गए, किंतु वह लदाख तक नहीं पहुँच पाया।

"राधिका बोलँदे'—

एक अन्य कथा—गीत हरियाला त्योहार के समय का है जब चैत मास में कोई पिता 'भिटौली' लेकर अपनी विवाहिता पुत्री के घर जाता है। समधी हुक्का आदि पिला कर उसका सत्कार करना चाहता है। किन्तु वह अपनी पुत्री राधिका को देखे बिना कुछ भी स्वीकार नहीं करना चाहता। घर से चलते समय कन्या के लिये तैयार किये जाने वाले पक्वान्न को काला पड़ता हुआ देखकर उसके मन में आशंका हो गई थी कि वह सुखी है या दुखी।

समधी उसे टालता है कि अभी तो तेरी राधिका घास काटने गई है। बैठकर तंबाकू पियो। जब घास काटने वाली स्त्रियाँ शाम को घर पहुँने लगती हैं तो उसकी आशंका बढ़ती है कि राधिका कहा गयी होगी? अन्त में ननद ने इसका रहस्य

खोला कि पापी मां ने झूठे संदेह पर भाभी को मार डाला है। खाद्य पदार्थ मैंने खाए थे। मैंने ही छिपाए थे। मां ने कुदाली से मार कर उसे गोठ में दबा दिया। भाई बरेली गया हुआ है। मूल पंक्तियाँ हैं—

"सब की छ्यौड़ि मैत अगेन,
मेरो राधिका दुखि छ कि सुखि।
भोल ऐ गेर हरियाली त्याड़,
राधिका बौज्यू राधिका बोलै दे।
राधिका इजू घाल लगड़,
पैंली को पुआ नील है गे छ।
मेरो राधिका दुखि छ कि सुखि,
सल्लक रूख बासि छ कावा।
बरस दिन भेंट है रे छ,
बस समदी छक तमाकू।
जब बतौले मेर राधिका,
तब छकौंल तेर तमाकू।
तेर राधिका घास जा रे छ,
बस समदी छक तमाकू।
सब घास ली बेर घर ऐ गेन,
मेरो राधिका कथ गे हुनलो
बाड़ा धनियां धनियां बोठ,
बोजि को खोड़ा कुट्यालि को चोट।
पापी नै इजु बोजि कैं मारो,
खाजा कुटरी मैल बुकायो।
धिया कुमालि मैल लुकाई,
पापिनै इजु बोजी कैं मारौ।
साग लगो छ घुम्म करेली,
दादु जै रेछ तल्ली बरेली।

कानां कमस्यारी पर तुस्यारी,
दादु है बेर बोजि हुस्यारी।
पान भारी छ गोठ दबै छ,
पादि इजू लै बोजि मारि छ।
राधिका बौज्यू डाड़ मारन छ,
पुआ छपेरी गदेरी लफै छ
खाजा कुटेरी गाड़ बगै छ,
राधिका इजु डाड़मारन छ ॥"

गौरा महेश्वर—

इसी श्रेणी के अन्य कथा—गीतों में एक गीत 'गौरा महेश्वर' नामका है जिसमें इन देवताओं का विवाह वर्णित है। शिखर के ठंडे जल में महेश्वर उत्पन्न हुए। गंगा के वट वृक्ष की छाया में गौरा लली उत्पन्न हुई। नदी के इस किनारे गौरा गाय चराती थी। उस पार महेश्वर स्वामी बकरी चराते थे। महेश्वर ने पूछा तुम किसकी कन्या हो? किसकी गाय चराती हो? गौरा ने उत्तर दिया—मेरे पिता मेघ मंडल में हैं, मां नहीं हैं। महेश्वर ने उससे विवाह का प्रस्ताव किया। गौरा ने उनसे दूसरे दिन आने को कहा। महेश्वर ने उसके घर जाने का रास्ता पूछा। गौरा ने अपने घर की पहचान बताई कि सामने चंदन वृक्ष है। पिता के घर अलख जगाना, वहाँ सुवर्ण के प्रांगण हैं, चाँदी के द्वार हैं।

फिर महेश्वर ने उसके घर जाकर अलख जगाते हुए भिक्षा माँगी। 'माई' ने भिक्षा देते हुए कहा कि रास्ता छोड़ो। महेश्वर के पूछने पर कि क्या भिक्षा लाई हो? उत्तर मिला कि एक डलिया सोना है, एक डलिया चाँदी। महेश्वर ने यह कहते हुए कि ऐसा सुवर्ण चाँदी तो हमारे घर में भी है, उसकी भिक्षा अस्वीकार कर दी। 'माई' ने पूछा तुम्हें क्या भिक्षा चाहिए? महेश्वर ने कहा कि तुम्हारे घर एक कुँवारी कन्या हैं। क्या उसे दोगी? 'माई' ने रुष्ट होकर उत्तर दिया—तुझ जोगी को देने से तो अच्छा है सूर्य को दे दूंगी। महेश्वर ने कहा—सूर्य को दोगी तो वह जला कर भस्म कर देगा। यदि चन्द्रमा को दोगी तो रात भर चलना पड़ेगा। यदि देव मन्दिर में ईश्वर को चढ़ाओगी तो ईश्वर पुत्र तो मैं हीं हूँ महेश्वर।

यह सुन कर माई ने प्रसन्न होकर उत्तर दिया--तब तो सिर पैर से चलकर भिक्षा दूंगी। तेरे मन में बसी हुई कुंवारी कन्या ग्वाली मैं ही हूं। इस प्रकार गौरा महेश्वर के विवाह को कोई नहीं जान पाया।

'डोर दुबड़ का गीत'--

यह कथागीत स्त्रियों के दूर्वाष्टमी व्रत से संबंध रखता है। इस दिन स्त्रियाँ सुवर्ण, चाँदीं या रेशम आदि का 'दुबड़ा' (दूर्वा) बनाकर उसे प्रतिष्ठित करके बायीं भुजा में बाँधती हैं। यह व्रत भाद्रपद कीं शुक्ल अष्टमी के दिन किया जाता है। इसमें वर्णन है कि गौरा नहा धोकर जप करने बैठ गयीं। उन्होंने शिव जी से डोर दुबड़ लाने की प्रार्थना की। शिव जी बोले कि तुम काली गौरी हो। तुम्हें दुबड़ क्या शोभा देगा? भात मत खाना, अन्यथा माता काली पड़ जाएगी। गणेश को गोद मत लेना, अन्यथा वह काला पड़ जायगा।

इन तानों से गौरा बड़ी दुखी हुई और रुष्ट होकर उसने एक भाट को बुलाकर कहा कि मायके जाकर मेरा दुख कह देना। यहाँ शिव जी के साथ रहते रहते मेरी घाघरी फट गई। पिछौड़ी की केवल किनारियाँ ही शेष रह गयीं। आँगड़ी फट कर तार तार हो गई। गणेश का चोला भी फट गया है। कुछ समय बाद गौरा स्वयं डोली में बैठकर अपने मायके चल दी!

भादों के भरे महीने जब गौरा मायके पहुंची तो उसके माता पिता को यह चिन्ता हुई कि घर के भीतर तो भोजन की सामग्री तक नहीं है अब इसे क्या खिलाएंगे। गौरा बोली कि मैं आप लोगों से सोने का दीपक या ताँबे की परात माँगने नहीं आई हूँ। जब वह अपनी भाभी के घर पहुंची तो स्वागत सत्कार करना तो अलग, भाभी ने उससे बैठने तक को नहीं कहा। इस पर गौरा ने रुष्ट होकर शाप दिया कि तेरे घर चेलियाँ ही चेलियाँ (पुत्रियाँ) हों जाएँ। गायों के 'बहड़' ही 'बहड़' (बछड़े) हो जाएँ। भैंस के 'काटे' ही 'काटे' (कटड़ा) हों जाएँ। और धान के खेतों में पहाड़ ही पहाड़ हो जाएँ।

वहाँ से चलकर गौरा अपनी बहू के घर पहुँची। बहू ने हर्षपूर्वक उसका स्वागत करते हुए कहा कि आओ नान ज्यू (पति कीं बड़ी बहिन), आओ दीदी! लाल कंबल पर बैठो। सोने का दीपक कोई बड़ी बात नहीं, ताँबे की परात कोई बड़ी बात नहीं। जितना चाहती हो दहेज ले जाओ। गौरा ने यह सुनकर प्रसन्नतापूर्वक उसे आशीर्वाद दिया--बहू! तुम्हारे च्याला ही च्याला (पुत्र) हों। गोठ में बाछी ही बाछी (बछिया) हों। और भैंसों की थोरी ही थोरी (पड़िया) हों। और धान के खेतों में प्रचुर धान्य हो।

यह सुनकर भाभी ने भी गौरा को आमंत्रित किया। गौरा ने प्रसन्न होकर उसे भी यही आशीर्वाद दिया। गीत की कुछ पंक्तियाँ हैं—

"गवरा देवो को सप्तमी बरत,
नाई धोई गवरा जप भैटी गीन।
आणी दियौ महेसर देवा हार यो डोर।
त्वे काई गवरा किया हार छाजे,
काई होई तेरी माई, भात झन खैये
कालो होलो गणपति बाल, गोदी झन लीये ।
कालो सालिगराम, पूजा झन करीये
कावो होलो सरग दीठ झन लैये।
महेसर देवा ले दोछण दी हालीं।
गवरा देवी त रिसाई गे छन,
एती कि रिसाणि उतिमा न्है गेन,
ओ बादी भाट, म्यारा मैत जै दिये,
म्यारा मैत जै बेर म्यारो दुख कै दिये
घाघरी फाटी त कमर रै गे छ,
पिछौड़ी फाटी त मुन्याठ रै गे छ,
आँगड़ी फाटी त टाटरी रै गे छ,
पारण पातल के डोली लसक,
गवरा महेसरै कि के डोली लसक।——"

'ऋतु रैण'—

चैत्र मास में भेटौली की प्रथा संबंधी एक कथा गीत 'औजी' या 'ढ़ोली' नामक गायकों द्वारा गाया जाता है जिसमें भाई की बहिन से मिलने की उत्कंठा व्यक्त हुई है। इस कथा के अनुसार चैत का महीना आरंभ होने पर लड़की को ससुराल में अपने मायके का स्मरण हो आया। मायके में उसके भाई ने माँ से पकवान बनाने के लिए कह कर अपनी बहिन का पता पूछा। बहिन की ससुराल बहुत दूर होने तथा मार्ग में अनेक कठिनाइयाँ होने के कारण इस पर माँ ने अनेक

प्रकार के बहाने करके उसे रोकना चाहा कि तू अकेला उत्पन्न हुआ था, तेरी कोई बहिन नहीं थी, आदि। जब पुत्र को विश्वास नही हुआ तो अंततः मां को बताना पड़ा कि तेरी बहिन चौगंगा पार विवाही गई है। किन्तु वहाँ जाने का मार्ग तुझे कौन दिखाएगा? गंगा पार कौन कराएगा? किंतु भाई उसे समझा कर पक्वान्न की डाली सिर पर रखकर, उत्साहपूर्वक चौगंगा पार बहिन की ससुराल जा पहुँचा।

वहाँ देवरानी जिठानी आँगन में ऊखल कूट रही थीं। नवागत व्यक्ति को उन्होंने नहीं पहचाना। ननद ने ध्यानपूर्वक उसे देखते हुए उसकी मुखाकृति को अपनी भाभी के समान देखकर भीतर भाभी से कहा– तुम्हारी मुखाकृति का कोई 'पौहण' (अतिथि) आया है। भाभी को मालूम नहीं था कि उसका कोई भाई भी है। उसने ननद से कहा कि हमें बोल मत मारो। ननद ने जब शपथ पूर्वक अपनी बात दुहराई और कहा कि बाहर चलकर स्वयं देख लो वह पूर्व दिशा के झरोखे की ओर आँख लगाए खड़ा है।

भाभी ने बाहर जाकर उसे पहिचान लिया। दोनों भाई बहिन गले मिल कर बहुत रोए। बहिन उसका कुशल समाचार पूछती हुई उँगली पकड़ कर भीतर ले गई। लाल कंबल बिछा कर उसका आसन लगाया।

इसी बीच उसका पति कालीनाग आ पहुँचा। उसने अपनी पत्नी को पर पुरुष से बातचीत करते देखकर भाई को डस लिया। दुख के मारे बहिन दाँतों तले जीभ दबाकर मर गई। जब कालीनाग ने देखा कि ये तो एक ही अनुहार के हैं तो उसने अमृत से सींच कर उन्हें जीवित कर दिया।

यह कथा गीत कई रूपान्तरों में प्रचलित है। इसकी गायन परंपरा अब लुप्त हो रही है क्योंकि 'औजी', 'ढ़ोली' नामक विशेष गायकों ने दूसरे दूसरे व्यवसाय अपना लिये हैं।

रूपा का गीत--

उपर्युक्त परंपरा के एक और कथा-गीत में धान निराती हुई रूपा नामक स्त्री का किसी आगंतुक पथिक से वार्तालाप वर्णित है। पथिक के पूछने पर कि तू अकेली धान क्यों गोड़ती हैं? तेरी देवरानी जेठानी कहाँ गई, तेरे देवर जेठ कहाँ गये? और तेरी ननद तथा सास, ससुर आदि कहाँ गए हैं? इस पर

रूपा उत्तर देती है कि मैं तो अकेली हूँ। मेरी जेठानी चूल्हे की रसिक है, देवरानी घस्यारी (घास काटने वाली) है। जेठ सभा में बैठा हुआ है और देवर भैंस चराने गया है। ननद ससुराल में है। सास ससुर बूढ़े हो गए हैं।

'बटुवा' (बटोही) पूछता है कि तेरा प्रियतम कहाँ चला गया? रूपा उत्तर देती है कि वह छोटी आयु में मुझसे विवाह कर परदेस चला गया था। फिर वह लौट कर नहीं आया। उसके हाथों का लगाया 'सिलिंग' का वृक्ष फूलों से लद गया है। किन्तु वह पलट कर नहीं आया। बटुवे ने कहा मैं ही तेरा प्रियतम हूं। रूपा ने इस पर उसे फटकार दिया। फिर जाने वाले प्रियतम की वेश भूषा का स्मरण करके उसे विश्वास होने लगता है कि बटुवा शायद सच बोल रहा है। बटुवा ने कहा कि से तेरा प्रिय होऊँगा तो पालकी में ले जाऊँगा और यदि लबार हुआ तो तेरा हल जोतूंगा।

जसी बौराण—

इस कथा गीत में मानव की बलि दिए जाने का एक महत्त्वपूर्ण संकेत सुरक्षित है। सबके खेतों में सिंचाई होते देखकर किसी बुढ़िया ने अपने यहाँ सिंचाई हेतु मुहूर्त्त पुछवाया। इसके लिए उसका पुत्र ब्राह्मण के घर गया। ब्राह्मण ने रेखाएँ खींचते-मिटाते हुए विचार किया कि सब के खेतों में बकरे की बलि लिखी हुई है किन्तु तुम्हारे यहाँ मानव की बलि लिखी हुई है। तुम्हें अपनी सबसे छोटी बहू की बलि देनी पड़ेगी। पुत्र ने घर जाकर यह समाचार माता को दिया। और कोई उपाय न देखकर उन्हें बहू की बलि देनी पड़ी।

इस तरह के घटना प्रधान अथवा कथा प्रधान कई गीत हैं जिनका सौंदर्य कथानक के वर्णन में जितना स्फुटित होता है उतना गायन में नहीं हो पाता। इसी कारण ये मुक्तक लोकगीतो से पृथक् कोटि के हैं। इनकी शैलीगत विशेषता यह है कि दो पात्रों के संबाद इसके कथाक्रम को अग्रसर करते हैं। बिना संवादों के किसी कथागीत की कल्पना नहीं की जा सकती।

पात्रों के संवाद अथवा कथोपकथन मुक्तक गीतों में भी प्राप्त होते हैं जैसा कि पिछले अध्याय में स्पष्ट होता है। किन्तु वहाँ किसी स्थिति, किसी भाव अनुभूति अथवा किसी दृश्य का वर्णन मुख्य होता है। इसके विपरीत कथागीत का मुख्य तत्व घटनात्मक है जैसा कि 'नंदू बालो' 'बाली हाजुरा' 'कंपासी मानों', 'राधिका बोलैंदे,' 'गौरा महेश्वर', 'डोर दुवड़', 'ऋतु रैण', और 'रूपा का गीत', 'जसी बौराण', शीर्षक कथागीतों के उदाहरणों से स्पष्ट है।

यहाँ पर स्मरण रखना चाहिए कि उपर्युक्त कथा गीत कुमाऊँ के प्रसिद्ध लोक महाकाव्य (फीक इपिक) 'मालूसाही', 'रमौल', 'भड़ौं', आदि से आकार और गायन-शैली दोनों में भिन्न पड़ते हैं। यह रामायण, महाभारत के उन आख्यान गीतों से भी भिन्न हैं जो 'हुड़की बौल', अथवा 'जागरों' की पृष्ठभूमि के रूप में गाए जाते हैं। उनमें लोक गायक सीधे किसी पौराणिक कथा का वर्णन मात्र (नॅरेशन) करते चलते हैं जब कि उक्त प्रकार के कथा गीत संवादों द्वारा विकसित होते हैं।

आख्यान गीतों में मुख्य प्रसंग के साथ साथ अवांतर प्रसंग भी वर्णित होते हैं। किंतु कथागीतों में अवान्तर प्रसंगों के लिये स्थान नहीं रहता। इनके संक्षिप्त होने का यही मुख्य कारण है। यह भी कथागीतों का अन्य लोक साहित्यिक विधाओं से एक प्रमुख भेदक लक्षण है।

———

९२०८६०

९ कुमाउंनी लोक गाथाएँ

कुमाऊँ में प्रचलित छोटी बड़ी लगभग एक सौ लोकगाथाएँ अपने प्रमुख पात्रों के माध्यम से स्थानीय जन जीवन की सांगोपांग अभिव्यक्ति करती हैं। इनके कथा-नायक जन्मजात वीर और साहसी होते हैं जो विषम परिस्थितियों का सामना करते हुए आत्म-बलिदान कर देते हैं। फिर किसी जादुई कृत्य से वे पुनः जीवित हो उठते हैं। पौराणिक, ऐतिहासिक और काल्पनिक वृत्तान्तों का इनमें ऐसा सम्मिश्रण हुआ है कि इन्हें वास्तविक अर्थ में लोक महाकाव्य (फोक इपिक्स) कहना उचित मालूम पड़ता है।

सुविधानुसार ये गाथाएं एक रात से लेकर छः सात रातों तक लगातार गाई जा सकती हैं। नंदा देवी की 'बैसी' तो प्रसिद्ध लोक परंपरा के अनुसार कभी बाईस दिनों तक अटूट क्रम से गाई जाती थी।

विषय वस्तु, अवसर विशेष और गायन शैली के आधार पर कुमाउंनी लोक गाथाएँ चार प्रकार की मानी जा सकती हैं—

(१) परंपरागत गाथाएँ,
(२) पौराणिक गाथाएँ,
(३) धार्मिक गाथाएँ,
(४) वीर गाथाएं।

इन लोक गाथाओं की विस्तृत तालिका लेखक की अन्य पुस्तक 'कुमाऊँ का लोक साहित्य' में दी गई है।[1]

(१) परंपरागत गाथाऐं—

इनके दो रूप मिलते हैं—

(क) 'मालूसाही'
(ख) 'रमौल'।

(क) 'मालूसाही'—

विषय-वस्तु की दृष्टि से 'मालूसाही' कुमाऊँ का जातीय महाकाव्य है जो परंपरानुसार विकसित होकर लोक गायकों के कंठ से विस्तार प्राप्त करता है। हूण देश अर्थात् तिब्बत-जोहार से लेकर काठगोदाम के ऊपर चित्र-शिला तक का संपूर्ण पर्वतीय भूभाग इसके कलेवर में समा गया है। इसके सजीव वर्णनों और ऐतिहासिक उल्लेखों द्वारा उस प्राचीन सामन्ती व्यवस्था पर भी प्रकाश पड़ता है जो मध्यकाल में यहां प्रचलित थी।

---

१. 'कुमाऊँ का लोक साहित्य'– डा त्रिलोचन पांडेय, पृ० १६०–१६१.

सारे कुमाऊं में प्रसिद्ध होने के कारण इस 'मालूसाही' के अनेक रूपान्तर प्राप्त होते हैं—

(१) बारा मंडल का रूपान्तर,
(२) पाली पछाऊं का रूपान्तर,
(३) जोहार का रूपान्तर,
(४) भीमताल का रूपान्तर।

इन सभी रूपान्तरों में द्वाराहाट के शासक मालूसाही और शौक्याण देश की राजुला का प्रेमाख्यान गाया जाता है। गाथा का संक्षिप्त वृत्तान्त इस प्रकार है—

चौखुटिया गिवाड़ का धर्मात्मा राजा दुलासाही निस्संतान था। संतान प्राप्ति के लिये उसने प्रसिद्ध प्रसिद्ध मंदिरों के दर्शन किए। प्रसिद्ध नदियों में स्नान किया। किन्तु उसकी इच्छा पूरी नहीं हुई। उस समय यही स्थिति जोहार के सुनपति शौक की भी थी। वे दोनों एक बार बाघनाथ (बागेश्वर) के दर्शन हेतु आए। मकर संक्रान्ति का अवसर था। बैराठ की रानी कत्यूर मठ में रुकी और सुनपति की पत्नी गंगुली सौकिया खेड़ा में रुकी। बाघनाथ देवता ने बैराठ की रानी को पुत्र का वरदान और गंगुली को कन्या का वरदान दिया। उन्होंने वहीं गर्भ-गंधाक्षत कर लिया।

समयानुसार बैराठ की रानी का मालूसाही नामक पुत्र हुआ और गंगुली की पुत्री राजुला हुई। वह नित्य द्वितीया की ज्योत्स्ना जैसी, वैशाख के सूर्य जैसी, चैत के कैरुआ जैसी और पूस के पालङ्ग जैसी बढ़ती ही गई। ग्यारह वर्ष की होने पर उसकी माता को उसके विवाह कि चिन्ता हुई। राजुला ने एक बार उससे पूछा कि अनाजों में कौन सा अनाज, वृक्षों में कौन सा वृक्ष, देशों में कौन सा देश और राजाओं में कौन सा राजा बड़ा है? मां ने उत्तर दिया कि अनाजों में जौ तिल, वृक्षों में पीपल, देशों में रंगीली बैराठ, और राजाओं में मालूसाही सबसे बड़ा है।

सुनपति जाड़ों में व्यापार करने के लिए जब देश को चला तो राजुला ने उससे देश दिखाने की प्रार्थना की। उसने कहा कि मैं तुम्हारी छै बीसी (१२०) बकरियाँ और नौ बीसी (१८०) भेड़ें जंगल में चराऊंगी। दूनागिरि का दही, परकोट के गावा और कोस्यां के बासमती चावल खाऊंगी। सुनपति के बैराठ में पड़ाव डालने पर वह एक दिन नदी के किनारे विश्राम कर रही थी। शिकार करते हुए मालूसाही ने जल में उसकी परछाई देखी तो वह उसे देवी समझ कर हाथ जोड़ने लगा। परिचय के उपरान्त दोनों के हृदय में प्रेम का अंकुर जम गया।

जोहार वापस लौटने पर सुनपति की इच्छानुसार राजुला का विवाह हूण देश के राजा चंद विखैपाल से कर दिया गया। ससुराल में चंद विखैपाल उसे सात तालों में बंद करके रखता था। वह रास्ते के वृक्ष, पशु पक्षी सभी से मालूसाही के प्रति अपना संदेश कहती आयी थी। वहाँ से कोई उत्तर न मिलने पर अवसर पाकर वह एक दिन स्वयं हुण देश से भाग कर बैराठ के लिये चल पड़ी।

अकेले बाईस पाट का घावरा पहने हुए वह मल्ला जोहार से चलकर तेजम, सामाधुरा स्थानों होती हुई बागेश्वर पहुंची। वहाँ से गिरिछीना होकर सोमेश्वर पहुंचने पर बाईस गलघंट भाइयों ने उसका मार्ग रोका। वे सभी उससे विवाह करना चाहते थे। उनसे बचकर राजुला जब लोधछीना स्थान में पहुंची तब खेतों में पानी देता हुआ हरुवा कैंड़ा अपने नौ पुत्रों के साथ उसके सामने आ खड़ा हुआ। उसके सौंदर्य पर पिता–पुत्र दोनों मुग्ध हो गए। वहाँ से चलकर द्वाराहाट पहुंचने पर फचुवा दोराल ने उसका मार्ग रोका। उसकी सौ भैंसे दुधारू और सौ भैंसे 'बाखड़ी' (सूखी) थी। उससे बचकर किसी प्रकार राजुला रंगीली बैराठ पहुंच गई।

उस समय मालूसाही सो रहा था। राजुला ने उसके सिरहाने एक पत्र लिख कर रख दिया कि यदि तुम सच्ची मां के पुत्र होगे तो शौक्याण देश आकर मुझे ले जाओगे। फिर वह लौट गई। मालूसाही ने जागकर उसकी पूछताछ की। माता धर्मावती ने कहा कि सात रानियाँ होने पर भी यदि तुम चाहते हो तो आठवाँ विवाह मैं कर दूंगी। तुम मेरी एक मात्र सन्तान हो। शौक्याण देश मत जाओ!

किन्तु मालूसाही उसकी बात को ठुकरा कर भीख मांगते हुए राजुला के घर जा पहुँचा। राजुला ने अपनी मंत्र शक्ति से उसे एक छोटा सा जीव बनाकर अपने जूड़े में रख लिया। गांगुली ने अवसर देखकर उसे विष हुआ मिला भोजन खिला कर मार तुरंत डाला और चंद विखंपाल को हूणदेश में सूचित किया कि राजुला को आकर ले जाओ।

इधर बैराठ की राजमाता धर्मावती को स्वप्न द्वारा इस घटना का पता चल गया। उसने अपने गुरू जी की आज्ञा लेकर अपने भाइयों धाम देव, बरम देव को और नौ लखा कंथा पुरियों को मालूसाही की सूचना लेने के लिए भेजा। उन्होंने मालूसाही का पता लगाकर उसे जीवित कर दिया और उसका रूप बदल कर तोता बना दिया।

तोता रूपी मालूसाही जब राजुला के हाथ पर बैठा तो राजुला ने उसके गले में बँधा हुआ तागा तोड़ दिया। अब वह पुनः मनुष्य बन गया। उसने अपने पक्ष के घाम देव आदि लोगों से मिलकर चन्द बिखैपाल की सेना से युद्ध किया। उसे हराया और राजुला को अपने साथ बैराठ ले आया। तब बैराठ में अनेक वर्षों तक दोनों सुखपूर्वक राज्य करते रहे।

यहाँ पर इस लोक गाथा का एक अंश प्रस्तुत किया जाता है जिसमें गंगुली देवता का दर्शन के लिये विभिन्न स्थानों में घूम फिर कर सरयू नदी के किनारे बागेश्वर देवता से अपनी मनोकामना प्रकट करती है। गायक आरंभ करता है—

"आ ऽऽ सुणि लीया भाई बन्दो, जिया जागी रया,
दैंण है जाया दैंण, हो महादेव।
दैंण है जाया, हो गौरा पारबती,
काम सुफल करिये सिद्धि का गणेश,
तै बखता पंचनामा देवा रौंनी पंचचूली मांजा,
पंचा देवो नाम, दैण है जाया भगवाना।
अट्ठासी सै गंगा भुलू ! नवासी सै तीरथा,
दैण है जाया दैण, यो भूमि को भूम्याला।
हो ऽऽ संसार में सबन है ठुल दुख, पुतर को शोक
पाली पछौं धरमा राणी, तेरो च्यालो नि छीयो,
सेड़ी सौक्याण गांगुलि सौक्याण, भुलू त्योरो च्यलो नि छियो,
तेरो रे पति छियो सुनपति सौका
जै सौका कि सुनूं का अटांगण छिया, सुनुं का पटांगण
नौ लाख बाकुरी झुपा छन, घोड़ा धन, भेड़ी छन,
बाकुरी तिलू रे हेलू लाखा
गाँगुली सौक्याण भैगे सुनिया त्यारा मुखै तें
के करछै ब्यौपारै लै सुनिया,
के करन छै अनैं लै, के करन छै धनै लै
को जसो भुगतन छ, सन्तानै न्हाति।
तब सुनिया बलाण फैंगो आँसू झाड़ि बेर।

औलाद नातिना हमारा, मैलै सुणी छ,
ए चितरसिला देवी मांजा, देवी परसिद्ध होली
जो जै मनसा लै जाँछ, ऊ दुख फिटन छ,
तू जै आ गंगुली देवी का मंदिरा।
आब गंगुडी देवी लै, गउंली लै लुकुड़ पैरी हाली हो।
खाजू धरी खजूरा, बाटा लागी गेछ हो।
आब द्वीए आँखन बटि आँसू खेड़ि हालीं।
दैणा होए, देवी म्यारा च्यल न्है हाती,
चेली होयो म्यारा धरण देवी तू झुठ झन करिये।
औनां औनां ऐगे गागुलि तली सौकाणि,
औनां रे औनां ऐगछि गाउंलि गोरी गंगा का छाला,
आ, न्है गेछ गांउंलि घुनघुना का पाणी,
आपु न्है गेछ गाउंलि कमर कमर का पाणी,
तब गाउंलि तेरा लुकुड़ भिजाला हो,
तब गाउंलि त्वीलै गंगा तरी है छ हो
अब लागी गेछ ओ गाउंलि बिजुली दानपूरा,
आपूँ गै नसि गेछ गाउंलि बिजुली दानपूरा,
आपूं जै पुजि गेछ त बैरागं बिजुली दानपूरा,
बिजुली दानपूरा वे निड.ला जै फुलि रौछ
झिट घड़ी भें गं छे निड.लाणि जंगला
तब गाउंलि सौक्याणा झिट घड़ी भैरै छ
बाट लागी छ सामाधुरा न्है गे छा,
अब न्है गेछ बैणी ल्वारखेता नजीका,
तां बटी पुजी छ बैणी कपकोटा उठाण,
मेरा रूपसा, फिर गंजा मिलन छी कपकोटा का सामणीं,
खीर गंगा, सरजू गंगा तेरो मिलाप हूँछ,
ओ म्यारा भागीवाना, कपकोटा का सामणीं,

तब त्रिवंडी मांजै करछ असनाना,
ए सरयू गंगा दैण है जाए, दैण,
मैं कणि मिलि जाओ औलाद का वरदान,
तती को पुजी गे सांस पड़नी बखत मंदिरा,
तां म्यरा भागीवान हो बागी नाथा
बागीनाथा मंदिरा दीपक जागी रैई
शंखा, घंटा, झांकर झम झम बाजेला,
बागेश्वर सामैणि कै पुलै न्हातिन,
कसी कै तरन छी बैणी सरयू गंगा माता,
तब गंग तरी छ त्वीले गोमती सामणी–
वारा रे पारा छन तिरजुगी पीपला,
न्हैं गे गंगा जू का पारा,
हाता रे जोड़ी बेर शिव जी का मंदीरा....'

(ख) रमौल–

कुमाऊँ की दूसरी प्रसिद्ध परंपरागत गाथा 'रमौल' है जो मूलतः गढ़वाल की लोक गाथा का फैलाव है। किन्तु अपने व्यापक प्रभाव के फल स्वरूप कुमाऊँ के पश्चिम उत्तरी भागो में प्राप्त होती है। इसका कथानक मालूसाही की अपेक्षा विशेष शिथिल है। रमौल वंश के १५–२० वीरों की पारंपरिक घटनाएं एक साथ वर्णित होने के कारण उतनी सूत्रबद्धता नहीं मिलती। गायक इनमें भी मुख्य रूप से गंगू रमौल, सिदुवा रमौल, बिदुवा रमौल, के वृत्तान्त गाते हैं जो रमौली हाट में शासन करते थे।

इनके अतिरिक्त जैनू रमौल, बिरनू रमौल, किरपा रमौल, पिरतू रमौल, सकतू रमौल, भकतू रमौल, आसा रमौल, जगदेव रमौल, जोगा रमौल, भागदेव रमौऌ, ऐला रमौऌ, गैला रमौला आदि के नाम गिनाए जाते हैं जो इसी परंपरा से संबद्ध हैं। इन नामों से ज्ञात होता है कि रमौला वंश के बाहर के वीरों को भी (जगदेव) इसमें सम्मिलित कर लिया गया है।

प्रचलित गाथा के अनुसार 'महाभारत' के कंस ने देवकी के जिन सात पुत्रों को मार डाला था उन्हीं में से एक बरमी कंवल (ब्रह्म कुँवर) भी थे और सिदुवा बिदुवा रमौल उनके मामा थे। वरमी कँवल के वृत्तान्त में उल्लेख मिलता है कि कृष्ण ने अपना शरीर रगड़ कर कुछ भौंरों को उत्पन्न किया जिनके द्वारा उन्होंने अपने भाई ब्रह्मकुंवर (बरमी कँवल) के पास संदेस भेजा कि तिब्बत निवासिनी जूला-

ताल की मोतीमाला से चौरस ले आना। उस समय ब्रह्मकुंवर बरमी कोट में रहते थे।

गाथा के अनुसार श्री कृष्ण के एक और भाई सरजू कमल (सूर्य कुंवर) कहे गए हैं जिनकें वृत्तान्त से ज्ञात होता है कि जब कृष्ण स्वप्न में तिब्बत की जोतर माला पर आसक्त हुए तो उन्होंने सरजू कमल के पास भ्रमरों द्वारा पत्र भिजवाया था।

इस प्रकार ये रमौल गाथाएँ किसी न किसी प्रकार श्रीकृष्ण भगवान के कुमाऊँ-गढ़वाल के पर्वतीय क्षेत्रों से निकट संबंधों की परिचायक सिद्ध होती हैं। पांडवों के संबंध में प्रचलित अन्य गाथाएं भी इसी तथ्य को प्रमाणित करती हैं। अतः श्रीकृष्ण के चरित्र का पूरा विकास समझने के लिए इन लोक गाथाओं का अध्ययन करना आवश्यक है।

इन्हीं गाथा-चक्रों (साइकिल्स) में बिदुवा रमौल को सिदुवा रमौल का छोटा भई कहा गया है जो उसी की भांति बहादुर था। वह मंत्र-तंत्रों के प्रयोग में उसी की भांति निपुण भी था। वह अजगर जैसा भयानक था, नौ नौ मन का कंबल ओढ़ता था और उसका कमर पट्टू सौ हाथ लंबा था। एक रमौल गाथा के अनुसार भारती रमौल रुक्मिणी के धर्म भाई थे जिनसे उसने सेली सागर नामक स्थान में जाने का आग्रह किया था।

गंगू रमौल का वृत्तान्त इन सभी गाथा-चक्रों के बीच एक सूत्र स्थापित करता है। वह स्वयं सौ वर्ष का बूढ़ा था। उसके पास कंकड़ पत्थर जैसी संपत्ति थी। अनन्त धन बालू के ढेर जैसा अनाज था। किन्तु वह निस्संतान था। वह अधर्मी और देवी—देवताओं का अविश्वासी था। बलिदान के बकरे तक उठा ले जाता था। अविवाहित कन्याओं पर कर लगा देता था। श्रीकृष्ण जब उसे दण्ड देने रमौली गढ़ पहुंचे तो वह पशुओं को चराने गया हुआ था। ब्राह्मण रूप धारी कृष्ण उसकी जन्म पत्री लेकर चले गए। गंगू रमौल ने घर लौटकर इसकी असावधानी के लिये अपनी पत्नी को फटकारा। तब उसकी पीठ दुखने लगी और उसके पशु मरने लगे।

तब उसने श्री कृष्ण से क्षमा माँगी। उसके सिदुवा बिदुवा नामक पुत्र श्री कृष्ण के मित्र थे।

यहाँ पर वर्णित रमौल के अंश में द्वारिकावासी कृष्ण ने गंगू रमौल से निवेदन किया है कि अपने यहाँ शिव मंदिर बनाने के लिये मुझे कोई स्थान दो तब तुम्हारी मनोकामना पूरी होगी। गंगू ने उन्हे चुनौती देते हुए कहा कि जब मुझे मंत्र-तंत्र में पराजित कर दोगे तभी अपनी 'रतंगली सेरी (उर्वर घाटी') में जगह दूंगा। वर्णन का एक अंश है—

"आपूँ रौनीं रमौला रमौली गढ़ में,
तुमरी होली ओ राणी बिजौरा,
आपूँ रमौला बैठी रीन तिवारी का खामा,
ओ हरी त नरैन, आपूँ हरी जगदीस,
यसा जै के छैं रमौला रमौली गढ़ में,
एक दिना रमौला कसी हैं छ बाता--
द्वारिका नरैण होला क्रिस्न भगवाना
जनरी होली ओ राणी रुकमणी,
एका दिना का बीच क्रस्न भगवानूँ लै तब
रमौली गड़ जागा मांगी हाली !
सुण सुणा म्यार रमौल, हमूँ कणी जागा दि दीयौ
एक मुठी जागा दि दीयौ, रतड-ली सेरी मांजा
शिव को मंदीर बणौनूं तुमारा रतड.ली,
तब तुमरो काम सुपल होलो !
ओ आपूं रमौला गुसौ भरि गो छ
प्रभू यसा जे के छैं एजण्डर खसिया
जनूं ले जागा नि दी, ओ सुणो सुणो क्रिस्ना
एको दिन तुमी हम बिदियै की मार चलै ल्हीनूं।
जै बखतो हुमरी हार होली,
ऊ बखत तुमूं कणीं जगा दी द्यूंल-
ओ म्यरी राणी बिजौवा, हमूंल की जानूं मली बुक्याला
छबीसी बाकैरी हमैरी, बारबीसी ढिपरी हमरी
जाली मली बोक्याला, तू राणी बिजवा,
सेली सागरूँ को सामान धरी दे,
ऊ सामान बटै हमरो भलो दे धैं
हिल तिला लाखा हमारा, चौर्यांली, भौरयाली खाड़ूं,
ओ सेली सागरूँ ल्हैई जाली,
आज कल हमरो त ऐगो बखत सेली सागरूँ को।

राणी बिजौवा चुड़ुकै उठैली
तब न्हैगे राणी बिजौवा ऊ गैली मंझोई,
गाड़ी तैलै लुकुड़ा की पिटारी,
ओ गाड़ी तैलै ओ पटंबरी धोती
अब राणी बिजौवा ल्हैगे ओ रस्योखना माँजा
रमौलूँ की ज्युनार बऊंणै फैगे रानी बिजौवा
छत्तीस प्रकार बणली बत्तीस ज्युंनार।
चड़पड़ी धाता लाली ओ सिदुवा रमौल
तब राणी बिजौवा सामान बय्यूंण फैगे—
तब रमौल सामान बट्यायो, छ बीसी बाकरी
बारा बिसी को भार, अठारह बिसी को सार,
तुमरो लैस बणी गो छ!,
परभू, द्वी भाई रमौला चुड़ुका उठैनीं,
ऐगीं रमौला तिबारी का खामा
तब रमौलूं लै आड.ै की लुकुड़ी खोली,
ल्हैगी रमौल रस्योखना मांजा
प्रभू ज्युनार बऊंण फैगीं सिदुवा बिदुवा रमौल
हरि तो नरैण राणी बिजौवा,
हमरूं सेली सागरूं को सामान धरी दे
तब राणी विजौवा समान बट्यूण फैगे,
तब रमौल सामान बट्यायो छबिसी बाकरी
प्रभू, बार बिसी ढेपरि तुमरी लैसे बाणी गे।
रपुवा झपुवा कुकुर कणि, घान लागो ख्याप्,
तब तुमरि बाकरी बाटो लागी गो छ,
ल्हैई गेछ ओ सेली सागरूं को।
पछतान धरी है छ, ओ चौर्‌याली भौर्‌याली
खाड़ू तुमरा बाटा लागी रैन, ह्यो ह्यो——

आपूं रमौला, मार मार छाड़ छाड़ कनै
बाटो लागी रींन आपूं रमौला ।
अब जानीं रमौल ओ सेली सागरूं माँजा
आपणी बाकरी चरै भली ल्यूनूँ ।
जानै जानै रमौला ल्हैई गींन
ओ उखलिया ढूंगी में ड्यार रोकि हाल।
बैस बैणी परी तब काम ऐन उखलिया ढुँगी में
हे प्रभू उखलिया ढूँगी में कस धनकोटि लागी रै छ
एकै कि मुसड़ यक परनी टकरानी
ओ म्यारा प्रभो, तब सिदुवा रमौल चाई हेरी रैगींन ।
द्वी भाई रमौला बुड़ घाङ्गू का च्याला हला
सिदुवा बिदुवा रमौल ।. . . . .''

२. पौराणिक गाथाएं--

कुमाऊँ में जागर गाथाओं की पृष्ठभूमि के रूप में अथवा कृषि संबंधी 'हुड़ की बौल गायन के अंतर्गत पौराणिक गाथाएँ प्रचलितहैं जिन्हे गायक महाभारत लगाना कहते हैं। इनमें महाभारत के अतिक्ति रामकृष्ण संबंधी, शिव संबंधी अथवा चौबीस अवतार संबंधी वर्णन गाए जाते हैं जिनकी पवित्रता पर गायकों का अखण्ड विश्वास रहता हैं। वे प्रत्येक समय उन्हें सुनाने के लिये तैयार नहीं होते। ये गाथाएँ मुख्यतः छः प्रकार की हैं –

(१) महाभारत संबंधी गाथाएँ,
(२) कृष्ण जन्म संबंधी गाथाएँ,
(३) राम संबंधी गाथाएँ,
(४) शिव संबंधी गाथाएँ,
(५) चौबीस अवतार संबंधी गाथाएँ,
(६) नागवंश संबंधी गाथाएँ।

१. महाभारत संबंधी गाथाएँ—

अधिक संख्या 'महाभारत' के प्रसंगों की मिलती है जिनमें अभिमन्यु वध, भीम को विष देना, शिशुपाल वध, भीम दुर्योधन का वैमनस्य, अर्जुन वासुदन्ता का प्रेम जैसे वर्णन मुख्य हैं।

कौरव पाण्डवों के मूल वैमनस्य का कारण बताने वाली लोक गाथा यहाँ दी जाती है जिसमें दोनों की राज्य-सीमा पर उगे हुए एक वृक्ष को युद्ध का कारण कहा गया है। वृक्ष पर लगे हुए मधुमक्खी के छत्ते को प्राप्त करने के लिए दोनों पक्ष लड़ने लगे। लोक कल्पना (फोक इमेजरी) का यह अच्छा उदाहरण है-

"हे भगवाना ऽऽ वाहा पांचा भै पाण्डव छन,
जैती बारा माजा, सै भाई हस्तिनी पुर में
वाहा, कँवर पाण्डव ज्यू को वां जनम को जुद्ध
जनम जनम को जुद्ध लगमै लागनी
वाहा हरी राम बाई भै बीना
रागा देश हैगो इजा, तब भयो कुरूछेत्तर भारत
जब न्हैगे कँवर पाण्डव पट्टसाल पडना
एक दिन उनन लै भँवर छत्ता देखौ,
तब म्यारा नरैन जू भँवर छत्ता मांजा,
मनसब करि हा अब भँवर झट्पर,
वो भारत जुड़न फैगो भगवान,
अब कौरव पाण्डव को भारता शुरू हैगो,
ईद विद्या लड़ाई कँवर पाण्डव को,
घोर जुद्ध हैगोछ संसार सागर,
तीन लोक धरती हरि नौ खंड मानम,
जुड़ान फैंगो छ महाभारत तब म्यारा नरैन,
श्री क्रस्न गोपाल, हे भगवाना! अदार हैगेन के
बारा बरीस को अरे कौरव पाण्डव को,
भारत जुड़ी गोछ वा भीमा रे सैना,
जोधा गुसा में ऐगेन सुन म्यारा नरैण,
वा भीम सेन जोधा लै भीम रूप धरो
नील कंठ पौड़ी मजा भीमासैना जोधा
मुक्की जो मारैला, मुक्की मारी बेर भीमा

नीलकंठ पौंड़ी मांजा रे भीमा
अरे मुक्का मारी भीमा सीड़ी बन हिला
एक मुक्का मारा एक सीड़ी लाया।
दुहरो मुक्का मारा दुहरा सीड़ी लाया।
तिहरो मुक्का मारा, तिहरी सीड़ी लाया ......"

२. कृष्ण चरित्र की गाथाएँ–

द्रष्टव्य है कि कृष्ण का चरित्र इन गाथाओं के अंतर्गत एक रसिक के रूप में अधिक उभरा है। इस सम्बन्ध में यद्यपि कृष्ण जन्म, गोकुल पूजा, कालिय दमन और रास लीला के प्रसंग भी गाए जाते हैं जिनमें रुक्मिणी को उनका प्रणय लीलाओं का केन्द्र बनाया गया है। कृष्ण जन्म का वृत्तान्त कुछ घटनाओं को छोड़कर पुराणोंके ही अनुसार है। प्रेम लीलाओं में उनका परकीया प्रेम लक्षित होता है। वे स्नान करती हुईं, मुलमुल कर हँसती हुई गोपियों की रतनारी आँखों पर मुग्ध हो जाते हैं। इस दृष्टि से कुसमा कोलिन की गाथा उल्लेखनीय है जो उनकी रसिकता का उदाहरण भी है।

कुसुमा नाम की कोलिन स्नान करने के लिये जमुना तट पर गईं। नीचे श्री कृष्ण स्नान कर रहे थे। जलधारा में एक सुनहला केश उनके हाथों में लगा उसकी खोज में वे नदी किनारे चल दिए। एक मछुवे से पूछते हुए वे कैलूगढ़ जा पहुंचे जहाँ कुसुमा रहती थी। यह जानकर कि उसका पति इन्द्र का सभा में गया हुआ है, श्री कृष्ण उसके पलंग पर लेट गए और द्वार पर सूचनार्थ एक मुरगा बैठा दिया। श्री कृष्ण के भीतर आते ही पलंग के घुंघरू बजने लगे जिसकी आवाज कैलानाथ तक जा पहुंची। वह दौड़ कर घर आया किन्तु मुरगे ने श्री कृष्ण को सावधान कर दिया। वे किसी झाड़ी में जा छिपे।

इसी प्रकार देवकी जन्म, अनिरुद्ध की कथा, श्री बाणासुर की कथा आदि गाई जाती हैं। इनमें लोक मानस की पर्याप्त उद्‌भावना हुई है।

(३) राम संबंधी गाथाएँ––

कुमाऊं में राम संबंधी गाथाएँ कम प्रचलित हैं। उनका व्यक्तित्व लोक कल्याण और मर्यादा की भावना पर अधिष्ठित होंने के कारण कृष्ण चरित्र की अपेक्षा कम विस्तार पा सका है। राम अवतार, राम रावण युद्ध, मारीच वध, सीता बनवास के प्रसंग, रावण मंदोदरी संवाद, आदि यहाँ अधिक प्रचलित हैं। सीता का जन्म सामान्यतः पृथ्वी से माना जाता है किन्तु यहाँ गाथा में चाम के वृक्षसे से माना जाता है। उसके जन्म लेते ही दानव जाग उठे।

राम रावण युद्ध के उपरांत जब अयोध्या लौटने पर राम का राज्याभिषेक हो गया तो सीता को पुनः निष्कासित किया गया। स्थानीय गाथा के अनुसार वर्णन मिलता है कि अयोध्या में राम की बहिन ने एक दिन सीता से पूछा-तुम रावण के यहाँ बारह वर्ष तक रही किन्तु उसके ऐश्वर्य और राजधानी की चर्चा तुमने नहीं की। वहाँ का कोई भेद भी तुमने नहीं बताया।

तब सीता ने लंका का एक विस्तृत चित्र तैय्यार कर लंकागढ़, राक्षस सेना राज-भवन इत्यादि प्रर्दशित किए जिनके बीच दशमुख रावण का चित्र बनाया।

इस चित्र को वह अपनी ननद को दिखा रही थी कि राम आ पहुँचे। उन्हें सीता के पातिव्रत पर संदेह हुआ। उन्होंने लक्ष्मण को बुलाकर उन्हें बनवास देने का आदेश दिया। लक्ष्मण 'जमनाछाल' में उसे छोड़ आए जहाँ प्रातःकाल उसकी नींद टूटने पर चारों ओर किसी को नहीं देखने पर वह मूर्छित हो गई। कुछ पंक्तियाँ इस प्रकार हैं—

"तब मेरि सीता लै वे,
सारी लंकापति की तस्वीर खैंचि हाला,
लंका वारानवारा सौ राक्षसों की सेना रे,
राच्छसों की सेना रे सजाई हाला,
सारे लंका जोधन की तसवीर खैंचि हाला।
चारूं तरफ नरैण बंघव बादी हाला,
सुनूं की रे आमरी, सुनूं की रे पामरी।
सुनूं का रेली रे, सुनूं का बिराई!
लगाइया खाट मार्जीर धरि हाला,
तब बीचों बीच माजा वे रावन की तस्वीर,
खैंचन फैरो तसवीर सीता माई वे,
दस रे भुजा निकाला रावन, बीस सेन सजाया,
शस्त्र हुस्ती बल रावन परगट बनै हाला,
दस सीस देखाया, बीस भुजा सीसा,
अरे रावन देखाया ओटव देखाया,
उ फुटवा कन एजा पलगं धरि हाला,
देख रे देख नंदी लंका तसवीर——

आपूं रे लछीमन रौंई लगीन बाटा
आई गईन अजुध्या पुरी माँजा
रात खुली, परभात भयो, जमनाछाल में,
सीता माता मायेड़ि को रे नींन टुटि छ
सीता रे माता कन विपद बड़ी ऐ गो
वार पार चैंछ, जमन छाल मांजा—
लछमन नी देखा सीता लै बेहौश हुई गेछा
अरे धना रे धना, नरैन बेहोश हुई गेछा।--"

राम संबंधी गाथाओं में प्रसंग वर्णन की कोई नवीनता नहीं मिलती। ये प्रायः रामायण की प्रचलित कथा के अनुसार हैं।

(४) **शिव संबंधी गाथाएँ—**

कुमाउंनी समाज पर शैव तथा शाक्त धर्मो का प्रभाव अत्यन्त व्यापक पड़ा है। स्थानीय देवताओं के चरित्र वर्णन में इन संप्रदाओं के आचार–विचार, साधना और विश्वासों की पर्याप्त झलक मिलती है। पौराणिक गाथाओं में उनके आख्यान यद्यपि बिखर गए हैं अथवा वे अन्य गाथाओं के साथ घुल मिल गए हैं। शिव संबंधी आख्यानों में यहाँ दक्ष प्रजापति का यज्ञ विध्वंस, काम देव का भस्म, भस्मासुर पार्वती का हठ, बाणासुर की तपस्या जैसे प्रसंग अधिक प्रसिद्ध हैं।

शिव पार्वती का स्मरण वर वधू के रूप में किया जाता है जिसकी एक झाँकी कथा-गीतों में दी गई है। वे हिमालय वासी हैं तथा अनेक तांत्रिक शक्तियों के भंडार हैं। एक प्रसंग का वर्णन है कि किस प्रकार शिव जी ने पार्वती का परित्याग किया।

राम लक्ष्मण के वन मार्ग से जाते समय जब शिव जी ने उन्हें प्रणाम किया तो पार्वती को इस पर भ्रम हुआ। उसने सीता का वेश धारण कर राम की परीक्षा लेनी चाही। श्रीराम ने उसका छल समझ कर अनेक राम लक्ष्मण वहाँ पर उत्पन्न कर दिए। पार्वती ने जब यह रहस्य शिव जी से छिपाना चाहा तो उन्होंने उसका परित्याग कर दिया।

यहाँ शिव संबंधी गाथा का एक दूसरा अंश उद्धृत किया जाता है जिसमें भ्रमण की इच्छा होने पर पार्वती उनके साथ साथ जाने की प्रार्थना करती हैं और वे उनके स्त्री हठ पर व्यंग्य करने लगते हैं—

"नील कंठा मांजी गुरु महादेवा
सृष्टि अधार, गंग नील कंठा देवा
नील कंठा मां जी ओ गौरा पारवती,
गुरु महादेव के बैना बोलाला—
सुण मेरि गौराजा कानूँ की भारत,
मैं त जानुँ गौराजा, यँ घुमण दुनियाँ
भैटी रये गौराजा तू नील कंठा मांजा।
ए दुनियां मांजा मैं, खाणो रे बाटि औनूँ
सती का द्वारा जानूँ, सती को सत्त देखनूँ
मैं दुनियाँ घुमनूँ, ओ गौरा जा।
तिरिया के बैना बुलान, के बैन बोली छा
सुण मेरा स्वामी जू, म्यार महराज
तुम जाँछा स्वामी मीले दगड़ा औनू
दुनियाँ घुमी औंलो तुमरी टहल करूँन।
ओ गुरु महाराज, के बोल बोलानी—
सुण मेरी गौराजा नील कंठ माँजा
भैटी रौ गौराजा नील कंठ माँजा
ओ तिरिया गौराजा दगड़ा नि चैंनी,
मैं तो जानूं गौराजा दुनियाँ घुमण,
ओ गुरु महादेव कतुक सदूनी बुजूनी
कतुक रुदूनी, गौरा नी मानी।
सुण मेरा स्वामी, मैं दुनियाँ घुमी औंल!
धारी है छ तुमूं लै वो सेरा तराजू
नरैण बाट लैगी गया गुरु महादेव।
पछिला रे लै गेछ गंग ओ गौराजा माता।
जानै जानै न्है गई अलख बणमांजा, रण विन्दाबन
जाँ माखी नी भड़कनी, काणी नी कड़कनीं,

गौराजै की नजर लागी अलख बन मांजा,
एक हाड़ की कोपड़ मांज गौराजै की नजर,
लागी गे रै नजर, अलख बन मांजा,
सुण मेरी गौराजा, तू किलै कि कैं छैं एतरी बात।
यौ बिन्दावन मांजा बीस जीवण रैनीं
गौरज निकर, निकर तू एतणी बात
कतुक सुजूनी बुजूनी ऊँ महादेव,
सुण मेरि गौरजा, तू देखली तमाशा
किलै कि तू कौछ एताणी वे बात--
तिरिया की हठ ज्यू गड़ि गें छ गौरजा बात।"

(५) नाग वंशावली—

नाग वंश की वंशावली देते हुए एक गाथा में वासुकि नाग को कृष्ण जी का पिता घोषित किया गया है। इसके अनुसार राजा औख की चार रानियाँ थी-- दिति, अदिति, कद्रू और बनिता। दिति से देवता, अदिति से असुर, कद्रू के गीव, और वनिता से नाग उत्पन्न हुए। असुरों का राजा कंस देवता और मनुष्यों पर अत्याचार करता था। ब्रह्मा के परामर्श से देवताओं ने अपनी जाघें चीर कर रक्त भरा घड़ा उसके पास भेजा। कंस ने वह घड़ा अपनी वृद्धा माँ पवन-रेखा को दिया। घड़े को सूंघने पर उसकी हवा माँ की नाक में चली गई जो उसके पेट में जाकर गर्भ बन गई।

उसी गर्भ ने आगे चलकर देवकी के रूप में जन्म लिया जिसके लिये ज्योतिषियों ने कहा कि इसका आठवां पुत्र कंस का संहार करेगा। देवकी का विवाह वासुकि नाग के साथ हुआ जिसकी सन्तान कृष्णजी थे। इस प्रकार गाथा के अनुसार श्रीकृष्ण नाग वंशी सिद्ध होते हैं।

(६) अवतार संबंधी गाथाएँ--

कुमाऊं में कहीं कहीं बाराह अवतार, नृसिह अवतार, वामन अवतार आदि के वृत्तान्त भी सुनाए जाते हैं। उत्तरी क्षेत्रों में नारसिह रखाली प्रसिद्ध है जिसमें उनके विभिन्न उपादानों जैसे 'पाट भँवर की झोली', वक्र भँवर की मेखला, तामा

का पत्र,' 'तेजफल की लाठी,' 'सवा डाँसी ढुका का तेल' आदि का रोचक वर्णन है। इसमें उनकी परंपरा का स्रोत धरती से माना गया है। पहले धरती से डाली उत्पन्न हुई। डाली से बुगोट, बुगोट से रुवा, रूवा से धुआँ, धुआं से बादल, बादल से पानी, पानी से ढोकी, ढोकी से सोकी, सोकी से कोतो, कोतो से पोतो और पोतो से सौसीला का जन्म होता है। सौंसिला के ५४ शिष्य, ५२ बीर, ८० मसाण, ७२ दाणू, ४ चोंटिया, ९०० नरसिंह, १६०० कलुवा, १२००, बयाली, ३६ करकरी उत्पन्न हुए। तब भस्मंती माता ने जन्म लिया। भस्मंती माता से अन्य अवतारों ने जन्म लिया।

वाराह अवतार और वामन अवतार के प्रसंग प्रायः पुराणों की रूप रेखा पर आधारित होने कारण लोकवार्त्ता की दृष्टि से उतने महत्व के नहीं मालूम पड़ते हैं।

३. धार्मिक गाथाएँ—

जिन गाथाओं के आधार किसी प्रकार के धार्मिक अनुष्ठान अथवा लोक प्रचलित विश्वास हैं उन्हें धार्मिक गाथा कहते हैं। ये तंत्र मंत्र, पूजा और देवता नचाने की क्रियाओं से संबंध रखते हैं। बोलचाल में 'जागर' (जागरण) नाम से प्रसिद्ध इन गाथाओं को विशिष्ट गायक 'जगरिया' गाते हैं। इनके गायन से देवता को जाग्रत किया जाता है। देवता का आवाहन अभीष्ट प्राप्ति के लिये किया जाता है।

नृत्य इन गाथाओं का अविच्छिन्न अंग है। नाचने वाला व्यक्ति 'डंगरिया' कोई भी स्त्री या पुरुष हो सकता है। थाली, डमरू, ढोल, नगाड़ा वाद्यों के बीच देवता को उद्बुद्ध करने पर विशिष्ट वातावरण का प्रभाव पड़ने के कारण 'डंगरिया' उठ कर नाचने लगता है। वह हुंकार करते हुए जोर जोर से घूमने लगता है। इसे देवता विशेष का 'औतरण' कहते हैं। तब घर में एकत्र व्यक्ति उससे प्रश्न पूछने लगते हैं।

'जागर' गाथा गायन के तीन चरण माने जा सकते हैं। सर्वप्रथम देवता के आवाहन और आमंत्रण का क्रम है जब जगरिया संपूर्ण प्राकृतिक तथा आधिभौतिक सत्ताओं को जगाते हुए, सृष्टि का आरंभ बतलाते हुए अभिप्रेत देवता को संबोधित करता है—तू शंख की ध्वनि से, धरती के जल से, आकाश के सूर्य लोक से, इन्द्रलोक से और मेघ लोक से, पाताल के गर्भ से आ।

गायन के दूसरे चरण में धार्मिक पुरुषों, राम तथा कृष्ण आदि की पौराणिक गाथाएँ गाई जाती हैं जिनसे देवता के उतरने की पृष्ठभूमि बनती है।

तदुपरान्त गायन के तीसरे चरण में अभीष्ट देवी देवता की कथा आरंभ करते हैं। इसकी समाप्ति पर पूजा का विधान किया जाता है।

'औसाण' (नाचना) की दृष्टि से कुमाउंनी जागर दो प्रकार के माने जा सकते हैं। एक घर के भीतर लगने वाले 'जागर', जिनमें काँसे की थाली, हुड़का या डमरू बजाते हैं। 'ग्वाल' देवता का जागर घर के भीतर लगता है।

दूसरे जागर घर के बाहर धूनी में लगते हैं जिनमें बड़े बड़े ढोल, नगाड़े बजाते हैं। 'गंगनाथ' तथा 'भोलानाथ' देवताओं के जागर बाहर लगते हैं। चूंकि इन सभी जागरों में देवताओं की जीवनियां गाई जाती हैं, अतः 'जागर' गाथाएं घटनात्मक होती हैं।

'जागर' गाथा के प्रथम चरण में आहूत देवता की प्रार्थना का एक अंश यहां उद्धृत है जिसमें सृष्टि की उत्पत्ति सहित पृथ्वी, सूर्य, चन्द्र, आकाश, पक्षी, तथा जड़, चेतन सभी का आवाहन हुआ है—

"जै हंकारो, परथमै अंड फूट डंड,
नव खंड मान मां, तल धरती उपर अगास,
रचै मेरु मंदिर गिरि कविलास, जै भूमियाँ भल करिये,
सिद्धि करिये सफल कामना, निरंकार!
जै हो शंभु निरंकार, अकासे तंबू पाताले खंब,
परथमै पाताले जत्ता, जत्त से सत्त,
धुर्म कुर्म राहु गज अगास,
सात द्वीप बत्ती सप्त समुंद तुमरो हंकारों।
कौन कौन द्वीप, कुस दीप, कुरंच दीप,
सिहल दीप, सपत दीप, पोखर दीप,
कनक दीप इते सप्त दीप बत्ती।
सप्न समुद्र, खैरी समुंद्र, खारी समुंद्र,
पाड़ोला समुद्र, मोहादधि,
रतनागिरि समुद्र, कास समुद्र,
पाताल समुंद्र इते सप्त समुंद्र,
तुमारो हंकारो, संभु निराकार!
जाँ छै बबा ऊँचा हिमाल! नीचा पयाल।
कौरी कसमीर पकली पोखर, ताता तप्त कुंड

सेला गौरी कुंड, नीलकंठ नैपाल, पंछी का पीपल,
सिष्टि का बनाण, दो मुखिया सर्प कालिया का कोप,
आद घड़ी आदी नाथ, चार घड़ी, चौरंगी नाथ,
बार घड़ी बैजनाथ।
जै सिप संभो दया करो, सुदिष्टि हो, मनोकाभना पूरण हो,
जै हो संभु निराकार, परनी का देवताओं को मनै दीय।
आदि अनन्त कोटि भगवान--
अठत्तर भैरों, कल भैरो थल भैरों, काल भैरों,
कंकाल भैरों, नाद बुद्ध भैरों तुमरो हंकारो-
जै हो वीर सुपल कामना करिये,
बूड़ो केदार भोला शंभुनाथ
घोर समुद्र, अघोर समुद्र, शेष समुद्र, खारी समुद्र,
ब्रह्मा का वेद, गौरी का गणेश
कीड़ी मकोड़ी, पशु पक्षी, तुमरो हंकारो।"

कुमाऊँ में सब मिलाकर लगभग ५० से अधिक 'जागर' प्रचलित हैं, किन्तु सभी स्थानों पर सभी देवता नहीं नचाये जाते। उनके प्रभाव के विशिष्ट क्षेत्र हैं। जैसे गरदेवी का 'जागर' असकोट क्षेत्री की ओर अधिक चलता है। काली नाग, धौली नाग और विमल नाग की गाथाएँ बड़ाऊँ क्षेत्र की ओर अधिक चलती हैं। नंदादेवी का 'जागर' अल्मोड़ा क्षेत्र में प्रचलित है। कालसिन का 'जागर मदकोट में मिलता है। इसी प्रकार अन्य जागर क्षेत्र हैं।

अधिक प्रसिद्ध 'जागर' 'ग्वाल्ल,' भोलानाथ,' गंगनाथ और 'नन्दा देवी' के मिलते हैं। इनकी अपेक्षा 'हर ज्यू,' 'निरंकार' और 'कलविष्ट' के जागर क्षेत्र सीमित हैं। पश्चिमी कुमाऊँ कत्यूरी राजाओं के जागरों का प्रधान क्षेत्र है। इसके विपरीत चन्द राजाओं के जागर पूर्वी कुमाऊँ में चंपावत, लोहाघाट की ओर अधिक प्रचलित मिलते हैं।

इन जागर गाथाओं के तीन वर्ग बनाए जा सकते हैं—

(१) देवी देवताओं के जागर,
(२) सहायक शक्तियों के जागर
(३) स्थानीय शासकों के जागर।

(१) देवी देवताओं के जागर--

इस श्रेणी के अंतर्गत ग्वाल्ल, भोलानाथ, गंगनाथ, हरू, सैम, कालसिन, नंदा देवी, गरदेवी, हर ज्यू, कलविष्ट, कलू मसाण, एड़ी, कलुवा वीर जैसे लोक देवताओं के जागर यहाँ उल्लेखनीय हैं। यहाँ पर निदर्शन हेतु गंगनाथ का जागर ले सकते हैं। गंगनाथ इस समय शूद्रों का प्रिय देवता है।

प्रचलित गाथा के अनुसार वह भवैचन का पुत्र डाटी का राजकुमार था। उसकी माता प्यूंला थी। एक रात स्वप्न में दन्या के कुड़कौली ग्राम की कन्या भाना को देखकर वह मुग्ध हो गया। भाना ने उसे ताना दिया कि अगर अपनी मां के सच्चे बेटे होगे तो मुझे प्राप्त करने दन्या आओगे। स्वप्न की बात उसने प्यूंला को बताई। उसके समझाने पर वह नहीं माना। और भाना को खोज घर से निकल कर काली गंगा, सोर के इलाक़ों का पार करता हुआ कुड़कौली गाँव जा पहुँचा।

पूरब के झरोखे में बैठी भाना ने जब उसे देखा तो रस्सी के सहारे ऊपर खींच लिया। भाना के गर्भवती होने पर इस बात का रहस्य खुला। उसके पिता ने झपरुवा लोहार की सहायता से भाना और गंगानाथ दोनों को मरवा डाला। तब मरने पर गर्भ के बालक सहित तीनों भूत हो गए। उनके नामों पर मन्दिर बनवाए गए जहाँ अब तीनों की पूजा होती है।

यह मान्यता है कि गंगनाथ सुन्दर स्त्रियों और बालकों पर अधिक चिपटता है। किसी दूसरे भूत प्रेत के सताने पर अथवा अन्याय से दबाने पर वह रक्षा भी करता है। पूजा में उसे 'पाठा' (छोटा बकरा, पूरी मिठाई), वस्त्र और बालियाँ चढ़ाई जाती हैं। भाना के लिए अंगिया, चादर और नथ, और उसके बच्चे के लिए कोट, हँसुली, पहुँची चढ़ाते हैं। इस गाथा का आरम्भिक पंक्तियाँ हैं—

"ओ ऽ हो ऽ हो ऽ ऽ
ए रे गांगू डोटी को रौतान छीये, छै पलिया दीवान छीये,
बाबू भवैचना को कुअँर छीये, माता प्यूंला को लला छीये,
बुबू केसरी चना छन, आमा भानमती,
गांगू कि उदेख बैराग लागो त्वीकें !
डोटी गढ़ में गांगू की तेरी पूर्वा जनमै कि,
बैरी निकली भाना बाँमणी !

दन्या कुड़कौली बटि दुल जोशी की चेलि,
भाना जोश्याण भाना बामणीं !
स्वैणी स्वपन में, ऐगे डोटी गढ़ में,
भुली, डोटी गढ़ रौं छीये, खाट तुला सेर छीये,
गांगू काटी हानी खीण आब,
कुमू कुम्याणा ऐगे भाना जोश्याण,
रात मं स्वैण अब भाना की त्वीलै, दूछूण दी हालि।
ज्यूण मै को च्योलो होलै,
म्यार ध्वाका आये दन्या कुड़कौली में
दुल जोशी की चेलि छुं मैं !
मरि मै को च्यलो होलै त, आड़ी गाड़िया को हौलै त
डोटी में पड़ि रये, भुली।——"

इसी शैली में अन्य देवताओं की गाथाएँ गाकर स्थानीय लोक गायक उनसे की जाने वाली मनौतियों का विस्तार सहित वर्णन करते हैं।

नंदा देवी जिस प्रकार कुमाऊँ की जातीय देवी है, उसी प्रकार 'ग्वाल्ल' वहाँ का सार्वभौम लोक देवता है जिसे 'गोरिल,' 'गोरिया,' 'ग्वेल्ल,' 'गोल,' 'गोइल्ल, अनेक नामों से पुकारते हैं। बौरारो, ऊँचा कोट, मल्ली डोटी, काली कुमाऊँ, कत्यूरी घाटी, छखाता और रानी बाग के इलाकों तक इसका गायन क्षेत्र है। अल्मोड़ा से करीब सात मील दूर चितई गाँव में यह इतना जाग्रत कहा जाता है कि इसके मन्दिर में ग्रामवासी समय-समय पर बीसियों छोटी बड़ी घंटियाँ बाँधते रहते हैं।

'ग्वाल्ल' देवता का संक्षिप्त वृत्तान्त इस प्रकार है—

"चंपावत के कोई कत्यूरी राजा काली तट पर शिकार खेलने गए। उनका नौकर पानी की तलाश में भटकते हुए, एक जंगल में पहुँचा जहाँ एक स्त्री तपस्या कर रही थी। पानी के छींटे पड़ने पर रुष्ट होकर स्त्री ने कहा-जो राजा लड़ते हुए भैंसो को अलग नहीं कर सकता उसके नौकर तो ढीठ होंगे ही। राजा ने मुग्ध होकर उससे विवाह कर लिया। उसका एक सुन्दर पुत्र हुआ जिसे अन्य रानियों ने ईर्ष्या वश छिपा दिया। तदुपरांत रानी की आँखों में पट्टी बाँधकर उसकी बगल में कद्दू रख दिया।

नवजात शिशु को मारने के अनेक उपाय किये गए। उसे लोहे के पिंजड़े में रखकर बहा दिया गया। किसी मछुवे ने बालक को पाला पोसा। बड़ा होने पर एक दिन वह बालक जब अपने काठ के घोड़े को नदी के किनारे पानी पिला रहा था तो पानी भरने वाली रानियों ने हँसी मजाक की—कहीं काठ का घोड़ा भी पानी पीता है? बालक ने तुरंत उत्तर दिया——कहीं स्त्रियाँ भी कद्दू जनती हैं? यह बात राजा तक पहुँची। सारा रहस्य खुलने पर उसने अपराधी रानियों को दंड दिया। उसी पुत्रको फिर राजा बनाया गया।

'गोरिल्ल' देवता अपनी चारित्रिक विशेषताओं के कारण अपने जीवन काल में ही पूजा जाने लगा था।

इस प्रकार 'ग्वाल्ल' देवता के जो वृत्तान्त सारे कुमाऊँ में प्रचलित हैं उनसे मिलते-जुलते वृत्तांत राजस्थान, बिहार और मध्य प्रदेश तक सुने जाते हैं। ये वृतांत इस बात के प्रमाण हैं कि यह विशुद्ध लोक देवता (फोक डाटी) होना चाहिए।

इसके अतिरिक्त 'कलविष्ट, 'चौमू,' 'हरू' आदि देवताओं की गाथाएं भी बड़ी रोचक हैं जो स्थान स्थान पर गाई जाती हैं।

देवियों के जागरों में 'नन्दा देवी,' 'गर देवी,' 'काली देवी,' 'दुर्गा कालिंगा देवी,' आदि नाम प्रसिद्ध है जिनमें उनका माहात्म्य वर्णित है। केवल नंदा देवी का जागर विस्तार पूर्वक मिलता है जिसे 'बैसी' के रूप में विशिष्ट वेश भूषा वाले गायक तीन रात्रि से लेकर बाईस रात्रि तक गा सकते हैं। नंदा कुमाऊं की रणचण्डी के रूप में विख्यात है। गाथा पूरी होने पर इसके मंदिर में भैंसा या बकरे की बलि दी जाती है।

'गर देवी' के जागर से एक अंश यहाँ पर उद्धृत है जिसमें उसके अवतार से लेकर, चतुर्भुज रूपी हाथ में खप्पर लेने, दैत्यों का संहार करने एवं सर्वत्र विद्यमान रहने का उल्लेख हुआ है——

"ओ गरदेवी, सेली समसान घाट भगवती,
किया औतार ले ली भगवती,
भगवती पड़ी गे छै दैत्यन का घेरा।
कै चाली मारली हजार दैत्यन,
एक दैत्य मारन छै सौ दैंता उपजनीं।
सौ दैंता मारन छै, हजारूं उपजनी,

भगवती पड़ी गे छे, देतन का घेरा।
एको हाथ ली छै देवी नरैणी चक्कर
एको हाथ लींछै देवी नरैणी चक्कर,
एको हाथ लीं छै देवीं कालिका खप्पर,
धरो त्वीले औतार देवी चतुर भुजा धारण
भगवती, झिट् घड़ी लगा समसाणी औतार
धरण लगायो देवी त्वीलै माखीन को रूप,
भगवती, दैतन्, मारली नरैणी चक्कर।
भरैं छ खप्पर, मखी रूप धरी,
अब खून सोसली, करो दैंतू वंस निरवंस !
अब जाली भगवती गुह गुरु द्वार
अब जाली देवी नौपाटे नवली
देवी लींछ गंगा सनान, जैं गंगा नाई छ !
गंगा गोतावरी, गंगा भागीरथी,
गंगा सरसती, जै गंगा जमुना
नाई धोइ बेर भगवती कंचन है गेछ !
जब जब दैंतू लै संसार सतायो,
तब तब औतार भगवती ल्हीछ.........।"

(२) सहायक शक्तियों के जागर--

उक्त लोक देवताओं के साथ उनकी सहायक शक्तियाँ जैसे भूतप्रेत, परियाँ आछरियाँ आदि नचाई जाती हैं। अतः इनके जागर भी प्रचलित हैं। लोक विश्वास है कि ये सभी शक्तियाँ स्थानीय देवी देवताओं के गण हैं। इसलिये इनका आवाहन करना भी आवश्यक है। भोलानाथ के साथ 'एड़ी 'और' कलुवा बीर' नचाये जाते हैं। देवियों के सहायक रूप में परियाँ, आँचरी, कींचरी आहूत की जाती हैं।

इन शक्तियों में 'कलुवा बीर,' 'समणी, नंग पाणी मसाण,' 'बालचन,' 'काल साईं,' 'एड़ी,' सोलह सौ भूत और भवानी, सब्जी आदि सो परियों

की संख्या गिनाते हैं। भूत प्रेतों के जागर स्थान विशेष के अनुसार ही लगते हैं। जोहार की ओर 'बालचन,' 'काळसाईं' आदि प्रधान सहायक शक्तियाँ हैं। असकोट की ओर 'कालचन भूंसी,' 'नौलू,' 'हुस्कार' आदि प्रधान शक्तियाँ हैं। कत्यूर घाटी में' छुरमल्ल' और 'शैवाज' भूत प्रधान हैं। रीठागाड़ में डुंगरी रौल' नचाया जाता है। लखनपुर में 'कलविष्ट' नाचता हैं।

उक्त सभी सहायक शक्तियों के जागरों में समानता यह है कि इनके गायन में कथानक का अंश बहुत कम रहता हैं। जीवनी की अपेक्षा उनकी विचित्र वेशभूषा, भयंकर आकृति आदि का वर्णन अधिक किया जाता है।

जैसे 'एड़ी' देवता की सेना और उसके कुत्तों की सवारी का विस्तृत वर्णन मिलता है। उसके हाथ पैर पीछे, और आँखें सिर के ऊपर कही जाती हैं। तीर कमान उसके विशेष हथियार हैं। उसके कुत्तों के गले में घंटियाँ बँधी रहती हैं। लोक विश्वास है कि 'एड़ी' देवता की दृष्टि से बचने वाला मनुष्य धनवान हो जाता है।

'एड़ी' की भाँति कलुवा बीर देवताओं की दूसरी शक्ति है जिसे नचाते हैं। उसका जन्म कैंली घाट में हुआ। उसे सात हाथ गहरे गढ़डे में दबाया गया किन्तु वह सारे बंधन तोड़ कर बाहर निकल आया–

"कलुवा बीरा, केली घाट को जनमण,
अरे वीरा सात हाथ खड्ड डालै,
के चालो रचि दियो सात हाथा,
खड्ड हाली डालो धरमसिला पाथरा,
कै चाली टोड़लै वीरा, त्यारा हाथ में,
हथघड़ी छन, गाव में घचेरी,
खुटन में नेवर, माथी धरमसिला पाथरा,
वीरा हाथूं की हथघड़ी टोड़ी, गाव का घचेर,
खुटो का नेवर वोड़ी त्वीलै वीरा,
फोड़ो त्वीलै धरम सिला पाथर,
झिट घड़ी लै दे वीरा, समसाणी अवतारा———।"

(३) शासकों के जागर–

कुमाऊँ में कुछ स्थानीय शासकों को भी देवताओं की भांति पूज्य मानकर उनके जागर लगाए जाते हैं। इनके मुख्यतः तीन भेद हैं––

(क) कत्यूरियों के जागर,

(ख) चंदों के जागर,

(ग) अन्य शासकों के जागर।

उक्त सूची में 'धामदेव' बिरमदे और जियाराणी के जागर कत्यूरी राजाओं से संबंध रखते हैं। धाम देव और बिरम देव अत्याचारी राजाओं के रूप में वर्णित हैं। चंदों ने उन्हें हराया। किसी युद्ध में अपने राजकुमारों हरि, भरि, सूर, संग्रमी, पूर, प्रतापी तथा सेवकों के साथ मारे जाने पर वे भूत बन गए। उनके शव पश्चिमी रामगंगा में फेंके गए थे।

तब से पाली पछाऊँ और कत्यूर घाटी में उनके जागर गाए जाने लगे।

(क) 'बिरम देव' (ब्रह्मदेव) के जागर में वर्णन मिलता है कि उसने अपनी मामी से व्यभिचार किया था जिस कारण उसकी हत्या की गई। 'जिया राणी' के जागर में वह धर्मात्मा किंतु निस्संतान वर्णित हुआ है। एक बार वह चित्रशिला (रानीबाग) में स्नान करने गई। उसके सिर का एक बाल नदी में बहकर सय्यद पठान के घोड़े से उलझा। पठान उसे घोड़े पर चढ़ाकर ले भागा। तब जिया राणी ने यह शर्त रक्खी कि बारह वर्षों तक तुम मेरे लिए पितृ तुल्य रहोगे। यदि इस बीच मेरी खोज खबर नहीं ली गई तो तुम्हारी रानी बनूंगी। पता चलने पर कत्यूरी सेना उसे छुड़ा लाई।

(ख) चद राजाओं में 'हरू' का जागर प्रसिद्ध ही है। उसे चंपावत का राजा हरिश्चन्द्र कहा जाता है जो हरिद्वार में जाकर जोगी हो गया था। जोगी होने का कारण काई सौक्याण का स्वप्न में दर्शन था; जिसकी दीपक जैसी ज्योति और पूर्णिमा जैसी आभा देखकर उसका चित्त चंचल हो उठा। आधी रात में अपनी मुरली से उदास स्वर छोड़ता हुआ वह गंगा के किनारे किनारे उसकी खोज में चल पड़ा।

इस समय 'हरू' शासक का जागर पाली पछाऊँ की ओर विशेष रूप से सुना जाता है। वह अपनी तपस्या, सदाचार के कारण बड़ा शुभ देवता माना जाता है। कुछ पंक्तियाँ हैं--

"हरी द्वारा होली बाला हरू, सपना देखी छ काई सौकेली
हंसा जै रौछ तौ सेली सौक्याण हो,
देखी त्वीलै दीया कसि जोना, पुन्यू कसी चाना,
जका रापा देखी धरती औसाण,

चित चंचल है गोछ मन उदेक,
उदेखा मुरुली गाढ़ी कुरंदा बांसुई।
अधि रात मांजा मुरुलि को सुर बाजा,
लटा पटा छोड़ी गंगा सेरा न्है गी——"

(ग) 'जागर' गाथाएँ व्यक्ति विशेष के आधार पर किस प्रकार बनती हैं इसका एक अच्छा उदाहरण गंगोली की ओर प्रचलित पुरखू पन्त का जागर है जो कुछ वर्ष पूर्व तक गाया जाता था। लगभग एक सौ वर्ष पूर्व पुरखू पंत (पुरुषोत्तम पन्त) गंगोली में पटवारी थे जो स्वभाव से क्रूर और नृशंस माने जाते थे। कहते हैं कि उनके अत्याचार से सर्वत्र त्राहि त्राहि मच गई। मरने के उपरान्त वे मृतात्मा के रूप में स्थानीय मनुष्यों को सताने लगे। अतः उन्हें जागर लगाकर संतुष्ट किया जाता है। इस तरह पुरखू अकल्याणकारी आत्मा माने जाते हैं।

कुमाऊँ की उक्त लोक गाथाए लोक विश्वासों एवं मध्यकालीन धर्म साधना की दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं। नृत्य की विभिन्न मुद्राओं से भी इनका घनिष्ठ सबंध है जो एक दूसरे के पूरक हैं। इनका रूप निर्धारण प्रायः देवता के नृत्य की चालों के आधार पर होता है। जैसे 'हरजू' के जागर में नाचने की बाईस चालें होती हैं। इनमें बैठी चालों के नाम हैं 'हरीला दुबा चौड़ कूदना' जटा का भार सँभाना,'गुरू की डुग्गी संभालना, विभूति रमाना आदि। कुछ खड़ी चाल कहलाती हैं जिनमें 'दुरमुणिया का पता लगाना, 'बकने की चाल, 'नाखून तोड़ना, 'दाँत उखाड़ना, लोटा निकालकर सवारी करना आदि प्रमुख हैं।

इसके साथ सोलह सौ चुरड़ (चुड़ल), अस्सी सौ मसान, उन्नासी भरड़, पाताल के नाग, आकाश के देवता भी विभिन्न मुद्राओं में नाचते हैं। नृत्य की ये विभिन्न मुद्राएँ गाथाओं को नाटकीय तो बनाती ही हैं, इसके अतिरिक्त जादुई तत्वों से भी उन्हें संयुक्त करती हैं। धर्म और जादू टोने की इनमें अभिन्नता देखी जा सकती है।

सभी जागरों में शैव तत्वों की प्रधानता होने के कारण मध्य पहाड़ी क्षेत्रों में प्राचीन तांत्रिक साधना की व्यापकता सिद्ध होती है। इधर शोध के नवीन तथ्यों से उत्तरोत्तर स्पष्ट होता जा रहा है कि कुमाऊँ के कुछ स्थान प्राचीन काल में तांत्रिक उपासना की पीठ थे। अतः धर्म साधना की दृष्टि से जागर गाथाओं का अत्यधिक महत्व है और इनकी गहराई से छानबीन की जानी चाहिए।

४. वीर गाथाएँ—

स्थानीय वीरों की युद्धमूलक तथा व्यक्तिगत शौर्य कथाएं 'भड़ौ' और 'कटकू' नाम से प्रसिद्ध हैं। 'भड़ौ' शब्द 'भड़' (भट) का रूपान्तर है। यह प्रदेश मध्यकाल में वीर राजाओं और जातीय वीरों का केन्द्र रहा। सीमावर्ती शासकों से सुरक्षा करने हेतु एवं आंतरिक व्यवस्था बनाए रखने हेतु युद्ध होते ही रहते थे। चंदों का जो विशाल राज्य उत्तर में जोहार से लेकर दक्षिण में तराई भावर तक फैला उसमें गढ़वाल-नेपाल के शासकों से उनके संघर्ष हुए। बीच बीच में उन्हे कत्यूरी वंशजों का भी दमन करना पड़ा।

इन्हीं कारणों से स्थानीय राजाओं को अपने साथ वीर 'पैक' (भट) रखने पड़ते थे जो उनकी ओर से शत्रुओं का मान-मर्दन करते थे। उन वीरों को 'माल' अथवा 'मल्ल' भी कहते थे। संभव है 'मल्ल' शब्द का संबंध मालवा के परमार वंशी वीरक्षत्रियों के साथ भी रहा हो। कुछ लोगों ने काली कुमाऊँ में मालवा के परमार वंशी क्षत्रियों के राज्य करने की संभावना प्रकट की है।[१]

हिन्दी साहित्य के प्रारंभ में जिस प्रकार उत्तरी भारत की सामन्तों के अधीन वीर गाथा रचने की परंपरा चली, कुछ वैसी ही परंपरा कुमाउंनी 'भड़ौ' की मानी जा सकती है। ऐतिहासिक घटनाओं के आधार पर इनका निर्माण काल पर्याप्त विस्तृत मालूम पड़ता है। कत्यूरी शासकों के तीन चार 'भड़ौ' प्राप्त हैं और चंदों के अंतिम समय में इनकी परंपरा प्रायः समाप्त हो गई। गाथाओं में राजाओं की लंबी लंबी वंशावलियाँ दी गई हैं जिनसे उनके समय के निर्धारण में सहायता मिलती है।

अतः सामान्य रूप से दसवीं-अठारहवीं शताब्दियों के बीच का समय इनका रचना काल होना चाहिए।

ये गाथाएं तीन प्रकार की मिलती हैं—

(१) ऐतिहासिक गाथाएं,

(२) जातीय गाथाएँ,

(३) रोमांचक गाथाएँ।

(१) ऐतिहासिक गाथाएँ—

१. 'परमार्स औफ़ कोटालगढ प्रिंसपेलिटी, लोहाघाट, काली कुमाऊँ'--पृ. १५

ये गाथाएँ मुख्यत. कत्यूरी और चन्द राजाओं संबंधी हैं जिन्हें लोक गायक प्रसंगानुसार जागरों के अंतर्गत भी गाते हैं। इनमें प्रसिद्ध कत्यूरी वंशावली को बोलचाल में 'वंशवारि' कहते हैं। इन्हें प्रस्तुत करने की एक निश्चित प्रक्रिया है जिसका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है–

शाम होने पर घर के बाहर, पटांगण (प्रांगण) में कालीन बिछा कर छुरी, खड्ग, ढाल, हथियार सजाए जाते हैं। पंचमुखी दीपक जलाए जाते हैं। दाए बाँए राजा ब्रह्मदेव और राजा धाम देव की दो 'आले' (दल) बैठती हैं। कहा देव पाली पछाऊँ का स्वामी था। धामदेव रणचुलि हाट का शासक थी।

दास गायक पहले स्तुति-पाठ करते हुए कत्यूरी सीमा का उल्लेख करता है जिसके पूर्व में संचनी-नागनी, और पश्चिम में मालिनि नदी थी। पश्चिमी 'आल में आसन्दी-वासन्दी, अजोपीथा, गजोपीथा, नरपीथा, पृथ्वी रंजन, पृथ्वी-पाल तथा उनके वंशजों का क्रमशः वर्णन किया जाता है। दूसरी 'आल' पाली पछाऊ की थी जिसमें इलण देव, तिलण देव, अमर देव, गमर देव, नारंग देव, सुजान देव तथा उनके वंशज सम्मिलित थे। यह 'वंश वारि' प्रकाशित हो चुके हैं।[1]

इनमें राजा बिरमा कत्यूरी की गाथा प्रसिद्ध है। वह खिमसारी हाट का शासक था। असाढ़ के महींने रोपाई के समय उसकी माता दुखी हुई कि वह डोटी गढ़ कीं रानीं मिरदुला के प्रेम में फँस कर अपने घर आना हीं भूल गया है। उसे बुलाने के लिए भिखा पहरिया दूत भेजा गया। समाचार पाते ही राजा विरमा मिरदुला को रोता कलपता छोड़ कर अपनीं सूर्यवंशीं घोड़ीं पर चढ़कर आ पहुंचा। इस गाथा में वर्णित बागेश्वर, गिरिछींना, फैरारी, दौराहाट गिवाड़ आदि भौगोलिक स्थान अभी तक विद्यमान हैं—

"खिमसारी हाट रौनीं निल चौरी पाट–
अचारी लगाई, बीबी ढुकाई, ओ दरी दीवाना,
मोंहल मुसद्दी, रैती परजा, राणि बौराणि,

---

१ कुमाउंनी लोक गाथाएँ'--पृ० १२२-१२६, प्रयाग जोशी.

राजा बरमा की नारिङा, सारिङा, भौरङा रौतेली
छपना पातर, भोल दिना बार म्हैणां की ऋतु ऐगे,
हिलगिल असाढ़ की म्हैंण, लोग बागूं को,
स्वार बिरादर को साई रोपा है गो,
हमर स्यारौ को नउवै नी ढाईण,
घर में बुड़ि मै छी, राजा बिरमै की,
आपूं रैगीं राजा बिरमा डोटी गढ़ में,
डोटी गढ़ में छी राणी मिरदुला डोट्याई,
वीका ध्वाखा में रैगो, घरै की खोस खबरै नै
त बुड़िया रात दिन राजा बिरमा की बाटै चै रे
रात को नीन टुटि गे, दिनै की भूख,
एक पूतौ पूत छी, एक आँख को उज्याव छी,
पर राजा बिरमै देवै की ड़ोटी गढ़ बै,
मरि ज्यूनैं की क्वे खबरा नि मिली।
तब बुड़ि जिया लै माठौ कागद भेजो जोइया,
भेजो अपण भिखा पहरिया,
तब बाटा लागो भिखा पहरिया
रात रात, दिनदिन कै डोटी गड़ा में,
तब डोटी गड़ा में छी नागी भागी मल
डोटी गड़ा का पैक छीया,
तौ तनरी राणी हली नंदुला डोट्याई,
दुध कसी जून होली, पुन्यूं जसी चाँन
तब रैगीं राजा बिरमा नंदुला का ध्वाखा में,
तब न्हैगी भिखा पहरि डोंटी गड़ में,
राजा बिरमा कणि उठो माथों नउनीं
तब कागद की छ्योली हाथा पर दी हालौं!

तब घर की असल कुसल बारामासा
च्याला, तिरिया कङाला घरै की खौंस न्हैती खबर
को बारा म्हैणाँ की ऋतु बौड़ी गे, सब स्वारा
भ्याला को च्याला सायो रोग है, गयो
हमरो सेरी को नउवै लै नि ढायो
नहणां की सेरी झउ जामि रौ छ !
तब राजा बिरमा कणि घरै की चिन्ता नै,
भोल हणी बिरमा बटीण फैगो,
सुरज बंसी घोड़ी बरमा लै काछण लगाई,
लुवै की लगाम कस लै, सुबरन की जीन ,
छतीसा घुङरू पैरालै, बतीसा नेवर,
तै राणी नंदुला रोधन्ना,
तुम गाया बिरमां अब मैं कसीक रौंल
फिकर नी ले नंदुला, फिर आइ जौल---।"

चन्द राजाओं में उदै चन्द, रतनी चन्द, विक्रम चन्द, भारती चन्द और गुरु ज्ञानी चन्द के 'भड़ौ' अधिक प्रचलित हैं। ये सभी स्थानीय इतिहास के प्रसिद्ध व्यक्ति हैं तथा वर्णित प्रसंगों की स्थानीय जन श्रुतियों से पर्याप्त समानता मिलती है। इनमें ज्ञान चन्द का व्यक्तित्व प्रधान है जिन्होंने लगभग ४५ वर्ष (१३७४-१४१६) तक राज्य किया। मुहम्मद तुगलक के साथ शिकार खेलने में वीरता दिखाने के कारण उन्हें 'गरुड़' की उपाधि मिली थी। उनके राज्य काल के साथ नीलू कठायत, कुंजीपाल, तथा सौनू बिरमू नामक वीरों की गाथाएं जुड़ी हैं।

विक्रम चन्द (१४३३-३७) को आरंभ में दानशील किन्तु बाद में भोग विलास-प्रिय कहा गया है। भारती चंद(१४३७-५०) को लोक प्रिय, साहसी, वीर तथा चरित्र निष्ठ कहा गया है। उनके भड़ौ मल्ल वंशजों के साथ युद्धों से संबंध रखते हैं जो वमशाही नाम से सोर, सीरा की ओर अपना प्रमुत्व जमाए हुए थे।

रतनी चन्द (१४५०-८८) के भड़ौ में अधिकतर डोटी के रेका राजाओं से युद्धों का वर्णन हुआ है जिन्हें उन्होंने करद बनाकर छोड़ दिया। गायक बीच

बीच में 'म्यारा रतनी चना', 'अथवा म्यारा भारती चना' कहते हुए उनका स्मरण कराते हैं। 'हुड़की बौल' के अंतर्गत कुमाऊँ में वस्तुतः जो कथात्मक प्रसंग गाए जाते हैं, वे इन्ही कत्यूरी और चन्द राजाओं के वृतान्त सिद्ध होते हैं।

(२) जातीय गाथाएँ–

इस वर्ग में झकरुवा रौत, अजीत बौर कला भंडारी, पचू दोराल, रतनुवा फड़त्याल, अजुवा बफौल, माधोसिंह रिखोला जैसे वीरों के वृत्तान्त मिलते हैं जिनमें कुछ ऐतिहासिक व्यक्ति हैं। किन्तु अधिकांश नाम केवल गाथाओं में प्राप्त हैं। महर और फड़त्याल कुमाऊं के इतिहास प्रसिद्ध राजनैतिक दल रहे हैं जिन्होंने 'किंग मेकर्स' का कार्य किया है।

जातीय भड़ौ के उदाहरण स्वरूप माधोसिंह रिखोला का प्रसंग ले सकते हैं जो बौरारौ पट्टी में डूंगरा ग्राम का निवासी था। उसने सौनीकोट के राजा की लड़की से विवाह किया था। एक दिन डोटीं गढ़ के 'जौंलिया' (दूत) ने आकर उससे निवेदन किया कि राजा नागमल के यहाँ उदिया झाकुरी 'पैक' ने आकर हलचल मचा दी है। सबको गेहूँ जैसा पीस दिया है, और धान जैसा कूट दिया है। तुम चलकर राजा की रक्षा करो। माधोसिंह ने आठवें दिन पहुँचने का वचन दिया।

चलते समय उसकी नवविवाहिता पत्नी ने मार्ग रोकना चाहा किन्तु वचन पालन को मुख्य समझ कर उसने पहले ज्योनार की। फिर अपना दलजीत खांडा उठाया, सुनहरी कमर पेटी बांधी और सात दिन सात रात चलकर डोटीगढ़ जा पहुँचा उदिया झाकुरी के पास 'चेलिमुंगर' नामक एक गदा थी। उसने वही माधोसिंह के ऊपर चलाई। माधोसिंह ने गदा उठाकर आकाश में फेंक दी। तब उदिया झाकुरीं ने उसे मल्लयुद्ध की चुनौती दी। आँगन में घुटनों-घुटनों तक रीठे फैलाए गए। दोनों अठ पहल कुश्ती लड़ने लगे। उदिया झाकुरी के चलते समय धरती में गढ्डे पड़ते थे। माधोसिंह ने मौका पाकर उसे गला दबा कर मार डाला।

प्रसन्न होकर तब राजा नागमल ने एक गांव जागीर में देकर उससे डोटीगढ़ में ही रहने की प्रार्थना की। किन्तु माधोसिंह ने निर्लिप्त होकर कहा कि मैंने शत्रु को मार कर तुम्हारा राज्य बचाया है। अब तुम्हीं अपना राज्य भोगो। इतना कह कर स्नान भोजन के उपरान्त वह अपने गांव लौट गया।

गायक कहता है–

"डूंगरा में पैका रूनी माधोसिङ नामा,
दूरौ का जोलियां छू मीं बतै दिया धामा।

झपकन झौ छ, मौनी जावा मौ छ
ठुल तू हेरि लिये भुली, नान माधो मैं छूँ ॥
पिटि हालीं ताम पितला, ढालि हालीं कांस
तरनि को हिटन तोड़ि छाले, उदिया को खाँस ।
बचै दियौ लाज वीरों आई स्यूँ पास
डोटी गढ़ जोलिया आयो, जाण छ नैपाल ॥
भूमि में भूदान सुवा, गाई में गोदान
क्वे मरला क्वे बचला, लड़ै मैदान ॥
अतरै कि गटी, नानि भौ की लटी,
छत्रिय को च्यंला नि टलना वचन दी बटी ।
दुतारी का तारा भोलिये की हात,
खावो पति जावो तुम आपणी ज्योनार,
स्वामी हुनहुन मरिज़ाना कि गरभै गलि जाना
जो तुम डरन छा यो लड़ाई मैदाना !
पैक मारि डोटी गढ़ राज त्यर बचै गई ओ राजा नागमल
आब तू आपन राज करि खाए, ओ राजा नाग मल ॥"

अजुवा बफौल की वीर गाथा राजा भारती चंद के समय की है । राजा ने अपनी रानी के कहने पर बफौली कोट में आग लगवा दी जहां परम वीर नथुवा बफौल रहता था । नथुवा सोया हुआ था । उसकी पत्नी दुदुकेला जंगल गई हुई थी । अपने कोट में आग लगी देखकर उसने बमौरी कोट में रहने वाले अपने भाई और दादा से प्रार्थना की कि उसे कहीं रहने को स्थान दिया जाए । वह गर्भवती थी । उसे बमौरी कोट में शरण मिली ।

उसी का पुत्र था अजुवा बफौल जिसने अपने पिता की मृत्यु का रहस्य ज्ञात होने पर बफौली कोट जाकर हलचल मचा दी । वहां जाकर उसने सौ मन का नगाड़ा बजाया । राजा ने उसे अपने चार मल्लों के साथ युद्ध करने के लिये आमंत्रित किया । ये मल्ल प्रतिदिन बीस 'पिड़ै' (लगभग ६०० सेर) भोजन करते थे । राजा उनसे संत्रस्त था ।

अजुवा बफौल छत्तीस ज्योनार खाकर, अपने पिता की घोड़ी को साध कर एक ही दिन में राजा के यहां पहुँच गया । उसने चारों मल्लों को फिर चुनौती दी।

तुम यहाँ खाने आए हो या युद्ध करने। नामर्द के पुत्र केवल पेट भरते हैं। यह सुन कर चारों मल्ल उससे भिड़ गए। तीन दिन, तीन रात लड़कर पहले उसने पूर्व के मल्ल को पछाड़ा, फिर पश्चिमी मल्ल को मारा। फिर उत्तरी मल्ल भी लड़ते लड़ते मारा गया। तब दक्खिनी मल्ल यह कहते हुए भागा कि आज से बीस वर्ष बाद जोड़ा बनाकर लाऊँगा तब तुम्हारे साथ युद्ध करूंगा।

(३) रोमांचक गाथाएं—

इन गाथाओं में प्रेम प्रदर्शन और युद्ध साथ साथ चलते हैं। युद्ध प्रायः किसी सुंदरी की प्राप्ति के लिये किए जाते हैं। इस वर्ग में 'रणु रौत,' 'सिसाउ लली,' 'आदि कुँवरि,' 'दिगोली माना','हरू हित,' 'सुरजू कुँवर' और 'हंस कुंवर,' शीर्षक गाथाएं आती हैं जिनका गायन अन्य 'भड़ी' की भांति किया जाता है। इनके प्रसंग रोमाँचक कथाओं पर आधारित हैं। यही इनका जातीय अथवा ऐतिहासिक गाथाओं से भेद कहा जा सकता है।

उदाहरणार्थ, दिगोली माना के भड़ी में रतनुवां, पाँजा रौतेली के और और अपने भैंसों के बीच युद्ध कराता हैं। रौतेली का भैंसा हार गया। रतनुवां ने उसका पता पूछा। उसने बताया कि मेरा नाम पाँजा है। संग्रामीकोट में रहती हूँ। जब रतनुवां ने उसके पिता सगराम रौतेला से उसका डोला मांगा तो उन्होंने उससे सूर्यवंशी घोड़ी साधने को कहा। रतनुवाँ उस घोड़ी की खोज में चल दिया। इसी बीच पांजा का विवाह सौक्याण देश में कर दिया गया।

सात दिन सात रातों के बाद घोड़ी को साघ लाने पर जब रतनुवां को यह बात मालूम हुई तो वह निराश नहीं हुआ। भभूत रमाकर, गेरुवे वस्त्र धारण कर, खैरुवा की झोली लेकर वह योगी के वेश में पाँजा के नाम का अलख जगाता हुआ। सौक्याण देश जा पहुँचा। वहाँ सूप जैसे कान वाले, डलिया जैसे पेट वाले बड़े बड़े वीर बहादुर थे। उन्हें पराजित कर वह पाँजा को उठा कर संग्रामी कोट ले आया। तब पाँजा से विवाह करके वह दिगोली कोट लौटा।

गाथा का गायक कहता है—

"सात दिना रात हैगीं रतनुवां भड़ कणीं
घोड़ीं सादि बेर ल्या छ, सुरुज बंसी घोड़ी !
अब पाँजा रौतेली कीं पुछण फैगो छ
पांजा रौतेली किणि पछण फैगो छ

तब रतनुवां भड़ौ कणि सोच पड़ि गया।
दिलै में सोचलो मनै में रवलो,
तत बटी तैलैं पाँजा रौंतेलीं नामा को जोग करि है छ !
ओ लैणी लुकुड़ी तैले गेरू रंगै है छ,
तन बदन भभूत रमायो, खैंरुवा झोली हात।
तेजमल सोटो, हरिद्वारी कंकण पैरी,
केदारै की फौंड़, गल माँजी रुंडमाज पैरी,
सिर जट्यूँ को भार, हात मांजी सवा गज चीमट
घर घर कुड़ी कुड़ी पांजी नाम को अलख जगालो,
दिसीं दिसी मुलुक मुलुक घुमनै
न्है पुजीं गयो ओ सेली सौक्याण
पांजा रौंतेली को करयो छीयो परण,
जब कब म्यारा भड़ मेरी खोज आलो
तौ तैंको गमको तैलै दान दिणुँ करि राखो !
ततुका बीचै में न्है गो रतनुवां भड़
रतनुवाँ पाँजा को भेट है गे घाट,
तौ सेली सौक्याण माँजीं तनरी है गो हल्ला
झकड़ फिसाद है गे, ओ मार फितौड़
पैकान का च्याला छिया बड़ा बड़ा वीर,
सुप जसा कान छीया, डालो जसो पेट,
निसौव जसा खाप छी रतङ याली आँख,
डवरयाली दीठ, घगरयालि गिच छियो।
बड़ो जुद भीड़ करि बेर पाँजा उठै ल्यायो
आँपणा संगा लै गो संग्रामी कोट,
सगरामै लै तैंकी बड़ी आलू दोलू खुसामद करी।
बे दै आन मान तैलै, चेली को रतनुवाँ को
स्वयंबर करो, दान दच्छीण गाउं ग्वैल

कन्या दान करो, खुसि लै तैलै
रैती परजा बर्‌यात बणै बेर
धूम धाम बाजा गाजा विवाह करायो
दिगोली कोट पुजायो, रतनुवाँ भड़ की
जो बुड़िया माहेड़ी, आज बड़ी खुसि भई,
च्याला ब्वारी आया, तैंकी इजत रै गई
खानी पिनीं तैं दिगोली कोट माँजा--"।

अतिरंजना और अतिशयोक्ति इन भड़ों में सर्वत्र मिलते हैं। वीर गण सौ मन भारी नगाड़ा बजाते हैं। सौ मन की गुलेल चलाते हैं और नौ मन की हँसिया लेकर चलते हैं। इनका हुक्का नौ नौ मन भारी होता है। ये नौ मन सत्तू और नौ मन तंबाकू अपनी पीठ पर बाँधते हैं। चाबुक लगाते ही इनके घोड़े बांज के पत्तों की तरह उड़ते हैं। ये स्वयं गौतेला पक्षी की तरह आकाश में छलांग मार कर बत्तीस हाथ दूर प्रतिद्वंदी को दबोच कर उसे अपनी जेब में डाल लेते हैं। निर्भीकता, दर्प और वीरोल्लास इनके सहज गुण होते है।

वार्तालाप की शैली में गाए जाने के कारण इन वीरों के वर्णन प्रभावात्मक होते हैं। वर्णन की नाटकीयता श्रोताओं को मुग्ध किए रहती है। इन वीरों की बारह बारह तिबारियों का, विशाल दुर्गों का और प्रभूत घन संपत्ति का प्रायः सभी गाथाओं में समान रूप से वर्णन मिलता है।

ये वीर गाथाएँ स्थानीय इतिहास की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण हैं। इनमें अनेक प्राचीन गढ़ों और हाटों के नाम आए हैं जैसे कत्यूर गढ़, कोटली गढ़, दैंती गढ़, बमौरा गढ़, कोकू कोट, चंडी कोट, भोपती कोट, कलावती कोट, सौनी कोट खिमसारी हाट, दुनगिरी हाट, बेलि हाट आदि जिनमें कुछ के भग्नावशेष अभी तक विद्यमान हैं। इनका अनुसंधान भूगोल का विषय है।

ऐतिहासिक वीर गाथाओं में वर्णित जो तथ्य लिखित इतिहास में नहीं मिलते उनका ज्ञान इन्हीं गाथाओं द्वारा ही होता है। जैसे राजा बिरमा की गाथा में उल्लेख मिलता है कि उसके रावत भाबर से लेकर भोट तक का दशांश वसूल करते थे। इसकी चर्चा गाथा के अतिरिक्त अन्यत्र कहीं नहीं मिलती। राजा त्रिमल चंद (१६२५–१६३८) की विस्तृत जानकारी इन वीर गाथाओं से ही

प्राप्त होती है। किसी छोटे राजा ने शेख सैय्यदों का सामना करने के लिए उससे सहायता मांगी क्योंकि तलहटी भावर का रास्ता रुक गया था और पहाड़ों में नमक और गुड़ का आना बंद हो गया था। त्रिमल चंद ने उसकी सहायता की।

यदि इस प्रकार के सभी वर्णनों का क्रमबद्ध विश्लेषण किया जा सके तो स्थानीय इतिहास के अनेक अज्ञात अथवा अल्प ज्ञात तथ्यों पर प्रकाश पड़ेगा। इस प्रकार ये गाथाएँ मध्य कालीन धार्मिक, सामाजिक और राजनैतिक विवरणों की दृष्टि से अत्यन्त उपयोगी हैं, इसमें कोई संदेह नही। विशेष कर राजाओं और वीरों की लंबी लंबी वंशावलियाँ जो अन्यत्र नहीं मिलती, वे स्थानीय गायकों की स्मृति में सुरक्षित रह जाने के कारण अधिक विश्वसनीय मानी जा सकती हैं।

१०. कुमाउंनी लोक कथाएँ

लगभग चालीस वर्ष पूर्व हिमालय क्षेत्र की लोक कथाओं का संग्रह और प्रकाशन करते समय पादरी ओकले ने यह विचार प्रकट किया था कि ये कथाएं अपनी उन्मुक्त कल्पना, ठेठ देहातीपन और पुरानी दुनियाँ के अंधविश्वासों के अवशेष रूप में ग्रिम बंधुओं द्वारा संकलित मार्शन अथवा केल्टिक और अंग्रेजी लोक साहित्य के टक्कर की हैं।[1]

स्थानीय लोक कथाओं के अध्ययन से इन विचारों की संपुष्टि ही हुई है। इन सभी लोक कथाओं में प्राणों की अन्यत्र स्थिति, मनुष्य और पशु पक्षियों का वार्तालाप, तंत्र मंत्रों का युद्ध, स्वप्न में भविष्य का आभास, अल्पावस्था में अद्भुत कार्य, परकाया प्रवेश, उजाड़ स्थान, पशु पक्षियों की सहायता जैसी विशेषताएँ मिलती हैं जिन्हें लोकवार्ता की शब्दावली में कथाभिप्राय (मोटिफ) कहते हैं।

कुमाऊँ में प्रचलित भूत-प्रेत, दैत्य दानव, पशुपक्षी, पुष्प वृक्ष, व्रत-त्यौहार आदि संबंधी छोटी बड़ी अनेक कथाओं के साथ मनोरंजक किस्से और चुटकुले इस अध्याय के अंतर्गत विवेच्य हैं। ये कथाएँ इतनी लोक-प्रिय एवं आकर्षक होती हैं कि परिवार के छोटे बड़े सभी प्राणी, बालक, युवा और वृद्ध, स्त्री तथा पुरुष इनमें समान रूप से रुचि लेते हैं। घर की वृद्धा दादी, नानी, रात में इन्हें सुनाकर नाती पोतों को सुलाती हैं और ग्वाले दिन भर जंगल में गाय बकरी चराते समय इन्हीं को कह सुन कर दिन बिताते रहते हैं।

इन कथाओं में मानव मात्र के प्रति कल्याण की भावना मिलती है और इनके कथानक का पर्यवसान सुख में होता है। कथाकार की शैली गद्यात्मक होती है। उसके वाक्य छोटे छोटे, वार्तालाप के ढंग पर बनते हैं जिनमें कहीं कहीं पद्यात्मक उक्तियाँ जोड़ी जाती हैं। आरंभ से चिर परिचित वस्तुओं का उल्लेख होने के कारण अंत तक इन कथाओं की सहजता और स्वाभाविकता बनी रहती है।

---

१. 'हिमालयन फोकलोर'—भूमिका—पृ.१८१

कुमाउंनी लोक कथाएँ मुख्यतः दस वर्गों में इस प्रकार विभाजित की जा सकती हैं—

(१) सामाजिक कथाएँ,
(२) भूत प्रेत, दैत्य, राक्षसों की कथाएँ,
(३) जीव जन्तुओं की कथाएँ,
(४) पक्षियों की कथाएँ,
(५) वृक्ष--पुष्पों की कथाएँ
(६) धार्मिक कथाएँ,
(७) साधु--संतों की कथाएँ,
(८) वीरता की कथाएँ,
(९) कारणमूलक कथाएँ,
(१०) दंत कथाएँ—चुटकुले और किस्से।

१· सामाजिक कथाएँ —

इन कथाओं द्वारा बहुविवाह, पारिवारिक संबंधों, व्यक्ति के चरित्र आदि पर व्यापक प्रकाश पड़ता है। 'सिंदूर दे राणी', 'ब्राह्मण और ब्राह्मणी', 'भाग्य विधाता' 'मणकोटी राणी', 'सरादक बिराउ', आदि कथाएँ उदाहरण स्वरूप यहाँ पर ले सकते हैं।

'सिंदूर दे राणी' की कहानी में किसी राजा रानी के एक मात्र पुत्र धनपाल के स्वप्न का वर्णन हुआ है। उसने स्वप्न में देखा कि वह एक श्वेत घोड़े पर उड़कर जिस सरोवर के किनारे पर उतरा वहाँ एक सुंदरी पानी भर रही थी। उस सुंदरी के पैरों से सिंदूर छूट रहा था और उसकी आँखों से मोती झर रहे थे। नींद उचटने पर धनपाल उसकी चिन्ता में दुबला होने लगा। सुंदरी की खोज में चार ब्राह्मण, चार दिशाओं को भेजे गए। एक ब्राह्मण ने उस सुंदरी का पता लगाया। तब धनपाल से उसका विवाह कर दिया गया।

उस सुन्दरी ने सोचा कि धनपाल के प्रेम की परीक्षा लेनी चाहिए। उसके पास एक हार था जिसमें उसके प्राण रहते थे। उसने वह हार अपनी बाल सहेली नाई की लड़की को देने का निश्चय करके अपनी मां से कहा-अगर मैं मर जाऊँ तो मेरे लिये जंगल में एक झोंपड़ी बना देना। वहाँ मेरे खाने पीने का सामान रख देना। इसके बाद उसने अपना मोतियों का हार नाई की लड़की को दिया और स्वयं मर गई।

बरात लौटने पर धनपाल के साथ नाई की लड़की भेजी गई। किंतु किसीं को यह रहस्य नहीं मालूम हुआ। धनपाल के परिवार वाले यह सुनकर हँसते थे कि कहीं स्त्री के पैरों से सिंदूर भी छूटता है ? शाम को जब नाई की लड़की खाना खाकर पलंग पर लेटती तो अपने गले का हार उतार कर अलग रख देती। उधर जंगल में 'सिंदूर दे राणी' जीवित हो उठती। वह झोपड़ी से बाहर आकर भोजन करती और फिर लेट जाती। प्रातः काल होने पर उधर नाई की लड़की मोती का हार पहन लेती और जंगल में सुंदरी मर जाती।

उधर वन में ९ महीने बीतने पर सुन्दरी का एक पुत्र उत्पन्न हुआ। एक बार जब धनपाल जंगल में शिकार खेलने गया तो पुत्र ने उसे "बौज्यू बौज्यू" (पिता जी) कह कर पुकारा धनपाल आश्चर्य में पड़ कर जंगल में रुक गया। रात में सुन्दरी ने जाग कर उससे कहा कि मैं ही तुम्हारी वास्तविक पत्नी हूं। धनपाल ने उत्तर दिया कि मेरी पत्नी तो घर में मेरी प्रतीक्षा कर रही है। किन्तु जब सुन्दरी चलने लगी और उसके पैरों से सिंदूर छूटने लगा तो धनपाल उसे पहचान गया। उसने कहा कि मैं नाई की लड़की को इस छल कपट की सजा दूंगा। तब सुन्दरी ने उसे सारी बात समझाई।

इस प्रकार 'सिंदूर दे राणी' और नाई की लड़की का मिलन हुआ। राजा के घर खुशी मनाईं जाने लगी। ऐसी अद्‌भुत थी वह स्वप्न की कन्या सिंदूर दे राणी।

'भाग्य विधाता' शीर्षक कहानी स्थानीय बोलचाल में इस प्रकार सुनाई जाती है--

एक राजा छी। वीकि चार चेलि छिन। राजैल उनूं थैं कय "तुम कैक भागल खां छा ?" तीन चेलि बलाणि--"तुमर भागल खानूं बौज्यू।" चौथि च्यलिल कय-"मी त आपुणैं भागल खां छ्युं।" राजल रीस में ऐं बेर कय--"भोल रत्तै जो लै पैलिक म्यर घर आल वी दगड़ त्यर ब्या करि छूंल।" दुहर दिन रत्तै भेरबै एक रिख है। राजैल वी दगड़ च्यलिक ब्या कर दी।

च्यलिल रिखुक ओड्यार में जै बेर छूंख वॉ मैंसाक खाण पिणी सब्बै समान धरिभै। रात हुन हुनै ओडेयार तिबारी खाम

बॉण गे और रिखु लै गोर फनार कुमार वणि गय। च्यलिल असोज में यक दिन लुकि बेर चितै उ कुमार एक चाम पैरि बेर रिखु वणि जानैर भैं। बी कैं उतारि वेर मैंस वणि जानेर भै।

जव वील कुमार थैं पुछ "यो कसि जुगत छ।" कुमारैल कय मैं यो तिबारि खामक मलिक छूं। एक दाणूं थैं डर लागैं तबै रिखु वणि बेर रौनूं।" च्यलिल पुछ—"उ दाणूं कां रूं ? कुमारैल कय-"यां बै पूरब दिशा में यक तलौ छ, जां हंस तिरनीं। वां जान जानै सात दिन में पुजी जॉं। वाँ पिगव हंस मांजि दानूं को जीव रौं छ।"

च्यलि दाणूं कैं मारण लिजि एक बिराउ लै। यक बखत उ जातरा सूं बाट लागि। रिखु कुमार वी कणि तलौ मांजि लि गय जाँ दाणु जीव पिंगव हंस मांजि रौं छी। च्यलिल हंसूं कणि खउंण हुणि कौणि देखै। जब पिंड व हंस कौणि नजीक आत बिराउल झट्ट वीक ठून थामि ले। च्यलिल गर्दन मरोड़ि बेर वीकैं मारि दि। तस्सै दाणुंक जीव उड़ि गय। च्यलिल रिखुक चाम आग में हालि दि। तब द्वीये आपण तिवारि खाम मांजि ऐ बेर राज करण लाग।

वां वीक बाब और बैणिन कैं मुसीबत है गे। ऊँ खाणकि तलाश में जंगव, जंगव जै बेर वांई तिबारि खाम पुजा। च्यलिल उनर खूब सेवा टहल करि। बाब वीक राजपाट देखि बेर आसज में है। गय च्यलिल आपणि काथ सुणै जतुक जीव छन संसार मांजि ऊँ सब आपणै भागल खानि।"

'ब्राह्मण और ब्राह्मणी' कहानी में एक चटोर ब्राह्मणी का चित्रण हुआ है जो अपने पति को तो रूखा सूखा खिलाती थी किंतु स्वयं उसकी अनुपस्थिति में पकवान खाती थी। एक बार ब्राह्मण ने छिपकर उसे ऐसा करते हुए देख लिया और उसकी खूब मरम्मत की।

'मणकोटी राणी' शीर्षक कहानी में कुछ रानियों के पारस्परिक राग द्वेष का चित्रण हुआ है। पुरोहित भोजनोपरांत उन्हें समझाता है कि छोटी छोटी बातों पर नहीं लड़ना चाहिए। 'सरादक बिराउ' कहानी में अर्थहीन रूढ़ि और प्रथाओं की

खिल्ली उड़ाई गई है। भोज्य पदार्थ जूठे न होने के डर से श्राद्ध के समय कोई सास पालतू बिल्ली को एक टोकरी से ढक देती थी। सास और बिल्ली दोनों के मर जाने पर जब पुनः श्राद्ध का समय आया तो बहू पड़ोस से बिल्ली मांगने गई। इसी प्रकार की और लोक कथाएं भी सुनाई जाती हैं।

२. भूत प्रेत, दैत्य राक्षसों की कथाएं--

इन कथाओं में भूत-प्रेत अधिकतर मनुष्यों के सहायक रूप में वर्णित होते हैं। प्रसन्न होने पर वे अतुल धन संपत्ति देते हैं। अथवा अन्य मनोकामनाएं पूरी करते हैं। इसके विपरीत अतृप्त रहने पर वे मनुष्य रूप धारण कर परिवार वालों का पीछा करते हैं। मृतात्माएं भूत बनकर अपनी संतानों को गड़ा हुआ धन दिखाती हैं। वे मनुष्यों का पीछा करते हैं किन्तु गांव की सीमा से दूर-दूर ही रहते हैं।

एक कथा में कोई व्यक्ति रात्रि के समय मसान घाट पर चक्की पीस रहा था। भूत ने मनुष्य के रूप में आकर उससे पूछा—क्या तुम मांस खाते हो? "हाँ" कहने पर जब उसने सामने किसी को नहीं देखा तो डर कर भागने लगा। भूत उसके पीछे पीछे गाँव तक दौड़ा। किन्तु घर के भीतर नहीं जा सका।

एक कथा में कोई व्यक्ति चिता की लकड़ियां बटोर कर खाना बनाने लगा। आधी रात को प्रेतों ने चिल्लाकर कहा—हमारी लकड़ियां वापस करो। वह आदमी अपने प्राण बचाने के लिए गांव में भाग आया। इस कथा में उल्लिखित लोक विश्वास के अनुसार चिता की बची हुई लकड़ियां प्रेतों को समर्पित मानी जाती हैं।

दैत्य तथा राक्षसों की कथाएं रूप-परिवर्तन एवं प्राणों की अन्यत्र स्थिति पर प्रकाश डालती हैं। इनमें जादुई बांसुरी, उड़न खटोला, अपने आप बांधने वाली रस्सी, स्वयं चालित डंडा, स्वयं पाकी बर्तन, स्वयं परोसने वाली करछुल जैसी अलौकिक तथा असामान्य वस्तुओं का उल्लेख होता रहता है।

जैसे एक कथा में बतलाया गया हैं कि किस प्रकार एक दैत्य की कन्या ने राज कुमार से विवाह किया। राजकुमार अपना रहस्य छिपा कर किसी साहूकार के यहां गूंगा बनकर नौकरी करता था। उसे स्वर्ग से पारिजात पुष्प लाने का आदेश दिया गया। खोज में चलते चलते उसे एक सुनसान नगर में कोई रूपवती कन्या मिली। दोनों चौपड़ खेलने लगे। शाम को जब कन्या के पिता दैत्य के आने का समय हुआ तो कन्या ने उसे मक्खी बनाकर अपने जूड़े में रख लिया।

दैत्य ने आते ही मनुष्य गंध का पता लगाया किन्तु कन्या ने उसका रहस्य

छिपा लिया। एक रात्रि को वह अपने पिता से बोली कि मुझे आपके प्राणों की चिंता है। आपका भाई यहाँ वेश बदल कर आपको मारने आया है। दैत्य ने कहा—तुम चिंता मत करो। मुझे कोई नहीं मार सकता। मेरे प्राण एक भौंरे में हैं। वह भौंरा एक तोते के पेट में है। वह तोता लोहे के पिंजड़े में है और वह पिंजड़ा सात तालों के भीतर बन्द है। तालों की चाभी मेरे पास है।

कन्या ने उससे चाभियाँ मांग लीं और कहा कि आप गले में एक घंटी बाँध लीजिए, ताकि दूर से आपके आने का पता चल जाए। उसने ये चाभियां राजकुमार को दे दीं। उसने जब पहला ताला खोला तो दैत्य को फिर हरारत होने लगी। दूसरा ताला खलने पर दैत्य को बुखार चढ़ आया। वह तुरंत अपने घर की ओर भागा।

इसी बीच राजकुमार ने सातों ताले खोल कर तोते और भौंरे को मार डाला। इसके फल स्वरूप दैत्य रास्ते में ही मर गया। तब राजकुमार उसकी कन्या से विवाह करके लौटा।

कुछ लोक कथाओं में मनुष्यों का राक्षसों के साथ युद्ध वर्णित है। एक कथा में कोई राजपुत्र निष्कासित किये जाने पर किसी गाँव में पहुँचा जहाँ कोई राक्षस नित्य मनुष्यों को खाता था। उस दिन किसी बुढ़िया की बारी थी। उसने राजपुत्र से चले जाने को कहा किंतु वह नहीं माना। रात में राक्षस के आने पर बुढ़िया ने घर के द्वार बंद कर लिए। जब राक्षस ने बुढ़िया से द्वार खोलने के लिए कहा तो राजपुत्र ने उसे ललकारा। दोनों की इस प्रकार से प्रतिद्वंदिता हुई।

राक्षस उससे बोला—"तू आपण दाँत पिस" (तू अपने दांत पीस)। राजकुमार ने चक्की में पत्थर डाल कर पीस दिए। राक्षस ने भी दाँत पीसे किन्तु वह हार गया। तब उसने कहा—"आपणि जट्ट भैर खित" (अपनी जटा बाहर फेंक)। राजकुमार ने घास का एक गठ्ठर बाहर फैंक दिया। राक्षस जटा प्रतियोगिता में भी हार गया। फिर उसने कहा "तू आपुण हात भ्यार निकाल" (तू अपना हाथ बाहर निकाल)। इस पर राजपुत्र ने लोहे की सनसी लेकर राक्षस का हाथ पकड़ कर मरोड़ दिया। राक्षस अपनी जान लेकर भागा।

उस दिन से फिर उसने किसी मनुष्य को खाने का नाम नहीं लिया। उस देश

के राजा ने राजपुत्र को बुलाकर अपनी कन्या उसे विवाह दी और आधा राज्य भी सौंप दिया।

जैसा कि स्पष्ट होगा इस अति मानवीय वर्ग की कथाएं सामान्य लोक विश्वासों के आधार पर बनी हैं और दैत्य-दानव, भूत प्रेत आदि पर मानव की विजय प्राप्त करने की भावना से निरंतर अनुप्राणित हैं।

३. जीव जन्तुओं की कथाएं–

ये पंचतंत्रीय कथाओं की भांति जन साधारण का मनोरंजन करती हैं यद्यपि इनमें नैतिक उपदेश भरे पड़े हैं। इनमें रहस्य, आश्चर्य पूर्ण घटनाओं द्वारा हास्य उत्पन्न करके श्रोताओं को परोक्ष रूप से शिक्षा दी गई है। वर्णित पशु, भालू, बाघ, शेर, बकरी, सियार, चूहा आदि मनुष्यों की भांति आचरण करते हैं। 'सियार दादा, 'भालूदादा, गीदड़ और शेर,' 'बकरी और बाघ,' 'महत्वाकंक्षी चूहा जैसी कथाएं उदाहरण स्वरूप ली जा सकती हैं जिन्हें सुनते सुनते श्रोतागण अट्टहास कर उठते हैं।

जैसे एक कथा में किसी ब्राह्मण की सात लड़कियां सियार, भालू, बाघ आदि के साथ विवाही गईं। ब्राह्मण उनकी ससुराल में जाकर आराम से दिन बिताता था। एक बार सियार ने अपने ससुर देवता की बड़ी सेवा टहल की। वह उन्हें घर में बिठाकर एक तेलिन के पास पहुँचा जो तिल कूट रही थी। सियार ने उसकी बच्ची को नोंच दिया जो चिल्लाने लगी। तेलिन जब अपनी बच्ची को सँभालने दौड़ी तो सियार ने उसका तेल पार कर दिया।

उसने फिर जंगल में जाकर एक ग्वाले से कहा कि तेरी बकरियां खेत उजाड़ रही हैं। ग्वाला उन्हें हाँकने गया तो सियार ने चुपके से उसकी एक बकरी उड़ा दी। फिर एक 'घराट' (पनचक्की) में जाकर उसकी नाली का पानी दूसरी दिशा में मोड़ दिया। जब घराट वाला जल की धार ठीक करने बाहर गया तो सियार ने उसके पिसे हुए आटे का थैला लेकर अपने घर को दौड़ लगाई।

इस प्रकार उसने अपने ससुर का स्वादिष्ट पदार्थों से सत्कार किया। इन कथाओं में सियार की बड़ी प्रशंसा की गई है।

गीदड़ और लोमडी चालाक होने पर भी कहीं कहीं दूसरे पशुओं से हार जाते हैं। शेर प्रायः डरपोक दिखाया गया है। बकरी बुद्धिमान कही गई है। एक बार बाघ के झपटने पर वह डरती नहीं। उत्तर देती है कि मैंने अपने मालिक के प्रति

कर्तव्य पूरा कर दिया। मैंने इक्कीस बार बच्चे दिए हैं जिनसे वह धनवान हो गया किन्तु अब मुझे बूढ़ी समझ कर मारना चाहता है। पुरुष जाति बड़ी स्वार्थी होती है। उसके हाथों मरने से तो अच्छा है कि तुम मुझे खालो।

इस संवाद का परिणाम यह हुआ कि बाघ उस बकरी की रक्षा करने लगा।

कथाओं में बिल्ली चालाक मानी जाती है किन्तु एक चूहा उसे खूब छकाता है। बिल्ली ने चूहे से कहा कि मेरे साथ अपनी कन्या का विवाह कर दो। चूहा बड़ा प्रसन्न हुआ। विवाह का दिन निश्चित किया गया। बिल्ली के सगे संबंधी बारात लेकर पहुँचे किंतु चलते चलते विवाह की बात भूल कर वे अपने बाजों से शिकार की धुन निकालने लगे। यह धुन सुनकर सारे चूहे अपने-अपने बिलों में छिप गए और विवाह नहीं हो सका।

चूहे को अपनी बुद्धि पर गर्व होता है। वह गढ़ा खोदकर बड़े बड़े पशुओं को नीचा दिखाता है। किंतु उसके गर्व का भी खंडन होता है। एक कथा चूहे की महत्वाकांक्षा को इस प्रकार अभिव्यक्त करती है।

इस कथा में वह चूहा अपनी कन्या का विवाह सर्वशक्तिमान से करना चाहता है। इसके लिए वह क्रम क्रम से सूर्य, चंद्रमा, बादल, पवन, चट्टान, वृक्ष आदि के पास जाता है। फिर अंत में अपनी ही जाति बिरादरी में विवाह करने के लिये बाध्य होता है। इसका बोलचाल में रूप है—

"एक भै मुस! वीकी एकल चेलि भै जैक ब्या करण छी। वील कै—चेलिक ब्या संसार में सबूं है ठुल मैंस दगड़ करूंल। ऊ सुरजक पास गे और बुलाण—"स्वामी! तुमन दगड़ि आपणि चेलि बेऊण चानूं!" सुरजैल क्वे भलि बात छ भाई! मैं ब्या करि ल्यूंल! मगर ऊ म्यर ताप कसिक सकैलि! म्यर क्वे घर बार न्हैं। रात दिन यक जागा बै दुहरा जागा जानै रूं।" मुसैल क्वे—"तुमूं दगड़ चेलि कैं के तकलीफ नि हो। तुम शक्तिमान छा।" सुरुज बुलाण—"नै भाई मैं शक्तिमान न्हातूं। मीं त रात दिन जलनै रूं। तू चंद्रमा पास जा।"

मुस चंद्रमा नजीक जै बेर बुलाण—"स्वामी! तुमन दगड़ि आपणि चेलि बेंऊण चानूं।" चन्द्रमाल वीकि खातिरदारि कर बेर

क्वे—"मकैं त कलंक लागि रौ छ रे ।तुम देखन छा मैं रातै में भैर जानूं। मैं त्यार चेलि लिजि धन दौलत कां बटि ल्यूंल ?" मुस बुलाण—"क्वे बात न्है। मेरि चेलि तुमन दगाड़ भलि कै रौली। तुम शक्तिमान छा।" चन्द्रमाल कै—"नै भाया! मैं है बेर बादव शक्ति मान छ। ऊ मकैं छोपी दी छ।तू वां जा।"

मुस बादव पास गे, बलाण—"स्वामी ! तुमूं दगाड़ आपणि चेलि बेऊण चानूं।" बादवैल क्वे—मैं है बेर पवन देव शक्तिमान छन। ऊँ जब चानीं मैकन उड़ै दिनीं। तु वां जा।" मुस पवन द्याप्त पास गे और बलाण—"स्वामी तुमन दगड़ आपणि चेलि बेऊंण चानूं।" पवन द्यप्तैल कै—"पांथर सिल मैं है बेर ज्यादा शक्तिमान छैंन। मुसैल पाथर सिल हुणि उसै क्वे। पाथर बुलाण मैं जड़ छुं। यकै जाग में रौंनूं। तू धरतिक नजीक जा।"

मुस धरती पास गे और उसै बुलाण। धरतील क्वे बोटांक जड़ मैं कणि बादनि। ऊँ मै है बेर शक्तिमान छन, तू वां जा। तब मुस बोटूं पास जै बेर बुलाण—"स्वामी तुमै शक्तिमान छा, मेरि चलि बिवै लियौ।" बोटैल क्वे—"भाया, तुमै लोग मै है बेर बलवान छा। म्यार जड़ खनि बेर सुकै दीछा। तु आपणि बिरादरि में चेलिक ब्या करा। उई शक्ति मान छ।"

अंखीर में मुसैल खूब धूम धाम करि बेर मुसै दगड़ आपणि चेलि वेवै दी। मुसे लोग सबूं है बलवान भया।"

एक पशु कथा में किसी बुढ़िया का शेर, बाघ और भालू से वार्तालाप वर्णित है। बुढ़िया अपनी लड़की को भेंट देने गई। पशु मार्ग रोक कर उसे खा जाना चाहते थे। बुढिया बारी बारी से हर एक से कहती गई कि अपनी कन्या के ससुराल से लौटूंगी, तब खा लेना। लौटते समय वह हर एक की आँख में नमक मिर्च डालती आई। सभी पशु आँखें मलते रह गए और बुढिया तब तक अपने घर पहुंच गई।

४. पक्षी कथाएँ—

कुमाऊँ की पक्षी कथाएं (बर्ड लोर) विशेष रूप से उल्लेखनीय कही जा

सकती हैं क्योंकि इनमें लोक विश्वासों के अतिरिक्त पारिवारिक सम्बन्धों पर पर्याप्त प्रकाश पड़ता है। पक्षी सम्बन्धी करुण कथाएं अपनी पृष्ठभूमि के अनुरूप कल्पित की गई हैं। ये पक्षियों की विशेष ध्वनियों पर आधारित हैं। इनमें मुख्य हैं–'काफल पाको' 'तिसमोली तीस तीस,' 'जूहों,' 'होट होट,' 'पुर पुतई पुरै पुरं,' 'घुघुती मैं सिती,' 'मोतिया रौ रौ,' 'तुम कोको छा,' 'उठ किरती दे सुरती' आदि।

ये स्थानीय कथाएं लोक मानस की कल्पना पर आधारित होने के साथ साथ किसी सामाजिक वैषम्य, पारिवारिक कटुता, सास बहू के वैमनस्य, कठोरता आदि का कारण भी बताती हैं जिनसे ज्ञात होगा कि मात्र मनोरंजन इनका उद्देश्य नहीं है। इसके विपरीत सामाजिक जीवन के एकाधिक पक्षों को उजागर करना इनका प्रमुख उद्देश्य है।

जैसे यहां पर 'जू हो' शीर्षक प्रसिद्ध कथा को ही लें जिसका अर्थ है–'क्या मैं जाऊँ ?'

किसी बहू ने ग्रीष्मकाल आरम्भ होने पर अपनी सास से मायके जाने की आज्ञा मांगी। सास कठोर थी। न तो उसे मायके जाने देती, न घर में आराम करने देती। चैत में बहू को मायके की 'नराई' लगी। जेठ में उसने अपने घर जाने की इच्छा प्रकट की। सास ने कहा तुम भट्ट की दाल भिगाकर रख दो। डुबके बनाऊंगी, खाकर चली जाना। इसी में खाते पीते शाम हो गई।

दूसरे दिन जब फिर बहू ने जाने की आज्ञा मांगी तो सास ने कहा–गाय बैल गोठ में बँधे रह गए हैं, उन्हें चरा लाओ। फिर चली जाना। इसमें दोपहर हो गई और खाते पीते शाम हो चली।

तीसरे दिन सास ने नया काम बताया—धान कूट कर रख जाओ, तब चली जाना। बहू धान कूटते कूटते अपनी असहाय दशा पर आँसू बहा रही थी। पक्षियों को उस पर दया आई। उन्होंने मिल जुल कर धान साफ कर दिये। फिर सास ने जंगल से लकड़ी काटने का काम सौंपा ! जब बहू लकड़ी का बोझ लाने में थक गई तो एक सर्प ने उसका बोझा घर तक पहुँचा दिया।

अब सास ने नया काम बताया—"घर में आटा नहीं है। घराट (पनचक्की) से गेहूं पिसा लाओ।" संयोग से 'घराट' खाली था। वहाँ चार घंटों का काम एक घन्टे में पूरा हो गया। एक घुरड़ (पहाड़ी हिरन) ने उसे आटे सहित अपनी पीठ पर बिठाकर घर पहुंचा दिया। बहू ने पूछा क्या अब मैं जाऊँ ? सास बोली—'आज तू बहुत थक गई है, आराम कर ले। कल चली जाना।" यह

सुन कर घोर निराशा के कारण मायके जाने की साध बहू के मन में ही रह गई और उसके प्राण उड़ गए।

मरने के बाद अब वही बहू पक्षी बनकर "जूं हो, जूं हो," अर्थात् "क्या मैं जाऊँ, क्या मैं जाऊँ ?" कहती हुई उड़ती फिरती है !

एक अन्य पक्षी कथा में भ्रातृ प्रेम के कारण बहिन ने अपना जीवन बलिदान कर दिया है। 'घुघुति मैं सिती' शीर्षक से प्रसिद्ध इस कथा में किसी नव विवाहिता स्त्री के पास चैत के महीने उसका भाई 'भिटौली' (भेंट) लेकर पहुँचा। वह स्नेहवश कुछ दिन वहीं पर रह गया। सास ने भाई से कहा--अब सप्तर्षि नींबू के पेड़ पर आ गए हैं तुम जाकर सो जाओ। उधर बहू से कहा—

"ज्वे मुख लगाइ चुइ काटो, कुकुर मुख लगाइ थोड चाटो।"

अर्थात् स्त्री को मुहँ लगाओ तो अपमान करने लगती है और कुत्ते को मुहँ लगाओ तो होठ चाटने लगता है। यह सुनकर भाई अपनी बहिन से विना कुछ कहे सुने रात में ही उठ कर चला गया। बहिन इसी दुख में रोती रही कि मैं सोई हुई थी। भाई भूखा चला गया। अब उसे कौन खाना देगा ? इसी वियोग में उसकी मृत्यु हो गई। वही पक्षी बनकर चिल्लाती है--

"घुंघुं हीं हीं, मैं सिती, भै भुखीं, को देलो, के खालो, !"

इसी उक्ति का रूपान्तर लोक भाषा में 'घुघुती मैं सिती' हो गया है।

कुछ पक्षी जोड़ा बनाकर उड़ते हैं और साथ साथ बोलते हैं। लोकमानस ने उन पर भी कथाएँ गढ़ ली हैं। जैसे 'पुरपुतई' शीर्षक कथा एक बुढ़िया और उसकी लड़की से सम्बन्ध रखती है। बुढ़िया ने जंगली बेर तोड़कर उनकी रक्षा करने का भार अपनी लड़की को सौंपा। दूसरे दिन बेर सूख कर कुछ कम हो गए। बुढ़िया को संदेह हुआ कि लड़की ही खा गयी है। उसने क्रोध में ऐसा थप्पड़ मारा कि लड़की मर गयी। जब पानी में भिगोने पर बेर के दाने पुनः ज्यों के त्यों हो गए तब उसे पश्चाताप हुआ। इसी दुख में उसने जीभ काट कर आत्महत्या कर ली।

तब से दोनों पक्षी बनकर उड़ते हैं और बोलते हैं--

"पुर पुतई पुरै पुरै, के करूं पुता उतुकै उतुकै।"

यही कथा "काफल पाक्को, मैंल नि चाक्खो" (काफल पका है, मैंने नहीं चखा) के रूपान्तर में भी इस प्रकार प्रचलित है—

"चैताक म्हैंण जब काफल पाकण लागनीं, ब्याल उदेख है जाँत

एक चड़ डान डान पुर पुतई कून कूनै हर साल चैतक म्हैंण यसी कै बासण रूंछ। जब काफल पुरी जानीं तौ चड़ नि देखीन । यो चड़ैकि एक काथ छु।

यक स्यैंणि रत्तै ब्याण काफल टिपण गे । वीक ऊंण तलक दोफरि है गे। घर ऐ बेर छोपरि बिसै खाणै कि बुती धाणि करी। फिरी गाड़न में न्है गे। आपण नान चेलि थैं कै गे कि यो काफल खाए झन। मैं ऐ बेर आफि द्यूंल। वील एक दाण लै खापन निहाल। दिन भरैक घामैल काफल ओहल्यै गे इजैल काफल कम द्याख। वील पुछ काफल त्वील खाइं कि? चेलिल सच्चि कै मैल नि चाखो। इजैल एक दणैक वीक पुठन हणि दी । चेलिल पराण छोड दे।

ब्याल हुं काफल फिरि डाल भरि है गे। जब इजैल द्यख कि काफल सबै छन त "पुर पुतई पुरै पुरै" कून कूनै वील पराण छांड़ि दि। इजक पराण च्यड़ बणि बेर "पुर पुतई" कूं छ। चेलिक पराण च्यड़ बणि बेर रुङ तुङ आवाज में "क्राफल पाक्को, मैल नि चाक्खो" कूं छ।"

इसी प्रकार की रोचक पक्षी कथाएँ "कप्फू', ,घुघुता,' 'सिटौला,' 'तित्तिर' 'न्यूलड़ी,' 'पुछड़ी च्यड़' आदि के बारे में भी सुनी जातीं हैं जिनकी व्याख्या लोक कल्पना के आधार पर भिन्न भिन्न रूपों में की जाती है। ये साभिप्राय कथाएँ स्थानीय विशेषताओं की परिचायक हैं।

५. वृक्ष तथा पुष्प संबंधी कथाएँ—

कुमाऊँ में कुछ वृक्ष और पुष्प भी लोक कथाओं के आधार बने हैं। पीपल और मिझौल नाम के वृक्ष तो मुख्यतः धार्मिक कारणों से महत्त्व रखते हैं। 'मिझौल' के पुष्प गुलाबी--सफेद रंग के होते हैं। 'बुरूंश' रक्त वर्णी पुष्प है जिसके पीछे किसी निराश प्रेमी का विरहाकुल हृदय माना जाता है। यह चैत के महीने में खिलता है जिससे सारे जंगल की शोभा बढ़ती है। 'औबीन' वसन्त का पीला पुष्प है। 'कपूनइ' एक बैंगनी पुष्प है जो इसी ऋतु में खिलता है। 'प्यूरड़ी' पीला पुष्प है जिसे कहीं कहीं 'प्यूंली' भी कहते हैं। यह केवल

वसंत ऋतु में खिलता है । यह देवता को नहीं चढ़ाया जाता । इसके पीछे एक लोक कथा कही जाती है--

प्यूंली सौंरी कोट में रहने वाली एक विवाहिता स्त्री थी । प्रातः काल जब वह द्वार खोलकर अपनी सखियों के साथ पानी भरने गयी तो यौवन की मादकता के कारण उसका सौंदर्य बढ़ा हुआ था । पानी में किसी की छाया पड़ते देखकर उसने ऊपर की ओर मुँह किया । वहाँ भूपू रौतेला को माला गूंथते हुए पाया । भूपू नीचे उतरा । उसने एकान्त पाकर माला उसके गले में डाल दी । दोनों बड़ी देर तक सिलङ वृक्ष की छाया में बैठे रहे । जब घाटियों में धूप ढलने लगी तब उन्हें अपने घर लौटने का स्मरण हुआ ।

तब प्यूंली घर लौटी । पति ने क्रोध में उसे लात मारी । उसका सिर फूट गया । उसके प्राण उड़कर स्वर्ग लोक को चले गये । वह तब से 'प्यूंली' का पुष्प बन गयी । लोक जीवन में यह पुष्प पवित्रता, कोमलता और करुणा का प्रतीक माना जाता है । इसी प्रकार अन्य वृक्ष पुष्पों की कथाएँ हैं ।

६· **धार्मिक कथाएँ--**

इनके अंतर्गत पारिवारिक व्रत संबंधी कथाएं तथा धार्मिक स्थान संबंधी कथाएं परिगणित हैं । व्रत कथाओं का संबंध नारी समाज से रहता है । व्रतों का विधान पुरुष भी करते हैं किन्तु तत्संबंधी कथा कहने और सुनने की रीति नारियों में विद्यमान है । त्यौहारों से संबंध रखने के कारण ये व्रत कथाएँ व्यापक हिन्दू धर्म के आचारों की सम्यक व्याख्या करती हैं ।

जैसा कि अन्यत्र स्पष्ट किया जा चुका है कुमाऊँ में इन व्रत कथाओं की संख्या ४० से ऊपर है । इनमें 'रामनवमी की व्रत कथा' (चैत्र), 'बट सावित्री की व्रत कथा' (बैशाख), 'हरकाली की व्रत कथा' (श्रावण), 'जन्माष्टमी की व्रत कथा', 'डोर व्रत की कथा', 'दूर्वाष्टमी व्रत कथा', (भाद्रपद), 'नवरात्रि की व्रत कथा,' (आश्विन), 'महालक्ष्मी की व्रत कथा' (कार्तिक), 'भैरवाष्टमी की व्रत कथा' (मार्ग शीर्ष), 'संकट हर व्रत कथा', 'शिवरात्रि की व्रत कथा' (माघ) आदि प्रमुख मानी जा सकती हैं ।

इनके अतिरिक्त कुछ व्रत विशेष प्रयोजन के लिये संपन्न किये जाते हैं अथवा साप्ताहिक दिनों से संबंध रखते हैं । तत्संबंधी धार्मिक कथाएँ भी प्रचलित हैं जैसे 'सत्य नारायण की व्रत कथा' अथवा 'चण्डीपाठ', 'सोमवार की व्रत कथा',

आदि। ये सभी कथाएँ माहात्म्य मूलक हैं जिनमें कथा तत्व व्रत या अनुष्ठान का अंग मात्र होता है। कथाएँ केवल दृष्टान्त स्वरूप सुनाई जाती है।[1]

यहाँ दूर्वाष्टमी की व्रत कथा ले सकते हैं। कुमाऊँ में यह अष्टमी भाद्रपद शुक्ल पक्ष में सुनाई जाती है। विवाहित स्त्रियाँ व्रत रखकर मध्यान्ह में पूजा करने के बाद कच्चा खाना खाती हैं। तीन दिन पहले एक बर्तन में चना, गेहूँ, जौ, मटर, उड़द, पाँच चीजें मिलाकर भिगोती हैं, जिन्हें बिरूड़' कहते हैं। प्रत्येक दिन उनका पानी बदल जाता है। व्रत के दिन 'बिरुड़' से शिव पार्वती की पूजा करती हैं। तदुपरान्त स्त्रियाँ गले में दूब की जड़ बाँधती हैं फिर सुन्दर दुबड़ा पहनती हैं जो चमकीले धागे से बना होता है। पूजा के बाद व्रत की कथा और गीत आदि होते हैं। मूल कथा इस प्रकार है—

"एक बण भाट छी। वीक सात च्याल छी और सात ब्वारि। नान्तिन कै कै नि भया। एक दिन बण भाट गंग पार क्वे गौं बटि ऊणों छीयो। पाणि मैल छियो। वील गंगज्यू किनार देख पार्वती ज्यू वाँ भैटी कुछ ध्वेण लागि रई। वील पुछ—"पाणि मैल किलै छ।" उनूल कय–"बिरुड़ ध्वेणयूँ।" बणभाटैल घर ऐ बेर ठुल ब्वारि थैं कय "तू भोल रतै अण खाइये पाँच कुणन में दी जलै बेर बिरुड़ भिजा।"

ठुल ब्वारिल रतै तसै कर। पर एक चाण खापन हालि ले। व्रत भंग है गय। बणभाटैल दुहरि ब्वारि थैं तसि कै बिरूण भिजूंण हुणि कय। दुहरि ब्वारि लै बिरूड़ मुखन हालि दिय। व्रत भंग है गय। छै ब्वारि विरूड़ नि धरि सक। सबूँ है नान ब्वारि गोरु भैंस चरूनैं भै। बण भाटैल कय–"अब त्वी कर जै करन छी।" नान ब्वारिल रतै उठ बेर बिरूड़ एक बटै, पाँच कुणा दि जलै, बिरूड़ भिजै दिय।

नान ब्वारिक च्यल भै मूल नक्षत्र में। बामण कैं फिकर भै। उ पुरोहित ज्यू नजीक गय। उनूल कय–"यो नक्षत्र फल फूल बोट फसलक लिजि नको छ। नान भाउ कन मारि दियौ। ब्वारि कन मंत

---

१. 'कुमाऊँ का लोक साहित्य'—पृ० २०७

पठै दियो और नान कन नौल दबै दियौ।" बणभाटैल उस्सै कर। ब्वारि मैत पुजि। इजैल कय "त्यर च्यल है रछ; याँ किलैं ऐ छी? मैं कणि अशगुन है रीं।" वील चेलि हुणि खीर बणै, खवै पिवै बेर पठै दिय। जाण बखत वीक आँचल में राइ दाण बाँधि बेर कय "इनूं कैं ब्वैनैं जाये, पछिल चानी जाये। हरी होली त च्यल कुसलैं भयो, सुकि जालि त मरि गय हुनलो।"

बाट में नानि ब्वारि राइ ब्वैणैं ऐ, पछिल चानैं रैं। उ हरी हुणै गय। हिटनै हिटनैं उ थाकि गे। तीस लागि। जब नौल में पाणि पिणै छी नान भाउल अंग्वाल हालि दी। वीक गावौक दुबड़ टूटि गय। नान कैं ल्ही बेर ऊ घर अैं। घर अै बेर वील द्यारव शौर में दुहर नान लग छ। अब वण भाटा द्वि नाति है गय।"

कुछ धार्मिक कथाएँ स्थान विशेष से संबंध रखती हैं। कुमाऊँ के सभी प्राचीन मंदिर किसी न किसी देवता अथवा पुराण-पुरुष से जुड़े हुए हैं। अनेक स्थान पांडवों से संबंध रखते हैं। जैसे काली कुमाऊँ की ओर घटकू देवता का प्रसिद्ध मंदिर है। जनश्रुति है कि भीम और हिडिंबा द्वारा घटोत्कच का जन्म यहीं पर हुआ। जब वह कर्ण के हाथों मारा गया तो भीमसेन ने उसके नाम पर एक मंदिर बनाया। उसके नीचे हिडिंबा के लिये एक महल बनाया जो अभी तक विद्यमान कहा जाता है।

इसी प्रकार नैनीताल के विषय में जनश्रुति है कि इसका प्राचीन नाम 'तृषि सरोवर' था। उसे अत्रि, पुलस्त्य और पुलह तीन ऋषियों ने बसाया था। ये ऋषि हिमालय में तीर्थयात्रा करने के लिये आकर चित्र शिला से गर्गाचल (गागर) की ओर जा रहे थे। वे प्यासे थे। पानी न मिलने पर उन्होंने वहां पर गढ्ढा खोदकर मान सरोवर का ध्यान किया। जल से भर जाने पर वही गढ्ढा 'तृषि सरोवर' कहलाया।

इसी प्रकार नल दमयंती ताल के विषय में जनश्रुति हैं कि महाभारत के पात्र नल और दमयंती जंगलों में भटकते हुए यहां आए थे। जब मछली पकड़ने के लिये उन्होंने जाल फैलाया तो उनके दुर्भाग्य से न केवल पकड़ी हुई मछलियां जल में तैरने लगीं बल्कि कटी हुई मछलियां भी जल में कूद गईं। कहते हैं कि कटे हुए

टुकड़ों से बनने के कारण ही वहाँ की मछलियाँ आज तक पूंछ और मुंह की ओर एक समान चौड़ी हैं।

इसी प्रकार यहाँ पर दानपुर, चित्रशिला, बैजनाथ, जागेश्वर जैसे स्थानों की पौराणिक कथाएँ प्रचलित हैं जो कुमाऊँ की प्राचीन धार्मिक स्थिति पर प्रकाश डालने में सहायक होती हैं। लोक वार्ता में इस श्रेणी की कथाएँ 'स्थानीय अवदान' (प्लेस लीजेंड) कही जाती हैं।

७. साधु संतों की लोक कथाएँ—

कुमाऊँ का पार्वत्य प्रदेश अनेक साधु संतों की चमत्कारी साधनाओं से गौरवान्वित है। ये संत और भक्त अपने त्यागमय जीवन द्वारा जनसाधारण का पथ प्रदर्शन करते रहे हैं। इनमें कुछ अपनी सिद्धियों के कारण पूज्य माने जाते हैं। इनमें नागनाथ सिद्ध, ऋद्धिगिरि गोसाई, हर्षदेव पुरी जैसे संतों की तो ऐतिहासिक कथाएँ हैं जो चन्द राजाओं के शासन काल से संबंध रखती हैं। उन्होंने राजाओं को समयानुकूल निर्देश देकर उनका पथ प्रदर्शन किया था। यद्यपि अब उनके चमत्कार ही शेष रह गये हैं।

कहते हैं कि नागनाथ सिद्ध ने राजा कीर्त्तिचन्द (१४८८–१५०३) को एक चमत्कारी चाबुक दिया था जिसकी सहायता लेकर उसके सेनापति ने अकेले डोटी राज्य की सारी सेना को पराजित कर दिया था। जहाँ तक सिद्ध के शंख का स्वर गूंजा था वहाँ तक चन्दों का राज्य विस्तृत हो गया था।

ऋद्धगिरि गोसाईं दूसरे बड़े त्यागी सन्त थे। राजा उद्योत चंद ने (१६७८–१६९८) जब जाड़ों में उन्हें ठिठुरता देखकर दुशाला भेंट किया तो वे बोले—यह राजाओं के लायक है, में जोगी इसका क्या करूंगा? फिर राजा के जोर देने पर उसे रख लिया। किन्तु उसके जाते ही दुशाला धूनी में झोंक दिया। राजा दर्शन करने के बहाने दुबारा आया। बाबा उसके मन की बात ताड़ गये। चिमटे से धूनी में पड़ा हुआ दुशाला निकाल कर उसके सामने रख दिया। राजा खिसियाया। बाबा ने दुशाला किसी को दान कर दिया। कुछ समय बाद उन्होंने जागेश्वर में समाधि ले ली।

एक बार कुछ लोग हरिद्वार में कुंभ स्नान करने गये। तब बाबा ने ब्रह्मकुंड से सिर निकाल कर राजा को उसकी अँगूठी लौटाई। लोगों ने अल्मोड़ा लौट कर अँगूठी देते हुए सारा हाल सुनाया। वे पहुँचे हुए संत थे।

आधुनिक साधु संतों में सोमबारी बाबा, हैड़ीखांन के बाबा, रौखड़िया बाबा, मोहन दास बाबा, लटोरिया बाबा, नीम करौली बाबा और नान्तिन बाबा के विषय में भी एकाधिक चमत्कारी कथाएँ कही जाती हैं। सोमबारी बाबा जाड़ों में हलद्वानी और गर्मियों में काकड़ी घाट तथा पदम बोरी नामक स्थानों पर रहते थे। नित्य सोमवार को हवन करने के कारण वे सोमबारी कहलाने लगे। उनकी सिद्धि के विषय में कहा जाता है कि एक बार भंडार में घी कम हो जाने पर वे अपने शिष्यों से बोले-"गंगा जी से (नदी से) उधार माँग लो।" तब पास की नहर से सौ घड़े पानी कड़ाही में डाल दिया गया जो घी बन गया। उसमें पूरियाँ तली गईं। भंडारा पूर्ण होने पर बाबा ने बाजार से सौ घड़े घी खरीदवा कर गंगा जी में डलवा दिया ताकि उसका उधार न रहे। नैनीताल-अल्मोड़ा में उनके अनेक संस्मरण लोक प्रिय हैं जिन्हें लोग सुनाते रहते हैं।[1]

मोहन दास बाबा सन् १९५७ तक जीवित थे जिन्होंने अल्मोड़ा के खगमरा कोट में आश्रम बनाया। उनके यहाँ प्रवेश करते समय जूते बहुत दूर नीचे उतारने पड़ते थे। किसी दर्शनार्थी थानेदार के साथ उसका कुत्ता ऊपर चला आया। बाबा ने पहले कुत्ते को बाहर कराया तब उससे बात की। सुनते हैं कि एक बार गोरखा पलटन से किसी बात पर उनकी अनबन हो गई। एक सिपाही खुखरी लेकर रात में उन्हें मारने गया। किन्तु आश्रम के चारों ओर इतना तीव्र प्रकाश फैला हुआ था कि वह चौंधिया कर गिर पड़ा। कहते हैं कि बाबा को हनुमान सिद्ध थे। वे तीन दिन तीन रात लगातार हनुमान के मंदिर की परिक्रमा करते रहे। इस घटना के ठीक ग्यारहवें दिन सरकारी आदेश हुआ कि अल्मोड़ा से गोरखा छावनी अन्यत्र भेजी जावे।

उन्हीं के एक गुरु भाई हलद्वानी के लटोरिया बाबा थे। उन्होंने विन्ध्याचल अथवा सतपुड़ा पहाड़ों में इतनी घोर तपस्या की थी कि उनकी जीभ ही उलट गई थी। इसी कारण वे 'लटोरिया' (लाटा) कहलाते थे। नीम करौली बाबा ने तो अभी चार-पाँच वर्ष पूर्व ही शरीर छोड़ा है। भवाली से आगे कैंची नामक स्थान में उनका पुण्य आश्रम बना हुआ है। उनकी सरकारी अफसरों पर बड़ी धाक जमी हुई थी।

---

१. 'स्मारिका' अल्मोड़ा जनपद—१९७२, पृ॰ १८३—१८४.

८. वीरता मूलक कथाएँ—

इस वर्ग में उन पर्वतीय सूरमाओं के प्रसंग लिए जा सकते हैं जो वीरता के उदाहरण हैं। वीरों की कथाएँ 'भड़ौ' के रूप में प्रायः गाई जाती हैं। किन्तु कुछ प्रसंग लोक कथा के रूप में वर्णित हैं। जैसे सीमान्त प्रदेश जोहार में वीर धार्मसिंह की लगभग २०० वर्ष पुरानी एक कथा प्रचलित है, जिसे बोलचाल में 'धमू पैंक' कहते थे।

धमू पैंक बिलजवाल जाति का था। इस जाति के स्त्री पुरुष प्रति वर्ष ऊन का व्यापार करने तिब्बत जाते थे और पर्याप्त धन कमाकर लौटते थे।

धमू पैंक सत्तर वर्ष का होने पर भी चलने फिरने में दुर्बल नहीं था। चौकोड़ी, बेनीनाग, नाकुरी, दानपुर और जागेश्वर नामक स्थानों तक उसके वीर कृत्य सुने जाते थे। वह बीस बीस सेर के बोरे अपनी पीठ पर लाद लेता। पूरा घड़ा पानी पी जाता था और पीतल या ताँबे के घड़े को एक हाथ से पिचका देता था।

एक बार धमू पैंक जून के महीने में सात साथियों को लेकर तिब्बत की ज्ञानिमा मंडी को चला। शाम होने पर वे लोग तंबू लगा कर विश्राम करते और प्रातःकाल यात्रा पर चल पड़ते। ठाजङ. नामक स्थान पर विश्राम करते समय एक दिन उन्होंने देखा कि हथियारों से सज्जित चार 'खंपा' (डाकू) उनकी ओर चले आ रहे हैं। खंपा उन दिनों तिब्बत चीन की सीमा पर रहते थे और तिब्बतियों पर आक्रमण करके भारतीय सीमा तक घुस आते थे।

उन्होने धमू पैंक को लूटने का विचार किया। तंबू के निकट आने पर धमू पैंक ने उनका स्वागत करते हुए कहा—"आइये, बैठ कर तंबाकू पीजिये। हम स्वयं अपना सारा सामान आपको सौंपना चाहते हैं।" डाकू शंका से इधर उधर देखते हुए बैठ गए।

धमू पैंक कोयले से एक पत्थर पर लिख कर अपने साथियों को बतलाने लगा कि कैसे उनका सामना करें। खंपाओं ने यह भाषा न समझने के कारण पूछा कि "तुम लोग क्या लिख रहे हो?" धमू पैंक ने उत्तर दिया—"हम लोग हिसाब लगा रहे हैं कि हमारे पास कुल कितना रुपया पैसा है जो आपको दे दें।

इस पर खंपा डाकू चुपचाप बैठकर तंबाकू पीते रहे। धमू पैंक ने उन्हें असावधान देखकर एकदम आक्रमण कर दिया। उनके हथियार छीन लिये और एक घाटी में जमीन खोदकर उन्हें जीवित गाड़ दिया।

तिब्बत का स्थानीय अधिकारी 'छासो' जब उन खंपाओं की खोज करता हुआ उधर आया तो उसे यह घटना मालूम हुई। उसने जमीन खोदकर खंपाओं के शव बाहर निकाले और आज्ञा दी कि धमू पैंक पर तिब्बती अदालत में मुकदमा चलेगा। धमू पैंक को याक के चमड़े से बांधकर ज्ञानिमा मंडी भेज दिया गया जहाँ उसे हथकड़ी पहनाई गई। उसने रात में हथकड़ी तोड़ दी। दूसरे दिन दूसरी हथकड़ी लगाई गई। उसने वह भी तोड़ दी। सात रातों तक यही होता रहा। उसने सभी को तोड़ दिया।

'छासों' अधिकारी ने आज्ञा दी कि उसे अदालत में लाकर चाबुक से पीटा जाए। यह सुनकर धमू पैंक ने तंबू का खंभा उखाड़ कर उसे मार डालने की धमकी दी। इस पर 'छासों' डर गया। उसने उसे छोड़ दिया।

धमू पैंक ने उससे वचन लिया कि आगे से उसके आदमियों को चाबुक न लगाया जाए। तब से यह नियम चला आया कि जोहारी व्यापारियों को तिब्बत में चाबुक नहीं लगाया जा सकता था। धमू पैंक की वीरता पूर्ण ऐसी और भी कथाएँ जोहार में प्रचलित हैं, यद्यपि उन पर कोई गीत नहीं बना है।

९. कारण मूलक कथाएँ—

ये कथाएँ किसी स्थिति विशेष के मूल कारणों की व्याख्या करती हैं। जैसे सृष्टि संबंधी यह कथा कुमाऊँ में प्रचलित है—

"आरंभ में न धरती थी न आकाश। न जल था न बनस्पति। थे अकेले निरंकार गुरू। गुरू ने अपना दायां अंग मला। उससे पसीने की बूंद टपकी जो मादा बाज बनी। उसने बायां अंग मला। उससे पसीने की दूसरी बूंद टपकी जो नर बाज बनी। मादा बाज नर से ऊँची हुई। उसका नाम पड़ा सोनी गरुड़ी। नर का नाम पड़ा ब्रह्म गरुड़।

गुरू को आश्चर्य हुआ कि मनुष्य सृष्टि के बदले जन्मे गरुड़। नर उड़ा पूर्व की ओर, फिर उत्तर की ओर। फिर लौट कर गरुड़ी के पास विवाह करने आया। सोनी गरुड़ी ने कहा—"एक ही गुरू से हम जनमे, विवाह कैसे

होगा ?" उसने ब्रह्म गरुड़ पर छींटे कसे। ब्रह्म गरुड़ रोया। सोनी गरुड़ी पछताई और उसके आँसू पी गई।

उन आँसुओं से उसको गर्भ रह गया। तब उसने ब्रह्म गरुड़ से घोंसला माँगा, अंडे देने के लिये। गरुड़ ने ताना दिया कि तुम कुरूप हो, व्यभिचारिणी हो। सोनी गरुड़ी रोने लगी। तब ब्रह्म गरुड़ बोला--"घोंसला कहाँ बनाऊँ ? मेरे पंखों पर बैठकर अंडे दे दो।" सोनी बोली "तुम विष्णु वाहन हो, अपवित्र हो जाओगे।"

फिर जब उसने गरुड़ के पंखों पर बैठ कर अंडा दिया तो वह अंडा अनन्त से गिर पड़ा। गिर कर टूटा और दो खंड हो गया। नीचे का आधा खंड बना धरती, ऊपर का आधा खंड बना आकाश। अंडे का तरल अंश बना सागर, शेष बना धरती।

निरंकार ने इस प्रकार सृष्टि की रचना की।

कुमाऊँ में मृतक का दाह कर्म करने के पश्चात् घर लौटते समय मार्ग में काँटे दबाए जाते हैं जिसके पीछे वह विश्वास अंर्तनिहित है कि कहीं प्रेतात्मा वापस लौटकर न आए। इसी कारण पर प्रकाश डालने वाली एक कथा है कि मृत्यु के बाद अब पितर यहाँ लौट कर क्यों नहीं आते ? कथा इस प्रकार है—

"पैंल वखत बुड़ि बाड़ि मरियाक बाद लै आपुँ च्यल ब्यारिक काम काज देखण हुं ऊं छी। आपण घर वालन का नक भल काम में पितर उनेरै भै। नानतिना कि अशल-कुशल देखि जानेरै भै।

एक घरै कि बुड़ि जब मरिगे त घर पन ब्वारि एकलै रैगे। गोड़ण निरण का दिन वीक हात-पात सारण हुं सरग बै मरि सासु लै अै। जब गोड़ण नेलण सकि गय त सासुले ब्वारि थैं कै— "ब्वारी ! म्यर ख्वारा ठुङ मारि दे। अत्ती चिलैलि लागि रे।" ब्वारि जसै ठुङ मारण बैठि त कुण लागि—"हँ हो ! तुमर ख्वार बटि किड़ैनि वास उंणै छ।"

सासु कैं नक लाग कि हमारै नानतिन अब हमूं बटि बास चितूनि। वील ब्वारि थैं कै—"आज बटि जब तुम लोग क्वे बुड़

बाड़ि कैं फुकि बेर आला त बाटम कान च्यापि अया। हम लोग फिर तुमरा पास नि ऊंलो।"

तबै बटि पितर लोक नान तिना का काम काज में धाणि बुति में नि ऊंना।"

इसी प्रकार की कथाएँ मनुष्यों और पशु पक्षियों के विषय में भी कही जाती हैं। जैसे कौवे को शीतकाल में चैन क्यों नहीं मिलता ? सूखे पेड़ों के ठूंठों पर बसेरा करके वह क्यों ठिठुरता रहता है ? उस पर दृष्टि पड़ते ही मनुष्य क्यों आशंकित होते हैं ? मनुष्य को अपने खाने की चीजें स्वयँ क्यों उगानी पड़ती हैं ? अनाज फुनगियों पर ही क्यों लगता है ? इन सभी विषयों का कारण बताने वाली अलग अलग रोचक कथाएँ प्रचलित हैं।

१०. दंत कथाएँ, चुटकुले और किस्से—

इस वर्ग में लोक कल्पना पर आधारित ऐतिहासिक, पौराणिक प्रसंग, उपदेश प्रधान नैतिक कथाएं, हास्य व्यंग्य के चित्र, कपोल कल्पित घटनाओं के वर्णन आदि सम्मिलित हैं जिनके द्वारा लोक मानस की अपूर्व क्षमता का ज्ञान होता है। रामायण और महाभारत संबंधी यहाँ अनेक दंत कथाएँ प्रचलित हैं जिनमें पात्रों का नाम मात्र पौराणिक है, जबकि कथाएं लोक कल्पित हैं।

(१) कहते हैं कि जब श्री राम चन्द्र जी ने लंका की विजय की तो उस समय कुंभकर्ण का सिर कूर्मांचल की ओर फेंक दिया था। यही सिर बाद में एक तालाब बन गया जिसमें द्वापर युग का भीमसेन वर्षों तक भटकता रहा। अपने पुत्र घटोत्कच को जलाने के बाद भीमसेन ने अपने हाथों से यह तालाब नष्ट कर दिया। पूर्वी कुमाऊं में आज जिस घटकू देवता की पूजा होती है वह लोक परंपरा के अनुसार घटोत्कच ही माना जाता है। वहाँ के निवासी उस क्षेत्र, में शव दाह नहीं करते हैं क्योंकि उसे कुंभकर्ण की खोपड़ी समझते हैं।

(२) शिक्षाप्रद कथाओं से मनोरंजन तो होता ही है। इसके अतिरिक्त मनुष्यों के बुद्धि कौशल का परिचय भी मिलता है। कहीं बुद्धि का चमत्कार मिलता है तो कहीं किसी जाति के गुण विशेष पर प्रकाश पड़ता है। कहीं सूत्र रूप में बहुमूल्य उपदेश दिये गए हैं तो कहीं कर्मफल की व्याख्या की गई है। कहीं भावी संकटों से बचने की चेतावनी दी गई हैं। कहीं विशुद्ध हास्य उत्पन्न कराया

गया है । इस प्रकार ये कथाएं मानव जीवन के सभी पक्षों से संबंध रखती हुई परोक्ष रूप में जीवन की शिक्षा देकर सामाजिक आदर्शों को स्पष्ट करती हैं।

उदाहरणार्थ यहाँ पर पिरमुवा और उसकी बहिन देवुली की कथा को लें जिसका शीर्षक 'दनदन बैंणी' हैं—

पिरमुवा घर में बैठा अकेला गरीबी से भूखा मरता था। उसने सुना कि उसकी बहिन देवुलि के घर चार चार भैंसें बंधी हुई हैं, खाने पीने की मौज है तो वह एक दिन उसके घर गया। उसे खाली हाथ आया देखकर बहिन देबुली ने रोष पूर्वक कहा—"तुझ जैसे दरिद्र के लिये मेरे यहाँ 'कौंणी' (मोटा अन्न) भी नहीं है। तू जिस रास्ते आया है उसी रास्ते लौट जा।"

पिरमुवा उदास होकर घर नहीं लौटा। वहीं जंगलों में दो तीन दिन भटकता रहा। वहाँ चरने वाली कुछ भैंसों से उसकी जान पहचान हो गई। वह उन्हें खूब घास दाना खिलाने लगा। भैंसे उसे बहुत सा दूध देने लगीं। वह दूध का दही जमा कर घी बेचने लगा। इस प्रकार धनवान हो जाने पर उसने जंगल में ही मकान बना लिया। वहीं पटवारी की लड़की से विवाह करके आनंद पूर्वक दिन बिताने लगा।

उसकी बहिन देबुलि के कानों में एक दिन भनक पड़ी कि अब तो पिरमुवाँ महलों में रहने लगा है। वह उससे भेंट करने के बहाने आ पहुँची। भाई ने उसका खूब स्वागत सत्कार करके खीर हलुवा खिलाया। विदा करते समय उसे रेशमी वस्त्र और फुन्ने आदि देकर दस भैंसें उसके साथ लगा दीं। सबसे बड़ी भैंस के गले में कपड़े से एक घंटी बाँध कर बहिन से कहा—"घर जाकर कपड़ा हटा देना।" बहिन के घर पहुंचने पर कपड़ा हटाने से वह घंटी बजने लगी—"दन दन दन।" उसमें से यह आवाज निकलने लगी—

"द्वार कुणा ठौर दिछि, दना दान !
मडुवा को रवाट दिछि दना दना !
सिसूणा को साग दिछी, दना दना !
ओढ़ना घाघरि दिछी, दना दना !
कुटली गदक दिछी, दना दना !
दन दन बैणीं, दना दना।"

यह आवाज सुन कर उसकी बहिन देबुली बहुत खिसियाई और अपने दाँतों से जीभ काट कर मर गई। कथा का भाव स्पष्ट है कि सबके दिन एक समान नहीं रहते। किन्तु एक बार कही हुई कड़ुवी बातें हमेशा याद रह जाती हैं।

(३) कुछ कथाओं में धन देकर किसी साधु संत से कोई शिक्षा मोल ली जाती है जो आगे चलकर काम आती है। किसी धनी व्यक्ति ने चार हजार रुपये देकर ये चार शिक्षाएँ मोल लीं--

१. कभी अकेले यात्रा मत करो।
२. किसी बिस्तर पर देखभाल कर बैठो।
३. खतरे के समय जागते रहो।
४. क्रोध का दमन करो।

एक बार वह व्यक्ति यात्रा करने चला। जब उसे अपने साथ चलने के लिए कोई नहीं मिला तो उसने 'गधेरे' (बरसाती नाला) से एक केकड़ा ही उठाकर अपनी टोपी में रख लिया। चलते-चलते वह किसी स्थान में खा पीकर सो रहा था कि साँप उसके ऊपर झपटा। टोपी में रक्खा हुआ केकड़ा इस साँप से लड़ने लगा। इसी बीच उस व्यक्ति की आँख खुल गई और उसके प्राण बच गए।

पहली शिक्षा काम आई कि कभी अकेले यात्रा मत करो।

मार्ग में चलते चलते एक स्थान पर किसी सुन्दरी ने उसका स्वागत सत्कार किया और स्वादिष्ट भोजन खिलाकर एक खाट में विश्राम करने के लिये कहा। वह खाट ऊपर से ढकी हुई थी। उस व्यक्ति को दूसरी शिक्षा याद आई कि बिस्तर को अच्छी तरह झाड़े बिना नहीं बैठना चाहिये। उसने ध्यानपूर्वक देखा तो खाट बुनी हुई नहीं थी। उसके नीचे बड़ा गढ्ढा था। उसने स्त्री को मार कर सारा धन छीन लिया। दूसरी शिक्षा काम आई।

आगे चल कर वह व्यक्ति एक बुढ़िया के घर पहुँचा जिसके पुत्र को राक्षस खाने वाला था। राक्षस राज महल की कुमारी के पेट में सर्प बनकर रहता था। वह व्यक्ति बुढ़िया के पुत्र के स्थान पर स्वयं राजमहल की ओर चला। उसने चारों ओर दीपक जला दिया। रात में राक्षस के प्रकट होने पर जब दीपक बुझने लगे तो उसने तलवार से राक्षस को मार डाला। दूसरे दिन प्रातः काल राजा ने प्रसन्न होकर अपनी पुत्री से उसका विवाह कर दिया।

तीसरी शिक्षा काम आई कि खतरे के समय जागते रहो।

अनेकों वर्षों के बाद वह व्यक्ति परदेश से धन दौलत कमा कर अपने घर लौटा। इसी बीच उसका पहला पुत्र जवान हो गया था। अपनी पत्नी के साथ उसे देखकर वह व्यक्ति क्रोध से भर गया। उसे न पहचान सकने के कारण मारने को तैयार हुआ। तब पत्नी ने बतलाया कि वह तो उसी का पुत्र है जो इतना बड़ा हो गया है।

इस प्रकार उसे चौथी शिक्षा का महत्व ज्ञात हुआ कि क्रोध का दमन करना चाहिये।

(४) कुमाऊँ में लटुवा कोठ्यारी की संतान के नाम से प्रसिद्ध और रोचक किस्से सुने जाते हैं। लटुवा की सात सन्तानें थी। एक बार जब वे सब यात्रा करने के लिये चले तो रास्ते में अपनी संख्या गिनने लगे। जो भी गिनता था वह अपने को ही छोड़ देता था। इसलिये संख्या पूरी नहीं होती थी। रास्ते में किसी यात्री ने उनसे कहा—"अगर मैं तुम्हारी संख्या बतला दूं तो क्या दोगे ?" वे बोले "जो माँगो वही देंगे।" उस यात्री ने जब जूता निकाल कर पटापट गिनाते हुए उनकी संख्या बताई तो वे पूरे सात निकले। इस पर लड़के बड़े प्रसन्न होकर बोले—"तुमने सातवाँ खोज दिया।"

एक बार लटुवा कोठ्यारी के लड़के अपनी माँ के लिये घाघरा सिलाने चले। बाजार से कपड़ा खरीदा और मोटाई की नाप एक पेड़ के तने से की गई। कपड़ा पेड़ के तने पर चारों ओर लपेट लपेट कर सिला गया। अब प्रश्न उठा कि उसे निकाला कैसे जाए। एक लड़के ने कहा कि पेड़ को काट डालो। दूसरे लड़के ने कहा कि पेड़ को काटने से तो कपड़ा ही फट जाएगा। तीसरे लड़के ने कहा कि कपड़ा नहीं फटेगा। गिरते हुए पेड़ को हम सब सँभाल लेंगे। अब पेड़ काटा गया और उसे सँभालने के प्रयत्न में सातों लड़के दबकर मर गए।

इसी प्रकार इन लड़कों के व्यापार करने के तथा नेपाल जाने आदि के किस्से कहे जाते हैं जिन पर इस प्रकार की तुक बंदियाँ प्रचलित हो गई हैं—

(१) "औणि आ, जाणि गाइ। लटुवा च्याल चानै राइ॥"

(२) "लटुवा च्याला गय नेपाल।
झगुलि साँटि लाइ सुरवाल॥"

(५) किस्सों के अंतर्गत एक भेद ऐसी कोरी गप्पों का है जिन्हें बोल चाल में 'फसक' कहते हैं। 'फसक' का अर्थ है बे सिर पैर की बातें जिनसे आश्चर्य एवं कुतूहल की सृष्टि होती है। शीतकाल की लंबी लंबी रातें बिताने के लिये आग के चारों ओर बैठकर गाँव वाले बड़े चाव से इन्हें सुनते सुनाते हैं। उदाहरणार्थ एक 'फसक--फराल' इस प्रकार है--

"एकैल क्वे—हँ हो। मुल देखो त जौनपूरै द्योख। एक मुल एक नान् नान् हातिक खुट समुजि ल्हियौ, बांकि के कूँ। वाँक लोग कूनी कि बाज बाज मुल २५।३० सेर तक हुंनी। और बात लै साँची छन। मैंल आपुण आँखनैल् देखि राख छ। मैं वांक मुलना गाड़नैं में जै अयूँ। मुल हुंछ त भौतै ठुल हुंछ। कई चुकि गयूँ हातिक खुट जस हुंकै बेर। वां पना मैंस यस् कूँनी कि विहूं एक खास प्रकारोक माटो चैंछ। उतण ठुल मुल वांलैं सब जाग थोड़ी हूँ। मैं सब चै चितै अयूँ। सिरफ नवाबै कै हाङन में जे काला हुनलि, वैं उस मुल उपजौं"

"ज्वेशि ज्यू मुणी खांसनै बलाण—हमार घराक सामणी भ्योलक जो खोल छ वीक माटो एस हुंछ, कि जे चीज लै वां ब्वेणत् अलग रय सुदै चोट्यै बेर लै खिती गे, एसि फुलांछ, एसि फुलांछ, कि आब् के कूँ। बौज्यू कूँ छी कि एक साल वां भांगो भै। यतणो कि अब कतण बतूँ? के कूं! अब तुम ऊ भांगो कतण भै हुनल कै ये लै शमजौ। कि एक दाणक द्वी खाप करा त एक एक खापाक्, एक एक सुंदर भद्योलो बणिग्वे। भद्याल में एक भबरयै मलि धिनालिक दूद भल सुंदर भैं अटै जानेर भै।

तै गाड़ में एक बखत ककज्यूल गदु लगै। गदू भया भकाराक् जास् टोपार भै। हुणि एसि एक बखत डिप्टी कमिश्नर सैप वां दौर करणो छी। उनैल गदुवन कणि देखो और कूँणा लगा—"हलो। जोशी टुमारा कद्दू, बहोत अच्छा। हमने ऐसा कद्द् कभी नहीं देखा। तुम एक हम को दे दो। हम इसे नुमायश में रक्खेगा।" ककज्यू नैं नैं

कूनै छी, पर नि मानि सँपैल। चारि कुलिल करि मरूं तरूं कैं अल्माड़ भेजौ। वां उ गदू तोली गयो त ५ मणैक निकल !

यै हाङ मैं एक बखत मुल ब्वे। यस फुफाणो कि के बतूं। देशौक मुल जब उतण हुंछ पहाड़ोक मुल कतण होलो। तुम समजि सकन्छा। एक मुल एतण भै कि कुटकैल खणते खणते हारि गयाँ, वीक जड़नौं कैं पतै नैं। लाचारी सांपोल ल्ययां। वील वीक चारै तरफ खण। जब एसि लै नि उखड़ा त, मैंल हालि अङ्कवाल, लगै जोर, बड़ी मुश्किलैल उखड़ ऊ। वीक उखड़ण छियो कि हम द्वियैं लफालींण भ्योलाक मली। लुड़कीण तीर तौंल हुं। कभ तै मुल तली, मैं मली, कभतैं मैं तली, मुल मली। ढिनमिनानै ढिनमिनानै गध्यारै जां लै पुजां। मैं पड़यूँ बालुवा मली, मुल पड़ गड़लोंड़ाक मली। गड़लोड़ैका फुटि बेर छेकार छेकार। दाज्यू द्वी जिमिदार बलै। एक ठाङरो मङै। वी कणि बादि बुदि रामराम कूनै घर हुं लि गयां। अब तुमै समझि सकन्छा, कतण ज नि हुनल उ मुल। और के कूँ झुटि बलाण उनेर निभै। जसि बिति तसि कै देछ।[१]

इस प्रकार की लोक कथाएं कहीं कहीं विशुद्ध मनोरंजन करती हैं तो कहीं नैतिक उपदेश देती हैं। कहीं किसी जीवन सत्य का उद्घाटन करती हैं तो और कहीं लोकविश्वासों की समुचित व्याख्या द्वारा साँस्कृतिक परंपराओं को दृढ़ बनाती हैं। इनके विषय में यहाँ एक तथ्य का संकेत कर देना चाहिये।

प्रायः इन लोक कथाओं में एक साँचे में ढली हुई कुछ ऐसी घटनाएँ अथवा कुछ ऐसे विचार मिलते हैं जो समान परिस्थितियों में समान प्रभाव उत्पन्न करने के लिये बारबार प्रयुक्त हुए हैं और जिनका साभिप्राय प्रयोग कथानक को आगे बढ़ाने के लिये अथवा दूसरी दिशा में मोड़ देने के लिये हुआ है। लोक वार्ता शास्त्र में ये विलक्षण तथा अलौकिक तत्व कथाभिप्राय (मोटिफ) कहे जाते हैं। यहाँ इनकी एक तालिका प्रस्तुत की जा रही है जो कुमाउंनी लोक कथाओं के अध्ययन तथा विश्लेषण में उपयोगी होगी।

---

१ 'अचल' पत्रिका—अप्रैल १९३९, श्रेणी २, शृंग-३

ये प्रमुख कथाभिप्राय इस प्रकार के हैं–

१. निस्संतान धार्मिक राजा, रानी का दुखी रहना।
२. पुत्र न होकर कन्या का जन्म होना एक मात्र पुत्र या पुत्री का जन्म।
३. अल्प वय में सर्वगुण संपन्न हो जाना। छः या बारह वर्ष की अवस्था में अद्भुत कार्य।
४. भटों का जन्म जात वीर होना।
५. नायक-नायिका का अत्यंत रूपवान होना।
६. पत्नी, भाभी अथवा बहिन का उलाहना देना।
७. प्रस्थान करते समय पत्नी अथवा माता द्वारा मार्ग रोकना।
८. निर्जन प्रदेश में सुंदरी का दर्शन।
९. दैत्य, राक्षस या दुष्ट पुरुष को मारकर सुन्दरी का उद्धार।
१०. असाधारण तत्वों द्वारा मार्ग दर्शन।
११. जोगी के वेश में प्रेमिका की खोज।
१२. पशु पक्षियों का मानव–भाषी होना।
१३. मार्ग की कठिनाइयाँ पार करना।
१४. शकुन या अपशकुन होना। उनसे घटित या आगामी स्थिति का ज्ञान।
१५. दुष्ट राक्षस, परी, प्रेत, देव दानव द्वारा कष्ट दिया जाना।
१६. गर्भ–गंधाक्षत करना।
१७. पशु पक्षियों की बात समझना।
१८. तांत्रिक सिद्धियाँ—आकाश में उड़ना, अदृश्य हो जाना।
१९. नायक द्वारा कठिन कार्यों का संपादन।
२०. रूप परिवर्तन, रूप परिवर्तन के साधन।
२१. प्राणों की अन्यत्र स्थिति किसी बाह्य वस्तु में।
२२. साहसिक कार्य करने का बीड़ा उठाना।
२३. कोई कठिन परीक्षा लेना।
२४. स्वदेश की अचानक सुधि।
२५. मरने पर पुनः जीवित हो उठना।
२६. ईर्ष्यालु सौत या ननद-भाभी के संबंध अप्रिय होना।

२७. विवाह के लिए कोई परीक्षा रखना। अंत में निश्चय बदल कर युद्ध करना।

२८. स्वप्न में दूरस्थ संबंधी की स्थिति का यथार्थ ज्ञान, जागने पर प्रयत्नशील होना।

२९. सब से छोटे भाई, बहू को निकृष्ट समझना। उसी का महत्कार्य में सफलता प्राप्त करना।

३०. जादुई वस्तुओं का प्रयोग—उड़न खटोला, स्वयं पाकी पात्र, स्वयं चालित डंडा, उड़ने वाली खड़ाऊँ, नाचने वाली मोहन मुरली, हौल तुंबी आदि।

३१. परकाया प्रवेश।

कथाभिप्रायों का विश्लेषण अब लोक-कथाओं के अध्ययन में इतना महत्वपूर्ण माना जाने लगा है कि इनका अध्ययन अन्तर्राष्ट्रीय धरातल पर किया जाने लगा है। विश्व प्रसिद्ध लोकवार्ताविद् प्रो० स्टिथ टामसन ने तो छः खण्डों में एक अभिप्राय अनुक्रमणिका (मोटिव इन्डेक्स) ही प्रकाशित कर दी है[1], जिसके आधार पर अमेरिका, जर्मनी, नार्वे और स्वीडन में शोध कार्य संपन्न किए जा रहे हैं। भारतीय लोक कथाओं के सन्दर्भ में थियोडोर बेन्फी के बाद मारिस ब्लूमफील्ड, रुथ नार्टन, नार्मन ब्राउन आदि विद्वानों ने इनका महत्व स्पष्ट किया है।

आधुनिक भारतीय भाषाओं के अनेक विद्वान लोक कथाओं के अभिप्रायों पर विशेष ध्यान दे रहे हैं। हिन्दी में डा० सत्येन्द्र, सावित्री सरीन, पं० हजारीप्रसाद द्विवेदी आदि विद्वानों ने यह कार्य आगे बढ़ाया है। इस दृष्टि से कुमाउंनी लोक कथाओं का विस्तृत भण्डार अभी खुला है जहाँ से उपयोगी सामग्री प्राप्त हो सकती है। स्थानीय शोध कर्त्ताओं को इन कथाओं की समुचित परीक्षा करके एक अभिप्राय कोश तैयार करना चाहिए जो भारतीय लोकवार्ता के अध्ययन में महत्वपूर्ण सिद्ध होगा।

———

1. 'मोटिव इन्डेक्स ऑव फोक लिटरेचर'—स्टिथ टामसन, प्र० सं०, १९३६ई०

११. कुमाउंनी कहावतें

विशेषताएँ—

एक आदर्श कहावत में तीन गुण आवश्यक माने जाते हैं—(१) संक्षिप्तता, (२) सारगर्भिता, और (३) चटपटापन।[1] कुमाउंनी कहावतों में ये तीनों गुण विद्यमान हैं। इनकी कुछ विशेषताएँ सामान्य रूप से अन्य प्रदेशीय कहावतों में भी प्राप्त होती हैं। कुछ विशेषताएँ ऐसी हैं जो स्थानीय वस्तु, वातावरण, इतिहास, समाज और स्थान आदि का परिचय कराती हैं।

१. इन कहावतों की मुख्य विशेषता लोकप्रियता है जिस कारण ये जन समूह की जीभ पर रहतीं हैं। बोल चाल में कहावतों का स्वाद गुड़ जैसा मीठा कहा गया है जो दिन में भी मीठा होता है और रात में भी—"गूड़ उज्याल में खौ त मिठो, अन्यार में खौ त मिठो"। जैसे यहाँ की एक प्रसिद्ध कहावत है—

"सासुल ब्वारि हुणि कै, ब्वारिल कुकुर हुणि कै,
कुकुरैल पुछड़ि हलकै दी।"

अर्थात् सास ने बहू से कुछ कहा, बहू ने उसे कुत्ते से कहा, और कुत्ते ने पूंछ हिला दी। यह आधुनिक चकाचौंध से ग्रस्त उन स्त्रियों पर स्पष्ट व्यंग्य है जो किसी प्रकार का अनुशासन नहीं मानना चाहतीं। परिवार की बहू जब सुनी अनसुनी करने लगती है, अथवा काम टालने लगती है तब यह कहावत कही जाती है। उसने सास की बात को नगण्य समझ कर कुत्ते तक पहुँचाया और कुत्ते ने मानों उसे उत्तर देकर अपनी पूंछ हिला दी। कार्य जैसे का तैसा रह गया। इन कहावतों की लोकप्रियता का प्रमुख कारण यह है कि इनमें जीवन के शाश्वत तथ्यों की व्यंजना की जाती है जो कभी पुराने नहीं पड़ते।

२. कुमाउंनी कहावतें अत्यन्त संक्षिप्त होती हैं। तीन चार चरणों से अधिक लंबी कहावतें यहाँ नहीं मिलतीं। अतः इनमें गागर में सागर भरने का प्रयास हुआ है। संक्षिप्तता इनके वाग्वैदग्ध्य का प्राण है। जब कोई कहता है—

---

१. 'प्रॉवर्ब्स एण्ड देयर लेसन्स'—आर. सी. ट्रेन्च, पृ० ७.

"बिगड़ि गै नाथैंकि, सुदरिगे सिद्धै कि" (बात बिगड़ी तो नाथ की, सुधरी तो सिद्ध की) तो इसका प्रयोग या तो भाग्यहीन लोगों के लिए होता है या अत्यन्त भाग्यशाली लोगों के लिए होता है।

नाथ संप्रदाय के स्थानीय लोगों के विषय में जन साधारण की यह धारणा है कि वे सांसारिक बातों में लीन रहते हैं। उनके विपरीत सिद्ध कहे जाने वाले व्यक्ति अपनी कठोर साधनाओं के कारण जीवन मुक्त माने जाते हैं जिन्हें सांसारिक वस्तुओं के प्रति कोई लगाव नहीं रहता। संत वृत्ति होने के कारण उनका सम्मान किया जाता है। इसलिये जन साधारण किसी बात के बिगड़ने पर नाथ का उदाहरण देते हैं। और सुधरने पर सिद्ध का आदर्श प्रस्तुत करते हैं। कहावतों की समास शैली इनके सारगर्भित होने में सहायक होती है।

३. इन कहावतों के द्वारा लोकमानस की व्यापक अनुभूतियों का तथा ग्राम-वासियों की सूक्ष्म निरीक्षण शक्ति का पता चलता है। लोगों ने अपने जीवन के उतार चढ़ाव में जिन तथ्यों का साक्षात्कार किया है अथवा अपने पूर्वजों के जिन निरीक्षणों को यथार्थ में घटते हुए देखा है उन्हीं को कहावतों का रूप प्रदान कर दिया है। उनकी दृष्टि में गौण से गौण वस्तु भी उपयोगी हो सकती है।

जैसे "सिसूणां का जसा पात" (सिसूंण की तरह पत्ते) कहावत उन व्यक्तियों के लिये प्रयुक्त होती है जो भीतर और बाहर दोनों ओर से हानि-प्रद हैं। 'सिसूण' एक जंगली पौधा है जिसका पत्ता दोनों ओर से कटीला होता है। इसे छू लेने पर हाथ में जलन होने लगती है। इस उदाहरण में लोक कल्पना ने चरित्र द्योतक एक उपयुक्त पदार्थ प्रस्तुत कर दिया है।

"वणि है जादे ज़ो होश्यार, उ बेकूफ" (बनिये से अपने को चतुर समझने वाला व्यक्ति मूर्ख है)।

नामक एक दूसरी कहावत इसी कोटि की है। अभिव्यक्ति की सरलता के कारण इसका अर्थ तुरंत स्पष्ट हो जाता है। "जैक बुड़ बिगड़ वीक कुड़ बिगड़" (जिसका सयाना बिगड़ा, उसका घर बिगड़ा) नामक कहावत की बोधगम्यता ही उसका प्रभाव डालने में समर्थ है। इसके द्वारा स्पष्ट कहा गया है कि चूंकि घर का दायित्व वयोवृद्ध पर होता है, अतः उसके बिगड़ने पर परिवार का बिगड़ना अवश्यंभावी हो उठता है।

४. ये कहावतें लोक विश्वासों की जीवन्त अभिव्यक्ति कराती हैं। कुछ विद्वानों का कथन है कि कहावतों में ऊँचे आदर्श कम रहते हैं। वे जीवन पद्धति में नवीनताओं के प्रति प्रायः रूढ़िग्रस्त होती हैं। उनमें कोई नैतिक सिद्धान्त नहीं होता।[1]

इसके विपरीत कुमाउंनी कहावतों में रुढ़िग्रस्तता तो विद्यमान है। फिर भी ईश्वर, धर्म, नीति तथा आचरण संबंधी विचार किसी न रूप में आदर्श मूलक मिलते हैं। जैसे–

"द्याप्त हुणि धूप नै, यारूं हुणि पूआ"

(देवता के लिये धूप नहीं, दोस्तों के लिये पकवान) शीर्षक कहावत धर्म के प्रति उपेक्षा भाव की आलोचना करती है।

५. हास्य और व्यंग्य इनके प्रमुख अस्त्र होते हैं। हास्य का आधार प्रायः कोई विचित्र वेशभूषा, अंग रचना, तथा अस्वाभाविकता रहती है जैसे—

"तुमुल चुच पे, मैंल के घुन पे"

तुमने मां का दूध पिया है तो क्या घुटने पिये हैं? शीर्षक कहावत हास्य द्वारा यह तथ्य व्यंजित करती है कि क्या तुम्हीं पुरुष हो और क्या मैं नहीं हूँ? ये कहावतें समाज के किसी भी वर्ग पर व्यंग्य कर सकती हैं।

"सौज्यू गुड़ खावौ, लेख लेख"

(साह जी गुड़ खाइये, लिख लिख)। यह कहावत बनियों की प्रकृति पर व्यंग्य है जिसके प्रतीक यहाँ पर शाह जी हैं। बनियां एक ओर अपने ग्राहक से कहता है आइये, बैठियें गुड़ खाइये। दूसरी ओर वहीं अपने नौकर से कहता है कि गुड़ का मूल्य इनके हिसाब में लिखो।

"पहाड़ि कौ देशि भाषा"

(पहाड़ी कौवा, देशी भाषा) शीर्षक कहावत उन लोगों पर व्यंग्य करती है जो अपने सीमित ज्ञान का बढ़ा चढ़ा कर प्रदर्शन करते हैं।

६. कुमाउंनी कहावतों की एक अन्य विशेषता उनकी स्थानीयता है जो आँचलिक क्षेत्र के किसी पक्ष पर प्रकाश डालती हैं। इन कहावतों द्वारा प्रस्तुत बिंब किसी ठेठ आंचलिक विशेषता का द्योतक होता है। उदाहरण के लिए

"गंगोलिक सबै पणज्यू"

(गंगोली के सभी पंत जी) कहावत गंगोली नामक स्थान की विशेषता

---

१. 'बिहार प्रावर्ब्स'—जॉन क्रिश्चियन, भूमिका, पृ० १८।

स्पष्ट करती है। यहाँ पंत जाति के श्रेष्ठ ब्राह्मण ज्योतिष, कर्मकाण्ड और राज कार्य सभी में अग्रगण्य रहे हैं। उनका प्रभाव जन साधारण पर इतना पड़ा है कि वहाँ के सभी लोग अपने को उतना ही श्रेष्ठ मानते हैं। इसी स्थानीय मनोवृत्ति का स्पष्टीकरण कहावत में किया गया है।

७. कुछ कहावतें हिन्दी भाषा के माध्यम से प्रचलित हैं, यद्यपि उनके प्रयोग एवं संदर्भ में अब अन्तर हो गया है। कुमाऊँ में हिन्दी की कहावत "मुल्ला की दौड़ मसजिद तक" अपने मूल रूप में संभवतः ग्राह्य नहीं हो सकती थी क्योंकि यहाँ न तो कोई मुसलमान हुए, न कोई मसजिद बनी। फिर भी कहावत का भाव उपयोगी था। अतः लोकमानस ने उसे एक नया रूप प्रदान कर दिया—"मुसना की दौड़ कंडान तक," अर्थात् चूहे की दौड़ कंडों तक। यहाँ चूहे भी हैं और कंडे भी हैं।

हिन्दी से ग्रहीत कहावतों में कुमाउंनी भाषा की समाहार शक्ति द्रष्टव्य है। जो कहावतें जन जीवन के अनुकूल थीं वे तो उसी मूल रूप में ग्रहण कर ली गई और जो ठेठ हिन्दी की थीं उन्हें रूप बदल कर मिलाने का प्रयत्न किया गया। इस सम्बन्ध में यह वक्तव्य स्मरणीय है—

"एक बात और लक्षित होती है कि कुमाऊँ में प्रचलित ये कहावतें समान रूप से बराबर महत्त्व की नहीं हैं। कुछ अत्यन्त प्राचीन हैं। कुछ तो चलती चलती जनता के प्रयोग में अभी जीवित हैं। जब कि कुछ कहावतें साहित्य रूढ़ हो गई। अर्थात् मर गई। उनके अवशेष अब गीतों, कथा-कहानियों में ही उपलब्ध होते हैं जिनसे हिन्दी भाषा तथा कहावतों का प्रभाव भी स्पष्ट है और साथ ही कुमाउंनी भाषा की सजीवता भी सिद्ध होती है।"[१]

वर्गीकरण—

विषय वस्तु के आधार पर कुमाउंनी कहावतें निम्नांकित आठ भागों में वर्गीकृत की जा सकती हैं—

(१) सामाजिक कहावतें,
(२) जीवन दर्शन संबंधी कहावतें,
(३) ऐतिहासिक कहावतें,

१, 'त्रिपथगा'—जून १९५७,—'कुमायूंनी लोक कहावतें'

(४) स्थान—विशेष संबंधी कहावतें,
(५) नीति—उपदेश प्रधान कहावतें,
(६) हास्य—व्यंग्य प्रधान कहावतें,
(७) कृषि—वर्षा संबंधी कहावतें,
(८) जीव—जन्तु संबंधी कहावतें ।

१. सामाजिक कहावतें—

कुमाऊँ में इस वर्ग की कहावतों की संख्या निर्माण एवं लोक प्रचलन दोनों दृष्टियों से सर्वाधिक मिलती है । कोई सामाजिक तथ्य स्वीकृत होने पर कहावत का रूप धारण कर लेते हैं । अतः स्थानीय समाज के रीति रिवाजों, आर्थिक तथा राजनैतिक स्थितियों, जातीय गुणों, धार्मिक आचारों आदि की दृष्टि से ये अत्यन्त उपयोगी मानी जा सकती हैं ।

इन्हें पुनः आठ वर्गों में इस प्रकार रख सकते हैं—

(क) जाति संबंधी कहावतें,
(ख) नारी संबंधी कहावतें,
(ग) धर्म संबंधी कहावतें,
(घ) आचार-रीति संबंधी कहावतें,
(ङ) व्यक्तित्व संबंधी कहावतें,
(च) भोजन पदार्थ संबंधी कहावतें,
(छ) अर्थ, राजनीति संबंधी कहावतें,
(ज) सामान्य कहावतें ।

(क) जाति संबंधी कहावतें—

कुमाऊँ में अनेक छोटी बड़ी जातियाँ रहती हैं जिनमें खान पान, जीवन स्तर, वंश परंपरा आदि भिन्न भिन्न होने के कारण, तत्संबंधी अनेक उक्तियाँ बन गई हैं । ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र सभी पर कुछ न कुछ उक्तियाँ हैं । एक जाति के लोग प्रायः दूसरी जाति पर टीका टिप्पणी करने के लिए इनका निर्माण करते रहते हैं । निम्नलिखित कुछ उदाहरणों से इनके विभिन्न पक्षों पर प्रकाश पड़ेगा ।

कुमाउंनी	हिन्दी
१. अघै नै बामुण, भैंसैं कि खीर ।	१. ब्राह्मण भैंस की खीर खाकर भी तृप्त नहीं होता ।
२. सराद लागा बामण जागा, सराद निमड़ ब्रामण चिमड़ ।	२. श्राद्ध लगे तो ब्राह्मण भी जाग पड़े । श्राद्ध समाप्त हुए तो ब्राह्मण भी दुर्बल हो गए ।
३. ब्योल मरौ ब्योलि, दक्षिण लिण म्यर काम ।	३. वर मरे या वधू, दक्षिणा लेना मेरा काम है ।
४. मुसमुसी बामण, जजमान किणि उजाड़ो ।	४. घुन्ना ब्राह्मण यजमान को उजाड़े ।
५. पोथी न पातड़ि, नाम नरैण पंडित ।	५. पोथी न पत्रा, नाम नारायण पंडित ।
६. बामण च्यलक उजड़न ऐं रस्यार बण, जिमदारक च्यलक उजड़न ऐं घस्यार बण ।	६. ब्राह्मण के पुत्र का उजड़ना हुआ तो रसोइया बना, जमींदार के पुत्र का उजड़ना हुआ तो घसियारा बना ।
७. खसियै की रीस, भैंसै की तीस ।	७. क्षत्रिय का क्रोध, भैंस की प्यास, दोनों बराबर ।
८. खसियैल पी भैंसक दूद, वीकैं सुज न बुज ।	८. क्षत्रिय ने पिया भैंस का दूध, उसे रही सुध न बुध ।
९. सौद बिगाड़ौ बणी, मसाल बिगाड़ौ धणी ।	९. सौदे को बिगाड़ता है बनियां, मसाले को बिगाड़ता है धनियां ।
१०. गड़ा जामौ झौ, गौं फैटो सौ ।	१०. खेत में 'झौ' घास का उगना, गाँव में शाह का घुसना बराबर ।
११. गना डुमैक गै नि गै बराबर ।	११. गलबंट वाले डोम गायक का गाना न गाना बराबर ।
१२. जिमदार हुणि विचार नै, भैंस हुणि कच्यार नै ।	१२. जमींदार को किसी बात का विचार नहीं, भैंस को कीचड़ की चिन्ता नहीं ।
१३. स्यापक जी ख्वार में, बणियक ढ़ेपु में ।	१३. साँप के प्राण सिर में, बनिये के पैसों में रहते हैं ।

कुमाउंनी	हिन्दी
१४. मसखद्दा जोगिक कसपै कसप ।	१४. मांसाहारी जोगी का कोई भरोसा नहीं ।
१५. रणमुखी छत्री, तीरथ मुखी बामण ।	१५. रणमुखी क्षत्रिय, तीर्थमुखी ब्राह्मण ।
१६. खसी नै जाड़ो, बामण खै जाड़ो ।	१६. क्षत्रिय को नहाने के बाद, ब्राह्मण को खाने के बाद जाड़ा लगता है ।
१७. जिमदारक च्यलैल हलै बाण, बणियाक च्यलैल बाँटै चाण ।	१७. जमींदार का पुत्र हल ही चलाएगा, बनिए का पुत्र अपने बांट ही देखेगा ।
१८. जाँ बम्मण तां लंघण, जाँ रजपूत तां मजबूत ।	१८. जहां ब्राह्मण वहां लंघन, जहां राजपूत वहां बल ।
१९. कोढ़ी गनगन पाकौ, औरन नौं धरौं ।	१९. कोढ़ी गले गले तक सड़ता है, दूसरों का नाम लगाता है ।

(ख) स्त्री सम्बन्धी कहावतें—

ये कहावतें कुमाउंनी समाज में स्त्रियों की स्थिति, ननद बहू के पारस्परिक व्यवहार, पति पत्नी के सम्बन्धों, उसके जन्म और पराधीनता, मूर्खता, वैधव्य जैसी स्थितियों पर प्रकाश डालती हैं । इनमें आदर्श नारी की कल्पना भी की गई है । पुत्री की अपेक्षा पुत्र का जन्म शुभ माना जाता है । उदाहरण हैं—

कुमाउंनी	हिन्दी
१. हँसि हँसि ब्वारिल नौ र्वाट खै ।	१. हँस हँस कर बहू ने नौ रोटियाँ खाईं ।
२. बैगक देखि साग, स्यैणिक देखि बाग ।	२. पुरुष का देखा साग, स्त्री का देखा बाघ, दोनों सच नहीं होते ।
३. धाण कर ब्वारी सागतै न्हा, खाण हुं आ ब्वारी, ठुल थालि कां ?	३. काम कर बहू—ताकत ही नहीं है, खाने को आ बहू—बड़ी थाली कहां है ?

कुमाउंनी	हिन्दी
४. सैंणी दिखै दन्त, बैगैल पै अन्त।	४. स्त्री हँसी, पुरुष फँसा।
५. सैंणि हुणि चूनै कि सौत, चोर हुणि खखारे भौत।	५. स्त्री के लिए चूने की सौत, चोर के लिये खखारना पर्याप्त हैं।
६. ब्वारिक लच्छण मैत बटि।	६. बहू का लक्षण मायके से स्पष्ट।
७. सौताक च्यल हुई नौल सेयूंण को जौ।	७. सौत के पुत्र का जन्म-संस्कार निभाने कौन जाए ?
८. गौ बिगाड़ो रांड, भात बिगाड़ो मॉड।	८. गाँव को राँड, भात को मांड बिगाड़ते हैं।
९. सौण मरी सासु, भदौ ऐ आसु।	९. सावन में सास मरी, भादों में याद आई।
१०. पातर धरण, हातिक खुराक।	१०. वेश्या रखना और हाथी पालना, दोनों बराबर हैं।
११. जै बुड़ियाक दुखैल न्यार भै, ऊ म्यरै बान ऐ।	११. जिस बुढ़िया के कारण बंटवारा हुआ, वही मेरे पल्ले पड़ी।
१२. नौल ब्वारिक घुंघुट देखौ।	१२. नई बहू का घूंघट कितना लंबा है, देखो ?
१३. स्वै हुणि के पेट लुकूण।	१३. दाई से पेट क्या छिपाना ?
१४. मुरुलि बजूं छै मैं त्यार नि औनीं, बिणाई बजूं छौ, मैं त्यार नि औनीं।	१४. चाहे तू मुरली बजा, मैं तेरे पास नहीं आऊंगी। चाहे तू विणाई बजा, मैं तेरे पास नहीं आऊंगा।
१५. भलै घरै कि च्यलि छूँ, बुति हु णि नमस्कार।	१५. भले घर कीं लड़की क्या काम करेगी।
१६. मुट्ठी को धन, मुखैं कि ज्वे।	१६. मुट्ठी का धन, और साथ की पत्नी ही अपने होते हैं।

कुमाउंनी	हिन्दी
१७. मरल बाब मरल, कँज दगड़ जालि, इज र्‌वाट हालण हुणि रै जालि।	१७. पिता मरेंग तो विमाता उनके साथ जायेगी, मां रोटी बनाने के लिए रह जाएगी।
१८. जस्सी राँड तस्सै दिसाण।	१८. जैसी विधवा, वैसा बिस्तर।
१९. मैत जूँल, लाम लाम खूंल।	१९. मायके जाउंगी, गपागप खाउंगी।

(ग) धर्म नीति सम्बन्धी कहावतें—

कहावतों में धार्मिक भावनाएँ अधिकतर लोक विश्वासों, ईश्वर सम्बन्धी विचारों, शकुन अपशकुन आदि के रूप में व्यक्त हुई है। इन्हीं में नैतिक अनैतिक धारणाओं का समावेश भी हुआ है। ये विश्वास अंध विश्वासों से भिन्न माने जाते हैं क्योंकि सामाजिक परम्पराओं के साथ इनमें ताल मेल बना रहता है—

कुमाउंनी	हिन्दी
१. गै जाला, म्यर बाबू को लग पिंड दि आया।	१. गया जाओगे, मेरे पिता को भी पिंड दे आना।
२. जैक ख्वार टोपि निगे, वीक हर्यालि के जाँछ ?	२. जिसने टोपी नहीं पहनी, उसे हरियाला क्या शुभ होगा।
३. गैया बजैया, अन्यारी कणि चितै रया।	३. गाना बजाना, किन्तु अन्यारी को आते हुए देखते रहना।
४. गैक चरि बामणक खई, भलै भै।	४. गाय का चरा हुआ, ब्राह्मण का खाया हुआ अच्छा ही है।
५. काणो कच्चाई, डूनो अन्यायी।	५. काना झगड़ालू होता हैं, लंगड़ा अन्यायी होता है।
६. ज्यूंन जी घुंस लात, मरि बेर दाल भात।	६. जीतेजी लात घूंसे मारे, मरने पर दाल भात खिलाया।
७. भूत पुजों, भुतणि लागि।	७. भूत की पूजा की, भुतनी पीछे लग गई।

कुमाउंनी	हिन्दी
८. भल होल कै बेर भागा बुलै, भागा भद्रा लै।	८. भला होगा समझकर भागा को बुलाया, भागा भद्रा ले आई।
९. जो द्यल तन हुणि, उ द्यल कफन हुणि।	९. जो पहनने के लिए देगा, वही कफन भी देगा।
१०. रात मर, राती रकसीण।	१०. रात में मरा, सवेरे राक्षस बन गया।
११. परमेसर है मतलब ठुल।	११. ईश्वर से स्वार्थ बड़ा है।
१२. भल करि ख्याड़ नि जान।	१२. भला किया हुआ बेकार नहीं जाता।
१३. बिन गुरू बाट नैं, बिना कौड़ी हाट नै।	१३. गुरू के बिना ज्ञान नहीं, पैसे के बिना बाजार नहीं।

(घ) आचार रीति सम्बन्धी—

इनमें विशिष्ट सामाजिक स्थिति के द्योतक रीतिरिवाज, आचार व्यवहार, प्रथा पालन जैसी कहावतें ली जा सकती हैं। इनके द्वारा सन्तान पालन, अतिथि स्वागत, पारिवारिक मान्यता, संस्कारगत धारणाओं जैसे विषयों पर प्रकाश पड़ता है। कुछ उदाहरण हैं—

कुमाउंनी	हिन्दी
१. स्यापाक च्यल पेटै वटि कुरबुरैंल।	१. सांप का बच्चा पेट से ही कुल-बुलाने लगता है।
२. बेउणि सुजनी नै, ढांटिल्यूंनी नैं।	२. विवाह योग्य कन्या दिखती नहीं, परित्यक्ता लाऊँगा नहीं।
३. हल नै मुसल, ब्या करण हुँ चल।	३. हल न मूसल, विवाह करने चले।
४. बबै की कमै न सपूतै खौं, न कपूतै।	४. पिता की कमाई न सुपुत्र खाता है, न कुपुत्र।
५. जैंक घर नानतिन, वीक घर कौतिक।	५. जिसके घर में बच्चे हैं उसी के घर सदा उत्सव है।
६. तेरि पैंलाग, मेंरि कथ्थ।	६. प्रणाम का कोई मूल्य नहीं।
७. तेर पिशियो न पिशियो, ल्या म्यर भाग।	७. तेरा पिसे या न पिसे, ला मेरा भाग।

कुमाउंनी	हिन्दी
८. बैणि घर भै कुकुर, ससुर घर जवै कुकुर।	८. बहिन के घर भाई कुत्ता, ससुर के घर दामाद कुत्ता।
९. स्वार निखाण दे, या ख्वार।	९. या तो सम्बन्धी नहीं खाने देवे, या भाग्य।
१०. मुस मारण हुं काक कना, दूध खाण हुं म्यार घरा।	१०. काम करने चाचा के यहाँ, दूध पीने मेरे यहाँ।
११. द्वी घरौक पौंण भुख मरौं।	११. दो घरों का पाहुना भूखा मरता है।
१२. मामन हुणि ठौंर नै, भाणज ऐ बैठ।	१२. मामा लोगों के लिये स्थान नहीं, भानजा भी आ बैठा।
१३. एक ब्या चकर बत्ती, द्वी ब्या कुकुर गती।	१३. एक विवाह वाला सुखी, दो विवाह वाले की दुर्गत।
१४. चेलि हइयै कि जसि खिशेणि के?	१४. कन्या जन्म की जैसी खिसियाहट क्या हो रही है?
१५. थाती हरण, बाब मरण।	१५. संपत्ति नष्ट होना पिता की मृत्यु के बराबर है।
१६. स्वार हुणि मरि गो नि कून, आग हुणि निमै गो नि कून।	१६. संबंधियों के लिये मर गया नहीं कहते। आग के लिये बुझ गई नहीं कहते।
१७. बारै जै बर्‌याति, टाड़ टाड़ हिटौं।	१७. बारह बराती हैं, वे भी दूर दूर चलते हैं।
१८. ज्याठ ज्यू को लाड़ कुलाड़ भै।	१८. जेठ जी का प्यार अनैतिक हो गया।
१९. बुड़ किनि खपै लिण, घ्वाड़ किनि धपै लिण।	१९. बड़े बूढ़ों के खाने पीने का, घोड़े को दौड़ाने का प्रबंध ठीक रहे।
२०. परै को च्यल पालण छांर चालण।	२०. दूसरे का लड़का पालना, राख छानने के बराबर।
२१. म्यार यॉं आलै, के ल्याले? त्यर यॉं ऊंलो, कै देलै?	२१. मेरे यहां आएगा, क्या लाएगा? तेरे यहां आऊंगा, क्या देगा?

कुमाउंनी	हिन्दी
२२. च्यल सुदरौ बबा का हात, च्यलि सुदरौ मै का हात ।	२२. पुत्र पिता के हाथों सुधरता है, और पुत्री माता के हाथ सुधरती हैं ।
२३. स्यार वालक स्यार बग, माण एक म्यार लै बग।	२३. खेत वाले का खेत बहा, एक माणा अनाज मेरा भी बहा ।
२४. ख्वार पिठ्या नै, ठ्यंग पिठ्या ।	२४. माथे पर रोली नहीं, अँगूठे पर।
२५. स्वर्ग सों टेक नै, धर्म सों छेक नै।	२५. स्वर्ग के लिये सीढ़ी की, धर्म के लिये अवसर की कोई प्रतीक्षा नहीं ।
२६. नौं त्यरो, गों म्यरो ।	२६. नाम भले ही तेरा हो, गाँव तो मेरा है।
२७. न्यूति का बामण, घुघुतिया क कवा ।	२७. निमंत्रित ब्राह्मण, घुघुतिया का कौवा, तिथि पर दोनों का ही अभाव हो जाता है ।

(ङ) **व्यक्ति संबंधी कहावतें--**

इन कहावतों में विशेष को संबोधित करते हुए सामान्य का संकेत किया जाता है। आरंभ में किसी व्यक्ति के स्वभाव, गुण वैचित्र्य पर उक्ति बनती है जो आगे चलकर वर्ग विशेष की द्योतक बन जाती है। "जां देख छा नरूलि गुस्याण" (जहाँ देखो नरूली उपस्थित है) कहावत में 'नरूलि' नाम वस्तुतः व्यक्तिवाची न होकर उस प्रकार की स्त्रियों का द्योतक है जो संयोगात् प्रत्येक स्थान पर विद्यमान रहती हैं। इसी वर्ग की अन्य कहावतें हैं —

कुमाउंनी	हिन्दी
१. जाँ निभै पैक, वाँ नथू पैक।	१. जहाँ कोई वीर नहीं, वहाँ नाथू ही वीर होता है।
२. निमड़िया गौंक घिनौड़ पधान।	२. छोटे व्यक्ति का छोटे स्थान पर अधिकार ।
३. नामैं का नरोत्तम भया ।	३. नाम से नरोत्तम हुए, कर्म से नहीं।
४. जाँ जाँ रघु पौण, वाँ निरी कुटी कौण।	४. जहाँ रघु पाहुना पहुँचेगा, वहाँ कुटा हुआ अन्न तक नहीं बचेगा ।

कुमाउंनी	हिन्दी
५. काल त्याड़िक धान, को काटौ नाख़ कान ?	५. काले तिवारी के धान के लिए अपना अपमान कौन कराए ?
६. सत मंगली कौतिक गे, कौतिकै निभै ।	६. अभागा मेले में गया मेला ही नहीं हुआ ।
७. नी जाणनै के, यो बाट लछम-पति ऊणौं !	७. क्या नहीं जानते इसी मार्ग से लक्ष्मीपति आ रहे हैं ?
८. उखल को भाई मुसल, डुमा को भाई थुमा ।	८. ऊखल का साथी मूसल, डोम का साथी खंभा ।
९. मैं कणि पसक, म्यार मदन किणि पसक ।	९. मुझे खाना दो, मेरे मदन को भी दो ।
१०. सिरु सिर धार, बिरु बिरधार, टुकन्या बिचै धार ।	१०. सिरू इधर, बिरू उधर, और टोकने वाला मँझधार में ।

(च) **भोजन पदार्थ संबंधी कहावतें —**

इनसे स्थानीय खाद्य पदार्थों की विशेषताएँ ज्ञात होती हैं। उदाहरण हैं—

कुमाउंनी	हिन्दी
१. गूड़ खै गुलैनी नै, लूण खै लुणैनी नै ।	१. गुड़ खाया मीठा नहीं, नमक खाया नमकीन नहीं ।
२. झक मारि झुङर खै, साजि-निखै, बासि खै ।	२. झख मार कर 'झंुगर' (मोटा अन्न) खाया, वह भी ताजा नहीं बासी ।
३. बासि रवाटा खाइयै कि फाम पछा ऐं ।	३. बासी रोटी खाने का कष्ट बाद में याद आता है ।
४. खाणहुं निभै गेठी, कमर बाँधि पेटी ।	४. खाने को गेठी नहीं, कमर में बाँधने लगे पेटी ।
५. पिस्यू सबै चोरि लिगै, घट कैल चोरो !	५. आटा चुराया तो चुराया, पनचक्की किसने चुराई ?
६. तेल जै कम, चड़चड़ाट जादे ।	६. तेल है कम, आवाज करता है अधिक ।

कुमाउंनी	हिन्दी
७. सिल ध्वे, पिङल साग।	७. सिल धोया, साग पीला पड़ गया।
८. मडुवा राजा, जब देखौ तब ताजा!	८. मडुवा (मोटा अन्न) राजा है जब देखो तब ताजा।
९. मानिरौक दनमण कथपनै प है रे!	९. मादिरे की दनमन कहीं पर हो रही है।
१०. छा हुँ जाण, टिटर लुकूंण।	१०. छाँछ माँगने जाना, बर्तन छिपाना।
११. लूण बुरक्यूण में गे, तेल तुर-क्यूण में।	११. नमक छिड़कने में गया, तेल टप-काने में।
१२. अणहत्ती काला, डुबुक लागीं गाला।	१२. बड़ी अनहोनी, 'डुबुक' (पिसी दाल) गले लगे।
१३. उठ नि सकन रत्तै रात, दियौ कूं रत्तै भात।	१३. सबेरे उठ नहीं सकता, खाने को माँगता है भात।
१४. सड़ी सिकार, मसूरै दाल बरा-बर नि हो।	१४. सड़ा माँस, मसूर की दाल एक जैसे नहीं होते।
१५. घौत खाइये जसि मचैनि।	१५. गहत (दाल) चबाने की जैसी मचमचाहट।
१६. वार गाड़ भट भुन, पार गाड़ चड़चड़ै उठा।	१६. इधर 'भट' (दाल) भुने, उधर चटचटाए।
१७. पिठी हैं क्वे रुख नें, जवैं है क्वे निठुर नैं।	१७. पिसे चावल के लड्डू से अधिक कुछ रूखा नहीं, दामाद से अधिक कोई निष्ठुर नहीं।

(छ) अर्थ राजनीति संबंधी कहावतें--

इनके द्वारा मनुष्य की आर्थिक स्थिति, शासन व्यवस्था, अधिकारियों के स्वभाव आदि पर प्रकाश पड़ता है। उदाहरण हैं—

कुमाउंनी	हिन्दी
१. गांठ नि भै पाइ, को करौ हाइ।	१. गाँठ में धेला नहीं, कौन खुशी मनाए?

कुमाउंनी	हिन्दी
२. लाख लखपतिक घर में या लबारक मुख में ।	२. लाख रुपये धनी के घर, अथवा गप्पी के मुहँ में ।
३. जैक मुख चलौ, वीक नौ हलाक बल्द चलौ ।	३. समर्थ व्यक्ति की नौ हल की खेती ।
४. सब चीजाक स्वांग हुनि, ढिपुवाक नि हुन ।	४. सब चीजों की नकल हो सकती है, पैसों की नहीं ।
५. राज करण आपुण देस, भीख माँगण परदेस ।	५. राज्य अपने देश का, भीख परदेश की ।
६. स्यैणिक खसम मरद, मरदक खसम कर्ज ।	६. स्त्री का स्वामी पुरुष, पुरुष का स्वामी कर्ज ।
७. हाकिमाक कान हुंनि, आँख नै ।	७. हाकिम के कान होते हैं, आँख नहीं ।
८. नौकरिक रोटि, बज्जर जस खोटि ।	८. चाकरी का अन्न वज्र जैसा खोटा ।
९. गांठ है दिदिण भल, जमानत हुंण नक ।	९. गांठ से दे देना अच्छा, जामिन बनना बुरा ।
१०. लिखै जोखै राज दिवानै जसी, खवै पिवै गुणी बानर जसी ।	१०. आडंबर तो राजपुरुषों जैसा, खाना पीना लंगूर बंदरों जैसा ।
११. उधार निकालण हुं गे, पैंच याद ऐ ।	११. उधार वसूलने गया, उधार लिया हुआ याद आया ।
१२. आङ पार नै लुकुड़, खानूं कैं छै पानक टुकुड़ ।	१२. शरीर पर वस्त्र नहीं, खाने को माँगता है पान ।
१३. अदालत चढ़ण, गधा में चढ़ण ।	१३. अदालत में जाना, गधे पर चढ़ने के बराबर ।
१४. राजक भनार जौ, महतक हिया फाटौ ।	१४. समाप्त होता है राजा का भंडार, फटता है मन्त्री का हृदय ।

कुमाउंनी	हिन्दी
१५. माया का तीन नाम–फरसू, फरसा, फरसराम।	१५. लक्ष्मी के तीन नाम हैं—फरसू, फरसा, फरसराम।
१६. दरिबार, परिवार, तलवार।	१६. दरबार, परिवार और तलवार, तीनों का एक साथ सँभालना कठिन होता है।

(ज) सामान्य कहावतें—

इस वर्ग में स्वास्थ्य सम्बन्धी, मनस्थिति सम्बन्धी, मनोग्रंथि सम्बन्धी और प्राणियों की प्रकृति सम्बन्धी जैसी कहावतें सम्मिलित हैं जो जन साधारण की सूक्ष्म निरीक्षण शक्ति एवं व्यापक अनुभव का परिचय कराती हैं। उदाहरण हैं—

कुमाउंनी	हिन्दी
१. कां राजैकि राणि, कां भगतुवै की काणि?	१. कहाँ राजा भोज, कहाँ गंगू तेली?
२. के अटकण मैंगे, के फटकण में गे, के खै बजारक भौलै, के खै बजारक सौ लै?	२. कुछ अटकने में गया, कुछ फटकने में, कुछ महँगाई ने खाया, कुछ साह जी ने।
३. एकै खाणिक पाथर, एकै खाड़क पिनाउ।	३. एक हीं थैली के चट्टे बट्टे।
४. मैंसक उजड़ण ऐ, ग्वाल बण, लुवौक उजड़ण ऐ, फाल बण।	४. मनुष्य का उजड़ना हुआ तो ग्वाला बना। लोहे का उजड़ना हुआ तो हल की फाल बना।
५. कतुक बीसी सैकण हुनी, अब जाणला ?	५. कितने बीस का सैकड़ा होता है, अब जानोगे ?
६. जाँ सुन वाँ नाकै नै, जाँ नाक वाँ सुनै नै।	६. जहाँ सोना है, वहाँ नाक नहीं, जहाँ नाक है वहाँ सोना नहीं।
७. ढकिण न विछूण, मरोड़ बड़ि।	७. ओढ़ने बिछाने को कुछ नहीं, अकड़ में कमी नहीं।
८. आजि क्ये, मुसै च्यलि मुसाकै ?	८. चूहे की लड़की चूहे के ही घर गई।

कुमाउंनी	हिन्दी
९. पैंली दई नै, फिर छइ नै, पै पातै नै, पै दिणि जातै नै ।	९. पहले कहा दही नहीं है, फिर कहा है ही नहीं। फिर कहा पत्ता नहीं, फिर कहा देने की जाति नहीं।
१०. जैल नि देखस्यू उ देखौ बिरालु। जैल नि देख ब्योलि, उ देख ब्योलिक भाई। जैल नि देख ठग, ऊ देख नाई।	१०. जिसने शेर नहीं देखा, वह बिल्ली को देख ले। जिसने बहू को नहीं देखा, वह उसके भाई को देख ले। जिसने ठग नहीं देखा, वह नाई को देख ले।
११. जब मांगौ तब भोल।	११. जब कुछ मांगा, दूसरे दिन के लिए टाल दिया।
१२. बण सुङरैल उजाड़ खै, घर सुङराक थोल थ्याच।	१२. जंगली सुअर ने उजाड़ खाया, घर के सुअर को मारा।
१३. कन्यै कोढ़ करण।	१३. अपने रोग को स्वयं बढ़ाना।
१४. काणक ब्या में नौ खिच्याल।-	१४. काने के विवाह में झंझट ही झंझट।
१५. माल हिटौ, माल हिटौ सबूंल कै। उकाल हुलार कैले नि देख।	१५ भावर चलो, भावर चलो, सबने कहा। चढ़ाई उतार किसी ने नहीं देखा।
१६. भायों का बाँट, हथगुली का रेखा।	१६. भाइयों में बँटवारा अवश्य होता है।
१७. नकटा नाक लै मिहलक बोट जाम। काट दे निक्वे, स्योल बैठुंल।	१७. नकटे की नाक पर मिहल का पेड़ उगा। काट दें, नहीं कहा, छाया में बैठूंगा।

उक्त सामाजिक कहावतों में दो बातें ध्यान देने योग्य हैं। एक तो कहीं पर इनकी व्याख्या करने के लिए संदर्भ दिये जाते हैं जिन्हें जाने बिना अर्थ नहीं खुलता। दूसरे प्रकार की कहावतें किसी घटना विशेष पर आधारित होती है। जैसे निम्नलिखित कहावत है—

"पुजन पुजनै आज काम ऐ"(पूजा करते करते आज काम आया)।

इसकी व्याख्या करने के लिए एक संदर्भ कहा जाता है। कोई वैष्णव भक्त अपने शालिग्राम को देवता मानकर उसकी नित्य पूजा किया करता था। देवता ने उसका कोई कल्याण नहीं किया। किन्तु वह पूजा करता रहा। एक बार उसने पूरियाँ बनाकर शालिग्राम को चढ़ाने के लिए रख दीं। एक कुत्ता उन पूरियों को लेकर भागने लगा। आस पास कोई लकड़ी आदि न देखकर भक्त ने उसके ऊपर वही शालिग्राम उठाकर दे मारा। कुत्ता पूरी छोड़ कर भाग गया।

तब भक्त ने कहा कि पूजते पूजते आज काम आया।

किसी घटना पर आधारित दूसरे प्रकार की कहावत इस प्रकार है—

"गाया बजाया, अन्यारी कणि ऊण चितै रया।"(गाते बजाते रहना, अन्यारी को आते देखना)। अल्मोड़ा के पास सुंवाल नदी के ऊपर अन्यारी कोट नामक एक स्थान है जहां के निवासी 'अन्यारी' कहलाते है। सुंवाल नदी के श्मशान के बारे में लोक विश्वास है कि अमावास्या की रात्रि को वहां भूतप्रेत नाचते हैं। एक बार रात में घर लौटते समय किसी 'अन्यारी' ने भूतों को नाचते गाते देखा। उसने भयभीत होकर भूतों के सरदार को थाम लिया। सरदार बोला—मुझे छोड दो। तुम जो कहोगे वही करूंगा।''आदमी ने कहा " कल तक खत्याड़ी गांव से हमारे खेतों में खाद पहुँचा दो और खेतों में धान काट दो।" भूत सरदार चला गया।

दूसरे दिन गांव वालों ने अपने खेतों में खाद तो पड़ी देखी किन्तु पौधे जड़ से उखड़ गये थे। रात में उस आदमी ने फिर भूत सरदार कि चुटिया पकड़ी। उसे धान के पौधों को फिर से ठीक करने का आदेश देकर भविष्य में अन्यारी गांव के निवासियों को कभी न सताने का वचन ले लिया।

तब से उस गांव के लोग झाड़ फूंक में तथा भूतप्रेत उतारने में कुशल माने जाते हैं।

२. जीवन दर्शन संबंधी कहावतें ––

इस वर्ग की कहावतों में हम यह देखते हैं कि स्थानीय ग्रामवासियों का निजी अनुभवों के आधार पर एक विशिष्ट जीवन दर्शन बन गया है। जीवन, जगत्, समाज, भाग्य आदि सभी को वे इसी दर्शन की तुला पर तोलते हैं। भाग्य और कर्म दोनों को वे बराबर महत्व देते हैं। इन कहावतों के तीन वर्ग बनाए जा सकते हैं–––

(क) भाग्य संबंधी कहावतें,
(ख) कर्म, जन्मान्तर संबंधी कहावतें,
(ग) दार्शनिकता संबंधी कहावतें।

(क) भाग्य संबंधी कहावतें --

ये कहावतें भारतीय संस्कृति की उस विचार धारा का पोषण करती हैं जिसमें भाग्य की गति को सर्वोपरि माना जाता है जैसा कि नीचे स्पष्ट होगा--

कुमाउंनी	हिन्दी
१. तू जालैं वाँ, भाग जालो काँ ?	१. भाग्य मनुष्य के साथ साथ जाता है।
२. कतुकै करौ हेर फेर, फिर आदु कै सेर।	२. कितना ही हेर फेर करो, रहेगा ज्यों का त्यों।
३. राजा खवर मुकुट धर, बण बासै कि खबर नै।	३. राजा को मुकुट पहनाया, वनवास की खबर ही नहीं।
४. कुनलि के देखण, मुनल देखण।	४. कुंडली क्या देखना, माथा देखना चाहिये।
५. खुटै जै ट्याड़ भया, पड़ियै भ्योल छ।	५. पैर ही टेढ़े हुए तो गड्ढे में गिरेगा हीं।
६. पाठ छोपिनी, मुन नि छिंपन।	६. बकरी के बच्चों को छिपाया जा सकता है, माथा नहीं।
७. कभैं पिसी खै, कमैं पिसै खै।	७. कभी पीस कर खाया, कभी पिसा पिसाया खाया।
८. क्वे कूं के खूं, क्वे कूं के में खूं ?	८. कोई कहता है क्या खाऊँ ? कोई कहता है किसमें खाऊँ ?
९. रूप रीस नै, कर्म बाँट नै।	९. रूप और कर्म दोनों का बँटवारा नहीं होता।
१०. निभागी माल गे, वाँलै अकाल पड़।	१०. अभागा भाबर गया, वहाँ भी अकाल पड़ा।
११. हेलू का भागा ले मेलू पाका।	११. बिल्ली के भाग्य से छींका टूटा।

कुमाउंनी	हिन्दी
१२. हुन्यारी डाला का चलचला पात।	१२. होनहार बिरवान के होत चीकने पात।
१३. वीको त छिलुक जसो जागी रौ !	१३. उसकी तो मशाल सी जल रही है।
१४. अकाल धणियैं कि द्वी कापड़ि, सुकाल द्वीए कापड़ि ।	१४. अकाल में धनियाँ के दो टुकड़े, सुकाल में भी दो टुकड़े।

(ख) कर्म जन्मांतर संबंधी कहावतें—

भाग्य की प्रबलता को स्वीकार करने पर भी कहावतें मनुष्य को अकर्मण्य नहीं होने देतीं। भाग्य के भरोसे बैठे रहने वालों पर वे व्यंग्य करती हैं और कर्म के फल पर जोर देती हैं। अपने कर्म का फल सबको भोगना पड़ता है। अतः जन्मांतर संबंधी विश्वास इनमें व्यक्त होते हैं जैसा कि नीचे स्पष्ट होगा—

कुमाउंनी	हिन्दी
१. बिण आपूण मरि स्वर्ग नि देखीण ।	१. बिना अपने मरे स्वर्ग नहीं देखा जाता।
२. लेखनेर लेखि जानीं, मेटनेर को छ ?	२. लिखने वाले लिख जाते हैं, मिटाने वाला कोई नहीं।
३. उखल में खोर हालण, मुसलैल के डरण ?	३. ऊखल में सिर डाला, मूसल से क्या डरना ?
४. पुराण पातैल झरण, नयं पातैल लागण।	४. पुराना पत्ता झड़ेगा, नया पत्ता लगेगा।
५. धणियाक दाण में राइक दाण जोड़नेर।	५. धनियाँ के दाने में राई के दाने जोड़ने वाला।
६. देखि मैस के देखण, तापि घाम के तापण ?	६. देखा हुआ आदमी क्या देखना, तापा हुआ घाम क्या तापना ?
७. जैलि करि सकि, वीकि खेति, जैलि पढ़ि सकि, वीकि पोथि।	७. जो कर सके, उसकी खेती होती है। जो पढ़ सके, उसकी पुस्तक होती है।

(ग) दार्शनिकता संबंधी कहावतें—

इन कहावतों में किसी व्यापक लोक सत्य की व्यंजना होती है जैसे कि ये उदाहरण लिए जा सकते हैं—

कुमाउंनी	हिन्दी
१. चलि गे मुसल, हरै गे कुसल।	१. जहाँ मूसल चले वहाँ कुशल क्षेम समाप्त।
२. आपुणि आपुणि कै गे, चार दिन रै, ल्है गे।	२. अपनी अपनी कह गए, चार दिन रह कर चले गए।
३. रीस खवें आपुण मौ, बुद्धि खवें पराया मौ।	३, क्रोध अपने परिवार को उजाड़ता है। बुद्धि दूसरे के परिवार को उजाड़ती है।
४. धार में का जसा दिन, गल में जसो गास।	४. समाप्त होता जीवन, गले में अटके ग्रास जैसा।
५. पढ़ण बखतक धूँ, खाण बखतक कजी, हुई कुड़ जौ बजी।	५. पढ़ते समय धुआँ हो, खाते समय झगड़ा हो, तो फलता फूलता घर चौपट होता है।
६. अत्ति रुख्याल बोट छुटौ, अत्ति तैराक गाड़ बगौ।	६. वृक्ष पर चढ़ने में अति कुशल वृक्ष से गिरता है, तैरने में अति कुशल नदी में डूबता है।
७. एक सपक स्वाद, एक झलक संसार।	७. भोजन एक ग्रास से, संसार एक झलक से पहचाने जाते हैं।
८. जाग जाग कै दगड़ नि हुण, म्यार छै म्यार छै कै म्यार नि हुण।	८. रुको रुको कह कर साथ नहीं होता। मेरा है, मेरा है कह कर अपना नहीं होता।
९. लाट कैं सीप सिखै, सिखनै रै।	९. गूंगे को अकल सिखाई, सीखता ही रहा।
१०. तात्तै दूद न थुकीन, न घुटीन।	१०. गर्म दूध न उगलते बनता है, न निगलते।

कुमाउंनी	हिन्दी
११. त्वाप त्वाप कै छाँस, बीं बीं कै रास।	११. बूंद बूंद करके घड़ा भरता है।
१२. जैल गे विष्णु पद, वीकैं कुछ नै। जैल गे भगनौल, वीकैं रूपयाँक थैलि।	१२. जिसने भजन किया, उसे कुछ नहीं दिया। जिसने भगनौल गाया, उसे रुपयों की थैली दी।

३. ऐतिहासिक कहावतें—

इनमें स्थानीय इतिहास की प्राचीन घटनाएँ उल्लिखित हैं, जिनके साथ साथ अन्यान्य किंवदंतियां और जनश्रुतियां घुली मिली हैं। कुमाऊँ में अनेक जातियों ने राज्य किया और वीरों ने युद्ध किए। स्थानीय परिवर्तन होते रहे जिनका संकेत कहावतों में मिलता है। अतः ऐतिहासिक परंपरा की दृष्टि से इनका उपयोग हो सकता है। इतिहास की दृष्टि से ये महत्व रखती हैं।

ये कहावतें चार प्रकार की हैं--

(क) घटना, सूचक कहावतें,
(ख) व्यक्ति, जाति, बोधक कहावतें,
(ग) स्थानीय कहावतें,
(घ) राजवंश संबंधी कहावतें।

(क) घटना सूचक कहावतें--

इनके द्वारा प्राचीन इतिहास की घटनाओं पर प्रकाश पड़ता है, जिनका सदैव प्रामाणिक होना आवश्यक नहीं होता है। किसी छोटी सी घटना को विस्तार प्रदान करना लोक कल्पना का सहज गुण है जिसके दर्शन यहाँ भी होते हैं--

कुमाउंनी	हिन्दी
१. मरि गया जेंदा, जलै हालि बै, जस जसी सोर्याल कूंनी, तस तसी भै।	१. जेंदा किराल मर गया, उसकी वहीं जला दी गई। सोर वाले जैसा कहते हैं, वैसा ही हुआ।
२. जोगिक बाबुक कटक में के धरिया छी ?	२. जोगी के बाप का सेना में क्या रक्खा था ?

कुमाउंनी	हिन्दी
३. बरस भया अस्सी, बुद्धि गे नस्सी ।	३. अस्सी वर्ष की अवस्था हुई, बुद्धि नष्ट हो गई ।
४. हाटै की नालि क्वाटा, क्वाटा की नालि हाट ।	४. हाट की नाली कोटा भाबर तक, कोटा भाबर की नाली हाट तक ।
५. चार खँगे तितर चाखुड़, जिबालि पड़ा मुस भ्याकुड़ ।	५. चारा खा गए तीतर पक्षी, चूहे दानी में फँस गए चूहे ।
६. कौ लाटा काथ माथा, सुण काला तू । अनालेले घर मुसो, दौड़ डुना तू ।	६. ओ गूंगे तू कथा कह, ओ बहरे तू सुन । अंधे ने घर में चोरी की, अरे लँगड़े तू दौड़ ।

(ख) व्यक्ति, जाति बोधक कहावतें—

स्थानीय राज्य व्यवस्था में कुछ व्यक्तियों और जातियों ने महत्वपूर्ण योग दिया । विशेष कर पन्त और जोशी लोगों ने यहाँ की शासकीय नीतियाँ निर्धारित कीं । महर, फड़त्यालों के अतिरिक्त गैड़ा, बिष्ट, खाती आदि जातियों ने एकाधिक बार राजनैतिक उतार चढ़ाव में योग दिया । अतः लोक मानस उनका स्मरण करता है जैसा कि इन कहावतों से स्पष्ट होगा—

कुमाउंनी	हिन्दी
१. जो पन्त कौ, सबूँल करण, जो पन्त करौ, उ कैलै नी करण ।	१. जो पन्त कहे वह करना चाहिये । जो पन्त करे, वह किसी को नहीं करना चाहिये ।
२. देश खोयो घोसी ले, पहाड़ खोयो जोसी ले ।	२. देश खोया अहीर ने, पहाड़ खोया जोशी ने ।
३. पहाड़ में खाती, देश मे हाती ।	३. पहाड़ में खाती, देश में हाथी ।
४. त्वील निखै जाणि खीर, पुरखू लै नि लि सकि सीर ।	४. तूने खीर खाने का भेद नहीं जाना, पुरखू ने सीर लेने का भेद नहीं जाना ।
५. औन हरू हरपट्ट, जौन हरू-खरपट्ट ।	५. हरू के आने पर सब हरा भरा होता है, उसके जाने पर सब उजड़ जाता है ।

कुमाउंनी	हिन्दी
६. पहाड़ ॰ समान दाता नै, बिन जाँठि दिनेर नै ।	६. पर्वत वासी के समान दाता नहीं होता। वह भी बिना बाध्य किए नहीं देता ।
७. पहाड़ि की "नै" सौ रुपयाँ कि ।	७. पहाड़ी का "न" कहना सौ रुपये के बराबर है।

(ग) स्थानीय कहावतें—

ये कहावते ऐतिहासिक होने पर भी किसी स्थान विशेष में, अथवा उसके विषय में अधिक प्रचलित हैं और वहाँ की एकाधिक विशेषताओं का परिचय कराती हैं। कहीं इनके द्वारा प्राचीन प्रथा, परंपरा और जीवन पद्धति पर भी प्रकाश पड़ता है। कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं--

कुमाउंनी	हिन्दी
१. आदुक संसार,आदुक मुन्स्यार।	१. एक आधे में संसार, दूसरे आधे में मुन्स्यार-(जोहार) बसा हुआ है।
२. खत्याड़ी को साग, गंगोली को बाग।	२. खत्याड़ी की सब्जी, गंगोली का बाघ प्रसिद्ध हैं।
३. द्याप्त देखण जागसर, गंगा नाणीं बागसर।	३. देवता देखने हों तो जागेश्वर जाओ, गंगा स्नान करना हो तो बागेश्वर जाओ।
४. जोड़ी जोड़ी बेर की महरूड़ी।	४. जोड़ जोड़ कर महरूड़ी पट्टी बनाई गई।
५. सोरै की नालि कत्यूरिया माणो, ज्वे जै ठुलि, खसम जै नानो।	५. सोर की नाली (माप), कत्यूर का माणा (माप)। पत्नी है बड़ी, पति है छोटा।
६. नङ माथी मासु नै, झुनी माथी गौं नें।	६. नाखून के ऊपर मांस नहीं होता, झुनी के परे कुमाऊँ का कोई गाँव नहीं।

कुमाउंनी	हिन्दी
७. मासी फाँसि, भुड़ंग हार, चौखुटी नि छोड़ौ, मिलौ उधार।	७. मासी में रहना फांसी के बराबर, भुजाण गले का हार। चौखुटिया मत छोड़ना, वहाँ उधार मिलता है।
८. कुमैय्यां आपु कमैय्यां, औरन सूँ चुमैय्यां।	८. कुमूं वासी स्वयं अपने लिये परिश्रमी होते हैं, दूसरों के लिये कंजूस होते हैं।
९. दोफर तक माला, दोफर माथ चाला।	९. माला गांव वाले दोपहर तक मित्र होते हैं, दोपहर के बाद षड्यंत्र करने लगते हैं।

(घ) राज वंश सम्बन्धी कहावतें––

कुमाऊँ में कत्यूरी तथा चन्द वंशी राजाओं के अतिरिक्त गोरखा तथा अंगरेज लोगों का भी शासन रहा। उनके आचार–विचार एवं शासन-व्यवस्था लोक की दृष्टि से ओझल नहीं रहे। जन साधारण ने उनकी नीतियों पर कटाक्ष किया और कहावतें बना लीं। उदाहरण हैं––

कुमाउंनी	हिन्दी
१. आसन वाका सिंहासन वाका, वाका ब्रह्म, वाका लखन पुर।	१. उन्हीं का आसन था, उन्हीं का सिंहासन। उन्हीं का ब्रह्मपुर था, उन्हीं का लखन पुर।
२. बाँजा घट की भाग उघौनी, बांजी गौ को दूद छीनी। उलटी नाली भरी दिनीं, सुलटी बतै लीनी।	२. खाली पनचक्की से कर वसूल करते थे, बाँझ गाय का दूध माँगते थे। उलटी नाली भर कर अन्न देते थे, सीधी नाली भरकर वापस लेते थे।
३. को जाणौं गोरख्योल है रे।	३. कौन जानता है गोरखों जैसा अत्याचार हो रहा है।
४. नर शाही को मंगल।	४. नर शाही का मंगल।

४. स्थान विशेष संबंधी कहावतें—

ये कहावतें ऐतिहासिक आधार पर निर्मित न होकर किसी अन्य प्रसिद्धि के आधार पर बनी हैं। इनका विस्तार क्षेत्र ऐतिहासिक और स्थानीय कहावतों की अपेक्षा व्यापक होता है। इनमें या तो सामूहिक गुण के रूप में किसी स्थान विशेष का उल्लेख हुआ है अथवा किसी विशिष्ट नाम का उल्लेख करके वहाँ की विशेषता बतलाई गई है।

ये कहावतें दो प्रकार की हैं—

(क) शहर, पट्टी गाँव संबंधी कहावतें,

(ख) प्राकृतिक विशेषता संबंधी कहावतें।

(क) शहर, पट्टी, गाँव संबंधी कहावतें :—

कुमाउंनी	हिन्दी
१. चौगर्खियक जस ठाढ़ चन्नड़।	१. चौगर्खा निवासी की भाँति खड़ा चंदन लगाना।
२. पुनगिरि को जस थल हैरौ।	२. पुन्य गिरि की भाँति पवित्र स्थान है।
३. गंगोली को लाटो, द्वी बान खड़ी, एक बान आटो।	३. गंगोली का गूंगा, एक हिस्सा आटे में दो हिस्से खड़िया मिलाता है।
४. जागसर को टेड़ो बागसर।	४. जागेश्वर की विपरीत दिशा में बागेश्वर है।
५. अल्मौड़ियै कि पछाण, ढुंगक दिसाण।	५. अल्मोड़ा में रहने वाले की पहचान है—पत्थर को बिस्तर समझना।
६. ज़ाण नैपाल, खाण कपाल।	६. नेपाल जाने पर भाग्य से खाना मिलेगा।
७. आपुण देशक ढुंग लै चुपड़।	७. अपने देश का पत्थर भी प्यारा।
८. माल सिखूं चाल।	८. भावर जाने पर चालाकी आती है।
९. मुन्स्यारी को जसो बल्द।	९. मुन्स्यारी का जैसा बैल।

कुमाउंनी	हिन्दी
१०. कस कस खै, कस कस लगै, मरण बखत कपुअैल जागसरनै ।	१०. कैसा कैसा खाया, कैसा कैसा पहना । मरते समय कपुआ नहाने के लिये जागेश्वर पहुंचा ।
११. पार गाड़ा का रौत, खाण बखत खुश हुनि, दिण बखत मौत ।	११. नदी पार के रावत खाते सयय तो बड़ खुश होते हैं, देते समय जान निकलती है ।

(ख) प्राकृतिक विशेषता संबंधी कहावतें—

कुमाउंनी	हिन्दी
१. कालि हुं जनार नै, स्वर्ग सुँ ठंङार नै ।	१. काली नदी पार करने का कोई रास्ता नहीं, स्वर्ग जाने की कोई सीढ़ी नहीं ।
२. काली नायो भालू खायो ।	२. काली में स्नान करना और भालू के द्वारा खाया जाना दोनों बराबर हैं ।
३. क्वे गंगा नौ आपुँ हुणि, क्वे गध्यारा नौ त आपु हुणि ।	३. कोई गंगा नहाये तो अपने लिए, कोई गधेरा नहाये तो अपने लिए ।
४. दुब जस पंगुरिया, बिरुड़ जस हुङरिया ।	४. दूब की भाँति फैलना, बिरुड़ की भांति अंकुरित होना ।
५. स्यालै की जसि बुधि, स्यूंक जस तराण, दुबै जसि जड़, धरती जस छाड़, अगास जस ऊंच ।	५. सियार की तरह बुद्धि, सिंह का जैसा बल, दूब की जैसी जड़, धरती का जैसा विस्तार, आकाश की तरह ऊँचाई ।
६. आड़ू, बेड़ू, घिंघारू एक बटि रईं ।	६. एक ही थैली के चट्टे बट्टे ।
७. गाड़ को छालो, धुर को पालो ।	७. नदी तट और चोटी की उपज, किसी की संपत्ति नहीं ।

कुमाउंनी	हिन्दी
८. तुस्यारै कड़ कड़ घाम औण तक।	८. ओस का घमंड धूप आने तक।

५. नीति उपदेश प्रधान कहावतें—

इन कहावतों के द्वारा प्रत्यक्ष रूप में नैतिक उपदेश दिए जाते हैं। कहीं व्यवहार कुशल व्यक्ति का गुणगान मिलता है तो कहीं समृद्धि के उपाय बताए गए हैं। कही शक्तिमान की प्रशंसा है, तो कहीं चतुराई और सतर्कता पर जोर दिया है। चूंकि कहावतों की रचना मानव के स्थूल और सूक्ष्म दोनों पक्षों का ध्यान रखकर की जाती है, अतः वे संचित ज्ञान का अपूर्व भंडार बन जाती हैं। इस वर्ग की कहावतें नीचे दी जा रही हैं—

कुमाउंनी	हिन्दी
१. जाँ स्यूड़ नि अटान वां के सावल अटाँछ?	१. जहाँ सुई नहीं घुसती, वहाँ सब्बल क्या घुसेगा ?
२. काच काठ न्यूड़ि जाँ, सुकौ नै।	२. कच्ची लकड़ी लचक सकती है, सूखी नहीं।
३. मारि बोलि, लागि गोलि।	३. बोली मारना गोल लगने के बराबर है।
४. छाँ पि बेर तीस नि जानि।	४. मट्ठा पीने से प्यास नहीं बुझती।
५. लुवक काव लू, स्वारक काव स्वार।	५. लोहे का शत्रु लोहा, बिरादर का शत्रु बिरादर।
६. जाण न पछ्याण, झट् अंग्वाल।	६. जान पहिचान नहीं, झट से गले में हाथ।
७. च्यल बड़ौ आपुण घर, डबल पराया घर।	७. पुत्र अपने घर बढ़ता है, पैसा दूसरे के घर।
८. गास दिण, वास नै।	८. भोजन दे दो, पर स्थान नहीं।
९. सौ बात कूंणि, लेखणि एक नै।	९. सौ बात कहना, लिखना एक नहीं।
१०. मास खाण, हड़ि गल नि बादण।	१०. मांस खाओ, हड्डी गले में मत बांधो।

कुमाउंनीं	हिन्दी
११. मुखक सदभौ छोड़िये झन, पेटै कि गांठ खोलिये झन ।	११. मुख का सद्‌भाव छोड़ना मत, पेट का रहस्य खोलना मत ।
१२. डाल मुंणि से जाण, जाल मुणि नैं ।	१२. डलिया के नीचे भले ही सो जाओ, आले के नीचे मत सोओ ।
१३. तु बेत भरि न्यूड़लै, त मैं हाथ भरि ।	१३. तू बित्ता भर झुकेगा, मैं हाथ भर झुकूंगा ।
१४. झिमौड़ाक पूव में हात खितण ।	१४. बर्र के छत्ते में हाथ डालना ।
१५. सिकि बेर सयाण, पढ़ि बेर पंडित ।	१५. सीख कर सयाना, पढ़कर पंडित होता है ।

६. **हास्य व्यंग्य प्रधान कहावतें--**

यथार्थ जीवन से उत्पन्न होने के कारण इन कहावतों में हास्य और व्यंग्य की प्रचुरता है । व्यंग्य अधिक है क्योंकि इनके रचयिता, जीवन जगत् के अप्रिय लगने वाले पक्षों पर निर्मम प्रहार करते हैं । कुछ उदाहरण हैं--

कुमाउंनी	हिन्दी
१. नौ जागा रैं टुटि, न कमर नैं पुठि ।	१. नौ स्थानों पर अकड़े रहे, न कमर न पीठ ।
२. कौवा खाण मन ऐ, तित्तर बत्तै ।	२. कौवा खाने का मन हुआ तीतर बताया ।
३. यो द्याप्तक क्वे नि भै, म्यरै आङ. ऐ ।	३. इस देवता का कोई नहीं हुआ, मेरे ही शरीर पर उतरा ।
४. सुङण हुणि जै दी, नेलि जै भैंट ।	४. सूंघने के लिये दिया गया, निगल गया ।
५. सुवा है सुवाक जोली प्यार ।	५. प्रेमी की अपेक्षा प्रेमी का दूत प्रिय ।
६. छै मैंण ध्यू का कुप्पी में हाल, रूखक रूख ।	६. छ महीने घी के बर्तन में रक्खा, रूखा ही निकला ।

७. तु खालि छै, म्यर बहड़ कन्या।	७. तू खाली बैठा है, मेरे बछड़े को खुजला।
८. जैक दगाड़ा पारबती, उई महादेव।	८. जिसके साथ पार्वती हैं, वही महादेव।
९. बासि मी कणि मिलन नैं, साजि मी कणि पचन नैं।	९. बासी भोजन मुझे मिलता नहीं, ताजा भोजन मुझे पचता नहीं।
१० झुठि ऊ बलानेर नि भै, साँचि ऊ कुनेर नि भैं।	१०. झूठ वह बोलता नहीं, सच वह कहता नहीं।
११. जाँ तक भटैंल पाग बाँधि, वाँ-तक पैंठें उठ।	११. जब तक वीर ने पगड़ी बाँधी, बाजार ही उठ गया।
१२. लोटनेर छ्यूं, त्यरो ढ्यस लाग।	१२. गिरने वाला ही था कि तेरा धक्का लग गया।
१३. त्यर ब्या करूंल, सौ बरस में।	१३. तेरा विवाह करूंगा, सौ वर्ष में।
१४. माई भिच्छा जै नि दे, कुकुर कणि थाम।	१४. भिक्षा चाहे मत दो, अपने कुत्ते को पकड़ो।
१५. सौ का आठ, आधा की नाठ, दस द्यूंल, दस देऊँल, दसक के लिण दिण।	१५. सौ के साठ रहे, साठ के आधे हुए, दस दूंगा, दस दिलाउँगा। बाकी दस का क्या लेना देना?
१६. रावण रूँ आपुं हुणि, हनुमान रूँ आपुँ हुणि।	१६. रावण रोता है अपने लिये, हनुमान रोता है अपने लिये।
१७. चार आदिमि म्यार मुख मलासौ, तव मंगल गूँल।	१७. चार आदमी मेरा मुख मलो, तब मंगल गाऊंगी।

कभी ऐसी कहावतों के पीछे मनोरंजक चुटकुले भी सुनाए जाते हैं, जो कहावतों की उपयोगिता पर प्रकाश डालते हैं। जैसे एक कहावत है—

"काँन में धनुष हाथ में बांण, काँ बटि आया दिल्ली सुलतान।
वन का राव विकट को रांण, आँखिर ठुल कणि ठुलैं पछ्याण।।"

इसकी व्याख्या करते हुए यह चुटकुला सुनाया जाता है—

एक सियार और कोई हल लेकर जाता हुआ किसान एकाएक खेत के मोड़ पर

मिले। दोनों एक दूसरे को देखकर भयभीत हो उठे। सियार ने चापलूसी करने के लिये उससे कहा—"कंधे में धनुष हाथ में बाण लेकर दिल्ली के सुलतान, आप कहाँ से आ रहे हैं ? "हल वाला उसको बाघ समझ रहा था। उसने उत्तर दिया- "ए जंगल के राजा! तुम बड़े विकट हो। "इतना कह कर दोनों बिना किसी को हानि पहुँचाए अपने अपने मार्ग पर चले गए।

तब किसी ने इस पर टिप्पणी की--आखिर बड़े को बड़ा ही पहचानता है।

इस प्रकार की व्याख्या करने से कहावतें सटीक हो जाती हैं। हास्य में कोई स्थिति अथवा मूर्खतापूर्ण कार्य उक्ति का लक्ष्य बनते हैं जिनका उद्देश्य केवल मनोरंजन करना होता है। इसके विपरीत व्यंग्य साभिप्राय होता है। इसमें सुधार की भावना रहती है।

जैसे यह कहावत है--

दइ कि ठेकि पाला घर, पैंलाग वाला घर।"

पहाड़ों में यह प्रथा है कि जब कोई व्यक्ति दूसरे के घर मिलने के लिये जाएगा तो खाली हाथ नहीं जाएगा। इसलिए ग्रामीण लोग प्रायः दही ले जाते हैं और एक दूसरे से भेंट करते हैं। यहाँ उस व्यक्ति पर व्यंग्य किया गया है जो दही तो दूसरे के घर रख आता है और प्रणाम इस घर में आकर करता है।

इसी प्रकार की अन्य कहावतें हैं—

कुमाउंनी	हिन्दी
१. गाजल हराण, सिंदूर हराण, तवा को मोस फौराण।	१. काजल नहीं, सिंदूर नहीं, तवे की कालिख लगाकर इतराते हैं।
२. जब बाग बाकर लिगे, तब दुल हालण सिख।	२. आग लगने पर पानी को दौड़ना।
३. सारि रमैण सुणि, पुछण लागि राम राकस, या रावण राकस?	३. सारी रामायण सुनी, पूछने लगे राम राक्षस थे या रावण?
४. तितर फँसा, चाखुड़ फँसा, तुम के फँसा कउवा। धूमस धामस देखी हम लै फसां भउवा।	४. तीतर फँसे, चाखुड़ फँसे, तुम कैसे फ़ँसे कउवा? अरे बालक, धूम धाम देखकर मैं भी फँस गया।

कुमाउंनी	हिन्दी
५. हुँई मरिगे , हुणै की आस।	५. जन्म लेने वाला मर गया, होने वाले की आशा है।
६. भौत चाणैल घरै कि ज्वे लग नक देखीं।	६. रोज देखने पर अपनी पत्नी भी बुरी लगने लगती है।
७. मुसाक डहा ल कुड़ि आग हाल दी।	७. चूहों से चिढ़ कर घर में आग लगा दी।
८. जेब में घड़ी, हाथ में छड़ी, पछिन बै हड़ि।	८. बजे में घड़ी, हाथ में छड़ी, पीछे से कुत्ता।
९. माघ बाछि ल्हीगै, फागुण द्वार ढकौ।	९. माघ में बछिया ले गया, फागुन में द्वार ढके।
१०. घ्यू ढोलींण खिचड़ि में।	१०. घी गिरा तो खिचड़ी में।
११. लोटि जै पड़यूँ, वाई सज ऐंगे।	११. जहाँ गिर गया, वहीं आराम मिल गया।

७. कृषि, वर्षा आदि संबंधी कहावतें—

कुमाऊँ में इस वर्ग की कहावतें तीन प्रकार की मानी जा सकती हैं—

(क) कृषि संबंधी कहावतें,

(ख) वर्षा संबंधी कहावतें,

(ग) ऋतु संबंधी कहावतें।

(क) कृषि संबंधी कहावतें—

कुमाउंनी	हिन्दी
१. खेती मल लिबेर, राजा बल लिबेर।	१. खेती खाद से होती है। राजा शक्ति से बनता है।
२. बासमती ख्वारा में, या स्यारा में।	२. बासमती भाग्य से मिलती है या खेत में होती है।
३. गुसैं को चाइयो भल, हलिया को बाइयो नक।	३. स्वामी का देखा खेत ठीक है, हलिया का बोया ठीक नहीं है।

कुमाउंनी	हिन्दी
४. मड़ु फोकि आफि देखीं ।	४. बिखरा हुआ मडुआ अपने आप दिखाई देता है ।
५. धान पधान, मडु राज, ग्यूँ गुलाम ।	५. धान प्रधान है, मडुआ राजा है, गेहूँ गुलाम है ।
६. कुलि में का धान, तू राणि में पधान, निमड़ि गै धान, तू राँड में भाँड।	६. धान ठीक हुआ तो तू रानी में प्रधान, धान समाप्त हो गया तो तू राँड में भाँड़ ।
७. हालि हाल, जू माल हलौन, परसा का सेत, हलिया बमौर खेत, बल्दा गोरु का पेट ।	७. हाल गरम करने आग में डाल दी है, जुआ भाबर से मंगाया है । डंडे गोबर की खाद में डाल दिये हैं । हल चलाने वाला बमौर खेत में है । और बैल भी अभी गाय के पेट में है ।
८. सिनालुक पिनालु, पिनालुक पापड़ ।	८. असावधानी से खेत बिगड़ जाता है ।
९. मड़ुवा राज, जब द्यखौ तब ताज ।	९. मडुवा राजा, जब देखो तब ताजा ।

(ख) वर्षा संबंधी कहावतें–

कुमाउंनी	हिन्दी
१. बरखा लि बेर घस्यार, आग लिबेर रस्यार ।	१. घसियारे के लिए वर्षा, और रसोइये के लिए आग ।
२. मेघ बरसण, राजक हिटण क्वे नि देखण ।	२. बादल का बरसना, राजा का चलना कोई नहीं देखता ।
३. बरखा ह्युं, त सँभालौ ग्यूं ।	३. ओले पड़े तो खेत बचाओ ।
४. ह्यूंन हिमाल, माल बसकाव ।	४. शीत ऋतु में वर्षा आती है हिमानी शिखरों (उत्तर) से, वर्षा ऋतु में वर्षा आती है भाबर (दक्षिण) से ।

कुमाउंनी	हिन्दी
(ग) ऋतु संबंधी कहावतें–	
१. चौमास को जर, राजा को कर।	१. चातुर्मास का ज्वर, राजा का कर दोनों कष्ट देते हैं।
२. जेठै जसि कैरूँ, पूसै जसि पालङ।	२. जेठ में करूवा, पूस में पालक खूब फलते हैं।
३. कार्तिका म्हैण काँस नि फुल, त्वी फुलै।	३. कार्तिक के महीने काँस नहीं फूला, तू ही फूल गया।
४. ह्यूं पड़ो पूस, ग्यूंनै की पड़ि धूस, ह्यं पड़ो मा, ग्यूं धरूँ कां?	४. पूस में बर्फ पड़ी, गेहूं नष्ट हो गया। माघ में बर्फ पड़ी, गेहूं रखने की जगह नहीं।
५. मा मुचि मौनि, फागुण मुचि गै, चैत मुचि बनरा, त फल टिपि टिपि खै।	५. माघ में मधु मक्खी से, फागुन में गाय से, चैत में बंदरों से बचने पर फल तोड़ तोड़ कर खाओ।
६. सोल सराद, नौ नौर्त, दस दसैं, बिसी बगवाल स्वी विसुँग फुलि भंग्वाल, चलि कुमय्यां अपनी माल।	६. श्राद्ध, नवरात्रि, दीपावली बीत गए। सुई– विसुंग में भाँग फूल गई। अब कुमय्यां अपने भाबर को चले।

८. जीव जन्तु संबंधी कहावतें—

इस वर्ग के अंतर्गत कहावतें पशु–पक्षियों, कीट पतंगों तथा क्षुद्र जीव जन्तुओं पर आधारित हैं—

कुमाउंनी	हिन्दी
१. एक त वानरै रुख्याल, फिर ठाङरै दि दी।	१. बंदर पेड़ पर चढ़ता है, उसे सहारा और दे दिया।
२. गोरु ब्याण, बहड़ नौराण।	२. ब्याई गाय, कराहने लगा बछड़ा।
३. मुसान किणि हल लगै।	३. चूहों को हल में जोता।

कुमाउंनी	हिन्दी
४. काठक विराउ बणौं, म्याँ को करौं।	४. काठ की बिल्ली बनाई, म्यांउ कौन करेगा ?
५. हड़ि हड़ि कै पलि गे, यू यू कै वलि ऐ ।	५. कुत्ता हट् हट् कहा तो उधर गया, यू यू कहा तो इधर आया।
६. स्यालक सिकार हुणि स्यूंक समान चैं ।	६. सियार को मारने के लिये सिंह का सामान चाहिये ।
७. सौंणक म्हैंण जस जती।	७. सावन के महीने जैसा भैंसा ।
८. जाँ अत्ती बिराउ, वाँ मुस नि मरन।	८. जहाँ बहुत बिल्लियाँ हों, वहाँ चूहे नहीं मरते ।
९. गुणी आपण पुछड़ नान देखौं।	९. लंगूर अपनी पूँछ को छोटी समझता है।
१०. कुकुर कैं घानि लगै दुनियाँल देखौ, मुस कैं घानि लगै दुल पणसीण।	१०. कुत्ते को घंटी बांधी, सबने जाना। चूहे को घंटी बाँधी, बिल में घुसा।
११. 'गुसैं कि देलि बढ़ौ, म्यर गास बढ़ौ, गुसैं का आँख फूटना, मैं चोरि करि खान्यूं।	११. स्वामी की समृद्धि हो, मेरा ग्रास बढ़े (कुत्ता)। स्वामी की आँख फूटे, मैं चोरी कर खाती (बिल्ली)।
१२. बाग हुणि के दुन के बिनार ?	१२. बाघ के लिये क्या दुधारु, क्या बाँझ?
१३. बाग गोठ है बाकर लिगो, यो फिक्र नै, बाग गोठ पलिगो यो फिकर छ।	१३. बाघ गोठ से बकरी ले गया चिन्ता नहीं, बाघ गोठ से परच गया, यह चिन्ता है ।
१४. गोरु मरौ त मर, बाछ मरौ त मर, सेर भरि दूद दि जाइ कर।	१४. गाय मरे तो मरे, बछड़ा मरे तो मरे, सेर भर दूध दे जाया कर।

कुमाउंनी	हिन्दी
१५. टिट्यां जसा खुटा अगासै लगै राखा।	१५. टिटहरी जैसे पैर आकाश की ओर फैलाए रखे।
१६. एकार एकारै करौली जस के बासनौ छै।	१६. अकेले अकेले 'करौली' (पक्षी) जैसा क्या चहकता है।
१७. जब गै भ्योल पड़ैं तब गुसैं मुख चैं।	१७. गाय जब खड्ड में गिरती है, तो अपने स्वामी का मुहँ देखती है।
१८. माछै की मछ्योल ध्वे बेर नि जानी।	१८. मछली की गंध धोकर दूर नहीं होती।
१९. कितौल ताणि ताणि मर, स्याप जतुक नी हो।	१९. केंचुवा जितना ही तने, साँप नही बन सकता।
२०. झिमौड़ क पूव में हाथ हालण।	२०. बर्र के छत्ते में हाथ डालना।
२१. बिना भेद किड़ा नी झड़न।	२१. बिना रहस्य जाने कीड़े नहीं झड़ते।
२२. कब कौ कड़ाल, कब रात ब्यालि।	२२. कब कौवा बोलेगा, कब रात बीतेगी ?
२३. तित्तिराक मुखै कि लछिमि।	२३. तीतर के मुंह की लक्ष्मी।
२४. बान बानै बल्द हराण।	२४. बोते बोते बैल खो गया।

इस प्रकार स्थानीय कहावतों में जीवन की गहरी अनुभूतियाँ अत्यन्त स्वाभाविक रूप से व्यक्त कर दी गई है। आलंकारिक शैली में व्यक्त होने के कारण ये अभिव्यक्ति को प्राणवान बनाती हैं। विस्तार पूर्वक समझाने पर भी जो बात कहना कठिन होता है उसे उदाहरणों द्वारा स्पष्ट कर दिया गया है क्योंकि इन कहावतों में अभिधेयार्थ गौण है, व्यंजना प्रमुख है। ये सचमुच मानवी ज्ञान के घनीभूत रत्न हैं जिन्हें बुद्धि और अनुभव की किरणें अनन्त ज्योति प्रदान करती हैं। इस दृष्टि से कुमाउंनी कहावतें अन्य जनपदीय कहावतों से पर्याप्त साम्य रखती हैं।

१२. कुमाउंनी पहेलियाँ

विशेषताएँ--

कुमाऊँ में पहेलियाँ अथवा बुझौवल 'आहण' अथवा 'आण' (आभाणक) नाम से प्रसिद्ध हैं। पहेली पूछने के लिये 'आण हालण' का प्रयोग किया जाता है। बालक और वृद्ध समान रूप से पहेली पूछ कर श्रोता से युक्तियुक्त उत्तर की अपेक्षा करते हैं। संस्कृत का 'आभाणक' शब्द प्राकृत में 'आहाणय' होकर भारतीय भाषाओं में 'अखाणा' (पंजाबी), 'उखाणु' (गुजराती), 'ओखाणो' (राजस्थानी), और 'पखाणा' (गढ़वाली) हो जाता है, जो कहावत के अर्थ में प्रयुक्त होता है। कुमाउंनी में यह शब्द पहेली के अर्थ में रूढ़ हो गया है।

१. ये पहेलियाँ जन साधारण के लिये मनोविनोद के साधन हैं। सामान्य रूप बालक इनका उपयोग करते हैं जिनका उद्‌देश्य उत्तर प्रत्युत्तर द्वारा अपनी श्रेष्ठता सिद्ध करना होता है। पहेलियों में जिस वर्ण्य वस्तु के गुण, रूप, रंग, आकार प्रकार, उपयोग अथवा स्वभाव के विषय में श्लेषमूलक संकेत रहता है, उसी को पकड़ कर अर्थ की कल्पना की जाती है।

जैसे एक पहेली है—

"छुं में काव पट्‌ट, टाँक सुकील" (देखने में काला हूँ, किन्तु नोक सफेद है)।

इसे सुनकर बालक अपनी कल्पना के आधार पर अनुमान लगाते हैं कि ऐसी कौन कौन सी वस्तुएँ हो सकती हैं? इसी बीच कोई उत्तर दे बैठता है 'मुसव' (मूसल) तो इस वस्तु का चिर परिचित होना पहेली को बुद्धि विलास में बदल देता है। मूसल की लकड़ी काली होती है किन्तु उसकी नोक सफेद होती है जिससे अनाज कूटते हैं। इस उत्तर से पहेली की सार्थकता सिद्ध हो जाती है।

इन पहेलियों के अंतर्गत प्रायः वही वस्तुएँ निर्दिष्ट रहती हैं जिनका ग्रामीण वातावरण एवं जन जीवन से घनिष्ठ संबंध हुआ करता है। जीवन स्तर के अनुकूल ये वस्तुएँ चुनी जाती हैं। इनमें बहुधा प्रयुक्त वस्तुएँ हैं—

'ज्वात' (जूता), पूरी, दाँत, तवा, 'घाघर' (घाघरा), चिट्‌ठी, तराजू,

'रिखू' (गन्ना), 'बल्द' (बैल), आँख, 'गागर' (घड़ा), 'मांस' (उड़द), 'स्यूड़ धाग', ('सुई धागा',) दही,' घर, रोटी, प्याज, तारे, 'स्याप', (सांप) हींग, 'गिगाज' (केकड़ा), मुरगी, 'जुनाल', (भुट्टा), 'क्थाव' (केला), 'बुरूँश' (एक-फूल), चावल, पानी, 'पिस्यू, थैल', (आटे की थैलीं), 'चावण' (चलनी), 'किलमोड़ा' (फल), शंख, तलवार, 'माछ' (मछली), 'सुप' (सूप), आम, नाड़ी, 'जूं', आम, उखव (ऊखल), कुल्हाड़ी, छाता, द्वार (दरवाजा), 'ह्‌वाक्क',(हुक्का), 'लंफू',(लैंप),'सिसूंण'(बिच्छू घास'), 'स्यूंत'(चीड़ का बीज) उस्तरा, छाता, बंदूक, 'निमूं' (नीबू) 'ग्वाव' (चरवाहा), 'नड.' (नाखून), 'कुल' (गूल), 'ताइ कुच्वी' (ताला चाभी)' 'ज्वाक' (जोंक), बाँस, घास, 'नौटि' (नाभी), 'दिय' (दीपक), बड़ा, गोदना, राई', 'छाँ' (मट्‌ठा), बल्ली, धुआँ, पत्तल, आरसी, नाक, नारंगी, घड़ी, पान, काजल, 'लगड़' (मीठी पूरी), 'भिकन' (मेंढक), 'छिपड' (छिपकली), 'कसिणी' (छोटा घड़ा), 'उपन' (पिस्सू), 'सौल' (साही), 'किरमोव', (चींटी), 'थौण' (थन) चीता, 'घट' (पनचक्की), मिर्च, ढोल, 'दि सलै' (दिया सलाई), कलम, 'ज्योड़' (रस्सी), 'हलौ' (किसान), बैल, 'काफल' (फल), होंठ, सूर्य चाँद, 'नीन' (नींद) 'मुल' (मूली), चीड़, 'पुरपुतई' (तितली), चरखा; 'दाड़िम', 'लूण' (नमक), मोटर, 'चुल' (चूल्हा), सींग, सुपारी, गोला, आदि।

२. इन वस्तुओं में प्रायः वही परिगणित हुई हैं जो निवासियों के दैनिक कार्य और संपर्क में आती हैं ये वस्तुएं ग्रामीण, जीवन स्तर के अनुकूल होती हैं। जैसे इनमें उस्तरा मिलेगा, किन्तु ब्लेड नहीं मिलेगा। मडुवा मिलेगा, किन्तु गेहूं नहीं मिलेगा। रोटी मिलेगी, किन्तु मिठाई नहीं मिलेगी। काजल मिलेगा, किन्तु पाउडर नहीं मिलेगा।

नई सभ्यता के संपर्क में आने से जिन नवीन वस्तुओं का ग्रामों में प्रवेश हुआ है, उन पर भी इस प्रकार से पहेलियाँ बन गई हैं--

(१) "सौ घ्वाड़क यक्कै सवार" (सौ घोड़ों का एक सवार)।
उत्तर—सौ नये पैसों का एक रुपया।

(२) मुल कस टुकुड़, दइ जस रंग' (मूली की तरह टुकड़ा, दही का जैसा रंग)।
वतूं छै वता अन्तर हिट म्यारा संग"। (बताते हो तो बताओ, नहीं मेरे संग चलो)।

उत्तर=चाँदी का रुपया ।

३. कुमाउंनी पहेलियों में अप्रस्तुत के मूर्त्त वर्णन द्वारा वास्तविक वस्तु का संकेत कराया जाता है। यह संकेत जब सांगोपांग नहीं होता तो पहेली निश्चयात्मक नहीं रहती । इसी कारण एक ही वस्तु का बोध कराने के लिए एकाधिक पहेलियाँ प्रचलित हो जाती हैं । जैसे--

'लाल बाकर पाणि पी बेर ऐगो, (लाल बकरी पानी पीकर आ गई) ।

"सफेद बाकर पाणि पिण हुंणि जाणौ", (सफेद बकरी पानी पीने जाती है) ।

उत्तर=पूरी

यहाँ पर लाल बकरी तली हुई पूरियों के लिये, पानी तेल या घी के लिये और सफेद बकरी कच्ची पूरी के लिये उपमान रूप में प्रयुक्त हुई हैं।

कभी कभी अप्रस्तुत द्वारा संकेतित चित्र सांगोपांग नहीं होता। तब एक ही वस्तु पर एकाधिक पहेलियाँ बनती हैं--

(१) मुणि छ कौणी, माथि लागी नौणि ।" (नीचे भूसा है, ऊपर मक्खन है)—

उत्तर=पनचक्की

(२) "भाँ भाँ करणीं भोकरी छ, आसण बादी जोगी छ । (भायं भायं करती भोकरी है, आसन बाँधे जोगी है) ।

उत्तर=पनचक्की

(३) "जतुक दिछा उतुक खाँछ, नि लै दिना निलै खांछ ।" (जितना देते हो उतना खाता है, नहीं देते हो तो नहीं भी खाता) ।

उत्तर=पनचक्की

तीनों पहेलियों का उत्तर पनचक्की है जिसे कुमाउंनी 'घट' अथवा 'घराट' कहते हैं । इनकी अप्रस्तुत योजना अपने में पूर्ण है किंतु उनके द्वारा अभीष्ट वस्तु का संकेत अपूर्ण मिलता है। पहली पहेली में 'भूसा' और 'मक्खन' के द्वारा

पनचक्की का स्पष्ट संकेत नहीं मिलता। दूसरी पहेली में 'भोंकरी' एक छोटा सा बिगुल जैसा वाद्य है, जिससे भायं, भायं ध्वनि निकलती है। जोगी भभूत रमा कर आसन पर बैठता है, पनचक्की वैसी ही आवाज करती है। और आटे से उसी प्रकार आवृत्त रहती है जिस प्रकार राख से जोगी ढका रहता है। तीसरी पहेली भी इसी प्रकार चक्की का अस्पष्ट संकेत देती है।

४. फिर भी पहेलियों का यह अस्पष्ट संकेत इतना दूरारूढ़ नहीं होता कि उनका अर्थ ही न लगाया जा सके। कुछ पहेलियों का अनेक स्थानों पर एक ही रूप तथा एक ही अर्थ में प्रयोग मिलता है। दांत, आँख, उड़द आदि पर बनी पहेलियों की अप्रस्तुत योजना एक जैसी है--

(१) "पार भिड़ सुकीली बर्यात जाणै।" (दीवाल के उधर सफेद बारात जाती है)।

उत्तर—दाँत

(२) "नानि नानि बामणि ढ्यंग में चन्नण।" (छोटी छोटी ब्राह्मणी जिसकी पसली में चन्दन)।

उत्तर—उरद की दाल

(३) "पार द्वी नौव डबडबान हैं रईं।" (उस ओर दो सरोवर लबालब भरे हैं)

उत्तर—आँख

कुछ पहेलियों में सामाजिक और पौराणिक संकेत मिलते हैं। जैसे ये उदाहरण हैं—

"आठ खुट, नौ आँख, द्वी पुछाड़, ख्वार चार," (आठ पैर हैं, नौ नेत्र हैं, दो पूंछ हैं, चार सिर हैं)

द्वी बैंग, एक स्यैणि, तींन एक पर सवार।" (दो पुरुष, एक स्त्री, तीनों एक पर सवार हैं)।

उत्तर—सर्प सहित नन्दी पर सवार शिव पार्वती

"बारात गे, वर मर, कन्या भई सुहाग।" (बारात गई, वर मरा, कन्या सुहागिन हुई)

"कन्या पिता खुश भै, बारात र्‌वैण लागी।" (कन्या के पिता प्रसन्न हुए, बारात रोने लगी)।

उत्तर—धनुष यज्ञ

५. कुमाउंनी पहेलियों का उद्देश्य यद्यपि मनोरंजन करना ही रहता है किन्तु जातीय धरातलों एवं मनोवृत्तियों की दृष्टि से भी ये महत्त्वपूर्ण हैं। इनके माध्यम से प्रतीकात्मक रूप में यौन भावनाओं की अभिव्यक्ति हो जाती है। 'केला,' 'जूता,' 'गोला,' 'भुट्टा' आदि वस्तुओं पर बनी पहेलियों में यह तथ्य विशेष उभरता है क्योंकि श्लेष के बल पर उनके दो दो अर्थ निकलते हैं।

हास्य इनमें सर्वत्र उपस्थित रहता है। किन्तु मुख्य भाव आश्चर्य और विस्मय का है जिसमें असंबद्ध शब्द योजना सहायक होती है। जैसे एक पहेली में कहा गया है कि एक पंख वाली चिड़िया केदार गई। केदार से एक पंख वाली चिड़िया घर आई—

"एक पखी चड़ केदार गयो, केदारक घर आयो।"

यहाँ पक्षी का एक पंख वाला होना आश्चर्यजनक है। फिर भी पहेली का उत्तर 'चिटठी' है। एक अन्य पहेली में कहते हैं—

"खुट काटि बेर भीं में धरिगे, आपु बोट में गे।" (पर काट कर जमींन में रक्खे, स्वंय पेड़ पर चढ़ें)। पैर काट कर जमीन पर चढ़ना असम्भव है, किन्तु पहेली 'जूते' पर बनी है।

इसी प्रकार केले पर एक पहेली सुनाई जातीं है—

"बोट धमरधुस पात चकइया,
देखणक रंग चंग खाणक मिठइया।" (मोटा हैं पेड़, चौड़े हैं पत्ते, देखने में रंगीला है, खाने में मीठा)।

उत्तर—क्याव (केला)

अप्रस्तुत योजना में मूर्त्त तथा अमूर्त्त पदार्थों पर तो ध्यान दिया जाता ही है, इसके अतिरिक्त क्रिया विशेष का भी अनुकूल प्रयोग किया जाता है। जैसे 'द्वार' पर एक पहेली प्रचलित है—

"तू हिट मैं औनूं।" (तू चल, मैं आता हूँ)।

अर्थ स्पष्ट है क्योंकि एक द्वार दूसरे द्वार से पहले लगाया जाता है।

वर्गीकरण—

कुमाऊं में भोजन पदार्थों पर तथा घरेलू पदार्थों पर सर्वाधिक पहेलियाँ मिलती हैं। मनुष्य और उसके स्वभाव पर भी पहेलियाँ बनी हैं किन्तु व्यवसाय सम्बन्धी पहेलियाँ नहीं हैं।

इन्हें मुख्यत: सात वर्गों में रख सकते हैं—

(१) भोज्य पदार्थ सम्बन्धी,
(२) घरेलू वस्तु सम्बन्धी,
(३) जीव जन्तु सम्बन्धी,
(४) प्रकृति सम्बन्धी,
(५) अंग प्रत्यंग सम्बन्धी,
(६) सामान्य पहेलियाँ,
(७) खेती सम्बन्धी पहेलियाँ।

इनके मुख्य उदाहरण दिये जाते हैं—

१. भोज्य पदार्थ संबंधी पहेलियाँ—

१. "ठेकि में ठेकि, बीच में भैंगे पिरमू नेगी"।	१. बरतन पर बरतन, बीच में बैठा पिरमू नेगी।

उत्तर=रिखु (गन्ना)

२. "बेत सवा बेत को ऊ, बावूँ को भेड़िया ऊ, तू झन समजिये ऊ"।	२. वह बित्ते सवा बित्ते का है, बालों से लिपटा हुआ है। तू उसे वह मत समझना।

उत्तर=जुनल (भुट्टा)

३. "एक चड़ि बुट्टदार, जैका च्वाथ नौ हजार"।	३. एक बुट्टेदार चिड़िया के नौ हजार बच्चे।

उत्तर=माछ (मछली)

४. भल मैंसै की चेलि बतूनि, कलजा मँ बाव"।	४. भले आदमी की कन्या बताते हैं, कलेजे में बाल हैं।

उत्तर=आम

५. "लाल बटू डबल भरी।"

५. लाल बटुवा, पैसों से भरा हुआ।

उत्तर=मर्च (मिर्च)

६. "नान छना हरी छुँ, ज्वानीं में लाल, बुड़ छना काव भयूं, कर पंछी विचार।"

६. बचपन में हरा था, जवानी में लाल, बुढ़ापे में काला हुआ, कर चिड़िया विचार।

उत्तर=काफल (पहाड़ी फल)

७. "खानूं खानूं सबै कूंनी, बीं हुणि धरौ क्वे नि कूनं।"

७. खाता हूं खाता हूं सब कहते हैं, बीज के लिये रक्खो कोई नहीं कहता।

उत्तर=लूण (नमक)

८. "बार बैंणिंयाक एक्कै भाई।"

८. बारह बहिनों का एक ही भाई।

उत्तर=नारिङ. (नारंगी)

९. "मै तिखी, बाप सुबरन, हम कसा भयां।"

९. मां कड़वी थी, बाप गोरा था, हम कैसे हुए ?

उत्तर=किलमोड़ा (पहाड़ी फल)

१०. "नान नान बामणि, पाव जस पेट। कां जैं छै बामणि, राजैक देश।"

१०. छोटी सी ब्राह्मणी गोल गोल पेट। कहाँ जाती हो ब्राह्मणी, राजा के देश।

उत्तर=सुपारी

११. "एक बीयां मांस को, दस दिना खाण।

११. उड़द का एक दाना है, दस दिन तक खाना है।

उत्तर=हींग

१२. "नान नान मिरगा दास, लुकुड़ पैरौं सौ पचास।"

१२. छोटा सा मिरगादास, कपड़े पहने सौ पचास।

उत्तर=प्याज

१३. काव बटु भितेर पिङव सुन, जो म्यार आण नि बताल, ऊ हिरु डुन।"

१३. काले बटुवे के भीतर पीला सोना, जो मेरी पहेली नहीं बताएगा वह हिरू लंगड़ा।

उत्तर=भट्ट (दाल) का बीज

१४. "हरी छुं पड़ी छुं, लाल पगड़ पैंरि ठाड़ छुं।"	१४. हरी हूँ पड़ी हूँ, लाल पगड़ी पहने खड़ी हूँ।

उत्तर = चुवा (हरा साग)

१५. "बाड़ में है रै ठाड़ि, आँख च्यूंल गाड़ि, सुराँव च्यूंल फाड़ि।"	१५. खेत में खड़ी हैं, आंख निकाल दूंगा, सलवार फाड़ दूंगा।

उत्तर = जुनल (भुट्टा)

१६. हरी डंड पितवक लुटि, जो नि बतौ उ बानरक पोथिल।	१६. हरा डंडा, पीतल की लुटिया, जो नहीं बताएगा वह बंदर का बच्चा।

उत्तर = बेल

२. घरेलू वस्तु संबंधी पहेलियां—

१. "एक स्यैणि आपण ख्वार हणि रोज रत्तै रत्तै जाल खितैं।"	१. एक स्त्री अपने अपने सिर पर रोज प्रातः काल जाल डालती है।

उत्तर = घाघरा

२. "आहां रे वाह्नां, पीठ में पुछड़ धर यो तमासा काहाँ ?"	२. अहा रे वाह! पीठ में पूंछ है। यह तमाशा कहां ?

उत्तर = तराजू

३. "काइ नथुली, सुकीली बिन्दी"।	३. काली नथ, सफेद बिंदी।

उत्तर = तवा रोटी

४. "बणहुँ जाणतक झर झर है रौ, घर हुँ ऊंण ब्रखत चुपड़ है रौं"।	४. जंगल जाते समय रूखा सूखा, लौटने पर चिकना चुपड़ा बन जाता है।

उत्तर = गागर (घड़ा)

५. "तू हिट मैं औनूं"।	५. तू चल मैं आता हूँ।

उत्तर = स्यूड़ धाग (सुई धागा)

६. "राज चेलि का पछिला चुच"।	६. राज कन्या के पीठ में स्तन।

उत्तर = सूप

७. "एक मैंस रत्तै ब्याल सरग चै रूँ"।	७. एक आदमी सुबह शाम स्वर्ग की ओर मुंह किये रहता है।

उत्तर = उखव (ऊखल)

८. "एक चड़ यस भै, पुछड़ैंल पाणिं पीं"।	८. एक चिड़िया पूंछ से पानी पीती है।

उत्तर = बाति = (बत्ती)

९. "घरहुँ उण तैं बणा हुँणि मुखा बण हुँ जाण तिर घर हुँणि मुख"।	९. घर आते समय मुख जंगल की ओर, जंगल जाते समय मुख घर की ओर।

उत्तर = कुल्हाड़ी

१०. "एक हातिक भितेर किड़ै किड़"।	१०. एक हाथी के भीतर कीड़े ही कीड़े।

उत्तर=घर

११. "म्यार ध्वाड़ यस छ, धूर कर्कट खाँ, पाणि पिणम मरि जाँ"।	११. मेरा घोड़ा ऐसा है, धूल कर्कट खाता है, पानी पीने पर मर जाता है।

उत्तर = आग

१२. "माथि बै आग, मुणि बै अध्याण"।	१२. ऊपर से आग, नीचे से अदहन।

उत्तर = हुक्का

१३. "तीन आँखरूँ मेंमरिगे"।	१३. तीन अक्षरों में मर गया।

उत्तर = लम्फू (लैंप)

१४. "सारै कुड़िक एक्कै खाम"।	१४. पूरे घर का एक ही खंभा।

उत्तर = छाता

१५. "एक मुर्गि हिटनै हिटनै थक गे, चक्कु लै काटि, फिर हिटण लग गे।"

१५. एक मुर्गी चलते चलते थक गई, चक्कू से काटी, फिर चलने लग गई।

उत्तर=कलम

१६. तीन भइयूंक एक्कै पाग"।

१६. तीन भाइयों की एक ही पगड़ी।

उत्तर=जांति (लोहे का विशेष आधार)

१७. "तू गये गये, म्यर बल्दक पुछड़ि किलै क्षमोरि गए"।

१७. तू गया तो गया, मेरे बैल की पूंछ क्यों मरोड़ गया?

उत्तर=ताला चाभी

१८. "पेट में गुड़गुड़, बीमार में न्है तूं, ख्वारन छारण, जोगि मै न्है तू"।

१८. पेट में गुड़गुड़ है, बीमार में नहीं हूँ। सिर पर राख है, जोगी में नहीं हूं।

उत्तर=हुक्का चिलम

१९. "हरैगे हरैगे, मिलिगे ख्वार पड़िगे"।

१९. खो गई, खो गई, मिली तो सिर पड़ गई।

उत्तर=टोपी

२०. भैंस नाज खैं, पुछड़ पाणि में रूंछ"।

२०. भैंस अनाज खाती है, पूंछ पानी पीती है।

उत्तर=घराट (पनचक्की)

२१. "आपण बाबुक च्यल छुं, लाल पाणि पिनूं, अन्यार कुण मैं रूनूं।"

२१. अपने बाप का बेटा हूं। लाल पानी पीता हूं, अंधेरे कोने में रहता हूँ।

उत्तर=खुकरी (छोटी कटार)

२२. "एक सिंगी बल्द सार परिवारकें पालूं"।

२२. एक सींग वाला बैल सारे परिवार को पालता है।

उत्तर=जानर (हथ चक्की)

२३. "पिस्यूकि टोपरि में नारि-ङ.क बीं"। — २३. आटे की टोकरी में नारंगी का दाना।

उत्तर=आग और खाङण (राख पर चिनगारी)

२४. "दिन भर भै रैं, ब्याल हु भरी एँ"। — २४. दिन भर बैठी रहती है, शाम को भरी हुई आती है।

उत्तर='ज्योड़' (रस्सी)

२५. "भल आदिमक ध्वाड़ द्वीए तरफ मुतूँ"। — २५. भले आदमी का घोड़ा दोनों ओर मूतता है।

उत्तर=घर

३. जीव जंतु संबंधी पहेलियां—

१. "एक मैंस यस छ जो पाणि नि पीन, पाणि पी बेर मरि जाँ"। — १. एक आदमी ऐसा है जो पानी नहीं पीता, पानी पीकर मर जाता है।

उत्तर='पुरपुतई' (तितली)

२. "हाड़ै हड़कुलि माशु सींग, लगे ढपुक ऐगे नीन।" — २. शरीर पर हड्डी निकली है, सींग भी माँस का है, छूते ही नींद आ जाती है।

उत्तर='गनेल' (घोंघा)

३. "सिर कोट बटि ऐ, नगर कोट में मारी गे।" — ३. सिर से आया, नाखूनों से मारा गया।

उत्तर=जूं (कीड़ा)

४. "हाथि जसि लपलप, ऊँट जसि चाल, एक जानवर यस देख, हड्डी न बाल।" — ४. हाथी जैसी लपलप, ऊँट जैसी चाल है। एक जानवर ऐसा, जिसकी हड्डी न बाल है।

उत्तर='ज्वाक' (जोंक)

५. "अहाँ रे अहाँ ! [आँख त्यारा टुपक टापुक, मुनइ तेरि काहाँ।"	५. अहा रे ! आँख तेरी टिमटिमाती है, सिर तेरा कहाँ हैं ?

उत्तर='गिगाज' (केकड़ा)

६. "काव छ, पर कव्वा न्है, पतल छ, पर चीता न्है, बोट चड़ौ, पर बानर न्है ।"	६. काला है पर कौवा नहीं, पतला है पर चीता नहीं, पेड़ पर चढ़ता है, पर बन्दर नहीं ।

उत्तर='किरमोव' (चींटी)

७. "बेलि रात एक जानवर कूदौ, कुदनेर घ्वड़ छी, घ्वाड़ पर जीन छी, बिनु जीनूं कि बिराउ छी, बिराउ में न कान छी, बिन कानूं को स्याप छी, स्यापक खाई मरि जाँ, वीक खाई नी मरन ॥"	७. कल रात एक जानवर कूदा, कूदने वाला घोड़ा था, घोड़े पर जीन थी, बिना जीन की बिल्ली थी, बिल्ली में काँटे थे, बिना काँटे का सर्प था, साँप का काटा मर जाता है, उसका काटा नहीं ।

उत्तर='उपन' (खटमल)

८. "चार हाथा खँभ, द्वी हाथा अखंभ, द्वी हाथा फटफटूणी, एक हथ लटपटूंणी ॥"	८. चार हाथ खंभे, दो हाथ अखंभे, दो हाथ फड़फड़ाने वाले, एक हाथ लटपटाने वाला ।

उत्तर='वल्द' (बैल)

९. एक थैली में खिरची मिरची एक थैली में हींग, एक जानवर यस देखा, नौ बीसी नौ सींग"।	९. एक थैली में खिरची मिरची हैं, एक में हींग है । एक जानवर ऐसा है जिसके नवासी सींग हैं ।

उत्तर='सौल' (साही पशु)

४. प्रकृति संबंधी पहेलियाँ–

१. "थाइ में रुपैं, गणि नी सक"	१. थाली में रुपये, गिन नहीं सकते ।

उत्तर=आकाश के तारे ।

२. "नानि नानि डाइ का झरझरा पात, वी मणि नि चढ़ी सका त्यार बुबू को बाप"।

२. छोटी सी डाल के रूखे सूखे पत्ते हैं। तेरे परदादा उसमें नहीं चढ़ सकते।

उत्तर='सिसूण' (बिच्छू घास)

३. "कुक्की कुक्की, ह्यूं न हरी चौमास सुक्की"।

३. जाडों में हरी भरी, बरसात में सूखी रही।

उत्तर='मिझाउ' (एक घास)

४. "अघिल फल, पछिल पात"।

४. पहले फल लगते हैं, फिर पत्ते।

उत्तर=खिन (वृक्ष विशेष)

५ "एक फल यस छ, जैक फगल लै नि हुन, गुठल लै नै।"

५. एक फल ऐसा, जिसकी न छाल, न गुठली।

उत्तर=ओला

६. "पारा भ्योव ल्वे की पधानी, जैले देखी भली छ कौनी, जैल नि देखी कसी छ कौनी।"

६. दूसरी ढाल पर रक्त की पधानी है। जिसने देखी, अच्छी है कहते हैं। जिसने नहीं देखी, कैसी है कहते हैं।

उत्तर='बुरुंश' (एक लाल फूल)

५. अंग प्रत्यंग संबंधी पहेलियां—

१. "चार खाम, द्वी अखाम, चार बड़ब्रड़ान, द्वि फड़फड़ान, एक लड़बड़ान।"

१. चार खंभे, दो अखंभे, चार हिलने वाले, दो फड़फड़ाने वाले, एक हिलने वाली।

उत्तर=गाय के पैर, सींग, थन, कान, पूंछ।

२. "बत्तीस भै कुटनी, लाल सुवरि बटोरी।"

२. बत्तीस भाई कूटते हैं, लाल सुवरी बटोरती है।

उत्तर=दांत और जीभ

३. "एक सैंणि रौज रोज गोठक मोव गाड़ै ।"	३. एक स्त्री रोज रोज, गोठ का गोबर निकालती है ।

उत्तर—'सिङाण' (नाक का मैल)

४. "नान डाब में सालिग्राम, उनूं बिना नि चलो काम ।"	४. छोटी डिबिया में शालिग्राम, उनके बिना नहीं चलता काम ।

उत्तर—आंख

५. "एक बाट में द्वी द्वार ।"	५. एक रास्ते में दो दरवाजे ।

उत्तर—नाक

६. "पारा भ्योव एक्कै खुटकूंण छ"।	६. ढाल के उस ओर एक ही सीढ़ी है।

उत्तर—नौटि (नाभि)

७. "ज्यूंन आदिम कणि मरि बतै दिंछ ।"	७. जीवित व्यक्ति को मरा बता देती है ।

उत्तर—नाड़ी.

६. सामान्य पहेलियां—

१. "काल बाकरा का कुरबुर कान, काँ जें बाकरी, राई दिवान ।"	१. काले बकरे के कुरबुरे कान, कहाँ जाती है बकरी, राज दीवान के पास ।

उत्तर—चिट्ठी.

२. हातैल बुनी, खपड़ैल लउनि ।"	२. हाथ से बुनते हैं, मुख से बाँचते हैं ।

उत्तर—लेख

३. "अहण रे अहण, कावो बण चरण, पोखरी को पाणी पिण, गुदड़ी में सितण ।"	३. पहेली है पहेली, काले वन में चरता है, पोखर में पानी पीता है, गुदड़ी में सोता है ।

उत्तर—उस्तरा.

४. "टोकरि में नि अटान, मुट्ठि में अटै जाँ।"	४. डलिया में नहीं समाती, मुट्ठी में समा जाती है।

उत्तर=बंदूक.

५. "मुख बिन बलानूं, खुट बिन हिटनूं।"	५. बिना मुंह के बोलती हूँ, बिना पैर के चलती हूँ।

उत्तर=छड़ी.

६. "एक मुर्गिक चार आना, चार नरम, चार गरम, चार ठंड।"	६. एक मुर्गी के चार अंडे, चार नरम, चार गरम, चार ठंडे।

उत्तर=वर्ष.

७. "लाकड़ा क्वैल भै, क्वैल छार भै, मैं न क्वैल भयूं न छार।"	७. लकड़ी के कोयले हुए, कोयला जल-कर राख हुआ। मैं न कोयला हुआ न राख।

उत्तर=लोहा-तांबा.

७: खेती संबंधी पहेलियां—

१. "अट्ट बट्ट, चट्ट धौं, तीन मूं, दस पौ।"	१. चटपट उत्तर दो, तीन सिर हैं, दस पैर।

उत्तर=हलवाहा और बैलों की जोड़ी.

२. "जतुक काटनै गे उतुक बड़नै गे।"	२. जितना काटते गए, उतना बढ़ती गई।

उत्तर=गूल (कुलया).

इस प्रकार स्थानीय समाज में पहेलियाँ कई प्रकार की भूमिकाएँ निभाती हैं जिनमें शिक्षण, बुद्धि परीक्षा और मनोरंजन की भूमिकाएँ मुख्य हैं। कुछ पहेलियों का आनुष्ठानिक महत्व भी माना जा सकता है। वैसे पहेलियों का प्रयोग उत्तरोत्तर कम होता जा रहा है।

---

१३. अन्य रचनाएँ

कुमाउंनी लोक साहित्य में कुछ स्फुट रचनाएँ भी सम्मिलित की जा सकती हैं जो लोक कल्पना की उर्वरता सिद्ध करती हैं। इसके अंतर्गत निम्नलिखित जैसे विषय समाविष्ट किए जा सकते हैं--

(१) बाल रचनाएँ,
(२) मंत्र-तंत्र
(३) तुक बंदियाँ,
(४) लोक नाट्य।

१. बाल रचनाएँ-

बाल रचनाएँ बालकों अथवा शिशुओं के लिये या तो वयस्क व्यक्तियों के द्वारा बनाई जाती हैं जिन्हें शिशु गीत कह सकते हैं अथवा बालक अपने खेल कूदों में इस प्रकार की तुक-बंदियाँ स्वयं बना लेते हैं। गाँव में माताएँ शिशुओं को थपथपाते समय अथवा बड़े बूढ़े बालकों को गोद में खिलाते समय कुछ तुकान्त रचनाओं का प्रयोग करते हैं। ये रचनाएँ प्रायः प्रश्नोत्तरों के रूप में किसी लघु वृत पर आधारित होती हैं। यहाँ इनके लिए प्रयुक्त एक प्राचीन नाम 'हिलोरी' मिला है जो उपयुक्त कहा जा सकता है।[1]

उदाहरणार्थ 'घुघुति-वासुति' शीर्षक एक गीत है जिसे बालक को अपने घुटनों पर झुलाते हुए धीरे धीरे गाया जाता है। झुलाने वाला बालक से पूछता है-"दादी कहाँ है"? उत्तर मिलता है-"ननिहाल में है।" यह पूछने पर वह पूछता है क्या लाएगी ?' उत्तर मिलता है "दूध भात लाएगी।" फिर यह पूछने पर कि "दूध भात कौन खाएगा"? वह उत्तर देता है-"हम खाएँगे।" तब झूलाने वाला व्यक्ति चावल के बर्तन की ओर संकेत करते हुए इस प्रसंग को समाप्त कर देता है। गीत की पंक्तियाँ हैं--

"घुघुती बासुती, आमां कां छ ? माला कोट?,
के ल्याली ? दूद भाती, को खालो ? मैं खूँलो।
भातै की तौलि घुरं घुरं।"

---

१. 'अचल', अगस्त-श्रेणी-१शृंग-१/७, १९३८ ई०

कुछ प्रसंगों में गीत की पंक्तियों को क्रम क्रम से गाते हुए, हाथ की उंगलियाँ घुमा घुमा कर खेल जैसा किया जाता है। और अंतिम पंक्ति पर पहुँच कर बालक का हाथ नोचकर छोड़ दिया जाता है। बालक जोर से चीख उठता है। इस प्रकार के 'च्यूं मूसी' शीर्षक गीत की कुछ पंक्तियाँ हैं—

"च्यूं मुसी च्यूं, च्यूं मुसी च्यूं,
माल गाड़ा जौं पाका, ताल गाड़ा ग्यूं,
माल को बेड़ु पाको, चड़ि को पुछड़ पाको
चड़ि रांडा ल्वे लागो, 'चड़ि हा, चड़ि हा।"

दूसरे प्रकार की बाल रचनाएं उनकी स्वयं निर्मित हैं जिनका प्रयोग बच्चे खेलों में करते रहते हैं। यहाँ बालकों के लगभग चालीस खेल प्रचलित हैं जो घर के भीतर और बाहर दोनों स्थानों पर खेले जाते हैं। इन खेलों का आरंभ जिन तुकबंदियों से होता है वे तुकान्त तथा अतुकान्त दोनों प्रकार की हैं।

कुछ खेल इन्हीं तुकान्त पंक्तियों के नामों से प्रसिद्ध हैं। जैसे 'आतीं–पाती', 'कोड़ा जमाल साईं', 'हरी समुन्दर', 'तल भनेरिया', 'पत्ता पत्ती', फुकम फुकारा', 'बागीं–बागी', 'माछी माछी' आदि, जो बीच बीच में इन पंक्तियों को दुहराते हुए खेले जाते हैं। बालकों की ये तुक बंदियाँ कहीं सार्थक होती हैं, कहीं निरर्थक। तुक जोड़ कर पंक्तियों को स्मरण करने में सहायता मिलती है।

ऐसी कुछ तुकान्त पंक्तियां इस प्रकार हैं–

(१) "अटकम, बटकम, गैर महाजन
कुलिया पत्तो आम जाम,
मैं है बेली पान फूल, चौ खो ला।"

(२) "उण कुची मुड़ कुची, देणों दुला कुची,
लइया कैंची, पित्तल ऐंची,
चोराक नानतिन कस कस हुनि,

वृन्दावन में ध्यूर खेलूनी
ओड़ मोड़, दैणै हातीं, टसकै, फुसकै फांसकै।"

(३) "उड़ कुच्ची, मुड़ कुच्ची, दाम दलैया,
लइया लांची, पूरब खाँचीं, ओड़ कै चेली कस कै हुंछी
ओड़ मोड़, दाड़ में जोड़, संकै की मैं पटाँगण तोड़ ।"

(४) "आ द्यो, आ द्यो --

अउवा का बाना बटि, कपोली का छाना बटि,
समुंदरा का जड़ा बटि, अगासा का टुका बटि,
आ द्यो; आ द्यो— —।"

(५) 'द्यो द्यो दण दण, बुड़ी भाजी बण बण,
लै बुड़ि खाजा, त्यार गोरु भाजा।"

(२) तन्त्र मंत्र—

मंत्र-तंत्र, जादू–टोना, टोटके और झाड़ फूंक, किसी भी लोक संस्कृति के अविच्छिन्न अंग होते हैं क्योंकि उनके मूल स्रोत लोक मानस का गठन ही लोक विश्वासों द्वारा होता है। हिमालय की कंदराएँ और उपत्यकाएं अनादि काल से तांत्रिक साधनाओं का केन्द्र चली आ रही हैं जिनमें आदिम जातियों की साधनाओं के साथ-साथ मध्य कालीन सिद्ध नाथों की मारण, उच्चाटन, सम्मोहन, वशीकरण, रोग निवारण जैसे तांत्रिक क्रियाएँ जुड़ती चली गयीं हैं। इनकी झलक स्थानीय साहित्य में भी मिलती है।

टोना, टोटका करते समय विशिष्ट अनुष्ठान सहित मन्त्रों का उच्चारण किया जाता है। मंत्र के चार भाग होते हैं--(१) 'प्रणव', जिसमें देवता का आवाहन करने के लिए 'ओंकार' का उच्चारण किया जाता है। (२) 'त्रीज', जिसमें देवता विशेष का नाम लिया जाता है। (३) 'मंत्र', जिसमें तांत्रिक क्रिया का विस्तार होता है। (४) 'पल्लव', जिसे 'स्वाहा' शब्द कह कर आहुति देते हैं।[१]

कुमाऊँ के 'गणतुवे' (गणक) इन मंत्र साधनाओं का पूरे विधि-विधान सहित पालन करते हैं। यहाँ रोग झाड़ने के, सांप का विष उतारने के, भूत प्रेतों को भगाने के, नजर उतारने के अलग अलग मंत्र होते हैं। इनका प्रयोग

१. 'सम्मेलन पत्रिका'—लोक संस्कृति विशेषांक—सं० २०१०, पृ० ४६६

करते समय राई के दाने, भभूत, लाल मिर्च, जल, उरद के दाने आदि मुख्य रूप से अभिमंत्रित किए जाते हैं।

विष झाड़ने और रोग उतारने के दो मंत्र यहाँ पर दिए जाते हैं—

(१) "ऊं नमो आदेश! गुरु को जोहार! विद्या माता को नमस्कार। प्रथमे नाग राजा को भाग राजा। भाग राजा को साग राजा। साग राजा को बासुकि नाग। बासुकि नाग को तच्छक नाग। तच्छक नाग को कालो नाग।—— जा रे विष सिर माटी है जा। ह्यूँ पाणी गवै लीजा। डाँसी, ढुंगन, राई मंतरी में न्है जा। हिमाँचल कांटी में न्है जा। बाम्यां सौली! अमृता सौली। तैं सौली की जै जै कार। मेरि भक्ति गुरु की सक्ती। फूल मंतरौं ईश्वरो वाच।"

"(२) ऊं नमो आदेश! गुरु बाबा जी को नरसिंह बीर को आदेश। सौंली, सौंली त्वे सौंली की जय जयकार। अनन्तर बैद की सौली। धनन्तर वैद की सौली। बैसाख मास उपज्यो विष। पन्द्र पैट उपज्यो विषौंली। कै की सौली, गरुड़ा सौली। अमृता सौली। सिर को सिरान पौ को पैतान कौ विष काटौ। आँख फैटी अँखिया को विष काटौ। कान फैटी कनजिब्या को विष काटौ। नाक फैटी नकुवा को विष काटौ।——तेरो विष झाड़ी झूड़ी, शक्ति पैताल। शिव शक्ति जा। बिस नास्ति जा। अरे विष तू रोगिया का पिंड रौ त गोहत्या शिव हत्या लगै। फूल मंतरो ईश्वरो वाच।"

(३) तुक बन्दियां——

इन तुकांत-अतुकान्त उक्तियों द्वारा हास्य की सृष्टि करना मुख्य प्रयोजन प्रतीत होता है। कहीं किसी सामाजिक तथ्य का संकेत भी मिल जाता है। जैसे एक तुकबन्दी में कहा गया है कि अखरोट का दाना खणमण करता है, नारंगी में रस होता है। ससुर जी ने डांटा फटकारा तो बहू मन में कांप उठी——

"आखोड़ दाणीं खणमण खणमण, नारिङ दाणी रस।
सौरा ज्यू लै नड़क छोड़ी, ब्वारिल करी झस्।"

इसी प्रकार की कुछ सार्थक और निर्थक तुकबन्दियां नीचे दी जा रहीं हैं—

(१) "कमल ज्यू का पाखा में मड़ुवै कीं धूसी,

तल्लै रिखुलीं, मल्लै रिखुली ॥"

(२) "आज तेरी मांगीं जागी, भोल तेरो ब्या
टूटी गई खन्यारी, खराब गयो ब्या।"

(३) "एक थाली खिरची मिरची, एक थाली में भउवा,
भौजीं भइया हगण गया, धोती लिगे कउवा।"

(४) "असि कसि डन्डिया, एक कौड़ी की हंडिया,
हलदो साँटि बलदो लिं गे, धूलो छी गंडिया ॥"

(५) स्यू राती को मधु आलो जोगी,
ओ नथ वाली लाकड़ा दि दे।"

(६) ,'दाई कॉ को ? मैं काली पार को।
सुवा कॉ को, सिलगुड़ी नेपाल को।
मेरि सूरत धरि दिना हुजूर की खलदी में।"

उक्त तुकबन्दियां देखने में और सुनने में ऊटपटांग तथा असंबद्ध प्रतीत होती हैं। किन्तु इनमें कोई घटनापरक संकेत के कारण ये किसी सामाजिक प्रथा की परिचायक भी होती हैं। जैसे पहले उदाहरण में किसी व्यक्ति द्वारा छत में रक्खे हुए मडुवे की घूसी का उल्लेख हैं। दूसरे उदाहरण में किसी व्यक्ति के विवाह का उल्लेख है जिसकी आज 'मंग जगी' (मंगनी) हुई और दूसरे दिन विवाह हुआ। तीसरा उदाहरण विशुद्ध परिहास का है। चौथे उदाहरण में बारात के घर लौटते समय का दृश्य वर्णित है। अतः इन्हें पूर्णतः निरर्थक नहीं मान सकते।

वर पक्ष के किसी चतुर व्यक्ति ने कन्या पक्ष वालों की हँसी करते हुए कहा कि तुम इस विवाह में ठग गए। तुम सोचते होगे कि वर बड़ा अच्छा है। उसके भारी होने के कारण कुलियों को पालकी उठाने में पसीना आ रहा है। किन्तु वर नारायण एक कौड़ी की हांडी के बराबर हल्के हैं। तुम्हारी कन्या बैल के बराबर मूल्यवान है। उसके सामने हमारा वर हलदी के बराबर था। हम अपनी 'हलदी' (वर) के बदले में तुम्हारा बैल (कन्या) लिए जा रहे हैं। दूल्हे के गले में गलघंट भी है। तुम इस सौदे में अच्छी तरह ठगे गए।

यह उक्ति विवाह के उपरान्त लौटते समय की सुन्दर चुटकी है जिसका प्रयोग—'हलदी सांटी बल्द लीगे' कहावत के रूप में भी होता है। जिसका अर्थ है कम मूल्य की वस्तु देकर महंगी वस्तु ले जाना।

पाँचवां उदाहरण मानव संबंधों का परिचायक है जो शिवरात्रि त्यौहार के अवसर पर प्राय: सुना जाता है। इसके व्याख्याकार कहते हैं कि युवावस्था में कोई प्रेमी किसी युवती का रूप लावण्य देखकर उस पर मुग्ध हो गया। दोनों का प्रेम निरंतर बढ़ता गया। किन्तु माता पिता ने कन्या का विवाह अन्यत्र कर दिया। बहुत समय बाद जब एकाएक प्रेमी को अपनी प्रेमिका के दर्शन हुए तो उसने कहा—"स्यूं राती को मधु आलो जोगी। ओ नथवाली लाकड़ा दि दे।" अर्थात् ए सौभाग्यवती स्त्री। अब तू किसी गृहस्थ की पत्नी है। मुझ निराश प्रेमी के लिए अब कुछ शेष नहीं रहा। अब मैं जोगी हो जाता हूँ। मन और शरीर की शुद्धि करने के बाद घर आकर कहूंगा—"भिक्षा में लकड़ी दे।" इस प्रकार तेरे दर्शन कर लूंगा।

(४) लोक नाट्य—

इसके अंतर्गत 'रामलीला', 'पांडव लीला', 'स्वांग', तथा 'प्रहसन' जैसे विषय सम्मिलित हैं जो विशिष्ट अवसरों पर आयोजित किये जाते हैं। कुमाउंनी रामलीला का आरंभ सन् १८६० ई० के आस पास से माना जाता है। इसमें नौटंकी शैली का प्रचुर प्रभाव दिखाई देता है। कहीं कहीं फारसी थियेटर के प्रभाव से उर्दू शेर शायरी के भी दर्शन होते हैं। राम, लक्ष्मण, दशरथ, हनुमान, परशुराम, रावण, सीता, कैकयी, शूर्पणखा जैसे पात्रों का अभिनय करने में कुछ लोगों ने विशेष ख्याति अर्जित की है। इस संदर्भ में शोध की पर्याप्त सामग्री है।

होली के समय 'स्वांग' और 'प्रहसन' विशेष रूप से देखे जाते हैं जिनमें विदूषक का अभिनय प्रमुख रहता है। इधर 'घस्यारी' नामक लोक नृत्य एवं 'पांडव-लीला' को स्थानीय साँस्कृतिक संस्थाओं ने रंगमंचीय रूप दे दिया है। 'नैनी- नाट्य कला अकादमी', 'हैप्पी क्लब', 'शारदा संघ', 'हरि संकीर्तन सभा' जैसी संस्थाओं ने कुमाउंनी लोक गीतों एवं लोक नृत्यों के मंचीय प्रस्तुतीकरण की दिशा में स्तुत्य प्रयास किये हैं जिनकी चर्चा अन्यत्र की जाएगी।

नव जागरण की सम सामयिक परिस्थितियों में मद्य निषेध, 'परिवार नियोजन', ऋण ग्रस्तता', 'गरीबी उन्मूलन', जैसे विषयों को नाटकीय रूप में प्रस्तुत करने की सँभावनाएँ बढ़ गई हैं। लोक साहित्य जन संचार (मास मीडिया) का एक सशक्त माध्यम होता है अतः पंचवर्षीय योजनाओं के अंतर्गत प्रशासन की ओर से भी इधर स्थानीय लोक रचनाओं के विविध पक्षों को संवर्धित करने का प्रयास किया जा रहा है।

---

१४. परिशिष्ट

(क) मानचित्र और वर्गीकरण

(ख) ग्रियर्सन-चटर्जी का वर्गीकरण

(ग) कुमाउंनी की विशिष्ट शब्दावली

(घ) सहायक ग्रंथ सूची

(क) मानचित्र और वर्गीकरण--

१. कुमाउँनी के भेद (बोलियाँ)--

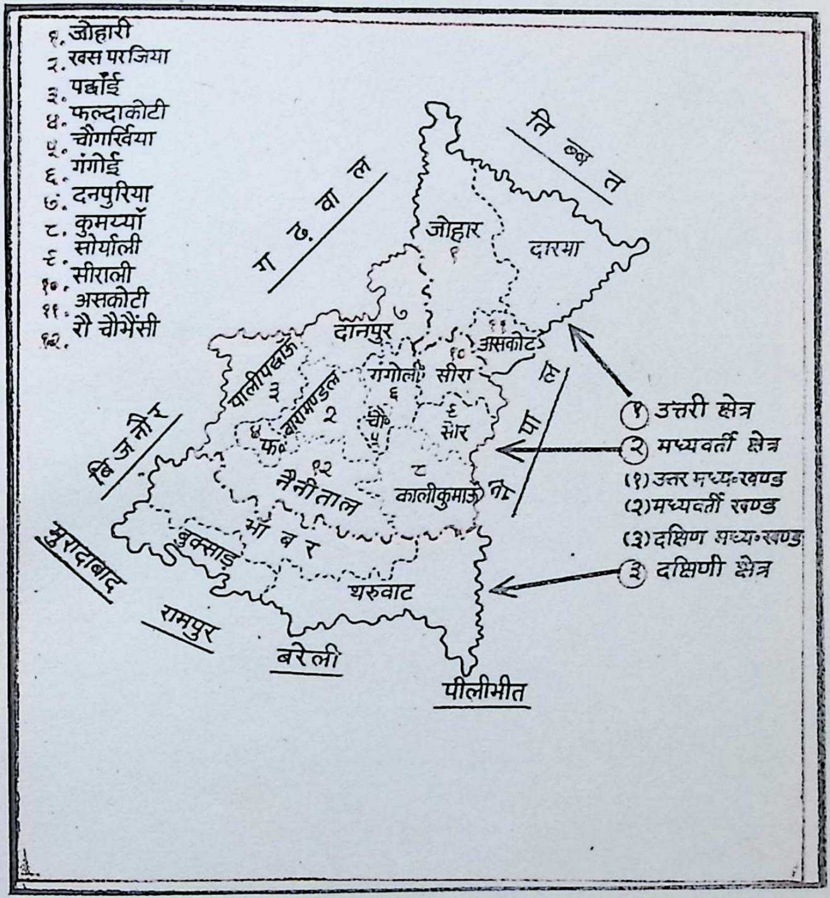

२. कुमाउंनी साहित्य का वर्गीकरण—

कुमाउंनी साहित्य

- **नागर साहित्य**
- **लोक साहित्य**

(१) लोक गीत

१. संस्कार गीत,
२. नृत्य प्रधान गीत,
३. अनुभूति प्रधान गीत,
४. तर्क प्रधान गीत,
५. संवाद प्रधान गीत,
६. ऋतु गीत,
७. देवी देवता संबंधी गीत,
८. व्रत त्योहार संबंधी गीत,
९. कृषि गीत,
१० स्फुट गीत ।

(२) कथा गीत

१. संस्कार संबंधी,
२. ऋतु संबंधी,
३. कृषि संबंधी,
४. वीरता संबंधी ।

(३) लोक गाथाएं

१. परंपरागत गाथाएँ,
२. पौराणिक गाथाएँ,
३. धार्मिक गाथाएँ,
४. वीर गाथाएँ ।

(४) लोक कथाएँ

१. सामाजिक कथाएँ,
२. भूत-प्रेत, दैत्य, राक्षस संबंधी,
३. जीव जन्तुओं की कथाएँ,
४. पक्षी कथाएँ,
५. वृक्ष पुष्प संबंधी कथाएँ,
६. धार्मिक कथाएँ,
७. साधु संत सम्बन्धी कथाएँ,
८, वीरता संबंधी कथाएँ,
९. कारणमूलक कथाएं,
१०. दंत कथा, चुटकुले, किस्से ।

(५) कहावतें

१. सामाजिक कहावतें,
२. जीवन दर्शन संबंधी,
३. ऐतिहासिक कहावतें,
४. स्थान विशेष संबंधी,
५. नीति उपदेश प्रधान,
६. हास्य व्यंग्य प्रधान,
७. कृषि वर्षा संबंधी,
८. जीव जन्तु संबंधी कहावतें ।

(६) पहेलियां

१. भोज्य पदार्थ संबन्धी,
२. घरेलू वस्तु संबन्धी,
३. जीव जन्तु संबंधी,
४. प्रकृति संबंधी,
५. अंग प्रत्यंग संबंधी,
६. सामान्य पहेलियां,
७. खेती संबंधी पहेलियां ।

(७) अन्य रचनाएँ

१. बाल रचनाएँ,
२. तंत्र मंत्र,
३. तुक बंदियाँ,
४. लोक नाट्य ।

(ख) ग्रियर्सन–चैटर्जी का भाषा वर्गीकरण––

१. ग्रियर्सन का वर्गीकरण––

(संस्कृत)

(क) वहिरंग उपशाखा –

१. पश्चिमोत्तरी समुदाय—

(१) लहँदा या पश्चिमी पंजावी,

(२) सिंधी,

२. दक्षिणी समुदाय ––

(३) मराठी,

३. पूर्वी समुदाय ––

(४) उड़िया,

(५) बिहारी,

(६) बंगाली,

(७) असमी,

(ख) मध्यवर्ती उपशाखा ––

४. मध्यवर्ती समुदाय —

(८) पूर्वी हिन्दी,

(ग) अंतरंग उपशाखा ––

५. केन्द्रीय समुदाय–

(९) पश्चिमी हिन्दी,

(१०) पंजाबी,

(११) गुजराती,

(१२) भीली,

(१३) खानदेशी,

(१४) राजस्थानी,

६. पहाड़ी समुदाय––

(१५) पूर्वी पहाड़ी या नेपाली (खसकुरा),

(१६) केन्द्रीय पहाड़ी (कुमाउंनी+गढ़वाली)

(१७) पश्चिमी पहाड़ी (जौंनसारी, सिरमौरी, क्यूंठली, कुलुही, चम्याली)

अवर्गीकृत ।

२. डा० सुनीतिकुमार चैटर्जी का वर्गीकरण--

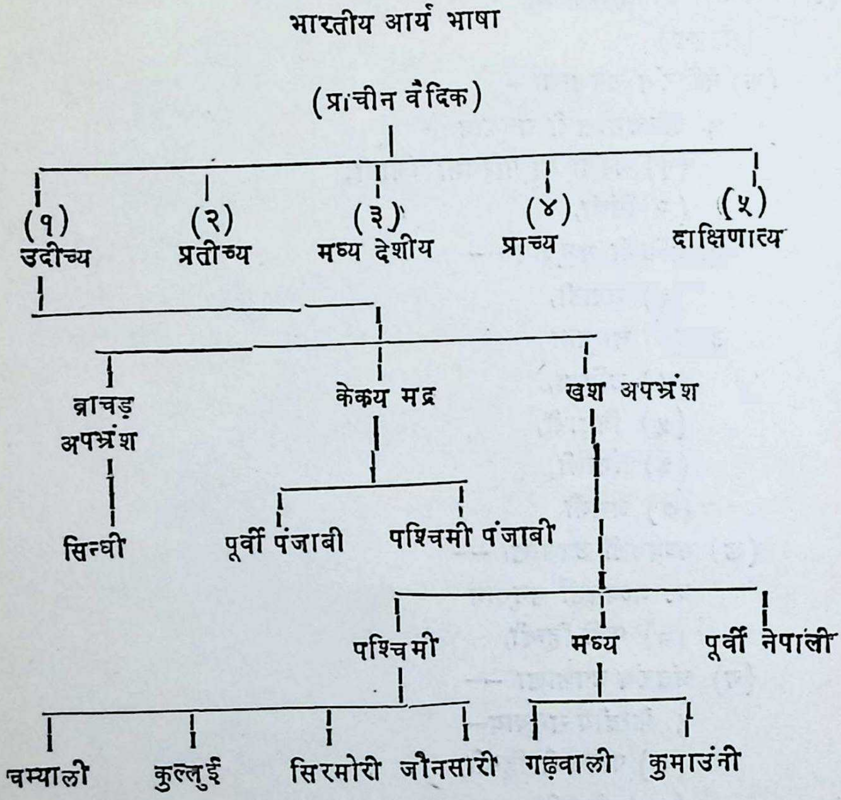

(ग) कुमाउंनी की विशिष्ट शब्दावली--

१, प्रकृति सम्बन्धी शब्दावली-

(१) पहाड़ सम्बन्धी-

उकाव, उकालो	= चढ़ाई
उड्यार, ओड्यार	= पहाड़ के भीतर गहरी अंधेरी गुफा
करांइ, करैं	= पहाड़ की ढालू जमीन
खड्ड, खाड़	= गड्ढा
गल	= हिमनद
गैंर	= पहाड़ का धँसा हुआ हिस्सा
घाङ्.ल (जोहार)	= पत्थरों का चट्टा
चाँटा	= चट्टान की खोह
चाल	= बिजली, भूकम्प
टिपुड़ि	= छोटी ऊँची चोटी
डाँसि	= स्फटिक पत्थर
डाना	= ऊँचा पर्वत शिखर
ढुंग	= पत्थर
थड़	= मोटा बेडौल पत्थर
द्यो	= वर्षा
धार	= पहाड़ की चोटी पर चौरस भूमि
पक्खान	= पाषाण, चट्टान
पाथर	= छत पर बिछाने के बड़े चौड़े पत्थर
पैड़	= स्खलित भूखंड
पाट	= सपाट मैदान
बगड़	= रेतीला ऊबड़ खाबड़ नदी तट
भ्योव	= ऊबड़ खाबड़ ढाल
माल, माव	= भावर तराई का मैदानी भाग
सिलाप	= नमी
ह्यूंन	= शीत ऋतु
हिम काँठी	= बर्फीली पहाड़ी का दुर्गम स्थान
हौल	= कोहरा।

(२) नदी नाले सम्बन्धी—

अतौर	= पार न की जा सकने वाली नदी
खांखर	= कांच जैसा हिम का आवरण
खाल, खाव	= कुछ मैला, छोटा जलकुंड
गघेरा, गध्यौर	= बरसाती नाला
गाड़	= बरसाती नदी
चुपटौव (जोहार)	= बरसाती पानी से भरे गड्ढे
छयड़, छीड़ा	= छोटा जल प्रपात, झरना
डाव, डाल	= ओला
नौला	= जलाशय, जलधार
रेवाड़	= पथरीला रेतीला तट
रौ	= भँवर, नदी का गहरा हिस्सा
रौड़	= वर्षान्त में बहने वाला जल
ल्वाड़ां (गंगलोड़)	= नदी तट के पत्थर
सिमार, सिमाड़	= दल दल ।

(३) फल सम्बन्धी—

अखोड़	= अखरोट
आड़ू	= आड़ू (फल विशेष)
क्याव	= केला
काफल, काफव	= काफल, गुठलीदार मीठा लाल फल, पकने पर काला
किलमोड़ा	= बीज युक्त मीठा फल, पकने पर काला
कुसम्यारु	= खट्टी छोटी खुबानी
गलगल	= बड़ा नींबू
जमीर	= मोटे छिलके का खट्टा नींबू
तिमुल	= बेड़ू की जाति का उससे बड़ा फल
दाड़िम	= छोटा खट्टा अनार
नारिङ	= नारंगी
नाशपाती	= नाशपाती
बेड़ू	= मीठे बीज वाला एक फल

मत काकड़ि = मोटी छाल वाला नींबू की जाति का फल
मेहल, मिहव = नाशपाती की जाति का छोटा फल
स्यो = सेव
हिसालु, हिसाउ = छोटा सा जंगली फल।

(४) फूल संबंधी--

औबीन = बसंत का पीला फूल
कपूनई = बैंगनी फूल,
कुंज = जंगली गुलाब
कौंल कफ्फू = ब्रह्म कँवल फूल
गुल बाँक = एक पुष्प
पइय्यां = एक फूल
प्यूरड़ी, प्यूंली = पीला फूल
बकौल = सफेद फूल
बुरूंश = प्रसिद्ध लाल फूल
मासी = एक फूल
मिझौल = गुलाबी सफेद रंग का फूल
शिलिंग = एक फूल
सुन जाई = सोन जुही
हजारी = गेंदा।

(५) पशु संबंधी – (वन्य पशु)–

काकड़ = पहाड़ी हिरन
गुणि = लंगूर, काले मुहँ वाला बंदर
घुरड़ = जंगली बकरा
चुथरौल = एक वन्य पशु
च्याङ्·क(जोहार) = भेड़िया जैसा हिंस्र पशु जो छोटे पशुओं पर झपटता है
छिपड़ = छिपकली
झब्बू = याक
ठुल बाग (जोहार) = शेर
ढाकर = भेड़ों के झुंड

थार	=	हिरन जैसा जंगली पशु
पिलखू	=	हिम प्रदेश का बकरा
बोकिया	=	बकरा
रिखु	=	रीछ, गन्ना
शौल, सौल	=	साही
श्याव, स्याल	=	सियार
हेलू	=	सियार।

(घरेलू पशु)—

कुकुर	=	कुत्ता
कलोड़	=	नया बछड़ा
खोड़	=	कांजी हाउस
खरक	=	गोशाला, पशुशाला
गल्यूड़	=	पशुओं को बाँधने कीं रस्सी
ग्वाड़	=	पशुशाला, चरागाह
गोरू	=	गाय
घ्वड़, घ्वाड़	=	घोड़ा
घानि	=	पशुओं के गले में बाँधने की घंटी
जतिया	=	भैंसा
थौंण	=	थन
थोरि	=	भैंस का मादा बच्चा
दूण	=	दुधारू पशु
पाठ	=	बकरी का नर बच्चा
बाखड़ि	=	दूध न देने वाली गाय भैंस
बिजवार	=	सांड़
बिराउ	=	बिल्ली
भैंश	=	भैंस
म्वाल	=	पशुओं का मुहँ बाँधने की जालीदार रस्सी
मुस	=	चूहा
हुनकार	=	तिब्बती बकरियाँ
हुनि कुकुर	=	तिब्बती कुत्ता।

(६) पक्षी संबंधी —

कफुवा	= एक पक्षी
कठकोंरिया	= कठ फोड़वा
करौली	= एक पक्षी
कल चुनियाँ	= एक पक्षी
कौ	= कौवा
क्याङ· कान (जोहार)	= नारंगी चोंच वाले मैदानी कौवों से छोटे कौवे
गौत्याली	= एक पक्षी
घिनौड़	= गौरैया
घुग्घु	= उल्लू
घुघुती	= पहाड़ी फाख्ता
घोल	= घोंसला
टिट्याँ	= टिटिहरी
न्यूलड़ी	= एक पक्षी
मल्या	= पहाड़ी कबूतर
मुनाल	= एक पक्षी
सिटौल	= मैना के रूप रंग का पक्षी
हिलांस	= एक पक्षी
ह्यूं चड़ि	= हिम पक्षी
हुटहुटिया	= एक पक्षी ।

(७) जीव जंतु संबंधी —

गड्यार	= बड़ी मछली
गनेल, गंड्याल	= घोंघा
गंज्याड़	= केंकड़े की जाति का जीव
गिंगाज, ग्यांज	= केंकड़े की जाति का जीव
गिद्लो, कितौल	= केंचुवा
चिट्या	= काले रंग का छोटा जल जीव
घुतड़ो	= मेंढक
माछ	= मछली
मिनुक	= एक जल जीव

खैंण	= विशेष मछली
सनेसू	= खटमल ।

(८) कीट पतंग संबंधी ---

अड·स्याल	= बड़ी ततैया
उपन	= पिस्सू
कन शाड.लो	= कन खजूरा
किरमोल, किरमौव	= चींटी
झिमौड़	= ततैया
पुर पुतई	= तितली
बगदुड़	= मधुमक्खियों का झुंड
बड़ुवा	= मकड़ी
माख	= मक्खी
मौनि	= मधुमक्खी ।

(९) वृक्ष सम्बन्धी-

अयार	= एक वृक्ष
खिरसू	= एक वृक्ष
खिन	= एक वृक्ष
खैर	= एक वृक्ष
पयार	= एक वृक्ष
पइयां, पदम	= एक वृक्ष
पांगर	= एक वृक्ष
बजवाणि	= बाँज का जंगल
बोट	= वृक्ष
भुजाण	= भोज वृक्षों का जंगल
तुणि	= तुन
रिंगाल	= बांस के समान लकड़ी जिससे डलिया बुनते हैं ।
शाल (सल्ल)	= चीड़
सौंल	= हरे वृक्ष की पतली टहनी ।

(१०) झाड़ी घास सम्बन्धी-

कुरि	= लाल पीले फूल वाली कँटीली झाड़ी

कैंरुवा = काँटेदार वनस्पति, खाने के भी काम आती हैं
गाज्यो = एक प्रकार की घास
घिगारु = एक झाड़ी जिसकी लकड़ी मजबूत होती है
चिल्मोड़ा = खट्टी पत्ती वाली घास
झटेला = पिश्ते के समान फल वाली, किन्तु अखाद्य काँटेदार झाड़ी
डामा (दारमां) = झाड़ी
तित पाति = कांटे रहित एक झाड़ी
दुन = लहसुन की पत्तियों जैसी सुगंधित घास
निङाल = पहाड़ी नरकुल
पुल = घास के बंधे गट्ठर
नोत = सूखी घास जो चिनगारी से ही जलने लगती है
फिज (दारमां) = एक घास, लोक विश्वास के अनुसार ये सीता के बाल हैं
बाबिल = घास जिसकी झाड़ू बनती है
बुग्याल = घास के हरे भरे चरागाह
रागान (दारमां) = फर के जंगल
रात्यान = रात्या के जंगल
लिगुण = घास
लुट् = वृक्षों पर बँधे सूखी घास के गट्ठर
सिमाउ = एक झाड़ी
सिनाक झाल = सिन नामक झाड़ी
सिसूंण = बिच्छू घास ।

२. कृषि विषयक शब्दावली—

(१) अनाजों के नाम—

आँखुलो = नवांकुर
काकुनि = भुट्टा
कुन्यूड. = धान का पुआल सहित रक्खा जाने वाला ढेर

कणिक, कौणी	= चावल के टूटे कण, मोटा अन्न
खालो	= खलिहान
ग्यूं	= गेहूं
छ्वागा	= भुटटा
घौत, गहत	= पहाड़ी दाल
चाण	= चान
चू, चुआ	= चौलाई के बीज
जुनंल	= भुटटा
झुंगर	= मोटा अन्न
बालड़	= अनाज की बालें
बीं, बिंय	= बीज
फाफर	= अन्न विशेष
भाँगिर	= भांग का छोटा दाना
भट्ट	= दाल जिसका बीज काला होता है
भुड़	= अनाज को पौधे से अलग करके अवशिष्ट भाग
मडुवा	= मोटा अनाज
मादिर, मानिर	= गोल दाने वाला महीन चावल
रैंस	= लोबिया की तरह बीज।

(२) भूमि संबंधी —

अधिया	= बटाई पर देना
अनाला	= खेत का निचला हिस्सा
इंचौव	= खेत की मेंड़
उकाव	= चढ़ाई
उपराऊँ	= ऊपर की जमीन जिस पर सिंचाई नहीं हो सकती
एक हलि	= एक दिन में जोतने योग्य भूमि
ओड़ो	= खेत में सीमा सूचक पत्थर
कमुन	= कमाया हुआ खेत
कनाला	= खेत का ऊपरी सिरा

कपश्या = नमी वाली जगह
कात्ति = छोटा खेत
कुलौन = नदी की घाटी में उपजाऊ जमीन
गड़ = छोटे बड़े खेत
गजार = खेत
गढाल, गढव = पशुओं के चारे के बोझ
ग्वाड़ = चरागाह, पशुशाला
गाँजो = दलदली भूमि
गूंठ = देवार्पित भूमि
गूल = खेतों में पानी पहुंचने के लिये बनाई गई नहरें
चौंर तप्पड़ = अच्छी चौरस भूमि
जँवाड़ि = जौ की खेती वाली जमीन
झांता = तराई की वंजर वाली जमीन
टानों = खेत का एक हिस्सा
टीट उखड़ = वंजर खेत
ठाँगर = लताओं को सहारा देने वाली लकड़ी
तलाऊँ = तलहटी की जमीन जिस पर सिंचाई हो सकती हैं
तल्ला = नीचे का
तैलफाट = धूप वाला भाग
थातवान = भूमि का वास्तविक स्वामी
नजवाणी = जहाँ खूब अनाज हो
पणखेत = पानी के निकट वाला खेत
पल्ला = उधर का
पगार = खेत की दीवार
पराल = पुआल
पुछड़ = खेत का हिस्सा
बाँज = बंजर खेत
बाड़ो = मकान के पास छोटा खेत
भिड़ = खेत की दीवार

मल्ला = ऊपर का
रेलो = ढालू जमीन
वल्ला = इधर का
सिरतान = वह आसामी जो बेदखल हो सकता है
सेरा, स्यारा = नदी के पास वाले उपजाऊ खेत
सेमार = दलदल
हाड़ा, हाड़ = छोटा खेत ।

(३) उपकरण संबंधी--

आंशि = हँसिया
करेठो = झाड़ू जो पेड़ पौधों की टहनियों से बनता है.
कशि = जमीन खोदने का औजार
कुच = घास का बना झाड़ू जो प्रायः घर के भीतर काम आता है ।
कुटइ, कुटल = गोड़ने के काम आने वाली कुदाली
घौल = अंगारे और गर्म राख रखने का स्थान
चिल = भूसा
चुल = रसोई घर,
जू = जुआ, बैलों के कंधों पर रखते हैं
छ्यूल, छिलुक = मशाल की तरह जलने वाली चीड़ की लकड़ी
डलौट = ढेलों को तोड़ने का उपकरण
परस, परसा = खार
वरूयांठ = लोहे की मोटी दरांती, टहनी काटने के काम आती है,
वनकटी, वनकोट = दरांती
भिनेर = आग
मोव = खाद
रमटा, रमट = छोटी कुल्हाड़ी

रिहाड़ा = हल के दोनों भागों को जोड़ने वाला भैंस के चमड़े का बना फीता

रौड़ = चूल्हा, जिस पर जाड़ों में आग तापते हैं

सग्गड़ = लोहे या टिन का बना आग तापने का चौकोर पात्र।

(४) माप परिमाण संबंधी--

घाणा = अनाज का ढेर

तामी = पाव भर पुराना माप

नाली = दो सेर के बराबर पुराना नाप

पाथा = चार माणे के बराबर पुराना माप

पिड़ँ = लगभग तीस सेर वजन का माप

बेत = एक बालिश्त

माणा = आधा सेर का पुराना माप, छ मुट्ठी के बराबर।

(५) गणना संबंधी--संख्यावाचक--

कुमाउँनी	(रजबार)	(भोटिया)	हिन्दी
यक	= ग	= तिग्	= एक
द्वि	= नी	= नस्य	= दो
तिन	= खुङ्	= सुम्	= तीन
चार	= पारी	= पी	= चार
पाँच	= पाँ	= डाई	= पाँच
छै	= तुरकी	= टुस्यु	= छः
सात	= खात्त	= नीस्य	= सात
आठ	= अट्ठ	= ज्यव	= आठ
नौ	= नौव	= गुई	= नौ
दस	= दस	= ची	= दस
ग्यार			= ग्यारह
बार			= बारह
तेर			= तेरह

चौद	= चौदह
पन्द्र, पन्नर	= पन्द्रह
सोल	= सोलह
सत्र	= सत्तरह
अठार	= अट्ठारह
उन्नीस	= उन्नीस
बिसि	= बीस ।
इक्काईस (एक बिसि एक)	= इक्कीस
बाईस (एक बिसि द्वी)	= बाइस
त्याईस (एक बिसि तीन)	= तेइस
चौबीस (एक बिसि चार)	= चौबीस
पच्चीस (एक बिसि पांच)..	= पच्चीस........
उण चालीस	= उन्तालीस
चालीस (द्वी बिसि)	= चालीस
इक चालीस (द्वी बिसि एक)	= इक तालिस
उण पचास	= उनचास
उणासठ	= उनसठ
उणत्तर	= उन्हत्तर
उणांसि	= उन्यासी
उण नब्बे	= नवासी ।

गुणात्मक संख्या—

दुण	= दुगना
तिण, तिगुण	= तिगुना
चौगुण	= चौगुना
पंचगुण	= पाँच गुना
छै गुण	= छै गुना
सतगुण	= सतगुना
अठ गुण	= अठ गुना
नौगुण	= नौगुना
दसगुण	= दस गुना।

क्रमात्मक संख्या--

पैंल = पहला
दुहर = दूसरा
तिहर = तीसरा
चौथ = चौथा
पंचूँ = पाँचवा
छट्टू = छठा
सतूं = सातवाँ
अठूं = आठवां
नऊँ = नवां
दसूं = दसवां।

भिन्नात्मक संख्या--

पव्वा = पाव, $\frac{१}{४}$
अद्धा = अद्धा, $\frac{१}{२}$
पौण = पौना, $\frac{३}{४}$
सवै = सवा $१\frac{१}{४}$
डयौढ़ = ड्योढ़ा $१\frac{१}{२}$
ढाम, ढैया = अढ़ैया $२\frac{१}{२}$।

ऋणात्मक संख्या–

एक कम दस = नौ
एक कम बीस = उन्नीस
तीन कम तीन बिसि = सत्तावन
एक कम सौ = निन्यानबे।

३. घर द्वार संबंधी शब्दावली—

(१) घर संबंधी–

आल = आला
ओड़ = मिस्त्री
क्यड़ = सूखी लकड़ी के पतले टुकड़े
कमेट = खड़िया मिट्टी

कर्‌याड़ी	= घर के पीछे का स्थान
क्वाड़	= कोना, घर का उपेक्षित अँधेरा भाग
कुथल	= बड़ा थैला, अनाज रखने के काम आता है
कुड़ी	= घर
खण्ड	= हिस्सा
खन्यार	= खण्डहर
खपाला	= मुहल्ला
खुटकूण	= काठ की सीढ़ी, प्रायः मकान के भीतर रहती है
खोली	= मकानों की कतार
गल्यार, गवाड़, गल्याट	= गाँव का रास्ता
गल्यूं	= पशुओं को बाँधने की रस्सी
गोठ	= गोशाला, निचली मंजिल
घट, घराट	= पनचक्की
घोल	= चूल्हे का वह भाग जहाँ जले अंगारे, गर्म राख रहती है।
चाख	= बैठक
छाना	= घास फूस की झोपड़ी जहाँ पशु बांधते हैं
छापरि	= छोटी डलिया, शोजो से बड़ी
छाण	= छत छवाना
जालो	= ताक
ज्यौड़	= सामान्य रस्सी
टोकरि	= छापरि से बड़ी
ड्वाका	= गहरी कंडी जो गोलाई में कम होती है।
डालो	= सबसे बड़ी टोकरी जिसमें घास रखते हैं
तरकेप (जोहार)	= तंबू, मकान बनाने के लिये प्रयुक्त होता है
तिवारी	= तिमंजला

दार = लकड़ी, बल्ली
देलि = देहली
पटाल = छत के भीतर लकड़ी की बनी सामान रखने की जगह
पटाँगण = आँगन
पाख = ढालू छत
बगस = सन्दूक
बाखलि = गाँव में मकानों की पंक्ति
भकार = अनाज रखने का पात्र
म्वाव = द्वार का चौखटा
मोरी = रोशन दान
शोजो = सबसे छोटी टोकरी
शाङ्व = साँकल
हुंल = द्वार के पीछे अर्गला के स्थान पर लगने वाला चौखटा।

(२) परिवार संबंधी–

आमा = दादी
अन्वाल = भेड़ों की देखभाल हेतु नियुक्त चाकर
अमरीचा (दारमां) = भोटिया विश्वास के अनुसार आत्मा का निर्देशन करने वाला व्यक्ति
कठ बौज्यू = सौतेली माँ होने पर पिता के लिए संबोधन
कठुवा = अवैध संतान
कैंजा = विमाता, मौसी
कैनी = दास
गुसैं = स्वामी
गुस्याण = घर की मालकिन
चेहड़ि = लड़की
ज्याड़जा = ज्येष्ठ माँ, ताई
ज्याठ बौज्यू = बड़े पिता, ताऊ

जवैं	= दामाद
ज्यू	= आदर सूचक संबोधन
ज्वे	= पत्नी
तरम (दारमा)	= मध्यस्थ व्यक्ति
दादु	= बड़ा भाई
देराणि	= देवरानी
नानज्यू	= पति कीं बड़ी बहिन
नानछिन	= बचपन
नानतिन	= बच्चे
पोथा, पोथी	= बच्चा बच्ची
बड़बाज्यू	= दादा जी
ब्वारि	= बहू
ब्योली	= सद्यः विवाहिता
बुड़ां	= श्रीमान
बौड़ि, बौउ	= बहू
बुबू	= बुआ
बौराण	= बहू
बैग	= पुरुष
भिना	= जीजा,
भुरीं	= घरेलू काम काज के लिये नियुक्त नौकर
भांग	= हिस्सा
मालकोट	= ननिहाल
मवास	= परिवार
मितुर	= मित्र, संबंधी
मैं, मयेड़ि	= माता
मैंत	= मायका
मैंतिया	= मायके वाले
रस्यार	= रसोइया

राठ	= घराना, कुल
श्वार	= बिरादर
स्यैंणि	= स्त्री
सौर	= ससुर
सौरास	= ससुराल ।

(३) भोज्य पदार्थ संबंधी—

उगल	= पत्तीदार सब्जी
खाणो	= भोजन
खुस्याणि	= मिर्च
गदुवा	= कद्दू
गास	= ग्रास
चूख	= खटाई, खट्टा
चाक्ती	= चावल को पीस कर, उबाल कर बनाया गया पेय
जानदारु	= कच्ची शराब
ज्या	= नमकीन चाय जिसमें घी छोड़ते हैं ।
जौल	= भट्ट को पीस कर बनाया खाद्य पदार्थ
झुङर	= ज्वार की तरह मोटा अन्न
झोइ	= कढ़ी
ठठ्वाणि	= विभिन्न दालों को मिला कर पकाया जाने वाला रस
डुबुक	= दाल को पीस कर बनाया गया पदार्थ
तोरयां	= तरोई
तरुड़	= कंद विशेष
दइ	= दही
नौणि	= मक्खन
पयो, पलयुं	= कढ़ी
पिनालु	= वंडा
फाफर	= कोटू
फांण	= आटे को घोल कर बनाया गया पेय

फुपरि (दारमां) = एक स्वास्थ्यप्रद सब्जी, एक पौधे से हजारों बीज
भुटुवा, टपकिया = सूखा साग
मौ = शहद
लगड़ = मीठी पूरी, पक्वान्न
सिंगल = पिसे चावल अथवा सूजी से बना जलेबी के आकार का पक्वान्न
सैं, साय = दही में सूजी को भिगाकर बनाया गया सूखा हलुवा ।

(४) घरेलू बर्तन सम्बन्धी—

उखव = ओखल
कसिणि = कांसे या कसकुट का बना पानी पीने का लोटा
कड़ै, कढ़ै = कुंडों वाली कड़ाही
कुंभि = तांबे की छोटी गगरी
खय = जंङ, मोर्चा खाना
गड़ुवा = टोंटीदार लुटिया
घंटी = पानी पीने की पीतल की लुटिया
चड़िया = काठ का बना सुराहीदार बर्तन
चासिणि = बड़ी कड़ाही
जाम = बिना कुंडों की छोटी कड़ाही
जुबरिया = मोटे लोहे की गहरी कड़ाही
टिटरि = फूटा बर्तन
ठेकि = काठ का गहरा बर्तन जिसमें प्रायः दही जमाते हैं
डाड़ू = करछुल
डाव = डिब्बा
ढक्कण = ढक्कन
थकुलि = थाली
पण्यां = पलटा

फौंलि (जोहार) = तांबे का कलश
ब्याल = कटोरा
भदेलि, भद्याव = जाम से बड़ी बिना कुंडों की कड़ाही
भड्डू = पतली गर्दन का कांसे का भारी बर्तन
भानकुन = वर्त्तन
मुनड़ = कड़ाही के कुण्डे
सनेसि = संड़सी
सिरून = रस्सी या कपड़े की बनी गोल गद्दी
हड़पिया = काठ का बना ठेकी से बड़ा बर्तन जिसमें घी रखते हैं।

४. व्यक्ति सम्बन्धी शब्दावली—

(१) अंग-प्रत्यंग सम्बन्धी--

आड = शरीर
आंगुल = उंगली
आनड़ि-पिनड़ि = अंतड़ी पसली
कनखी = आँख की कोर
कन्यूड़ = कान
कपाई = कपाल
कनगू = कान का मैल
कल्ज = कलेजा
कान = कंघा
काण आंगुलि = छोटी अंगुली, कनिष्ठिका
कोखि = कोख
खाप = मुंह
खुट = पैर
खुवैंण = गंजा
गिच = जबडा
गिज = मुख
चुच = स्तन
जिबड़ि = जीभ

जुङ	= मूंछ
ढ्यस	= धक्का
ढ्याङ	= कूल्हा
तड़ि	= शरीर
थोल	= होंठ
दंत पाटि	= दंतावली
नङ	= नाखून
पौंठ, पौंची	= कलाई
भांटा	= पसलियाँ
मुंड	= खोपड़ी
स्यून पाटि	= मांग
सिङाण	= नाक का मैल
हतगुलि	= हथेली ।

(२) कायिक विकार सम्बन्धी--

अंख्यात	= आँख का रोग
अलै बलै	= अलाय बलाय, भूत प्रेत लगने से उत्पन्न रोग
अध कपल्या	= अर्ध कपाली
उलुर	= खांसी का दौर
उसाण	= सूजन
कन्यै	= जीव जन्तुओं के काटने पर लगने वाली खुजली
काण	= काना
काला	= बहरा
कामण	= कांपना
कुनीण	= दांत खट्टे होना
खवै	= वायु विकार से उत्पन्न जोड़ों और मांसपेशियों का दर्द
खाजि	= अज्ञात कारण से रोग जन्य खुजली
गन	= अपान वायु

गना	= गल्ल घंट
घुन घिनाव	= अशक्त घुटने
चड़क	= टीस के साथ अचानक उठने वाला दर्द
चरैं, चरचरी	= कटे अंग पर पानी पड़ने से होने वाला दर्द
चिमड़	= झुर्रियाँ पड़ा हुआ
चिलैंलि	= अनाज की भूसी चिपकने पर होने वाली खुजली
छ्यां	= छींक
टुन्न	= बेहोशी की अवस्था
टोल्या	= बहरा
टौनि	= शीत से हाथ पैरों में होने वाला दर्द
दँताल	= दाँत का दर्द
पटै	= बहुत काम करने के बाद की थकान
पिल	= फोड़ा
बाटुइ	= हिचकी
बौलाट, बौल्याट	= पागलपन
मशि मशि	= पेट में रह रह कर होने वाला हल्का दर्द
मुना	= सिर दर्द
रिंगाइ, रिंगै	= चक्कर आना
लकवा बाइ, लखुवा बाइ	= लकवा पड. जाना
लाटा	= गूंगा ।

(३) वस्त्र संबंधी–पहनने के वस्त्र–

(पुरुष)—

कनछोपी	= कान ढकने की टोपी
खल्दी, खल्ती	= जेब
गजू (भोटिया)	= ऊनी पट्टू का चूड़ीदार पाजामा

छप्पा टोपूसी (भोटिया) = नेपाली ढंग कीं टोपी, जिसके ऊपर पगड़ीं पहनते हैं
ज्यु जाङ (भोटिया) = कोट के बाहर कपड़े का लम्बा टुकड़ा कमर में बाँधते हैं
न्याजा (भोटिया) = रंगीन टुकड़े
पौगौड़ (भोटिया) = कमर में बांधने का सादा कपड़ा
फतुई = वास्कट
ढुप टौल = बदले जाने योग्य पुराने वस्त्र
भिदड़ = फटे पुराने वस्त्र
भोटि = वास्कट
रागा (भोटिया) = हाथ का बुना सफेद ओवर कोट
लुकुड़ = कपड़े
शुस्वाल, सुराव = पाजामा
सिन (भोटिया) = सफेद मलमल की लंबी पगड़ी

(स्त्री)—

आँगड़ = पूरी बाँह की कुर्त्ती
ख्वंपि (भोटिया) = सिर ढकने का सफेद कपड़ा जो पुरुषों के सामने पर्दे का काम करता है।
गेजू (भोटिया) = पेटीकोट नुमा ऊँचा कपड़ा, किनारों पर डिजाइन
गेका कपसू (भोटिया) = घारीदार, ऊन का बना दुशाला
घाघरि = घाघरा
च्युति (भोटिया) = थैलीनुमा रंगीन छींट की टोपी
च्युङ (भोटिया) = ठोस ऊनी कपड़े का बुना लंबा टुकड़ा
जुंगो (भोटिया) = पैरों तक लम्बा फ्राक
जीव्यांग (भोटिया) = कमर में बांधने का सफेद कपड़े का लम्बा टुकड़ा
झ्वंपि (भोटिया) = पर्दा
झगुला, झ्वगौल = बच्चों का ऊपर से नीचे तक लंबा फ्राक

पिछौड़	= दुपट्टा
बोकचा (भोटिया)	= घुटनों तक ऊँचा रंगीन ऊनी जूता
रायल्दा (भोटिया)	= सूती, ऊनी कपड़े की रंगीन आस्तीन जिसे च्युड के साथ पहनते हैं।

ओढ़ने और बिछाने के वस्त्र–

कामल	= कंबल
खातड़	= गद्दा, बिछौना
गुदमा	= मोटा ऊनी कंबल
गुदड़ि	= फटा पुराना बिस्तर
चुटुक	= रंगीन छोटे ऊनी कालीन
थुलमा	= मोटे रोओं वाला ओढ़ने का कंबल
पशम	= पशमीना
पाँखि पंखी	= पतली ऊनी चादर
दन	= बिछाने का मोटा कालीन
दिसाण	= बिस्तर।

(४) आभूषण संबंधी—

कमर ज्यौड़ि	= करधनी
काँइल, काँगिल	= कंघी
खुङले (भोटिया)	= चाँदी की हँसुली
गोखर	= कान का आभूषण
चर्यो	= मंगल सूत्र
चन्द्रहार	= गले का हार
च्युङ चौं (भोटिया)	= चांदी की बड़े दानों की माला
छल्ला	= पैरों की उंगलियों में पहनने के चांदी के छल्ले
झाँवर	= झाँझर
टीप	= गुलूबंद
तिलड़ी	= तीन लड़ों वाला गले का आभूषण
तिङ जीरू (भोटिया)	= हरे पीले रंग का कीमती पत्थर, माला में पहनते हैं

घागुल	= बच्चों के हाथ के चांदी के कड़े
नेवर	= नूपुर
नाग (भोटिया)	= चांदी के कड़े
पौंचि	= कलाई में पहनी जाने वाली सोने चाँदी की पहुँची
पिठार	= छोटा श्रृंगार दान, रोली रखने का पात्र
फुल्लि	= नाक की लौंग
मुनड़ि	= अँगूठी
मुरकी (भोटिया)	= चांदी की बालियां
मैंगशाल (भोटिया)	= मूंगे के दानों की माला
वलन (भोटिया)	= माला में पीले रंग का पारदर्शी पत्थर
वलठड. (भोटिया)	= चमड़े की डोरी में गुंथी हुई चांदी के रुपयों की लंबी माला जो एड़ी तक पहुँचती है।
वुजन वाली (भोटिया)	= सिर के अगले भाग से कानों तक दोनों ओर लटकने वाली चांदी की जंजीर
वोहरा (भोटिया)	= नाक का चौड़ा फूल
हथ कान	= आभूषण।

५ सांस्कृतिक शब्दावली—

(१) अन्धविश्वास संबंधी—

आङमुनी लेना	= वलि का बकरा जब पानी से भीग कर शरीर हिलाता है
आँचरी	= अप्सरा, प्राय: लाल वस्त्र पहनती हैं
आछरी-कींचरी	= परियां
औतरण, औसाण	= ग्राम देवता का किसी के शरीर पर उतरना
उच्यूण रखना	= मनौती मानकर देवता के निमित्त कुछ भेंट रखना
एड़ी	= ग्राम देवता, सिर के ऊपर आँख होती है

कलविष्ट	= ग्राम देवता, मुरली बजाता है
खवीस	= उग्र प्रकृति वाला श्मशान का भूत
खिचड़ी फूंकना	= भूत प्रेत के शमन हेतु प्रयुक्त सामग्री
घात डालना	= किसी के अनिष्ट हेतु मंदिर में संकल्प करना
चौमूं	= पशु रक्षक ग्राम देवता
छव	= भूत प्रेत
टोला, ट्वाला	= वह प्रेतात्मा जो रात में टिमटिमाते प्रकाश की तरह दिखती है
बधाण	= गायों का देवता, इसे बलि नहीं दी जाती
बोकसाड़ी विद्या	= बोकसा जाति द्वारा जादू टोना करना,
भुम्याल, भूमिया	= भूमि रक्षक ग्राम देवता
मसाण	= श्मशान का भूत
रूणियाँ	= पत्थर के घोड़े पर चढ़ कर घूमने वाला भूत
वेद लगाना	= प्रेत बाधा निवारण हेतु छत पर डांसी पत्थर और घी कुवार का पौधा रखना
वैगरसैं (जोहार)	= मार्ग देवता
सैम	= सरल स्वभाव का लोक देवता
हुमड़	= जो मर कर भूत बन जाए।

(२) रीति प्रथा सम्बन्धी--

कुरमल	= विवाह के समय वर, वधू का चेहरा रोली चन्दन से सजाना
गगुरास	= गोग्रास
ग्रहजाग	= जनेऊ से पहले दिन शाम को होने वाला गृहयज्ञ
छट्टी चौक पुरण	= छठी का चौक पूरना
ज्यूंति पूजा	= जीव मातृका पूजन

जागर	= देवता जगाना
ढोक	= प्रणाम
ढुंग पलटँ बे र	= कभी न लौटने का कौल करके
ढुरिंग (च्वन्)	= दारमां भोटियों का मृतक संस्कार
तिथाण	= श्मशान
तैं लगाना	= शुभ कार्य के लिए चूल्हे पर तवा रखना
ताव हालण	= गरम लोहे की सलाख से पेट को दागने की प्राचीन प्रथा
नातक	= जन्म होने पर ग्यारह दिन की अशुद्धि
नीव सेऊंण	= शुभ कार्य के पश्चात् पूजा में बची हुई वस्तुओं कों जलार्पण
पैंट अपैंट	= शुभ अशुभ तिथि
पठौन	उपहार
पासिणी	= अन्न प्राशन
बगवाल	= दिवाली
बिटमूण	= विवाह की ज्योनार के गाली गीत
भिटौलि	= चैत्र मास में बहिन को भाई द्वारा दी जाने वाली भेंट
रांग बांग	= दारमां भोटियों के अविवाहित युवक-युवतियों का सामूहिक मिलन स्थल
रत्याइ	= रतजगा।

(३) पर्व-त्यौहार सम्बन्धी--

ओलगिया	= सिंह संक्रांति, पहले बड़े लोगों के यहां भेंट ले जाते थे जिसे 'ओलग' कहते हैं।
कौतिक	= मेला
खतडुवा	= भाद्र पद की संक्रान्ति को मनाया जाने वाला त्योहार
घुघुतिया	= मकर संक्राति को मनाया जाने वाला त्योहार

छरड़ि = होली

धवला = दारमां भोटियों का देवता, इसे मनाने के लिए दीवाली पर सारा घर साफ करके, श्वेत वस्त्र पहन कर, मंदिर में नगाड़े बजाकर पूजा करते हैं।

स्यशैं (जोहार) = महादेवी

सातूँ-आठूँ = जन्माष्टमी के आसपास स्त्रियों का ब्रत त्योहार

सिरि पंचमी = वसन्त में मनाया जाता है, खेतों में उगे जौ के पौधे सिर पर रखते हैं

हर्यालि = चैत्र, श्रावण, आश्विन में दशमी के दिन दिन मनाया जाता है। घर में बोए गेहूं जौ के हरे पौधे सिर पर रखते हैं।

(४) पाठ-पूजा सम्बन्धी—

आँखत = अक्षत

अर्घ्य = पूजा में जल चढ़ाना

ऐपण = अल्पना

गणतुवा = भविष्य बताने वाला

घन्ट = घंटी

डिकार सावन में बनाई जाने वाली मिट्टी की शिव पार्वती की रंगीन मूर्त्तियाँ।

धामी (जोहार) = गाँव वालों का मान्य पुजारी,

धुपैंण = धूप अगरबत्ती की गन्ध

धूप = धूपबत्ती

निरसौ = यजमान के यहां का सीधा-पानी

पिठ्या, पिठाक = रोली

पुछ्यारा = भविष्य वक्ता, मुख्यतः ब्राह्मण

बिस्वार = चावल पीस कर बनाया गया तरल = पदार्थ

(५) लोक वाद्य संबंधी—

औजी	=	विशिष्ट लोक गायक
उड़ प	=	एक प्रकार का ढोल
कमच्यों	=	एक वाद्य
जौंल मुरली	=	जुड़ी हुई मुरलिया
डमर	=	डमरू
ढोल	=	बड़ा ढोल
दमुआ	=	छोटा नगाड़ा
नङाड़	=	नगाड़ा
नर्रसिह	=	बिगुल की तरह एक बाजा
तुरतुइ	=	लंबा पतला बाजा
बिणाइ	=	तार वाद्य, दांत से दबा कर बजाते हैं।
भोकरी	=	बिगुल की तरह का छोटा बाजा
मुरली	=	बाँसुरी
हुड़का	=	प्रसिद्ध वाद्य।

६ विशिष्ट शब्दावली—

(१) भाव बोधक—

अन्वार	=	आकृति साम्य
असण, असन्द	=	भारी परेशानी
असज	=	असुविधा
अंग्वाल	=	गले में हाथ डालकर मिलना, आलिंगन
अण कस्सै	=	कुछ अजीब जैसा
अण हत्ति	=	कोई अनहोनी बात या घटना
अरड़ पट्ट	=	तुषार पात की अत्यधिक ठंड
उचूंण	=	ऊपर को उठाना
उड़्यास	=	दुखमयी शंका
उज	=	शक्ति सामर्थ्य
कइकइ	=	करुणा विगलित होने का भाव
कजिया	=	छोटी छोटी बात पर झगड़ा

कहड़ाट	=	बकवास
कुकरीण	=	कुत्ते की गति को प्राप्त होना
कोचण	=	किसी तंग स्थान पर वस्तु को बलात् ठूंसना
क्वीड़	=	स्त्रियों की आपसी गपशप, जिसमें पर-निंदा का भाव सम्मिलित है।
खङ्यारी	=	डाहपूर्ण
खाँत	=	दयार्द्र होने की स्थिति
खुसबुसाट	=	कानाफूसी
खोसण	=	खोंसना
खीँयैन	=	जंग लगे हुए लोहे का स्वाद
खीँखैन	=	पुराने चावल के जलने की गंध
खल्यौ	=	लकड़ियों का ऊँचा ढेर
गुलगुलिया	=	मीठा
गौतैंनि	=	गोमूत्र की गंध
घन्तर	=	तेजी से फेंका गया पत्थर
चान चानँ	=	देखते देखते
चाकल, चाकव	=	चौड़ा
चिङान	=	चिड़चिड़ा
चिरौड़ि	=	विशेष प्रकार की खिझलाहट
चीस	=	आग की लपट छू जाने पर होने वाली अनुभूति
चुटकी-पटकी (जोहार)	=	अच्छी भली
चुरैंनि	=	पेशाब की गंध
चिथड़ैंनि	=	कपड़ा जलने की गंध
छयौल, छालौ	=	चुस्त, फुर्तीला
छितर्याट	=	ओछापन
ङिङ (जोहार)	=	जिद
झ्यास्स	=	एकाएक चौंकने का भाव
टोक्याव	=	चिल्लाहट

डोइण, डोलीण	= निरर्थक घूमना
तीस	= प्यास
तैल चिट्ट	= सुहावनी धूप
थुपड़	= किसी वस्तु का अव्यवस्थित ढेर
दिक्ख (जोहार)	= उलझन
दुछौंण, दुछ्यूंण	= ताना
दैण हुण	= दयालु होना
धो धो	= बड़ी कठिनाई से, जैसे तैसे
धौ	= संतुष्टि
नख चौल	= नाक भौं चढ़ाने वाला
नरै	= मिलन की उत्कट अभिलाषा में प्रेमी की तीव्र याद
नाठ	= शून्य कर देना
निमिखिणि (जोहार)	= चलायमान
पिरपिला (जोहार)	= बहुत दुबला
फराड	= खूब फैला हुआ
फदित	= फजीहत
फाम	= याद, स्मरण
फसक, फौंस	= निराधार बात, गप्प, अतिरंजित वर्णन
फिटकार	= शाप
फेड़ना	= निवारण करना
वन्धार	= जलधारा जो बरसात में मकान से चूती है
विगलिया	= अलग हुआ, वियुक्त
बौलिया	= पगलाया हुआ, श्रमिक मजदूर
वतको	= हल्के ढंग की बातें
भन्यौल	= भंड़ैती
भभरीण	= रास्ता भटकना
मलकै-मुलकी वेर	= चिकनी चुपड़ी बात करके
राफ	= दूर से आग की लपट लगने की अनुभूति

रुङ टुङ = रोनी सूरत
लैण = दुधारु गाय, भैंस
शिरड़ि = दृढ़ निश्चय
सड़ैनि = सड़े हुए पदार्थ की गंध
सांगुड़ि, सांङड़ि = सँकरा
हिरस = ईर्ष्या
हुकीण = आश्चर्य या भय से चेतना शून्य सा होना
हुलार = उतार
हौंसी (जोहार) = खुश मिजाज, जिन्दादिल।

(२) क्रिया व्यापार बोधक---

अधिन्यारि = कधे पर ढोए जाने वाले भार का अगला हिस्सा
उपाड़ना = ऊपर की ओर झटके से खींच कर निकालना
उच्येड़ि खाण = बहुत परेशान करना
उताण = पैर फैला कर पीठ के बल लेटना।
उधारण = तोड़ना गिराना
कहड़ाना = कौवे की कड़कड़
कुल्यूण = सिंचाई करना
कुकड़ीण = पीठ से झुक जाना
केकड़्योल = अपनी ही बात पर अड़े रहना
खकोलण = केवल पानी से बर्तन या कपड़े धोना
खितीण = गिर जाना
खिरोलण = कुरेदना
खड़ण, खनण = खोदना
गच्छ्यूण = गूंथना
गुजीण, गोजीण = लड़ना
गोठ्यूंण = गोठ में बन्द करना
गिजूंण = मुंह बनाकर चिढ़ाना

गनगन	= पूरी तरह, ऊपर से नीचे तक
घुरकण	= गोलाई में लुढ़कते हुए गिरना
चटकूंण	= डंक मारना
चुटयूंण	= चूटना
चुठ्यूंण	= स्वयं खाना, दूसरे को उसकी प्रतीति कराना
छड़ण	= खेत में बीज डालना
छपकूंण	= हाथ से छपका कर कपड़े धोना
छिरण	= धीरे धीरे किसी वस्तु का गिरते रहना, छीजना
छिरकण	= घुस जाना
टपुक लगूंण	= गुड़, चीनी थोड़ा थोड़ा मुँह में डालते हुए चाय आदि पीना
टिपण	= अनाज की बाल या फूल आदि टीपना
टुलटुलाना	= आँखों में आँसू भर आना
डामण	= गरम लोहे आदि से दागना,
डाँसण	= गरम पत्थर से दागना
ढिमणि	= हिल मिल जाना
ढोलीण	= किसी द्रव पदार्थ का बर्तन से गिरना
थेचण	= विशेष प्रकार से कूच कर पीसना
दोपण	= लुकाछिपी
धकड्यूंण	= कँटीले डंडे से मारना
धत्यूण	= पुकारना
धुंगार	= छौंकने पर सुगंधित धुंआ उठना
निमाण	= बुझ जाना
नेलण	= निराइ करना, निगल जाना
पत्यूण	= विश्वास करना
पंङ्गुरना	= कल्ले फूटना
पसकना	= परोसना
पछन्यारी	= कंधे पर ढोये जाने वाले भार का पिछला हिस्सा

पैट्यूंण	= लड़की आदि को बिदा करना
फाल मारण	= लंबी छलाँग लगाना
फोकीण	= गेहूं चावल आदि का बिखर जाना
बटीण	= तैय्यार होना,
बुकूंण	= काट खाना
बुरक्यूण	= ऊपर से नमक मिर्च आदि छिड़कना
बोकण	= पीठ पर बोझा ढोना
बोत्यूण	= बातों से मनाना
मलासण	= तेल लगाकर हल्के हाथ से मलना
माँजण, मासण	= राख या मिट्टी से बर्तन मांजना
मार झपैंका	= मौज कर
रिंगण	= गोल गोल चक्कर लगाना
लफाइण	= स्वयं गिर पड़ना
लझोड़ण	= जोर जोर से हिलाना
लघरीण	= आराम से कहीं पर पीठ लगाकर बैठना
शारण	= एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाना
शोट्यूण	= सोंटे से मारना
समेरण	= समेटना
हन्तरैनि	= सूती कपड़ा जलने की गंध
हुङरना	= अंकुर निकलना
हुलरण	= नीचे उतरना।

(३) अनुकरण मूलक--

अलवलाट	= हड़बड़ाहट की स्थिति
अफुल्याट	= गर्व सूचक भाव
उबाइ	= भैंस का बोलना
कुकाट	= पशुओं के बच्चों का चिल्लाना
कटाकट	= किसी चीज को काटने में होने वाली ध्वनि
क्वां क्वां	= कौवों की आवाज

कलबलाट	=	पानी के सामान्य रूप से बहने की ध्वनि
खुन खुन	=	बच्चों का रुक रुक कर रोना
गड़गड़ाट	=	बादलों का गरजना
गजबजाट	=	वस्तुओं को उलटा पुलटा कर देना
गनगनाट	=	नाराजी सूचक ध्वनि
गमगम	=	मुँह फुलाकर गंभीर मुद्रा धारण कर लेना
घुराट	=	खर्राटे भरना
घुघौट	=	नदी के तेज बहने की आवाज
घनमनाट	=	बकरियों के गले की घंटियों की ध्वनि
चुचाट	=	पक्षियों के मिलकर चिल्लाने की ध्वनि
च्यां म्यां	=	बच्चे के रोने की ध्वनि
छणमणाट	=	छन मन की आवाज, प्रायः कीड़ों मकौड़ों की
छणकूण	=	छनकाना
झटाझट	=	जल्दी जल्दी
टड़ाक	=	तड़ाक से तोड़ने की ध्वनि
टुपाटुप	=	जमीन पर टुपटुप करते हुए चलना
डुडाट	=	गाय के लगातार बोलने का शब्द, रँभाना
धमतरि	=	लपटों से युक्त आग
ध्वां पवां	=	बैल की तरह फुंकारने की ध्वनि
धौराट	=	मोटर चलने की आवाज
घिरघिराट	=	चलने दौड़ने की ध्वनि, मकान के भीतर
नौराट	=	कराहने की ध्वनि
फड़फड़ाट	=	कपड़ों से उत्पन्न होने वाली ध्वनि, चिड़ियों के पंखों की फड़फड़ाहट,
शकशकान	=	हाँफना
सरसराट	=	सर सर कर चलने की ध्वनि
सिस्यौट (जोहार)	=	नदी के बहने की ध्वनि

सुसाट	= वर्षा के तीव्र जल प्रवाह द्वारा उत्पन्न शब्द
ह्वाङ्, ह्वाङ्	= तिब्बती कुत्तों की आवाज ।

(४) सामासिक शब्दावली--

अलीत-पलीत	= बहुत गंदा रहने वाला
अदम बाट	= बीच रास्ते में
अर्याठी कर्याठी	= अगल बगल
आङो-बाङो	= टेढ़ा मेढ़ा
आँख-भरुवा	= आँख भर कर देखने वाला
आड. भीड़	= मल्ल युद्ध
उज्यौल पंज्यौल (जोहार)	= गोरा, उजला और स्वस्थ
उड़ौवा-फुकौवा	= खूब अंधाधुंध खर्च करने वाला
उकुश मुकुश	= दम घुटने की स्थिति
एक तलिया	= तवे में एक ओर अधिक आँच लगा भोजन
ऐंच पेंच	= वस्तुओं का लेन देन
कर बछ	= बकरी का बोझा
घरपैंस	= गृह प्रवेश
चकल पतिया	= चौड़े पत्ते वाला
छेकार छेकार	= खंड खंड
जौंल पाणि (जोहार)	= साथ साथ बहती दो धाराएँ
ढिगरी सार (जोहार)	= बकरी वालों जैसा हाथ
दैल फैल	= किसी चीज की प्रचुरता
धारै धार	= बिल्कुल सीधे जाना
फुट खोरिया	= अभागा
भुला भुली	= भाई-बहिन
ब्याण तारा	= भोर का तारा
सौल कठौल	= इधर की उधर लगाना ।

(५) अन्य शब्द—

शास	= दल (पार्टी)
उपटापि	= शरारती
कठेरू	= मुर्दा ले जाने वाले
कचवायी	= निन्दा करने वाला,
कच्यार	= कीचड़
कुल्या (जोहार)	= दुलार से बच्चों को संबोधित करना
घात	= अनिष्ट हेतु तांत्रिक क्रिया
छकाल	= दोपहर
छिला (जोहार)	= नारी सुलभ आत्मीय संबोधन, छोटों के लिये
जोड़	= छन्द की पंक्तियां
जौंलिया	= दूत
डुम्यौड़	= डोमों की बस्ती
दुल	= बड़ा छेद
घात	= दूर तक गूंजती हुई आवाज
पुछ्यूड़	= पूंछ
फसक-फराल	= कोरी गप्प
फ्यौंड. तीर (जोहार)	= गोफन, ऊन की बनी रस्सी जिसके बीच पत्थर रखने की चौड़ी पट्टी जुड़ी रहती है।
ब्याखुलि	= सांझ
वक्कल, बग्गल	= छाल या छिलका
वाना	= सुन्दरी
विरूड	= चना, गेहूँ, जौ, मटर, उड़द का मिश्रण
वुतकर	= श्रम करने वाला
वुफ्याल (जोहार)	= वुफूं स्थान के निवासी
रूपोत	= सुन्दरी
सौन्याण	= भोटियों का निवास स्थान
हुण देश, हुन देश	= तिब्बत।

(घ) सहायक ग्रंथ सूची

१. अंग्रेजी पुस्तकें—

1. 'Memoirs of Dehradun'—G. R. C. Williams, 1874.
2. 'The Himalayan Districts of the North Western Provinces of' India'.– Edwin. T. Atkinson—
   N. W. P. And Audh. Govt. Press, Allahabad, 1882.
3. 'Proverbs and Folklore of Kumaon and Garhwal'—
   Pt. G. D. Upreti, Ludhiyana, 1892
4. Western Tibet and British Border Land—
   Charls. A. Sherring'—London, 1906.
5. Descriptive list of the Martial Castes of the Almora District, U.P.'—Pt. Ganga datta Upreti, Lucknow, Methodist Publishing House, 1907.
6. 'Linguistic Survey of India'—Sir, George. Abraham Grierson, Vol. I. Part I, Introductory; vol IX· Part IV, Calcutta, 1916
7. 'Kumaon Local Customs'—Pannalal, Allahabad Govt. Press, 1920.
8. 'Himalyan Travels—Th. Jodhsingh Negi, Calcutta. Chukravarti, Chattergi and Co ltd. 1920.
9. 'Nainital A Gazetteer'—H. R. Nevill, Lucknow, Govt. Branch Press, 1922.
10. 'Religion and Folklore of Nothern India'—William Crooke Ox ford University Press; 1926.
11. 'Historical and Political Notes on Kumaon—D. D. Tewari, Anglo Arabic Press', Lucknow, 1923.
12. 'Almora A Gazetteer'—H. G. Walton, Allahabad, Supdt. Govt. Press, U. P. 192?.
13. 'The Khasa Family Law'—L. D. Joshi, Allahabad, Govt. Press', 1929
14. 'Holi Himalayas'—E. S. Oakley.
15. 'Himalayan Folklore—Rev. E. S. Oakley and Taradatta Gairola 1934.

16. 'Parmars of Kotalagarh Principality, Lohaghat, Kali Kumaon'—Lakshman Singh Parmar, Dehradun., The Express Printings Works, 1934
17. 'Pilgrims Wanderings in the Himala'—P. Barron, Agra Press, 1844.
18. 'Hindu customery Law in Kumaon'—Prasanna lal III Edition. 1942.
19. 'Races and cul tures of India—D. N. Majumdar, Lucknow First Published, 1944.
20. 'The Folk Dances of India—Projesh Bannerji Kitabistan, Allahabad. 1944.
21. 'The Social Economy of the Himalayas'—S. D. Pant, London, 1935.
22. 'Stowell's Manual—(A manual of the land Tenures of The Kumaon Division Hill Tracts)—1947.
23. 'Lonely Furrows of The The Border land'—K. S. Pangtey. The Universal Publishers Ltd., Lucknow, 1949
24. 'Kailash. Mansarovar'—Swami Pranvanand. Calcutta, 1949
25. 'District Census hand Book, U.P, Almora and Nainital', Tables—D—1, 1951.
26. 'U. P. Census Report'—1951
27. 'Man Eaters of Kumaon'—Jim Corbett, Penguin Books Ltd. Harmonds Worth, Middlesex, 1955
28. 'A History of India'—J. G. Powell Price, London. T. N. and sons Ltd. 1955.
29. 'Folk dances of India'—Publications division, Govt. of India, 1956.
30. 'Aurengzeb'—Jadunath Sarkar, 5 volumes,
31. 'U.P. Census Report.'—1969
32. 'Garhwal Ancient and Modern'—Dr, Patiram..
33. 'Geology of a Part of Himalayas—K. S. Baldiya. Ph. D. Thesis, Lucknow University, 1966.

34. 'An Out line of Kumaoni Grammer'—
Apte and Pattanayak, 1967.

35. 'The Economy of Kumon : A Field Survey—G. G. Pande
P.H.D. Thesis, Lucknow University, 1969

36. Commercial Policy of the Mughals'—Dr. D.D. Pant

37. 'Census of india'—Series 1. 1971.

38. 'A Comparative and Etymological Dictionary of the
Nepali Language'—Ralph Lilley Turner..
Kegan Paul, London. 1931.

२. हिन्दी पुस्तकें--

१. 'पर्वतीय भाषा प्रकाशक' (हिल डायलेक्ट्स ऑव कुमाऊँ)—गंगादत्त
उप्रेती, डिबेटिंग क्लब प्रेस, अलमोड़ा, जून १९००

२. 'गढ़वाल का इतिहास'--श्री हरिकृष्ण रतूड़ी,
गढ़वाल प्रेस, देहरादून, १९२०

३. 'कुमाऊँ का इतिहास'--बद्रीदत्त पांडेय,
शक्ति कार्यालय, देशभक्त प्रेस, अलमोड़ा, १९३७

४. 'कूर्माचलीय साह समाज'—देवीदत्त तेवाड़ी
अलमोड़ा, १९३९

५. 'कुमाऊँ'—राहुल सांकृत्यायन,
ज्ञान मंडल लिमिटेड वाराणसी, सं० २०१५

६. 'हिन्दी साहित्य का बृहत् इतिहास'--१६वाँ भाग
(हिन्दी का लोक साहित्य)--नागरी प्रचारिणी सभा, काशी,
स० २०17 वि०

७. 'कूर्माचलीय इतिहास में द्वाराहाट चौधरी--घनश्याम चौधरी
द्वाराहाट चौधरी भ्रातृ मंडल, उदयाचल प्रेस, अलमोड़ा, १९४९

८. 'पृथ्वी पुत्र'—डा० वासुदेवशरण अग्रवाल,
सस्ता साहित्य मंडल प्रकाशन, नई दिल्ली, १९४९

९. 'प्यास',--चंद्रलाल चौधरी,
'लक्ष्मी भण्डार क्लब', अल्मोड़ा, १९५०

१०. 'किन्नर देश'--राहुल सांकृत्यायन,
किताब महल, इलाहाबाद, १९५७
११. 'कुमाऊँ का साह वंश'--
कैप्टन नन्दलाल साह
१२. 'द्वितीय पंचवर्षीय जिला योजना'—नैनीताल अल्मोड़ा
नियोजन विभाग उ० प्र० शासन, लखनऊ, १९५६
१३. 'इतिहास कुमाऊँ प्रदेश'—देवीदास कायस्थ
१४. योग प्रवाह'—पीतांबर दत्त बड़थ्वाल, काशी विद्यापीठ, बनारस, १९४६
१५. उत्तर प्रदेश में लोकनृत्य'—सूचना विभाग, उत्तर प्रदेश, लखनऊ, १९५४
१६. 'गढ़वाली लोक गीत'--डा० गोविन्द चातक,
जुगल किशोर एण्ड कम्पनी, राजपुर रोड, देहरादून, १९५६
१७. 'पावन हिमालय परिचय'—रामरूप सिंह,
एसोशियेटेड प्रेस, हल्द्वानी (नैनीताल), १९५७
१८. 'लोक साहित्य की भूमिका'--डा० कृष्णदेव उपाध्याय,
साहित्य भवन लिमिटेड, इलाहाबाद, १९५७
१९. 'मध्य देश'—डा० धीरेन्द्र वर्मा,
बिहार राष्ट्र भाषा परिषद, पटना
२०. 'हिमालय परिचय' (१) गढ़वाल--राहुल सांकृत्यायन
लॉ जर्नल प्रेस, इलाहाबाद, १९५७
२१. 'गढ़वाली लोक गाथाएँ—डा० गोविन्द चातक
मोहिनी प्रकाशन, राजपुर रोड, देहरादून, १९५८
२२. 'कुमाउंनी भाषा की कहावतें--चन्द्रलाल वर्मा'
लक्ष्मी भंडार क्लब, अल्मोड़ा, १९६०
२३. 'कुमाऊँ का लोक साहित्य,--डा० त्रिलोचन पाण्डेय,
श्री अलमोड़ा बुक डिपो, अलमोड़ा, १९६२
२४. 'हमारा उत्तरी सीमान्त'--संक्रान्ति प्रकाशन, दिल्ली, १९६४
२५. 'कुमाउंनी कवि 'गौर्दा' का काव्य दर्शन'--श्री चारु चन्द्र पाण्डेय,
देशभक्त प्रेस, अलमोड़ा, १९६५
२६. 'मध्य पहाड़ी का भाषा शास्त्रीय अध्ययन'--डा० गोविन्द चातक,
राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली--१९६६

२७. 'उत्तराखण्ड का इतिहास'—डा० शिवप्रसाद डबराल
वीरगाथा प्रकाशन, दोगड्डा, गढ़वाल

२८. 'प्राचीन भारतीय लोक धर्म'—डा० वासुदेवशरण अग्रवाल,
पृथ्वी प्रकाशन, वाराणसी, १९६४

२९. 'कुमाउंनी (हिन्दी की उपभाषा) के कवियों का विवेचनात्मक अध्ययन'—
डा० नारयणदत्त पालीवाल, मौलिक साहित्य प्रकाशन, दिल्ली, १९६६

३०. 'हिन्दी साहित्य को कूर्मांचल की देन'—डा० भगतसिंह
नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, १९६७

३१. 'मध्य पहाड़ी भाषा का अनुशीलन और उसका हिन्दी से संबंध'—
डा० गुणानद जुयाल,
नवयुग ग्रंथागार, महानगर, लखनऊ १९६७

३२. 'कुमाऊँ की लोक कथाएँ'- रमेश मटियानी 'शैलेश',
आत्माराम एण्ड संस, दिल्ली, १९५९

३३. 'आर्यों का आदि निवास मध्य हिमालय—भजन सिंह 'सिंह'
रचना प्रकाशन, इलाहाबाद, १९६८

३४. 'शिखरों के स्वर —सं दुर्गेश पन्त, गिरीश तिवारी
'शिखर प्रकाशन', अलीगढ़, १९६९

३५. 'गढ़वाल की दिवंगत विभूतियाँ'—श्री भक्त दर्शन
लेन्सडाँन, जिला गढ़वाल, १९५२,

३६. 'कुमाउंनी लोक गाथाएँ—प्रयाग जोशी
जुगुल किशोर एण्ड कंपनी, देहरादून, १९७१

३७. 'कुमाऊँ का लोक साहित्य'—परिचयात्मक संग्रह—डा० कृष्णानंद जोशी
प्रकाश बुक डिपो, बरेली १९७१

३८. 'कुमाउंनी भाषा का अध्ययन'—डा० भवानीदत्त उप्रेती
स्मृति प्रकाशन, इलाहाबाद, १९७६

३९. 'गढ़वाली (बोली) की रँवाल्टी उपबोली, उसके लोकगीत और उनमें
अभिव्यक्त लोक संस्कृति'—डा० गोविन्द चातक
अप्रकाशित शोध प्रबंध, आगरा विश्वविद्यालय, १९५७

४०. 'कुमाऊँ के पर्वतीय प्रदेशों में ग्रामीण स्वायत्त शासन'–डा० गंगादत्त तिवारी

अप्रकाशित शोध प्रबंध––१९६१

४१. 'कूर्मांचलीय कृषि तथा औद्योगिक शब्दावली'–डा० राम सिंह, अप्रकाशित शोध प्रबंध–लखनऊ विश्वविद्यालय, १९६२

४२ 'कुमाउंनी शब्दावली का व्युत्पत्तिपरक अध्ययन'–डा० केशवदत्त रुवाली अप्रकाशित शोध प्रबंध, आगरा विश्वविद्यालय, १९७२

४३. 'कुमाऊँ तथा गढ़वाल की लोक गाथाओं का विवेचनात्मक अध्ययन–डा० प्रयाग दत्त जोशी,

अप्रकाशित शोध प्रबंध, जबल पुर विश्वविद्यालय, १९७३

४४. कुमाउंनी बोली का वर्णनात्मक अध्ययन–डा० भगत सिंह, अप्रकाशित शोधप्रबंध, जबलपुर विश्वविद्यालय, १९७१

४५. 'कुमाऊँ तथा पश्चिमी नेपाल के राजियों की बोली का अनुशीलन'––डा० शोभाराम शर्मा, अप्रकाशित शोध प्रबंध—

४६. 'थारू लोकगीतों का आलोचनात्मक अध्ययन'–डा. शंभुशरण शुक्ल अप्रकाशित शोधप्रबंध, आगरा विश्वविद्यालय, १९७३

४७. 'ह्लात कोह हिमालया'–चिन्तामणि जोशी,

४८ 'कत्यूर का इतिहास'–रामदत्त तिवारी–

४९. 'नेपाल का इतिहास'–प्रो. खेमराज श्रीकृष्ण दास, स्टीम प्रेस, बंबई,

५०. संक्षिप्त कूर्मांचलीय राज वर्णन और सीमालटीय पांडेय वंशावली'–मनोरथ पांडेय, शास्त्री,

५१. 'उत्तर प्रदेश के लोक गीत–उत्तर प्रदेश शासन, लखनऊ, १९१९

५२. 'प्रतिभा दर्शन' (भाषा तत्व शास्त्र)—हरिशंकर जोशी–

५३. 'मध्य हिमालय में शिक्षा व शोध'––सं० चन्द्रशेखर बड़ोला–वागीश प्रकाशन, हरिद्वार (सहारनपुर), १९७६

———

३. अंग्रेजी पत्र-पत्रिकाएँ ——

1. 'Calcutta Review' —— Calcutta, Vol. XVIII July, December, 1852

2. 'The Indian Antiquary'—Sir. R. C. Temple, Bombay Vol. XIV, 1885, XIX, 1890 Vol XXXVIII. 1909, Vol XXXIX. 1910,

3. 'Journal of the Asiatic Society of Bengal'—Calcutta, Vol. 53, 1884, vol, 56, 1857, Vol LXIV, 1896, Vol. 68-70, 1900-1901, Vol. XII 1917.

4. 'Journal of the Royal Asiatic Society'—London. W. 22. Alhemartee Street, 1901

5. 'Journal of the Royal Asiatic Society of Bengal'— Vol V. 1939, Vol. VI, 1940., Calcutta

6. 'Indian Historical Quarterly'—Calcutta, Vol 19, No 4.

7. 'Indian Folklore'—Calcutta Vol I. No 1. 1958, Vol I No. II 1958.

8. 'Journal of the U. P. Historical Society'— Vol. XV Part II.

9. 'Nainital an Autumn FastivalSouvenir'—1962.

10. Studies ; Kumaon Number, D. S. B. Govt. College, Nainital, Voll. III 1966

11. 'Development of Tourism in Hill Areas of Uttar Pradesh'— Planning Commission, Govt. of India, June, 1973

12. 'Nainital an Autumn Festival Souvenir', 1974.

४: हिन्दी पत्र-पत्रिकाएँ--

१. 'अचल'-अल्मोड़ा, शृंग ४, मई १९३८; शृंग ७ अगस्त १९३८; शृंग ६ जुलाई १९३८।

२. 'कुमाऊँ कुमुद'—विंध्यवासिनी प्रेस, अल्मोड़ा–
अप्रैल १९४२–१९४३, सितंबर १९४०, अक्टूबर १९४०, फरवरी, १९४१।

३. 'लोक वार्ता'-(त्रैमासिक)—'लोक वार्ता परिषद', टीकमगढ़, मध्य भारत वर्ष अंक १–२, जून १९४४, सितंबर १९४४।

४. 'धर्मयुग साप्ताहिक—(बंबई), अक्टूबर ३१, १९५४,

५. 'शक्ति' साप्ताहिक–अल्मोड़ा १९५४, १९५९

६. 'पर्वतीय'–(नैनीताल)–१३ सितंबर, १९५६

७. 'सम्मेलन पत्रिका'–हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग,
भाग ४४, संख्या १, पौष–फाल्गुन, शक १८७९

८. 'सम्मेलन पत्रिका'–(प्रयाग)–लोक संस्कृति विशेषांक–सं २०१०

९. 'नागरी प्रचारिणी पत्रिका'—भाग १८ सं १९९४, सं २००७, सं २०११ काशी

१०. 'लोक कला'–लोक कलाकार संघ, अल्मोड़ा, १ जून, १९५६

११. 'त्रिपथगा'–मार्च १९५६, जून १९५७, लखनऊ

१२. 'रजत जयंती स्मारिका'–श्री हरि संकीर्तन सभा, नैनीताल, १९६६-१९६७

१३. 'भारतीय साहित्य'–आगरा विश्वविद्यालय, आगरा, वर्ष १३ अंक १–२ १९६८ ('कुमाउंनी'–डा० मुरारीलाल उप्रेती, पृ. ९५–१६२)

१४. 'युनिवर्सिटी ऑफ इलाहाबाद स्टडीज'–(हिन्दी भाग)–सीनेट हाउस, इलाहाबाद (पिथौरागढ़ की बोली और उसका ध्वनितात्विक विवेचन–डा० भवानीदत्त उप्रेती, १९६८)

१५. 'स्मारिका'–अल्मोड़ा, शरदोत्सव, १९७२ एवं १९७३,

१६. 'उत्तरा खंड भारती'–सं० बटरोही, नैनीताल
१/१ प्रवेशांक, जनवरी–मार्च–१९७३; १/२ अप्रैल—जून ११७३
१/३. जुलाई–दिसंबर–१९७३; २/२–३ अप्रैल–सितंबर, १९७४

अनुक्रमणिका

अ

अकबर–१२,
अखल स्यू–१७,
अचल–४, ३९, १४०, १६७,
अजीत बौर–२५६,
अजुवा बफौल–२५६,
अजो पीथा–२५६,
अठकिंसन–१६, १७, १८,
अठणुली नाग–१८,
अन्यारी–३१०,
अन्यारी कोट–३१०,
अपभ्रंश–२६,
अमर देव–२५६,
अमृत कलश–१५६,
अमृता सौली–३४७,
अयोध्या–३७,
अर्द्ध मागधी–३३,
अलख बण–२४३,
अल्मोड़ा–७, १४९, १५०, १५३, १६०,
१६३, १६७, १६८, २८०,
२८१, ३१८,
—, अखबार–३९,
—, लेखक संघ–१७८,
अवधी–३२,
अशोक–१७,
असकोट–१३,
असकोटी–१३७,

आ

आग्नेय परिवार–१७,
आती-पाती–३४५,
आदि कुँवरि–२६१, २६२,
आदि नाथ–२४६,
आनन्द सिंह–१७३,
आनन्दी–१७०,
अपुणो घर–१६१,
आब देव–१८२,
आभीर–१२,
आसन्दी-बासन्दी–२५६,
आसाम–१८,
ओकले, पादरी–२६५,
औजी–२३, २०९, २२५,
औबीन–२७६,

इ

इलज देव–२५६,
इलाहाबाद–१५०, १५७, १७७,

उ

उखलिया डूँगी–२३८,
उठ किरती–२७४,
उत्तर काशी–७,
उत्तरा खण्ड–७,
उत्तरायण–१७८,
उत्तरायणी–१६३,
उत्तरी गौड़ीय–२६,

उदिया झाकुरी–२५९,
उदै चन्द–२५८
उद्योत चन्द–१२, २८०,
उप्राड़ा–१४३,
उप्रेती, गंगादत्त–४, २२, २८, ३८, १२६, १३२, १५०,
—, पार्वती–१७०,
—, भवानीदत्त–५, ६,
उप्रेती, मोहन––१७८,
—, नन्द कुमार––१७६,
—, रेवादत्त––१४१,
उर्दू––८,
उस्मान––१२,

ए

एड़ी––२५१,
ए० पी० प्रेस––१६०,

ऋ

ऋतुरैंण––१४,२०७, २२५,
ऋद्धगिरि––२८०,

क

कटकू––२५५,
कड़खा––२१६,
कत्यूर––३१६,
—, गढ़––२६३,
—, मल्ला––२१६,
—,वल्ला––२१६,
कत्यूरी वंश––२,३३,३१७,
कर्नाटक, श्रीकृष्ण––१७१,
कनक दीप––२४६,
कन्नौज––३७,
कन्हरी––१६७,
कपकोट––१९२,२३३,
कपूनइ––२७६,
कफ्फू––१४,२७६,
कफलिया––२१०,
कम्पासी मानी––२२१,२२६,२३७,
ककेटिक नाग––१८,
कलकत्ता––१४६,१६०,
कलविष्ट––२४७,२५०,
कला भण्डारी––२५६,
कल्याणचन्द––३५,
कलावती कोट––२६३,
कश्मीर––२,
कश्मीरी––३१,
कसून––१६८,
काकेशस पर्वत––१८,
काठगोदाम––११,
कानपुर––१७०,
कार्तिकेयपुर––३३,
काफल पाको––२७४,
—, कालचन भूसी––२५२,
कालसाईं––२५१,
कालिदास––११,
काली कुमाऊँ––९,२६,
काली नदी––९,३१९,
काली नाग––१८,
लू-कपकार––३४८,
कालसू––,१७,
काशी––१४०,
काशीपुर––२११,
किंगरी-विंगरी––१३,

किन्नर—२,
—, देश—४, १२,
किरात—२, १०,
—, मण्डल—१२, १७,
—, राज्य—१७,
कीर्तिचन्द—२८०,
कीरी-कसमीर—२४६,
कुटी गंगा—१२२,
कुणैत—१६,
कुमोद मणि—१२,
कुंजीपाल — २५८,
कुमय्याँ — १३५, ३२६,
कुमाउंनी, उत्तरी — २५, १२८,
—, दक्षिणी — २५, १२८,
—, पश्चिमी — १२८, १३२,
—, पूर्वी — १२८, १३२,
—, परिषद् — १७०,
—, भाषा — १४, १६, २३, २४, २५, २७, ३३, ३४, ५७, १०२, ११६, १२४, १२५, १६८, १७८,
—, मध्यवर्ती — २५,
—, साहित्य मण्डल — १७७,
कुमाऊँ — १, ७, ८, १६, २०, ३३, ११७, १२३, १२४, १२७, १४६, १५०, २१०, २२९, २४७, २६५,
—, कुमूंद — ४, १४०, १७०,
कुमूं — ९, ३१७,
कुरंचदीप — २४६,
कुरु-पांचाल — २१,
कुली उतार—१५३, १५५,
कुली बेगार — १९३,
कुल्लुई — २९,
कुस दीप — २४६,
कुसुमा कोलिन — २३८,
कूर्म पर्वत — ८,
कूर्मावतार — ८,
कृष्ण — १७०,
केदार—३३३,
—, खण्ड—१७,
केदार नाथ—२१,
केन्द्रीय पहाड़ी—२९,
केलाग, रे०—३, २८, १२१,
कैलाश मानसरोवर—३,
कैंची—२८१,
कोकू कोट—२६३,
कोटली गढ़—२६३,
कोटा भाबर—३१५,
कोड़ा जमाल साईं—३४५,
कोल—१२,
कोसी नदी—२, ११, १३,
—, पार—२१६,
—, वार — २१६,
क्यूंथली—२९,
क्वीड़ कैण—१६०,
क्रृष्णांष्टक—१४१,

ख

खगमरा कोट—२८१,
खछ—१८,

खड़ी बोली — ३०,
खतड़ुवा — १४, २१३,
खत्याड़ी गाँव — ३१०,
खम्पा — २८२,
खरहरी नाग—१८,
खस — २, २०,
खस कुरा — ३८,
खस, ब्राह्मण — १८,
—, परजिया — २६, १३३,
—, मण्डल — १३,
—, राजपूत — १८,
खसिया पहाड़ी — १८,
खाती — ३१५,
खिमसारी हाट — २५६, २६३,
खेतरपाल—१२४,

ग

गजरपुर—१२,
गजोपीथा—२५६,
गढ़वाली—८,
गणतुवा—३४६,
गणतौ—२१६,
गणाई—२१४,
गणेश—२२४,
गया—३०१,
गरीब भारतीय—१७२,
गंगनाथ—२४८,
गंगा, गोदावरी—२५१,
—, जमुना—२५१,
—, भागीरथी—२५१,
—, शतक—१४१,
—, सरसती—२५१,
गंगोई—१३५,
गंगोला—१०,
गंगोली—१३, १४३, २९५, ३१८,
गागर—२,
गाँगुली—२३०, २३२,
गाँधार देश—१६,
गाँधी गीत—१६०,
गिरि छीना—२५६,
गिंवाड़—२३०, २५६,
—, तल्ला—१२६,
गुजराती—३०,
गुमानसिंह देव—१४१
गुमानी कवि—३६, ३८,
गीतमाला—१६०, १६१,
गूजर—२१,
गैड़ा—३१५,
गैरोला, तारादत्त—४,
गोपीदेवी का गीत—१५२,
गोमती नदी—१३, २३४,
गोरखा छावनी—२८१,
गोरखा जुमला—१७,
गोरखा शासन—३८,
गोरखाली राजा—१४२,
गोरखपाल—३१७,
गोरीगंगा—१२२,
गोविन्द चातक—५,
गोविषाण—३,
गौरा महेश्वर—२२३,
गौरी गुटका—१५३,
गौर्दा—६, ३६, १४७, १५३, १५५,

गौलानदी—२,११,
ग्रिमबन्धु—२६५;
ग्रियर्सन, जार्ज—४,२८,२६,१२६,
१३२' १४०,१४६,
ग्वाल्ल—२१२,२४६,

घ

घटकू देवता—२७९,
घटोत्कच—२७९,
घन्याली—२१६,
घस्यारी नृत्य—३४९,
—, नाटक—१५२,
घिनौड़ा—१४,
घुघुता—२७६,
घुघुती—३४४,
घुघुती मैं सीती—२७४,

च

चटर्जी, सुनीति कुमार—९,२९,३५,
चण्डीकोट—२६३,
चण्डी पाठ—१४८,
चन्द्रगुप्त—३३,
चन्द्रवंशी—३१७,
चमोली—७,
चंपावत—२४७,२४९,
चंपावती नदी—८,
चम्याली—२९,
चाखुली-माखुली—१९७,
चाँचरी—१५७,१९५,
चित्रशिला—११,२३३,२८०,
चील्हा—१९७,
चैती मेला—२११,
चौकोड़ी—२८२,
चौखुटिया—१४,२१४,२३०,३१७,
चौगर्खा—३१८,
चौगर्खिया—१०,१३४,
चौगंगा—२२५,
चौदाँस—८,
चौधरी, चन्द्रलाल—६,३९, १६३,
चौभैंसी—२६,
चौंफुली—१९७,
चौमास—१३,३४१,
चौमूँ—१२४,२५०,
चौरासी माल—१२,

छ

छखाता—२६,१२२,
छपेली—१९६,
छाना बिलौरी—१०७,
छासो—२८३,
छीरा—१८१,
छुरमल्ल—१२४,

ज

जगरिया—२४५,
जगाती—१२३,
जनमेजय—२,
जमना छाल—२४१,
जलन्धर—२,
जसी बौराण—२२६,
जागर—२४५,
जागर गाथा—५,

जागेश्वर—२८०,२८२,३१६,३१८,
जियाराणी—२५३,
जुयाल, गुणानन्द—५,८,१८,३२,
जूनागढ—१६९,
जूँहो—१६९,२७४,
जैंदा किराल—३१४,
जोड़—१६०,१९७,
जोशी, कृपालदत्त—८,,
—, कृष्णानन्द—५,
—, चिन्तामणि—३८,१४८,
—, जीवन चन्द्र—१६७,
—, ज्वालादत्त—३८,
—, टीकाराम—४,
—, प्रयागदत्त—५,
—, भैरवदत्त—१५०,
—, मोहन—१९३,
—, लक्ष्मीदत्त—१९,
—, लीलाधर—३८,
—, हरिशंकर—६,३१,
—, हेमचन्द्र—५,
जोहार—१३,२३१,
—, खण्ड—२१,
—, दारमा—१६,
जोहारी—१३२,
जौनपुर—२८९,
जौनसार बावर—१६,
जौनसारी—२९,
जौल जीवी—२४,
ज्यूंति पूजा—१९४, २१८,

झ

झकरुवा रौत—२५९,
झगरो—१९७,
झाली माली देवी—२१२,
झुनी—३१६,
झोड़ा—१५७, १८९,

ट

टमटा—१२३,
टर्नर—१२१,
टामसन, स्टिथ—२९२,
टेहरी—१४१,
ट्रेल, कमिश्नर—३, १४४,

ड

डबराल, शिव प्रसाद—६,
डिबेटिंग क्लब—१७८,
डुम जोगी—२३,
डोटी गढ़—२४९, २५९,
डोट्याली बोली—२४,
डोटी-नैपाल—१५,
डोर-दुबड़—२१३, २२६,
डौल्या—१७४,
डंगरिया—२४५,
डुंगरी रौल—२५२,
डंडयाला—१९७,
ड्योड़—२१६,

ढ

ढुरुंग—१६,
ढोली—२३, २२५,
ढोसुक—२१६,

त

ततरिया—१२३,

तक्षक नाग—३४७,
तिब्बत—१६,
तिब्बती अदालत — २८३,
—, पनढाल—१३,
—, बर्मी—५७,
तिरजुगी पीपल— २३४,
तिरहुत—१४१,
तिलण देव— २५६,
तिवारी, उदय नारायण—३०,
—, गंगा दत्त— ६,
—, गिरीश—३९, १७४,
तिसमोली तीस, २७४,
तृषि सरोवर— २७९,
तंगण— १०,

थ

थत्याल — २११,
थारू — २२,
थारू-बोक्सा — १५,

द

दड़म्वाल — १२३,
दनपुरिया — १३५,
दन्या — १४८,
दयानन्द नारायण— १७०,
दरद भाषा — २९, ३०, ३१,
दश कुमार चरित — १४९,
दस्यु— २, १६,
दातुलै किघार — १५८,
दानपुर—१४, १७७, २३३, २८०, २८२,
दारमा दर्रा—१३,
—, भोटिया—२१,
दिगौली माना—२६२,
दिदी भुली—१७५,
दिल्ली—१७७,
—की झलक—१७२,
दीवान सिंह—१७१
दीवानी विनोद—१७२,
दुर्गा पाठ सार—१४८,
दुर्गा कालिंगा देवी—२५०,
दुदुकेला—२६०,
दुनगिरी हाट—२६३,
दुबड़ा—२२४,
दुलासाही—२३०,
देवी घूरा—२११,
देश्वाई रमैण—१६२,
देहरादून —१४८,
दैतीगढ़—२६३,
द्रविड़ परिवार—५७,
द्वार सों—१७,
द्वारा हाट—१२७, २५६,
द्वारिका—२१७,
द्विवेदी, हजारी प्रसाद—२९२,

ध

धनिया कोट—२६,
धमू पैक—२८२,
धर्मचन्द—३५,
धरा सू—१७,
धात—१७०,

धाम देव—२५३,
धार चूला—२४,
धार में को पौ—१६४,
धौल नाग—१८,
धौली गंगा—१२२,

न

नन्दा कोट—१३,
नन्दा देवी—१३,२४७,
नन्दू बालो—२१८,२२६,
नर पीथा—२५६,
नर शाही—३१७,
नर सिंह—३४७,
नल दमयन्ती—२७९,
—, ताल—१३,
नवज्योति—४,
नाकुरी—१६,१२२,१९२,२८२,
नाग—१६,
—, नाथ—२८०,
—, मल—२५९,
नागूभागू—१७,
नाच—१६३,
नाथ संप्रदाय—२९४,
नानतिन बाबा—२८१,
नाद—१७०,
नायक—१७,
नारंग देव—२५६,
नारायण राम—१७३,
नार्मन ब्राउन—२९२,
नाहन—१४८,
निरंकार गुरु—२८४,
नीति शतक—१४१,
नीम करौली बाबा—२८१,
नीलकंठ पौड़ी—२३९,
नीलू कठायत—२५८,
नेगी—१२३,
—, जोधसिंह—३,
नेपाल—३१८,३४८,
नेविल—२,
नेहरू कका—१९२,
नैना देवी—१२२,
नैनीताल—७,२४,१७०,
नैनी नाट्य कला अकादमी—३४९,
नौकुचिया ताल—१३,
न्यू टेस्टामेन्ट—१४८,
न्यूतणो—१८०,
न्यूलड़ी—२७६,
न्योली—२००,
नृसिंह अवतार—२४४,

प

पचू दौराल—२५९,
पंच चूली—१३,
पछांई—१२६,१३३,
पन्त, अंबिका दत्त—१५८
—, गोविन्द बल्लभ—१७०,
—, जयन्ती देवी—१६९,
—, दीना नाथ—१७०
—, दुर्गेश—१७४,
—, पुरखू—३१५,
—, रामदत्त—३९,१६०,
—, शिवदर्शन—५,

—, श्यामा चरण—३९,१५८,
—, सुमित्रा नन्दन–१५३,
—, हरगोविन्द—१९३,
पन्ना पत्ती—३४५,
पन्नालाल—४,
पर्वतीय—४, ७०,
पश्चिमी गौड़ीय—२९,
—, पहाड़ी—२९,
पहाड़ी भाट—२३,
पाण्डेय, कृष्णा—३८, १४४,
—, चारुचन्द्र—६,३९,१७४,
—, तारादत्त—१६८,
—, दुर्गादत्त—१७०,
—, नयनसुख—१४७,
—, पीताम्बर—१७१,
—, बद्रीदत्त—२,१०,१९३,
—, हरिराज—३६,
—, त्रिलोचन—५,
पाण्डुकेश्वर—२,
पाटिया ग्राम—,१४४,१५३,
पाठक, बंशीधर—१७५,
—, शिरोमणि —१५६,
पाताल भुवनेश्वर—१८,
पालीवाल, चिन्तामणि—१७१,
—, नारायणदत्त —५,१७८,
पाली पछाऊँ—१३,१२६,
पासिणी—१८४,
पाँजा रौतेली—२६२,
पाण्डव लीला—३४९,
पिथौरागढ़—७,१७६,
पिनाकेश्वर–२१२,
पिपीलिका स्वर्ण—१०,
पिंगल नाग—१८,
पिंडारी ग्लेशियर—२५,
पिरमुवा देबुली—२८६,
पिलखा गाँव—१४७,
पीली भीत —१०,१४८,
पुछड़ी चड़—२७६,
पुंग राउँ—१८,
पुण्य भद्रा नदी—११,
पुन गिरि— ३१८,
पुर पुतई—२७४,
पुराण, भागवत—११,
—, मार्कण्डेय—११,
—, वायु—११,
—, विष्णु—१७,
—, ब्रह्म—११,
—, स्कन्द—२,
—, हरि वंश—११,
पुलिन्द—१०,
पूर्वी पहाड़ी—२९,
—, भाषा—३३,
—, हिन्दी–३२,
पूर्वांग के गति–१८७,
पँमायशी फूल–१७१,
पैशाची प्राकृत–२९, ३०,
पौड़ें–२१६,
पृथ्वी पाल–२५६,
पृथ्वी रंजन–२५६,
प्रथम बाटिका–१५४,

प्रहलाद-१५७,
प्यास-१६४,
प्यूरड़ी-२७६,
प्यूली -२७६,

फ

फड़त्याल, रतनुवा — २५९,
फल्दा कोट — १५०,
फल्दा कोटिया — १३४,
फारसी — १४१,
फांक—२१६,
फुकम-फुकारा--३४५,
फूलारा—१२३,
फूल देई—२०८,
फूल सँग्यान—१४,
फेनी नाग—१८,
फैरारी—२५६,

ब

बची राम—१७१,
वणभाट—२७८,
बद्री नाथ—२१,
बन रौत—१७,
बड़ुवा=१२३,
बंगाली—३३,
बमौर खेत —३२५,
बमौरा गढ़-२६३,
बमौरी कोट-२६०,
बरेली-१०, २२२,
बलिदान खंडन-१७२,
बागेश्वर-२, १४, १०७, १९२, १९३, २५६, ३१६, ३१८
बागी-बागी-३४५,
बाघ नाथ-२३०,
बाज बहादुर चन्द्र-१२,
बादी—२३,
बाम्यां सौली-३४७,
बारा मण्डल-१३,
बाराह अवतार—२४४,
बाराही देवी—२११,
बालचन--२५१,
बाली हाजुरा—२२६,
बालेश्वर—२,
बाहरी, हरदेव—३१, ११६,
बिरमदेव--२५३,
बिरमा राजा—२५६, २६३,
बिल्जवाल—२८२,
बिष्ट--३१५,
—, गंगासिंह—१७३,
बीम्स, जॉन—१२१,
बीजड़--जीजड़—१७,
बेनीनाग--१८, २८२,
बेन्फी, थियोडोर—२९२,
बेलिहाट—२६३,
बैजनाथ—२८०,
बैटन--३,
बैर--२०२,
बैरन—३,
बैराठ—२३०,

बसी—२५०,
बुग्याल—१४,
बुद्धिप्रवेश—१५१,
बुरूँश—२७६,
बुरूँशी—१०७,
बौरारी—१२२,२१४,
ब्रजभाषा—१५८,
ब्रह्मपुर—३१७,
ब्लाख, जूल—१२१,
ब्लूम फील्ड, मारिस—२९२,

भ

भगतसिंह—५, १९२,
भगनौल—१५७, १५९, १९७,
भगनौली—१५६,
भड़ौं—२५५,
भँवाली—२८१,
भण्डारी—१२३,
भारती, कुतुबचन्द—१७४,
भारतीचन्द—३५, २५८,
भारतीय—१७४,
—, कला केन्द्र—१७८,
—, कुलानन्द—१७४,
भाबर—२६३, ३१८,
—, कागीत—१५१,
भिकिया सैन—१४,
भीम—२७९,
भीमताल—२६,
भीमेश्वर—१२२,
भीष्म चन्द—३५,
भुकासी—१२,
भुजाण—३१७,
भुम्याल—२११,
भूपू रौतेला—२७७,
भूमियाँ—१२४, २१४,
भोजपुरी—१
भोट—२६३,
भोटिया—८, १६,
—, बोली—८,
भोपती कोट—२६३,
भोलादत्त—१७०,
भोलानाथ—२४७,
भ्रमरगीत—१७२,

म

मणकोटी राणी—२६६,
मटियानी, शैलेश—१७४,
मंझ कुमैंयां—१६,
मतिराम—१२,
मदनमोहन—१८३,
मध्यदेश—१,
—, पहाड़ी भाषा—५
मराठी—३२,
मलुवाताल—१२२,
मल्या—१४,
महर पट्टी—१८,
महर-फड़त्याल—२२०,
महरा कोट—१२२,
महरूड़ी—३१६,
महाभारत—२,
महात्मा गाँधी—१५३, १५५,

मागधी--२९,३३,
माछी—माछी--३४५,
मानस खण्ड--२,
माल—३२५,
माला गाँव--३१७,
मालूसाही—१५,९२२,
मासी--१९०,३१७,
मिझौल—२७६,
मिनामेव, इवान--३,
मिरदुला--२५६,
मिलम ग्लेशियर--१३,
मिश्र, नित्यानन्द--६,९,
मित्र विनोद--१५१,
मुनस्यारी--३१८,
मुण्डा-द्रविड़—१७,
मुण्डा शाखा—१७,
मुरादाबाद—१०,
मुहम्मद तुगलक--२५८,
मेरुप्रदेश—१२,
मोतिया रौ रौ—२७४,
मोतीमाला—२३५,
मोहनदास बाबा—२८१,

य

यवन--१२,
यक्ष--२,
यारवा जाति--१७,

र

रँग्वाली--१८४,
रण विन्दावन—२४३,
रणूरौत--२६१,
रतनी चन्द—२५८,
रमैण--३२३,
रमौल—५,२३४,
—, आसा--२३४,
—, ऐला—२३४,
—, किरपा—२३४,
—, गंगू--२३५,
—, गैला--२३४,
—, जैनू--२३४,
—, जोगा—२३४,
—, जगदेव—२३४,
—, पिरतू—२३४,
—, बिरनू—२३४,
—, भगतू--२३४,
—, भागदेव--२३४,
—, भारती—२३५,
— सकतू—२३४,
रमौली गढ़—२३५,
रसौता—१९७,
राई जाति--१७,
राजकोट—१६९,
राज-किरात--१७,
राज-स्थानी--३०,
राजी--१७,
राजुला—२३०,
राधि बुलैदि--१६९,
रानीखेत--१५८, १७४,
राम गंगा नदी—१३,
रामगढ़—२६,

रामगुप्त—३३,
रामचन्द्र—२८५,
रामजे कमिश्नर—३,
रामपुर—१०, १७८,
रामलीला—३४९,
रामसिंह—५,२४,
रावत, कुँवरसिंह—१७३,
रासो, पृथ्वीराज—१२,
राँग बाँग—२२,
रिखोला, माधोसिंह—२५९,
रीठागाड़—२५२,
रुक्मिणी—२३५,
रुथ नार्टन—२९२,
रुद्रचन्द—९,
रुँवाली केशवदत्त—५, २४,
रूड़ी—१३,२१०,
रूपा का गीत—२२६, २२७,
रौ-चौभेंसी—१३८,
रौखड़िया बाबा—२८१,

ल

लंका—२४९,
लखनऊ—१४६, १७७, १७८,
लखनपुर—२५२,३१७,
लटुवा कोठ्यारी—२८८,
लटोरिया बाबा—२८१,
लदाख—१०७,
लम्पाक—१०,
लक्ष्मीचन्द—१२,
लक्ष्मीदेवी—१७०,
—, भण्डार क्लब—१६४,
लाकड़—२१२,
लिपू लेख दर्रा—१३,
लिम्बू—१७,
लीला—१९७,
लोक कलाकार संघ—१७८,
लोहाघाट—२४७,
लोहावती—२,
ल्वारखेत—२३३,

व

वर्मा, धीरेन्द्र—३०,३१,
वंशवारि—२५६,
वामन अवतार—२४४,
वाल्टन—२,१६,
वासुकि नाग—३४७,
विक्रमचन्द—२५८,
विद्या घर—१६,
विभु, विद्या भूषण—११६,
विहाई—१८३,
विन्ध्याचल—२८१,
वीरचन्द्र—९,
वृन्दावन—३४५,
वैदिक आर्य—२१,
वैष्णव, यमुनादत्त—९,
वोट कि चोट—१७३,
व्याँस—८,

श

शक्ति, साप्ताहिक—४, ३९,१४०,१६४,
शकुनाखर—१८०,

शतोपदेश—१४१,
शवर—१२,
शर्मा, देवीदत्त—१४१,
—, शोभाराम—६,
—, हरीवल्लभ—१७१,
शारदा नदी—९,
शारदा संघ—१७८, ३४९,
शिल्पकार—२६,
शिल्पी—४,
शिवरात्रि—३४९,
शीतलाखेत—१५६,
शुक्ल, शँभूशरण—५,
शेख सैय्यद—२६४,
शेरिंग—३,
शेषनाग—१८,
शौक—२०,
शौरसेनी—२९, ३०,
श्री नगर—१४८,
श्रीराम सहस्रावलि—१५७,

स

सतपुड़ा—२८१,
सती, तारादत्त—१७८,
—, शिवदत्त—३८, १५०,
सत्येन्द्र—२९२,
सप्तदीप—२४६,
समुद्र गुप्त—३३,
सरकार कुमायूंनी—२६२,
—, वदायूनी—९,
सरजू कंवल—२३५,
सरजू गंगा—१३, २३३,
सरयूनदी—१३,
सरीन, सावित्री—२९२,
सल्ट—१६,
संग्रामी कोट—२६२,
सँजवाली—१८२,
संस्कृत भाषा—३५,
सात ताल—१३,
सात्यकि—११,
साधक—१७०,
सामाघुरा—२३३,
सालम—१८,
सासू-ब्वारी—१७१,
साह बुलि—२६, १३९,
बृजेन्द्र लाख—३९, १७४,
साँकृत्यायन, राहुल—४, १७, १८,
सिटौला—२७६,
सिन्दूर दे राणी—२६६,
सिद्धनाथ—३४६,
सिरमोरी—२९,
सिरामपुर—१४८,
सिलगुड़ी—३४८,
सिलिंग—२२७,
सिसाउ ललीं—२६१,
सिहलदीप—२४६,
सीताबनी—२,
सीथियन—१८,
सीराली—१३७,
सुख को बाटो—१५०,
सुई-विसुंग—३२६,
सुजान देव—२५६,

सुदर्शन शाहदेव--१४१,
सुनपति--२३०,
सुँवाल नदी--११,३१०,
सुँवाल पथाई--१८५,
सेरा--१३,
सेली सागर--२३५,
सैम--१२४,
सोगुन--२९७,
सोमनाथ मेला--१९०, २११,
सोमबारी बाबा--२८१,
सोर--३१६,
सोर-सीरा--१४,
सोयलि--१३६,
सौक्याण देश--२६२,
सौतिया बाँट--१९,
सौनीकोट--२५९, २६३,
सौनूँ बिरमूँ--२५८,
सौल--१६५,
स्वामी प्रणवानन्द--३,
स्याल्दे मेला--२११,

ह

हनूमान--२८१,
हरजू--२५४,
हरबोला--१२३,
हर्षदेव--२८०,
हरिद्वार--२२,२५,२८०,
हरिसंकीर्तन सभा--१७८, ३४९,
हरिश्चन्द्र--१५७,
हरू--२५०,३१५,
रूह-सैम--२१२,
हरू हित--२६२,
हरी समुन्दर--३४५,
हल माहात्म्य--१५६,
हल्द्वानी--१२२,
हंसकुँवर--२६२,
हार्नले, रुडोल्फ--१२१,
हिडिम्बा--२७९,
हितविष्ट, नरसिंह--१७३,
हिनौल--२१०,
हिन्दी--८,
हिन्दूकुश--१६,
हिमाल--३२५,
हिमालय--४, १६१,
हिलाँस--१४,
हुड़किया--२३, १८९, २१३,
हुड़कीबौल--२४, २१३, २३८,
हुणदेश--२०,
हुस्कार--२५२,
हूण--२०,
हैड़ीखान--१६७,२८१,
हैप्पी क्लब--१७९, ३४९,
हैमिल्टन--२,
होटहोट--२७४,
होली, खड़ी--२१०,
--, बैठकी--२१०,
होल्यार--२१०,
ह्यूूर--१३, ३४१,

त्र

त्रिमल चन्द--२६३,

त्रिपाठी, ताराचन्द्र –६,
—, हरीराम - १७०,
त्रिशूल –१३,

ज्ञ
ज्ञानिमा मण्डी— २८२,
ज्ञानी चन्द—२५८,

वाल्मीकि विद्यापीठ-पुस्तकालयः
ग.नं. १५८८०

उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान

हिन्दी समिति प्रभाग के कुछ नवीन प्रकाशन

गढ़वाली भाषा और उसका साहित्य	१३.००
भारतीय आदिवासी, उनकी संस्कृति और सामाजिक पृष्ठभूमि	१०.००
समाचार संकलन और लेखन	८.००
सुन्दरम्	८.००
हरिश्चन्द्र	८.००
भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र का जीवन चरित्र	४.००
निगंठ ज्ञात पुत्त (श्रमण भगवान् महावीर की जीवनी)	८.००
भाषा-भूगोल	१४.००
उत्तर भारत का राजनीतिक इतिहास	२०.००
प्राचीन भारत का राजनीतिक एवं सांस्कृतिक इतिहास	१८.००
भारतीय इतिहास कोष	१८.००
विज्ञान का दर्शन	६.००
तांत्रिक साहित्य	३०.००
सम्पत्ति विधि भाष्य	१३.००
महाकवि खुसरो	५ ००
वेदत्रयी परिचय	४.००
रवीन्द्र साहित्य की समीक्षा	१२.००
ऐतिहासिक भाषा विज्ञान : सिद्धान्त और व्यवहार	१०.००
पेड़ से चन्द्रमा तक	१३.००
कुमाऊंनी भाषा और उसका साहित्य	१६.००